



Gurumandal Series No XI

THE
Brahma Puranam

— (o) —

By
MAHARSHI KRISHNADWAIPAYAN VYAS

VOLUME I

**5, Clive Row,
Calcutta,**

Vikram Era
2010

First Edition
5000

Christian Era
1954



आचार्य वरुणामय मरस्वती

॥ श्रीः ॥

सादरं समर्पणम्

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ।

गुरु साक्षात्परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥

श्रीमतां पदघाम्यप्रमाणपाराचारीणधुरीणानां विधिधविद्या-
ग्रन्थप्रणयनचणानां प्राच्यप्रतीच्यबहुशास्त्रविचक्षणानां शास्त्र-
जीघनानां निखिलानघद्यगुणगणालंकृतानां समस्तभूमण्डलनिग्रह-
स्थानीकृतप्रतिपक्षजन्मनाम् धर्मधुरन्धराणां जगदम्बाप्रसादाद्बुद्ध-
विश्वविश्रुतवैदुष्यजुषाम् विद्वद्भार्याणां सर्वतन्त्रस्वतन्त्राणां श्रीं
गुरुवरणानां सरस्वत्यपरावताराणां दुस्तरविद्यार्णवसमुत्तरण
प्रकटीकृतमहावीरपराक्रमाणां शिष्यानुग्रहकाङ्क्षया प्रत्यक्ष
शिवावताराणाम् करुणावरुणालयानां यद्गप्रान्तीयविद्वन्मण्डल-
मण्डनानाम् चिक्रमपुरान्तर्गतटोलवासाइल ग्रामवास्तव्यानां
प्रातःस्मरणीयपुण्यश्लोकविद्यालङ्कारोपाधिकवामाचरणात्मजानां
तत्रमवता आचार्यप्रवराणां श्री करुणामयसरस्वतीमहाभागानां
करकमलयोर्मिलिन्दायताम् गुरुमण्डल द्वादशपुष्पं
ब्राह्मपुराणमिदम् सादरम्
गुरुदेव !

न किञ्चिन्नूतनं वस्तु दातुं निष्ठाऽस्ति मामिका ।

ब्राह्ममेतद्धि भगवन्नर्पितं प्रीतयेमुदा ॥

इति

कलिकाता
शिवरात्रिप्रतम्
२०१० वि०

}

श्री श्रीगुरुवरणैक शरणस्य
मनसुल्लरायमोरस्य



गजगुरु पं० हरिदत्त श्यामसो
विद्यारत्न, विद्यालङ्कार,
धर्म धुरंग

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

पुराण विद्या

मानवीय जिज्ञासा की उत्कट पिपासा को गवेषणा द्वारा शान्त किया जाता है। गवेषणा का आधार है प्राचीन साहित्य, प्राचीन निर्माण तथा पुरातत्त्व सफल जिज्ञासा से देश एवं जाति की प्रायः सब समस्याओं का सुलभ और उपयोगी समाधान हो जाता है। गवेषणा से ही वेदादि सच्चाख तथा कालोपयोगी वैज्ञानिक सिद्धियाँ प्रकाशित और व्यवहृत हुई हैं। प्रखर क्रान्तिकारी जीवन का उद्गम गवेषणा है, तत्त्वानुसन्धान, तत्त्वचिनिमय एवं तत्त्व चिन्लेपण से कितनी गूढ़ और बलवती कार्योपयोगी शक्तियों का आदान-प्रदान व्यवहार में आ रहा है यह सब गवेषणा का ही फल है।

भारतीय गवेषणा के स्रोत पुराण ग्रन्थ हैं। वेदोंमें आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिर्भौतिक, दैव, मानुषी, आसुरी तथा चैतन्य एवं जड सब प्रकार की गवेषणा का सूक्ष्मरूप से विधान है। ब्राह्मण भाग और आरण्य भाग में विशेषतः आधिदैविक एवं अधियज्ञ की गवेषणा प्रधानतया दिखाई देती है। पुराणों में सब प्रकार की बौद्धिक, व्यावहारिक, नैतिक, एवं सांस्कृतिक गवेषणाओं को इतिहास और कथानक के स्वरूप में

आकर्षक और बुद्धिगम्य साहित्य में श्री वेदव्यासजी ने विस्तृत किया है। इसमें न केवल स्मृति शास्त्राभिप्रेत, आचार, व्यवहार प्रायश्चित्तादि दैनिक क्रियाओं की गवेषणा मात्र है, अपितु मनुष्य जीवनोपयोगी महता भावनाओं का विस्तृत विधान है। भारतीय ज्ञान गाथा में वेद वेदार्थ का ज्ञान प्राप्त करने में मनुष्यता रूपी रासायनिक निधिकी प्राप्ति यताई गई है। “इतिहासपुराणाम्यां वेद समुपवृंहयेत्” महाभारतादि इतिहास तथा अष्टादश पुराणों को समझने से वेद की निधि प्राप्त हो सकती है।

बिना पुराण ग्रन्थों के अध्ययन से तथा निरकादि शास्त्रों के न जानने से वेदार्थ का यथार्थ ज्ञान एवं मानव जिज्ञासा की पूर्ति असम्भव है। तपस्वी कृष्णद्वैपायन वेदव्यासजी ने उत्तर भीमासा ब्रह्मसूत्र में वेद प्रतिपाद्य अध्यात्म-निष्ठा से त्रिविध सन्ताप से मुक्त होने का सरल उपाय ज्ञाननिष्ठा का प्रतिपादन किया है तथापि ज्ञाननिष्ठा का परिपाक और स्थितप्रज्ञ भूमि का साधन पुराण पाठों का अध्ययन बताया है। प्रत्येक साधन को बुद्धि में सरलता पूर्वक इतिहास कथानक ही ला सकते हैं। यजुर्वेद में “ईशावास्यमिदं^१ सर्वं यत्किञ्च जगत्या जगत् तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृध कस्य स्विद्धनम्”। मनुष्यता के विकास का पूरा २ साधन इस मन्त्रमें आया है परन्तु केवल मन्त्र पाठ और उसके अर्थ ज्ञानमात्र से ही जीवन में उस भावना का अभ्युपगम सञ्चार होना कठिन है अतः पुराणों में जो सत्यनिष्ठा, त्याग निष्ठा, अद्रोह निष्ठा के इतिहास हरिश्चन्द्र शंखलिखित एवं

व्यवन आदि के उन इतिहासों से मनन करते हुए रोमाञ्चकारी क्रान्ति एवं अधुधारा पात से जीवन में सत्य एवं करुणा का रासायनिक सञ्चार तत्काल होने लगता है। अतः वेदों में “सत्यं वद धर्मञ्चर” आदि वेद वाक्य बोधित अर्थों का इतिहास कथानक के रूप में चार और ग्राह्य प्रयास वेदव्यासजी ने पुराण ग्रन्थों में किया है।

मानवीय ऐहिक, एवं पारमार्थिक जिज्ञासाओं की सफलता रूपी कल्प पादप अष्टादश पुराण व्यासजी के द्वारा प्रकट हुए हैं।

यद्यपि पौराणिक शैली प्रधानतया त्रैगुण्य रचना और प्रकृति को विकाशक है और प्रत्येक पुराण में गुणत्रय और गुणात्तौ संसार और अव्यक्त ब्रह्म का प्रतिपादन और उस प्रतिपाद्य की प्राप्ति के विधान हैं। तथापि कोई पुराण प्रधानतया सात्त्विक और कोई राजसिक एवं कोई तामसिक होनेसे ६ होते हैं। नवशक्त्यात्मक और नवशिवात्मक होने से अठारह संख्या होती है वस्तुतः संख्या नौ ही है। परन्तु तन्त्र शास्त्र में शिवशक्त्यात्मक योग से ६ संख्या अष्टादश हो जाती है।

इसी सिद्धान्त पर अष्टादश पुराण, अष्टादश प्रधान स्मृतिकार, अठारह पर्व, अष्टादश गीता के अध्याय आदि होते हैं। अठारह पुराणों को गणना इस प्रकार है।

ब्रह्म, पद्म, विष्णु, वायु, भागवत, भविष्य, नारद, मार्कण्डेय, ब्रह्मवैवर्त, अग्नि, लिङ्ग, वराह, वामन, मत्स्य, कूर्म, स्कन्द, गरुड और ब्रह्माण्ड।

निरुक्त में पुराण शब्द का निर्वचन इस प्रकार आया है :—
 “पुरा नमं भवति” जिसकी नवयुति सयसे प्रथम प्रगट हुई वह पुराण है। इसलिये भगवान् को भी पुराणपुरुष कहते हैं। पुराण का अर्थ जीर्ण नहीं है अपितु आदि विकास का है। गीता में भगवान् की प्रार्थना में आया है “कवि पुराणमनुशासितारं” भगवान् क्रान्तदर्शी तथा पुराण होने से सयके अनुशासक हैं अतः पुराण शब्द से आदि साहित्य का तात्पर्य है। आदि साहित्य वह है जिसमें आदिदेव आत्मज्ञान का प्रबोध हो इस आदि विद्या को मानव जागृति के हेतु एवं जगत्कल्याणार्थ वेदव्यासजी ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है—

“सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च ।

वंशानुचरितञ्चैव पुराणं पञ्चलक्षणम् ॥”

प्रधानतया पञ्चलक्षणों को लेकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चतुर्वर्गों का पुराणों में बड़ी प्रभावपूर्ण शैली में इतिहास कथाओं को लेकर मानव संसार के ज्ञान प्रसारार्थ विश्व में विस्तार किया है। जितना सरलतासे पुराणोंके द्वारा चतुर्वर्ग सिद्धि का साधन मिलेगा उतना अन्यत्र नहीं। व्यासजी ने अष्टादश पुराणों में इतना महान् साहित्य और विज्ञान, कला, योग तथा तपस्या सयका सार परोपकार अर्थात् सब जीवमात्र पर दया और मैत्री करणा करना पुण्य कहा है। दूसरों को पीड़ा देना पाप है। यह पाप पुण्य की परिभाषा मानव प्रगति को कितने सुचारु रूप से जीवनचर्या का आधार बनाने के लिये आदेश करती है

और मनुष्यता का कितना सुन्दर मौलिक आचरण बता रहा है।

अष्टादश पुराणानां व्यासस्य वचनद्वयम् ।

परोपकारः पुण्याय पापाय परपोडनम् ॥

पुराणोंमें सत्य की गवेषणा पर महागज सत्यवादी हरिश्चन्द्र के कथानक से ज्ञात हो जायगा कि हरिश्चन्द्र जैसे सत्यव्रत आदर्श राजा ने सत्य को रोज में कितना मूल्य लगाया है। सुकन्या ने देवियों की दृढ़ निष्ठा से अपनी निष्ठा और सत्य से किस अलौकिक चमत्कार की सिद्धि प्राप्त की है यह आप लोगों से छिपा नहीं है। भगवान् रामचन्द्र की जीवन चर्चा में उनके चरित्र की विशेषता और मर्यादा की गवेषणा की कैसी हृदय-प्राप्ति शिक्षा बताई है। देखिये—जनमत के सामने झुक कर उन्होंने अपनी धर्मपत्नी सती सीता को छोड़ दिया। पैतृक धनुशासन और आज्ञा का आदर्श स्थिर करने के लिये राज्य तक का त्याग किया एवं दुराचार शमन के लिये एक अधितन्त्रवादी अधिनायक का विध्वंस किया। जो आदर्श श्रोगम के चरित्र में है जिस उच्च भूमिका पर समाज के जीवन का नैतिक, सामाजिक, चारित्रिक, धार्मिक, व्यावहारिक, आध्यात्मिक और आधिभौतिक रूप में स्तर प्रतिष्ठित करने का अद्वितीय लक्ष्य है वह संसार की किसी भी सभ्यता में दिखलाई नहीं पड़ता। रामराज्य के शासनिक विचरण को वेदव्यासजी ने इस प्रकार दिया है.—

“न पुत्र मरणं केचिद्रामे राज्य प्रशासति ।”

इसे ही रामायण में महर्षि वात्सीकी ने इस प्रकार कहा है—

न पुत्रमरणं केचिद्द्रक्ष्यन्ति पुर्याःकचिन् ।

नार्यश्चाधिध्यानित्यं भविष्यन्ति पतिप्रताः ॥

राम के राज्य में किसी प्रकार का उपद्रव नहीं होता था । पुण्य शासन का यही आदर्श है संसार के शासन का राम के शासन के अतिरिक्त क्या और दूसरा उदाहरण कहीं मिल सकेगा ?

मार्कण्डेय के चरित्र से दीर्घायु की गवेषणा एवं दिलीप और कौत्स के विनयाधिकार की खोज से विद्या का चमत्कार और आदि मानवीय उच्च नीच भावनाओं की अनुकरणीय गाथाओं से अनेक गुरु शिष्य का सम्यग्ध तथा अनुशासनमय जीवन की घटनाओं की गवेषणा पुराण साहित्य से प्राप्त होती है । इसी प्रकार मानव जीवन को उदात्त बनाने वाली चारित्र्य और पुरुषार्थ की गवेषणा पुराण ग्रन्थों से प्राप्य है । इतना ही नहीं, आध्यात्मिक और आधिदैविक गवेषणा के अतिरिक्त आधिभौतिकवाद और आधिभौतिक सिद्धान्त अणुशक्ति की गवेषणा की भी प्रचुर सामग्री पुराण ग्रन्थों में है ।

पुराण ग्रन्थों से अणुशक्ति का ज्ञान प्राप्त कर वैशेषिक दर्शन-कार कणाद ने आकाश में निश्चेष्ट परमाणु के परस्पर सम्मिश्रण से सप्त पदार्थों की रचना को मीमांसा का प्रशिक्षण बताया है । इस समय अणुगवेषणा पर भौतिक अनुसन्धान के विशेषज्ञों ने संहारक अणु शक्ति का पता लगाया है परन्तु प्रजनन और पालन अणुशक्ति का अभी उनको ज्ञान नहीं है । वह विज्ञान संस्कृत

साहित्य में मिलता है। इस पर ध्यान देकर यन्त्रों द्वारा अनु-
सन्धानकर प्रत्यक्षीकरण किया जाय तो ससार का महान् उप-
कार होगा। जैसे, “तनीयास पासु तव चरणपङ्केरुह भवम् विरञ्चि
सचिन्वन् विरचयतिलोकानविकल्म। बह्व्येन शौरि कथमपि
सहस्रेण शिरसा, हर सभुभ्यैन भजति भसितोद्भूतविधिम्

॥ (सौन्दर्यलहरी)

अर्थात् शक्ति जिसे भगवती या महाशक्ति के नाम से
संस्कृत साहित्यमें कहा गया है उस आकाश रूपिणी अव्यक्त
शक्ति से अणुवृष्टि हुई। उन अणुओं में से सर्जनात्मक अणुओं को
संचित कर ससार का रचना की गई। इसे ब्राह्मी अणुशक्ति कहा
है। दूसरे प्रकार के अणुओंको गवेषणा द्वारा संचित कर वैष्णव
अणुसे ससार की पालनात्मक सामग्री यनी है। संहारात्मक अणु
(विस्फोटक पदार्थ) एकत्र कर रौद्र अणुओं के पिण्डीकरण
से ससार के विनाश की शक्ति बनी है। इस क्रम से ब्राह्मी,
वैष्णवी, और रौद्र अणुशक्ति—ये तीन प्रकार के अणु
बताये गये हैं। इस गवेषणाको यदि वर्तमान अणु परीक्षण समिति
आधुनिक साधनों से गम्भीर परीक्षण का प्रयत्न करे तो वर्तमान
काल भी पुराण काल के सदृश वैज्ञानिक महत्त्व को प्राप्त कर
सकता है।

पुराणों में सिद्धपीठ स्थली, भूमण्डलके विभाग, पुण्यसरिता
महानद्, सरोवर, भूगर्भवाहिनी नाडिया, मरुस्थली और शस्यश्यामल
भूभाग आदिका वर्णन दिया है जिनसे प्रचुर मात्रा में ब्राह्मी,

वेष्णवी और रौद्री आणवी शक्ति के विषय में अनुसन्धान सफल हो सकते हैं। स्कन्द पुराण में एक राजकन्या बर्करी नामकी आई है जिसने शारीरिक निर्माण के कारणों का ज्ञान प्राप्त कर अपने मुखमण्डल को वैज्ञानिक प्रक्रियाओं द्वारा बकरी मुख से इसी देह में सुन्दर मुखमण्डल के रूप में बदल दिया और स्वयं विधुवदना बन गई। इसके आठ भाई और एक बहिन थी। उस राजा ने समस्त देश नव विभागों में विभाजित कर प्रत्येक को एक एक खण्ड दिया था तब से नवखण्ड नामसे भारतवर्ष की रूपाति हुई। उन पृथक् पृथक् खण्डों में अनेक प्रकार के भूगर्भगत धातुओं का वर्णन है। पुराणों में केवल भूमिकी ही गणना नहीं है अपितु आकाशचारी ग्रह नक्षत्रों की दूरी और उनकी गति, शिशुमार चक्र, ध्रुवस्थान आदि तथा उत्तरायण, दक्षिणायन ऋतु और मास विज्ञान भी पर्याप्त मात्रा में है। इसलिए पुराण ग्रन्थ भारतवर्ष की बड़ी निधि है।

गुरुमण्डल के संरक्षक मनसुखराय मोरजी ने स्मृति एवं निरुक्त का तथा पुराण ग्रंथों का स्वयं अध्ययन कर मानव जीवन की निधि जानकर गुरुमण्डल के प्रकाशन ग्रन्थों में पुराण प्रकाशन का कार्य तन, मन, धनसे प्रारम्भ कर दिया है। मोरजी के आजकल समाचार पत्रों में हिन्दी और संस्कृत के लेख पढ़ने से ज्ञात होता है कि उनकी उत्तरोत्तर विद्या प्रकाशन की प्रगति अद्भुत तीव्र भावना में है।

श्री मोरजी ने मत्स्य पुराण, अग्नि पुराण और लिङ्ग पुराणको

मनन कर कितनी ही अज्ञात समस्याओं का सुचारु रूप से समाधान कर दिया है। मत्स्य पुराण से श्राद्ध कर्म(अ० १६)का यथार्थ ज्ञान अर्थात् मृतात्मा जिस योनि में हो पुत्रों से शास्त्र विहित श्राद्धाज उसे उस योनि की तृप्ति के पदार्थ में परिणत होकर मिलता है। अग्नि पुराण और लिङ्ग पुराण से तो उन्होंने मनुष्य हित का बहुत साहित्य एकत्रित किया है। पुराण प्रकाशन में उन्होंने सबसे प्रथम उत्पत्ति स्थिति सहार इस क्रम के अनुसार उत्पत्ति प्राधान्य ब्रह्मपुराण का प्रकाशन अग्रिम रक्खा है। संस्कृत साहित्य में आप देखेंगे प्रथम उत्पत्ति प्रकरण तत्र स्थिति अनन्तर लय। आदि कवि वाल्मीकि के योगवासिष्ठ में यही क्रम आया है।

ब्रह्मपुराण में सृष्टि क्रम से लेकर वंश वर्णन, कर्तव्य वर्णन और तीर्थवर्णन अध्यात्मनिष्ठा आई है। मोरजी ने अपनी भूमिका में अति सुन्दरता से पुराण मीमांसा का वर्णन किया है। गुरुमण्डल दोन दुर्बल दुःखी जनता के सुख समृद्धि के लिए यथासाध्य कृत प्रयत्न है। इस मण्डल का प्रथम पुष्प श्रमजीवन होने से विचारवती जनता समझ सकती है कि सबसे प्रथम श्रमजीवी कृषक कुलियों की स्थिति पर विचार करना भारत का आदर्श कार्यक्रम सृष्टि के प्रारम्भ से चलता रहा है। श्रमजीवियों की तथा श्रमदुष्टियों की स्थिति को ठीक कर देना भारतीय धर्म परम्परा से चला आया है। यहाँ से ही भूमण्डल के अन्यान्य देशों ने श्रमजीवियों से अन्याय करने का मार्ग त्याग देना सोचा

है। यथा “कामये दुःखतप्तानाम्प्राणिनामार्त्तिनाशनम्” (महाभारत)
 यह भारत का धर्म एवं पुराणों की शिक्षा है। हम प्राणी मात्र को
 आशीर्वाद देते हैं कि इन पुराणों के अध्ययन से आप में दूसरी
 जनता के हित के भाव दैनन्दिन समृद्ध होकर संसार मात्र के मित्र
 बन्धु विश्वस्त होने के पात्र बनें।

पं० ब्रह्मदत्त शास्त्री एम० ए० जो गुरुमण्डल के शास्त्र प्रका-
 शन में श्री मोरजी के आमन्त्रण पर कार्य कर रहे हैं। पण्डित
 जी गुरुमण्डल के बड़े धन्यवाद पात्र है हम इन्हें आशीर्वाद देते
 हैं इनके अक्षुण्ण परिश्रम से जो प्रकाशन कार्य तीव्र गति से हो
 रहा है यह कार्य संसार की शान्ति, सुख एवं परस्पर सद्भावना का
 दृढ़ स्तम्भ बना रहे।

गीता जयन्ती } हरिदत्त शास्त्री
 २०१०

॥ श्रोगणेशायनमः ॥

पुराण परिचय

संसार के प्राणी मात्र इष्ट प्राप्ति और अनिष्ट के परिहार के लिए दिन रात प्रयत्नशील हैं। “इष्टप्राप्त्यनिष्टपरिहारयो-
रलौकिकमुपाय यो वेदयति स वेद” इष्ट प्राप्ति और अनिष्ट
परिहार का जो अलौकिक उपाय बताता है वह ही वेद है। जो
व्यक्ति ज्ञान उपार्जन से संसार की सम्पूर्ण कठिनाइयों को अपनी
विमल बुद्धि द्वारा निर्विघ्नता पूर्वक सरल करते जाते हैं वे
पुण्यार्थी और सफलजन्मा हैं। गंगाजल की सदा बहने वाली
धारा के समान उनके पवित्र ज्ञान की धारणी संसार के प्राणी मात्र
का उद्धार करती है।

ज्ञानका क्षेत्र विमल, व्यापक और अखण्ड है। ज्ञान, इच्छा एवं
प्रयत्न की त्रिपुट्टीसे सत्संस्कार एवं सत्फल मिलते हैं जो वास्तवमे
गौरव की वस्तु है। ज्ञानी वास्तव में धन्य है “विप्राणां ज्ञानतो-
ज्यैष्ठ्यम्” (मनु० २।११५) वे लोक संग्रह की भावना से कर्तव्य
कर श्रेय, साधन के ज्वलन्त उदाहरण बनते हैं। उन्हें सुख
दुःख से पूर्ण इस संसार में ज्ञान रूपी खड्ग से अज्ञान
एवं दुःख का नाश कर सदैव सुख प्राप्ति और आत्म लाभ का
संतोष मिलता है।

प्राचीन भारतीय परम्परा में निष्कारण वेद एवं वेदाङ्ग का अध्ययन अवश्य कर्तव्यत्वेन बताया गया है 'ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः पडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च' (महामाध्य नवान्हिक) ।

भगवान् वेद इस आज्ञा के द्वारा निष्कारण पडङ्ग वेदाध्ययन को कर्तव्य कहते हैं हमारे जीवन के श्वास प्रश्वास के साथ मिला हुई इस निधि का सम्यग्दर्शन पुराण साहित्य में सुन्दरता से प्रतिपादित है ।

भारतीय जीवन से प्रेरणा लेनी हो तो भारतीयों के प्राण स्वरूप श्रुतिस्मृति के शीर्ष स्थानीय पुराणों से लेनी चाहिए । अंगेकिकपुराण साहित्य सम्पूर्ण ज्ञान का भण्डार है । चौदह विद्यास्थानों में महर्षि याज्ञवल्क्य ने इन्हें प्रथम स्थान दिया है — देसिये याज्ञवल्क्य स्मृ० प्रथ० अ० । पुराणन्यायमीमांसा धर्मशास्त्रागमिश्रिता । वेदा स्थानानि विद्याना धर्मरयच चतुर्दश ॥ ३ श्लो० ।

मानव जीवन का लक्ष्य परमात्मप्राप्ति है अपने जीवन में निष्काम धर्म द्वारा त्याग वृत्ति को ग्रहण कर स्वमार्गप्रशस्ति का सुख साधन पुराण है । ये सार्वभेदमय सम्पूर्ण साधन, योग प्रिया सिद्धियाँ मन्त्र, मन्त्र एवं कथाण सिद्धान्तों से परिपूर्ण हैं ।

सम्पूर्ण शास्त्रों में पुराण साहित्य की गरिमा और प्राचीनता प्रसिद्ध है ।

“पुराण सर्वशास्त्राणां प्रथमं ग्रन्थानामृतम् ।

उत्तमं सर्वगोपानां सर्वज्ञानोपपादकम् ।

त्रिवर्ग साधनं पुण्यं शतकोटिप्रविस्तरम् ॥

(पद्मपुराण प्रथमाध्याय)

भावार्थ :—सम्पूर्ण शास्त्रों में सर्वप्रथम पुराणको ब्रह्मार्जी ने स्मरण किया यह सब लोकों में उत्तम, सम्पूर्ण ज्ञान का बताने-वाला धर्म, अर्थ, काम का साधन, परम पुण्यमय और शतकोटि विस्तारवाला है (पुराणों से प्रेरणा लेकर अनेकानेक महर्षियों ने नाना शास्त्र, स्मृति, तन्त्र, उपपुराण, ज्योतिष, मीमांसा, न्यायदर्शन, आधुर्वेद और इतिहास आदि एवं साहित्य नृपार्थों ने अगणित विषयों के ग्रन्थों की रचना की। अतः नाना शाखा प्रशाखाभेद से शतकोटि विस्तारवाले पुराण हैं) ।

इतिहासपुराणञ्च गाथाञ्चोपनिषत्तथा ।

आथर्वणानि कर्माणि अग्निहोत्रकृतेऽभवन् ॥ (पद्म पु०)

इतिहास, पुराण, नाराशंसी आदि गाथा उपनिषद् और आथर्वणिक कर्म अग्निहोत्र करनेवालों के लिये हुए ।

पुराणों के सम्यन्ध ॥ और भी बचन उपलब्ध होते हैं :—

ऋच सामानि छन्दांसि पुराणं यजुषा सह ।

उच्छिष्टाज्जत्रिरे सर्वं दिवि देवादिविष्णिता ॥

(अथर्ववेद ११।७।२४)

भाष्यम् :—ऋचः पादवद्धा मन्त्राः सामानि गीत विशिष्टा मन्त्राः । छन्दांसि गायत्र्युष्णिगादीनि चतुरक्षराधिकानि सप्तसङ्ख्याकानि पुराणं पुरातनवृत्तान्तकथनरूपमार्यान् यजुषा यजुर्मन्त्रेण सह । उच्छिष्टात्—उच्छिष्यमाणात् ग्रहणः सकाशात् जत्रिरे आविर्भूताः ।

यज्ञ से यजुर्वेद के साथ ऋक्, साम, छन्द और पुराण हुए। सुगोपनीयवेदेषु पुराणेषु च दुर्लभम्—(ब्रह्म वे० ३ अध्याय) वेदों में सुगोपनीय और पुराणों में दुर्लभतत्त्व हैं।

वेदेषु च पुराणेषु हरि सर्वत्र गीयते । (मत्स्य०)

वेदों और पुराणों में भगवान् हरि की प्रशस्ति सर्वत्र गाई गई है इस से स्पष्ट है कि वेद और पुराणों का तादात्म्य है।

शतपथ ब्राह्मण का प्रमाण है —

स यथाद्वैधानैरभ्याहितात्पृथग् धूमा विनिश्चरन्त्येव वा अरेऽस्य महतो भूतस्य निःशसितमेतद्भग्वेदो यजुर्वेद सामवेदो ऽथर्वान्द्विरस इतिहास पुराण विद्या उपनिषद् श्लोका सूत्राण्यनु ध्यात्वायानानि व्याख्यानान्यस्यैतानि सर्वाणि निःशसितानि ।

(बृहदारण्यक उपनिषद् २।४।१०)

यथाऽप्रयत्नेनैव पुरुष निश्वासो भवत्येवमेव । भगवन्निश्वास के रूप में भगवत्स्वरूप प्रतिपादन विराट् विश्वरूपदर्शन पुराणों की विशेषता है यही पुराण और वेदों की एकता है।

शतपथ ब्राह्मण १३ अ० ४३।६ में पुराण वेद सीऽयमिति “चित्रितपुराणमाश्रित्वैवमेवाध्वर्युः” कह कर वेद का पुराण है यह प्रतिपादित है। आश्वलायन श्रौतसूत्र में पुराणों का व्याख्यायकत्व वर्तमान निरूपण किया है।

भाशातरात्रादायुष्मता यथा वर्तितयन्तो माङ्गल्यानीतिहास पुराणानीत्यात्वापयमानस्त ग्रहणम् ।” ४।१।

मनुजी ने विशेषरूप से उसे स्पष्ट किया है —

स्वाध्यायं आचयेन् पित्र्ये धर्मशास्त्राणि चैव हि ।

आख्यानातीतिहासाश्च पुराणानि खिलानि च ॥

३ अध्याय—२३२

पित्र्युद्देश्यक स्वाध्याय कर धर्मशास्त्र, पुराण, इतिहास और सम्पूर्ण आख्यानों को इस अक्षर पर सुनाओ । पुराणों का कथन वेद के समान ही अप्रमत्त है —

पुराणो मानवो धर्म साङ्गो वेदश्चिकित्सक ।

आद्या सिद्धानि चत्वारि न कर्तव्यानि हेतुमि ॥

ब्रह्मोक्त्याद्ययम्य संहिता १—४७ ।

पुराण, मानव धर्म, साङ्ग वेद, चिकित्सा शास्त्र ये आदि काल से सिद्ध हैं इन्हें कुतर्कों से दूषित नहीं करना चाहिये ।

पुराण वेदों के समान ही प्राचीन है ।

पुराण सर्व शास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणा स्मृतम् ।

अनन्तरञ्च षड्रेभ्यो वेदास्तस्य चिनिर्गता ॥

मत्स्यपुराण ७३—१

भारतीय सस्कृति के रक्षक के रूप में इनका स्वाध्याय मनन और उपदेशानुसार आचरण सदा ही इष्ट फल को देनेवाला है ।

वेदाश्च सेतिहासाश्च पुराणा देवतागणा ।

भूधरा सागरा सर्वे पूजनीया समन्ततः ॥ पद्मपुराण ।

वेद, पुराण, इतिहास, देवतागण, पर्यंत और सागर इनको सदा ही पूजा करनी चाहिये ।

याज्ञवल्क्य स्मृति १ अध्याय ४५ श्लोक में आया है :—

वाकोवाक्यं पुराणञ्च नाराशंसीश्च गाथिकाः ।

इतिहासांस्तथा विद्यां योऽधीते शक्तितोऽन्वहम् ॥

प्रति दिन वाक्योवाक्य आपस में वार्तालाप पुराण, नाराशंसी गाथा, इतिहास और अन्य सभी विद्याओंका यथाशक्ति स्वाध्याय करना चाहिये । (इस से यह स्पष्ट प्रगट होता है कि प्रथम ज्ञानार्जन में ऊहापोहमूलक वार्तालापसे स्थिर सिद्धान्त पुराणका प्रतिपादन होता है नाराशंसी गाथा, यहविधान, इतिहास और विद्याओं का तदनन्तर निरूपण है जो भारतीय साहित्य परम्परा में अद्वितीय है) संक्षेप में पुराण का महत्त्व अतुलनीय है :—

इदं पुराणं परमं पुण्यं वेदैश्च सम्मितम् ।

नानाश्रुतिसमायुक्तं नाम्स्तिकाय न कीर्तयेत् ॥

मत्स्य पुराण १४७ ८५

यह पुराण परमपुण्यमय, वेदार्थयुक्त, नानाश्रुतिसमवेत है, इसे नाम्स्तिक लोगों को न सुनावे ।

शृणुष्यादि पुराणेषु वेदैर्म्यथ यथाश्रुतम् । मत्स्य २६३—१४

आदि पुराणों में और वेदों में अलौकिकतत्त्व प्रतिपादित है ।

इस प्रकार यह सिद्ध हो गया कि पुराण चतुर्दिक् प्राण हैं प्रथम परमपिता परमान्मा के निश्वास भूत प्राण हैं, वेदों के ये प्राण हैं । सम्पूर्ण प्राणियों के उद्धारार्थ इनका आविर्भाष हुआ इसलिये मारे प्राणियों के प्राण हैं और सम्पूर्ण ज्ञान का मन्त्ररूप स्वर होने से उसके भी प्राण ये पुराण हैं ।

ज्ञान, कर्म, अभ्यास एवं ध्यान सभी का संश्लेषमें बहुत महत्त्वपूर्ण वर्णन इनमें है। जीवन के जितने सैद्धान्तिक एवं यथार्थवादी दृष्टिकोण हैं उनका पुराण विगढ़ीकरण कर संसार का महान् उपकार साधन किया है।

जीवन की दुविधा कष्ट एवं दुःखों को रोकने का सरल उपाय बताने वाले पुराण हैं इनसे आयालवृद्ध शूद्रादि नर नारी समान रूप से लाभ उठा सकते हैं। भवभोग का यह अमोघ रसायन है। सम्पूर्ण समस्याओं को सरल उपाय से सुलझानेवाली यह अद्वितीय समाधानकारक प्रहाराणि भगवान् कृष्ण द्वैपायन व्यासदेव की सहज कृपा का फल है। संसार ताप से प्रताडित लोगों को सान्त्वना, अन्धकारमें पड़े हुए को प्रकाश, भूले भटकों को समार्ग, निराश लोगों को आशा की उद्योति देने वाले, शोक उद्वेग से पीडित जनों को उल्लासमय प्रसाद, कर्तव्य विमुक्त को कर्तव्यज्ञान, पापियों के पाप नाश का सहज साधन, राजनीति विशारदों को नीति शिक्षा, निष्काम कर्मियों को साधन उपदेश, भक्तों को भक्ति का मार्ग और ज्ञानियों को दिव्य मार्ग का प्रकाश ये पुराण देते हैं।

संश्लेष में, जो जिज्ञासु जिस उच्च लक्ष्य से इनमें थड़ा चिन्चास पूर्वक मनोयोग देकर स्वाध्याय करता है वह एक चतुर गोताघोर के समान अनन्त राशि की धान समुद्र में से अमृत्य रत्न निकाल कर अपना उद्देश्य पूर्ण कर नेता है वैसे ही यथेच्छज्ञान की तृप्ति और लोक कल्याण की भावना इन महापुराणों की आवृत्ति और

अमूल्य शिक्षाओं के आचरण से उद्बुद्ध हो जाती है। यदि अतीत के गौरव को पुराण घतलाते हैं तो वर्तमान के निर्माण और भविष्य को कृति के लिये उनका महत्त्व कम नहीं है। सम्पूर्ण प्राणियों को शाश्वत सुख और शान्ति का वरदान देकर विपत्तिग्रस्त, कलह क्लेश से दुःखित, सन्देह एवं अविश्वास की सशक्त पाश में जकड़े प्राणियों को मुक्ति सन्देश देते हैं। भयरोग से ग्रस्त जनता के उद्धारार्थ पुराण ही एक मात्र शरण है।

साधना के मार्गों में ज्ञान, कर्म, भक्ति और उनके विविध भेदों के साथ कठिनता से प्राप्य और सुलभता से गम्य कई लक्ष्य भेदोपभेदों के साथ बने हैं उन सबका निबन्धन पुराणों में है। इसके साथ ही सभी श्रेणी एवं वर्ग के व्यक्तियों के लिये उनके अधिकारानुसार अलग २ जीधन में उतारने योग्य सन्मार्ग साधन, उनमें धाने वाले विघ्नों और उनसे छुटकारा पाने का बड़ा ही सुन्दर और रोचक उपाय प्रतिपादित किया गया है। ज धन और जगत् के परिपूर्ण स्वरूप की प्राप्ति अभ्युदय और निःश्रेयस् की सिद्धि की प्राप्ति में जीव मात्र का कल्याण साधन कर मानव आगे बढ़ कर परमात्मतत्त्व का योग्य अधिकारी कैसे बन सकता है इन सब का सुन्दर साधनों और शाश्वत चिरन्तन सत्य उपदेशों से परिपूर्ण इतिहास से युक्त विषयों का पुराणों में विशद निरूपण है।

पुराण में प्रतिपादित सर्ग, प्रति सर्ग, वश, मन्वन्तर एवं वंशानुचरित इस पञ्चाङ्ग से ख्रिष्ट में अनादि काल से चले आते

ये पुराण सात्त्विक, राजस और तामस भेद से तीन प्रकार के हैं। सात्त्विक में विशेष भगवान् हरि का, राजस में ब्रह्माजी का और तामस पुराणोंमें शिव और अग्नि का माहात्म्य वर्णन है। पितरों और सरस्वती का सर्वत्र ही वर्णन मिलता है। अठारह पुराणों के रचयिता भगवान् व्यासजी हैं।

पुराण मानव के ऐहिक आमुष्मिक लोककल्याण साधन के सच्चे मार्गदर्शक हैं। एक ओर जहां सृष्टि की नियमावली का यथार्थ परिदर्शन करने के लिये श्रुति का अनुगमन करती हुई स्मृतियां हमारे लिये विधान निर्माण करती हैं तो अनादिकाल से जीवन में होती आई अपूर्णता के फलस्वरूप भूलों से मानव को बचाने के लिये पुराण सफल ज्ञानचक्र हैं। इनमें भारव्यान, उपाख्यानो द्वारा मानव जाति का मार्ग प्रशस्त करने के लिये व्यासजी की त्रिकाल अबाधित सत्य की अनुभूति पूर्णज्ञान के फलित सत्य इन पुराणों से संसार का कितना महान् उपकार हुआ है यह बताने की आवश्यकता नहीं है।

सुतराम्, भारतीय जीवन में पुराणों का महत्त्व निर्विवाद है यह भगवद्भिःश्वास रूप वेदों के समान ही प्राचीन तथापि चिरनवीन और चिरन्तन सत्य की अनुभूतियों का चरम उत्कर्ष बताने वाले सिद्धान्त ग्रन्थ है—पुरे अग्रे अनति गच्छति इति पुराणम्। मानव को मार्ग दर्शन करने के लिये आगे चलाने वाले साहित्य का नाम पुराण अन्यर्थ है।

ब्रह्माण्ड पुराण में लिखा है :—

यो विद्याच्चतुरो वेदान् साङ्गोपनिषदो द्विज ।
न चेत्पुराणं सम् विद्यान्नैव स स्याद्विचक्षण ॥
यस्मात्पुराह्यनकीद पुराणं तेन तत्स्मृतम् ।
निरुक्तमस्य यो वेद सर्वपापै प्रमुच्यते ॥

अध्याय—१

भावार्थ :—

जो द्विज चारों वेदों को जानता है और साङ्गोपाङ्ग विद्याओं में पारङ्गत है यदि पुराण का उसे ज्ञान नहीं तो वह विद्वान् नहीं हो सकता । सर्वप्रथम ज्ञान का प्रकाश करने से इनकी पुराण सज्ञा हुई । इसका जो निर्वचन जानते हैं वे सब पापों से छूट जाते हैं ।

अनादि नित्य और शाश्वत होने से अनादि चिरन्तन शाश्वत तत्त्व का ही प्रतिपादन इनकी विशेषता है । सर्व साधारण की चतुर्दिक् विकसित उन्नति और आभ्युदयिक निःश्रेयस् साधन सम्पत्ति के ये अक्षय भण्डार हैं । आप की जैसी रुचि, श्रद्धा एवं निष्ठा होगी वैसी ही रत्न निधि आपको प्राप्त होगी । ज्ञान, वैराग्य, भक्ति, प्रेम, श्रद्धा, विश्वास, यज्ञ, दान, तप, सयम, यम, नियम, सेवा, भूतदया, वर्णधर्म, आश्रमधर्म, राज धर्म, मानवधर्म, व्यक्ति धर्म, स्त्री धर्म, सदाचार और नाना श्रेणियों के पुरुषों के विभिन्न कल्याणकारी उपदेश सुन्दर सरल और उपादेय भाषा में

इनमें लिखे गये हैं । इससे ऊपर पुरुष, प्रकृति, महत्तत्त्व, प्रकृति, विकृति, भूगोल, खगोल, ऋषि, मुनि वंशों का वर्णन, राजवंश तथा स्थावर जड़म सृष्टि का बहुत सुन्दर रीति से सूक्ष्म विवेचन किया गया है ।

इस आदिपुराण ब्रह्मपुराण को आप महानुभावों के फर-कमलों में उपहार प्रस्तुत करते हुए अपार आनन्द होता है ऊपर प्रतिपादित ये सभी विषय आख्यान रूपमें इस महापुराण में आये हैं ।

मत्स्य महापुराण को ५३ वीं अध्याय में पुराणों का परिगणन करते हुए जो विवरण दिया गया है वह विशेष रूपसे प्रयोजनीय है अथ. उसका आवश्यक अंश यहां प्रस्तुत किया जाता है :—

पुराणानि दशाष्टौ च साम्प्रतं तदिहोच्यते ।

नामतस्तानि वक्ष्यामि शृणुष्व मुनिसत्तमाः ।

ब्रह्मणाभिहितं पूर्वं यावन्मात्रं मरीचये ।

ब्राह्मन्त्रिदश साहस्रं पुराणं परिकीर्त्यते ।

एतदेव यदापन्नमभूदैरण्मयं जगत् ।

तद्वृत्तान्ताश्रयं तद्वत् पाद्ममित्युच्यते बुधैः ।

पाद्मं तत्पञ्चपञ्चाशत्सहस्राणीह कथ्यते ।

पाराह कल्प वृत्तान्तमधिकृत्य पराशरः ।

यत्याह धर्मानखिलान् तद्युक्तं वैष्णवस्मिदुः ।

त्रयोविंशति साहस्रं तत्प्रमाणं विदुर्बुधाः ।

श्वेतकल्प प्रसङ्गेन धर्मान् धायुरिहाब्रवीत् ।

यत्र तद्वायवोर्यस्यात् रुद्रमाहात्म्यसंयुतम् ।
 चतुर्विंशत्सहस्राणि पुराणं तदिहोच्यते ।
 यत्राधि कृत्य गायत्रीं घर्ण्यते धर्मविस्तरः ।
 वृत्रासुरघोषेतं तद्भागवतमुच्यते ।
 सारस्वतस्य कल्पस्य मध्ये ये स्युर्नरोत्तमाः ।
 तद् वृत्तान्तोद्भवंलोके तद्भागवतमुच्यते ।
 अष्टादश सहस्राणि पुराणं तत्प्रचक्षते ।
 यत्राह नारदोधर्मान् बृहत्कल्पाश्रयाणि च ।
 पंचविंशत्सहस्राणि नारदीयं तदुच्यते ।
 यत्राधिकृत्य शकुनीन् धर्माधर्मविचारणा ।
 व्याख्याता वै मुनिप्रश्ने मुनिमिधर्मचारिभिः ।
 मार्कण्डेयेन कथितं तत्सर्वं विस्तरेण तु ।
 पुराणं नवसाहस्रं मार्कण्डेयमिहोच्यते ।
 यत्तदीशानकं कल्पं वृत्तान्तमधिकृत्य च ।
 षशिष्ठायाशिना प्रोक्तमग्नेयं तत्प्रचक्षते ।
 तच्च षोडशसाहस्रं सर्वकतुफलप्रदम् ।
 यत्राधिकृत्य माहात्म्यमादित्यस्य चतुर्मुखः ।
 अधोरकल्पवृत्तान्तप्रसङ्गेन जगत्स्थितम् ।
 मनवे कथयामास भूत ग्रामस्य लक्षणम् ।
 चतुर्दश सहस्राणि तथा पञ्चशतानि च ।
 भविष्य चरितप्रायं भविष्यन्तदिहोच्यते ॥
 रथन्तरस्य कल्पस्य वृत्तान्तमधिकृत्य च ।

सावर्णिर्नानारदाय कृष्णमाहात्म्यमुत्तमम् ॥
 यत्र ब्रह्म घराहस्य चोदन्तं घर्णितं मुहुः ।
 तदष्टादश साहस्रं ब्रह्मवैधर्तमुच्यते ॥
 यत्राग्निं लिङ्गं मध्यस्थं प्राहदेवो महेश्वरः ।
 धर्मार्थकाममोक्षार्थमाग्नेयमधिहृत्य च ॥
 कल्पान्तैलैङ्गमित्युक्तं पुराणब्रह्मणास्ययम् ।
 तदेकादश साहस्रम् ।

महावराहस्यपुनर्माहात्म्यमधिकृत्य च ।
 विष्णुनाभिहितंक्षौण्ये तद्वाराहमिहोच्यते ॥
 मानवस्य प्रसङ्गेन कल्पस्य मुनिसत्तमा ।
 चतुर्विंशत्सहस्राणि तत्पुराणमिहोच्यते ।
 यत्र माहेश्वरान्धर्मानधिहृत्यच पण्मुख ।
 कल्पेतत्पुरुषवृत्तं चरितैरूपवृंहितम् ।
 स्कंदनाम पुराणञ्च ह्येकाशोतिनिगद्यते ।
 सहस्राणिशतञ्चैकमितिमर्त्येपुगद्यते ।
 त्रिविक्रमस्यमाहात्म्यमधिहृत्य चतुर्मुख ।
 त्रिचर्गमभ्यधात्तच्च धामनं परिकीर्तितम् ।
 पुराणं दशसाहस्रं धूर्मं कल्पानुगं शिवम् ।
 यत्र धर्मार्थकामाना मोक्षस्य च रसातले ।
 माहात्म्यं कथयामास धूर्मरूपी जनार्दन ।
 इन्द्रद्युम्न प्रसङ्गेन प्रहृषिभ्यः शकसन्निधौ ।
 अष्टादश सहस्राणि लक्ष्मीं कल्पानुपङ्गिकम् ।

श्रुतीनां यत्र कल्पादौ प्रवृत्त्यर्थं जनार्दनः ।
 मत्स्यरूपेण मनवे नरसिंहोपवर्णनम् ।
 अधिकृत्याग्रधीत्सप्त कल्पवृत्तं मुनीश्वराः ।
 तन्मात्स्यमिति जानीध्वं सहस्राणि चतुर्दश ।
 यदा च गारुडेकल्पे विश्वाण्डादुगरुडोद्भवम् ।
 अधिकृत्याग्रधीत्कृष्णो गारुडं तद्विहोच्यते ।
 तदष्टादशकञ्चैव सहस्राणीहपश्यते ।
 ब्रह्मा ब्रह्माण्डमाहात्म्यमधिकृत्याग्रधीत्पुनः ।
 तच्च द्वादश साहस्रं ब्रह्माण्डं द्विशताधिकम् ।
 भविष्याणाञ्च कल्पानां श्रूयते यत्र विस्तरः ।
 तद्ब्रह्माण्डपुराणञ्च ब्रह्मणा समुदाहृतम् ।
 चतुर्लक्षमिदं प्रोक्तं ध्यासेनाद्भुत कर्मणा ।
 उपमेवान्प्रवक्ष्यामि लोके ये सम्प्रतिष्ठिताः ।
 पाद्मे पुराणे तत्रोक्तं नरसिंहोपवर्णनम् ।
 तच्चाष्टादश साहस्रं नारसिंहमिहोच्यते ।
 नन्दाया यत्र माहात्म्यं कार्त्तिकेयेन धर्ष्यते ।
 नन्दी पुराणं तल्लोके रात्र्यातमितिकीर्त्यते ।
 यत्र शाम्भुं पुरस्कृत्य भविष्येऽपिकथानकम् ।
 प्रोच्यते तत्पुनर्लोके शाम्भुमेतन्मुनिश्रुताः ।
 पुरातनस्य कल्पस्य पुराणानि विदुर्बुधाः ।

उपरि वर्णित विवरण में ब्रह्म, पद्म, विष्णु, शिव,
 (वायु) देवीभागवत, (भागवत) भविष्य, नागद, मार्कण्डेय,

ब्रह्मवैवर्त, अग्नि, लिङ्ग, वराह, वामन, मत्स्य, कूर्म, स्कन्द, गरुड़ और ब्रह्माण्ड इन अठारह पुराणों में आये हुए उनके प्रतिपाद्य विषयों का संक्षेप में प्रतिपादन है।

महा पुराणा के सम्बन्ध में विभिन्न मत हैं पाठकों की सेवा में वामन पुराण का एक प्रचलित श्लोक प्रस्तुत है जिसमें आद्याक्षर से अठारहों पुराणों का पूर्ण ज्ञान हो सकता है।

मद्वयं भद्वयंचैव व्रत्रयं च चतुष्टयम्

अनापलिङ्ग कृस्कानि पुराणानि पृथक् पृथक्।

म द्वयम् = मार्कण्डेय एवं मत्स्य।

भ द्वयम् = भागवत एवं भविष्य।

वृ त्रयम् = ब्रह्म, ब्रह्माण्ड एवं ब्रह्म वैवर्त।

च चतुष्टयम् = विष्णु, वराह, वामन तथा वायु।

अ = अग्नि। ना = नारद, प = पद्म।

लि = लिङ्ग। श = गरुड़। कृ = कूर्म और स्क = स्कन्द।

कुछ पिछट्टन्द महा पुराण, उप पुराण, अतिपुराण और पुराण भेद से अठारह अठारह संप्रदाय मानते हैं। उनके अनुसार महा पुराण ये हैं :—

ब्रह्म, पद्म, शिष्य, विष्णु, भागवत, नारद, मार्कण्डेय, अग्नि, भविष्य, ब्रह्मैषानं, लिङ्ग, वराह, स्कन्द, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड़ और ब्रह्माण्ड।

उप पुराण :— भागवत, माहेश्वर, ब्रह्माण्ड, आदित्य, पराशर, सौर, नन्दिकेश्वर, रामच, कालिका, पारण, भीमनस्,

मानव, कापिल, दुर्वासस्, शिव धर्म, बृहन्नारदीय, नारसिंह, सनत्कुमार ।

अति पुराणः— कार्तव, ऋजु, आदि, मुद्गल, पशुपति, गणेश, सौर, परानन्द, बृहद्धर्म, महामागवत, देवी, कल्कि, भार्गव, वशिष्ठ, कौर्म, गर्ग, चण्डी और लक्ष्मी ।

पुराण.— बृहद्विष्णु, शिव उत्तर खण्ड, लघु बृहन्नारदीय, मार्कण्डेय, बह्वि, भविष्योत्तर, वराह, स्कन्द, वामन, बृहद्वामन, बृहन्मत्स्य, स्वल्पमन्स्य, लघु वैवर्त और ५ प्रकार के भविष्य ।

मेरी तुच्छ बुद्धि में पुराणों के सम्यन्ध में इस प्रकार के ऋम का जं। भी रूप रहे फिर भी इतना स्पष्ट है कि न्यूनाधिक रूपमें एक या दूसरी सूचीमें सभी पुराणों का इसमें समावेश होगया है ।

समुद्र मन्थन के समय चतुर्दश रत्नों की प्राप्ति उन महामहिम देवासुरों को हुई यह प्रसिद्ध है परन्तु इन पुराणों के अवगाहन से बहुमूल्य असंख्य रत्नों की प्राप्ति होती है यह ध्रुव सत्य है । पुराणों में माहात्म्य कथाओं के प्रसङ्ग में नाना इतिहास और व्यापक उपलब्ध हैं जो महत्त्व पूर्ण हैं । प्रसङ्गानुसार इतना अधिक व्यापक विषयों का समावेश हुआ है कि ध्यान पूर्वक स्वाध्याय करने से एवं उन्हें आचरण का रूप देने से आदर्श जीवन बनाने की प्रत्यक्ष प्रेरणा मिलती है इस महान् ज्ञान निधि को विश्वम्भर का शब्दकोश (Encyclopedia) कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं । पुराणों की विषय सूची इतनी व्यापक है कि उन्हें यहा देना इस छोटे से लेख के कलेवर में सम्भव

नहीं है। हाँ, हम माना पुराणों की मुख्य २ विषयानुक्रमणिका को तत्तत्स्थानों से उद्धृत कर अलग से पाठक महानुभावों के अवलोकनार्थ दे रहे हैं। आशा है, इसको अविकल पढ़ कर विद्वद्वृन्द विषय व्यापकता से उत्साहित होकर सम्पूर्ण पुराण साहित्य के अध्ययन से संसार का हित सम्पादन करेंगे।

अधिकन्तु, तन्त्र मन्त्र इन्हीं के अन्तर्गत हैं। वैद्यक शास्त्र के सभी विषय गरुड पुराण अग्नि पुराणादि सभी मुख्य पुराणों में पाये जाते हैं। दर्शन, विज्ञान, राजनीति तो सभी का क्रमबद्ध प्रतिपादित विषय है। आध्यात्मिक साधना के लिये स्तोत्र, कथन, एवं सहस्रनाम आदि पुराणों में उपलब्ध है। वेदो एवं पुराणों में प्रकृति (पृथ्वी) की गाथा है। वेदों में सश्वरूप से (नारा-शंसी गाथा-यज्ञगाथा) का निरूपण किया है तथा पुराणों में अधिष्ठात्री देवी प्रकृतीश्वरी का विशदीकरण किया है, एवं महर्षियों ने स्मृतियों में इसी आधार पर व्यवहार मार्ग की प्रसस्ति गाई है। वेद, वेदाङ्ग, पुराण एवं स्मृतियों को धर्म-शास्त्र कहा है। ये शाश्वत सत्य हैं। इनके निरन्तर श्रवण मनन एवं निधिध्यासन करने से अपना कल्याण है। १८

इसके साथ साथ जो विवरण भू वृत्तान्त के सम्यन्ध में आया है उसमें तीर्थ प्रधान वर्णन होने से गर्वपणा और अनु-सन्धान कर्ता महानुभावों को पूर्ण सहायता मिल सकती है।

सम्पूर्ण पुराणों में प्रथम यह ब्रह्म पुराण आदिकल्प का है इसीलिये सुमेरु स्थानीय है। आज की विघटित दुरवस्थाओं

का सकेत युगधर्मों के प्रकरणों के पढ़ने से दर्पण में प्रतिबिम्बित दर्शक रिम्म के समान स्पष्ट ज्ञान होता है।

इसके साथ की लगी विषयसूचि का निर्माण इसी उद्देश्य से परिश्रम पूर्वक किया गया है कि विद्वज्जनों की तुलना में संस्कृत के प्रति प्रेम रखते हुए भी संस्कृत भाषा का लाभ न उठाने वाले पुराण प्रेमी महानुभाव इसके विषय ज्ञान से वञ्चित न रहें बल्कि इस सूचि से प्रभावित होकर अधिक संस्कृत की ओर आकर्षित हो अपने संस्कृत के अध्ययन को बढ़ा कर कृतकार्य हों।

अपने गत दर्शकों के दिन प्रति दिन के श्रुति स्मृति एवं पुराणों के स्वाध्याय से मुझे जीवन की गरिमा बढ़ानेवाले तत्त्वों और उसे उच्चस्तर पर ले जाने वाले क्रिया फलापों को हृदयङ्गम करने का सुप्रवसर मिला है। मैं इनका स्वाध्याय करता हुआ अघाता नहीं हूँ जय जय अपने स्वाध्याय कालमें मैं इन ग्रन्थरत्नों को देखता हूँ तो चिरन्तन तथ्य सार्वजनीन लोककल्याण के लिये प्रतिपादित इनके विषय मुझे अधिकाधिक आकर्षित करलेते हैं। मैं इन्हें हृदय से लगा लेता हूँ। फिर दुःख भी होता है कि भारत की इतनी अमूल्य निधि भारतीयों के पास रहते दैन्य, अभाव, और दुर्दशा, कलह आदि जदा समूल नष्ट होने चाहिए वहा वे अपनी जड़ हमारे समाज में इतनी गहरा जमा चुके हैं कि इनसे छुटकारा कठिन सा हो रहा है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि सृष्टि के इन प्राणों का व्यापक रूप में प्रचार होने से ही समूल सुराइया नष्ट हो सकती है।

मेरी सभी महानुभावों से यह चिन्मय प्रार्थना है कि इनमें प्रतिपादित वस्तु तत्त्व को हृदय की विशालता व्यापक दृष्टिकोण और सत्य शिव तथा सुन्दर की रचना के उद्देश्य से अनुशीलन करने का प्रयत्न करें इसी में हम लामान्वित होकर अपना और अपने आत्मोय जन एवं सृष्टि का कल्याण कर सकते हैं ।

अपने जीवन की अनुभूतियों को साकार रूप देनेवाली महती ज्ञान देवता को पूजा अहर्निश स्वाध्यायके रूप में हो (स्वाध्या-
यान्मा प्रमद) इसी लक्ष्य से गुरुमण्डल ग्रन्थमाला के नवम पुष्प के रूप में सम्पूर्ण स्मृतियों का संग्रह प्रकाशित करने का प्रयास किया गया है आशा है शताधिक संख्या में प्राप्त इन स्मृतियों को हस्तलिखित ग्रन्थों की प्रतिलिपियां उपलब्ध हो जाने से जीवन को प्रेरणा और स्फूर्ति देनेवाला महर्षि कल्प उन प्रातः स्मरणीय प्राप्त पुर्यों का मान्य निर्णय संसार को मार्ग दर्शन के लिये मिलेगा । आप महानुभावों की शुभाशीः तथा भूतभावन भगवान् विश्वनाथ के कृपाद्रि कटाक्ष से सफलतापूर्वक प्रकाशित कर प्रस्तुत की जायगी ऐसी आशा है ।

वेदों और पुराणोंका स्वाध्याय हम भारतीयों के अध्ययन एवं पाठ्यक्रम से कितना दूर हो गया है यह सभी महानुभावों को विदित है । इसीका यह दुष्परिणाम है कि विश्व के उपदेष्टा वेदमार्ग प्रवर्तक भारत के गौरव ऋषिमहर्षियों की सन्तान होकर भी हम भारतीय नैतिक स्तर से नीचे गिरते जा रहे हैं और हमारी पतनाघरथा चरम सीमा को पार कर गई है ।

इनके पठनपाठन क्रम का श्री गणेश निरुक्त जैसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ रत्न से कर शनै २ इसके विशद अध्ययन से सारे विश्व को ज्ञान सूर्य का प्रकाश मिले और यज्ञानान्धकार से जर्जर विश्व को महती प्रेरणा मिले इसी उद्देश्य से गुल्मण्डल के दशम पुष्प के रूप में आप महानुभावों को निरुक्त का उपहार प्रस्तुत किया है। हमारी यही एक अमर अमिलाषा है कि सम्पूर्ण वैदनिधि का अत्रिकल प्रकाशन कार्य कोई उदारमना शास्त्रव्यसनी महानुभाव लें तो विश्व का एक बड़ा भारी अभागपूर्ण होगा। इस महान् ग्रन्थ को पुराण प्रेमी शास्त्रैकाध्यायी सिद्धिज्ञों की सेवामें उपस्थित कर यह प्रार्थना करते हैं कि आप लोग वेदवेदाङ्गादि के अध्ययन अध्यापन क्रम को पुनरुज्जीवित कर स्वतन्त्र भारत के उत्थान काल में प्रातः स्मरणीय आर्पण ज्ञान की उत्कृष्ट विभूतियाँ उन ऋषियों को अपनी सच्ची श्रद्धाञ्जलि समर्पित कर हमलोगों के इस प्रयास को सफल करेंगे।

मनुष्य ने अनादि काल से यावन्मात्र प्राणियों के उद्धार का प्रण लिया हुआ है इस दिशा में उसके लिये श्रुति स्मृति जो सृष्टि की नियमानुली है और पुराण जो उसके उपबृंहक हैं वे सदा से हो दृढ आधार शिला पर निर्मित प्रकाशस्तम्भ का काम करते हैं। आज की महती अनर्थ परम्परा में विपरीत अवस्थाओं का कटु अनुभव करता हुआ मनुष्य जो निराशा, अशान्ति और सवर्ष के थपेड़ों से दुःखी हो रहा है उसका समाधान ये पुराण हैं। मेरी मान्यता है कि इस निराशापूर्ण चातावतण में आशा

भूमिकालेखन व शोधन कार्य में तथा श्री पं० फजोड़ीलालजी मिश्र एवं पं० श्री रामनाथजी दाधीच साहित्य शास्त्री का प्रूप कार्य संशोधन में पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है। उन्हें अपने अमित्र अङ्ग के नाते किसी प्रकार का धन्यवाद प्रदान करना शिष्टता के विरुद्ध है। श्रीपरमपूज्य राजगुरुजी हृदित्तजी शास्त्री विद्यालङ्कार विद्यारत्न के सञ्चालकत्व में यह सय होने से उनकी विभूति एवं आशीर्वाद का ही फल है। आपने पुराण महिमा लिख हमें उत्साह एवं कर्त्तव्य पथ की प्रेरणा दी है। अन्त में मैं आप सभी महानुभावों का हृदय से आभार प्रदर्शन करता हुआ इस ज्ञान राशि के प्रचार का स्वाध्याय द्वारा पुण्य लाभ करने की कसबद्ध प्रार्थना करता हूँ।

आशा है आप सभी उदारशाय आपेक्षिक अपूर्णता की उपेक्षा बुद्धि से क्षमा कर इस परिश्रम को सच्चे अर्थों से सफल बना हमें कृतज्ञ्य करेंगे।

फलकस्ता—
गीता जयन्ती
मार्गशीर्ष शुक्ल
११/१०/१०



कृपामिलापी
मनसुखराय मोर

का अज्ञानान्धकार में ज्ञानालोक का जीघन में अपनी कर्मण्यता की समाप्ति समझने वाले पुरुष को पुरुषार्थ का यहाँ तक कि संसारमें जो कुछ अस्तत्, अविवेक, अविद्या, अज्ञानादि रूपी अन्धकार है उनसे छुटकारा दिलानेवाला यह महातन्त्र है चल्कि तारकमन्त्र है। अस्त्रों से विश्व को अहिंसा, सत्य, और प्रेम और शान्ति का सन्देश दीजिये।

गठ चैत्र मास में नवरात्रों के पूर्व जयसे पुराण पारायण में श्री मोर ग्रन्थानुसन्धान समिति की पण्डित मण्डली ने समय देना आरम्भ किया तो मुझे ऐसा लगा कि इनका अविकल दोहन कर अपने जीवन को कृतकृत्य करना हम भारतीयों का प्रधान कर्तव्य है। उसी समय इसके प्रकाशन का संकल्प अङ्कुरित हुआ और ब्रह्मपुराण के प्रकाशन का बीज उसी में निहित है जो पुष्पित एवं पल्लवित रूप में सेवा में उपस्थित है।

मेरी यह प्रबल इच्छा थी कि उसे शीघ्रातिशीघ्र गुरुमण्डल ग्रन्थमाला के एकादश पुष्प के रूप में आप महानुभावों की सेवा में प्रस्तुत करूँ इतने अल्प समय में शीघ्रनावश जो कुछ धुष्टियाँ प्रेस के कर्मचारियों तथा कार्यकर्तृवृन्द की अनवधानता से रह गई हैं उन्हें कृपालु विद्वद्वृन्द सुधारने को उदारता दिखला कर रूपा करें।

इस महत्कार्य में आरम्भ से ही श्री ब्रह्मदत्त त्रिवेदी भूतपूर्व अध्यक्ष श्री ऋषिकुण्ड ब्रह्मचर्याश्रम संस्कृत कालेज लक्ष्मणगढ़ एवं भूत० सहायक सञ्चालक राजरघान पुरातत्व मन्दिर जयपुर का

भूमिकालेखन व शोधन कार्य में तथा श्री पं० कजोडीलालजी मिश्र एवं पं० श्री रामनाथजी दाधीच साहित्य शास्त्री का प्रूफ कार्य संशोधन में पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है उन्हें अपने अभिन्न अङ्ग के नाते किसी प्रकार का धन्यवाद प्रदान करना शिष्टता के विरुद्ध है। श्रीपरमपूज्य राजगुरुजी हरिदत्तजी शास्त्री विद्यालङ्कार विद्यारत्न के सञ्चालकत्व में यह सब होने से उनकी विभूति एवं आशीर्वाद का ही फल है। आपने पुराण महिमा लिख हमें उत्साह एवं कर्तव्य पथ की प्रेरणा दी है। अन्त में मैं आप सभी महानुभावों का हृदय से आभार प्रदर्शन करता हुआ इस ज्ञान राशि के प्रचार का स्वाध्याय द्वारा पुण्य लाभ करने की करबद्ध प्रार्थना करता हूँ।

आशा है आप सभी उदाराशय आपेक्षिक अपूर्णता की उपेक्षा बुद्धि से क्षमा कर इस परिश्रम को सच्चे अर्थों से सफल बना हमें कृतकृत्य करेंगे।

कलकत्ता—
गीता जयन्ती
मार्गशीर्ष शुक्ल
११/१२०१०



कृपामिलापी
मनसुखराय मोर

द्वीपानाञ्चैष सिन्धूनां पर्वाणाञ्चाप्यशेषतः ।
 वर्णनं यत्र पातालस्थर्गाणाञ्च प्रदृश्यते ।
 नरकाणां समाग्यानं सूर्य्यस्तुतिकथानकम् ।
 पार्वत्याश्च तथा जन्म विद्याश्च निगद्यते ।
 दशग्यानं ततः प्रोक्तमेकान्नशेषवर्णनम् ।
 पूर्णमाणोऽयमुदितः पुराणम्याम्य मानद ! ॥”

तदुत्तरभागे—

धर्म्योत्तरे विभागे तु पुरुषोत्तमवर्णनम् ।
 विस्तरेण समाग्यातं तोर्ययात्राविधानतः ॥
 अत्रैष कृष्णचरितं विस्तरान् समुद्धारितम् ।
 वर्णनं यस्य लोकस्य पितृप्रादपि विस्तरा ॥
 वर्णाधमाणां धर्माश्च कांक्षिता यत्र विस्तरान् ।
 विष्णुधर्मयुगाग्यानं प्रलयस्य च वर्णनम् ॥
 योगानां च समाग्यानं सांग्यानाञ्चाऽपि वर्णनम् ।
 प्रवृत्तसमुद्देशं पुराणस्य च संज्ञनम् ।
 एतद् ब्रह्मपुराणन्तु भागद्वयसमानितम् ॥
 वर्णितं भयं वापन्नं सर्वसांग्यप्रदायकम् ॥

तत्फलश्रुति :—

गृह्णीतव मग्नाद् भुविश्रुतिप्रदायकम् ।
 त्रितिर्येकपुराणं यो वैराग्यो देवसंयुजम् ॥
 जलधेनुपुतश्चापि मयस्या दद्याद् द्विजातये ।

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

अष्टादशपुराणानां विषयानुक्रमणिका प्रारम्भ्यते ।

॥ श्रीः ॥

ब्रह्मपुराण



वेदव्यास प्रणीते महापुराणादि तत्प्रतिपाद्य विषयाश्च
बृहन्नारदीये ४ पा० ६२ अ० उक्ता यथा—
ब्राह्मं पुराणं तत्रादीं सर्वलोकहिताय वै ।
व्यासेन वेदविदुषा समाख्यातं महात्मना ॥
तद्वै सर्वपुराणाग्र्यं धर्मकामार्थमोक्षदम् ।
नानाख्यानेतिहासाद्यं दशसाहस्रमुच्यते ॥
तत्पूर्वभागे—

“देवानामसुराणाञ्च यत्रोत्पत्तिः प्रकीर्तिता ।
प्रजापतीनाञ्च तथा दक्षादीनां मुनीश्वर ! ॥
ततो लोवेश्वरस्यात्र सूर्यस्य परमात्मनः ।
वंशानुकीर्तनं पुण्यं महापातकनाशनम् ॥
तत्रायतारः कथितः परमानन्दरूपिणः ।
श्रीमत्तो^१ रामचन्द्रस्य चतुर्व्यूहावतारिणः ।
ततश्च सोमवंशस्य कीर्तनं यत्र वर्णितम् ।
रुक्मण्यस्य जगदीशस्य चरितं कल्मषापहम् ।

द्वीपाणाञ्चैव सिन्धूनां वर्षाणाञ्चाप्यशेषतः ।
 घर्जनं यत्र पातालस्वर्गाणाञ्च प्रदृश्यते ।
 नरकाणां समाख्यानं सूर्यस्तुतिकथानकम् ।
 पार्वत्याञ्च तथा जन्म विवाहश्च निगद्यते ।
 दक्षाख्यानं ततः प्रोक्तमेकाग्रश्रेत्रघर्जनम् ।
 पूर्वभागोऽयमुदित पुराणस्यास्य मानद ! ॥”

तदुत्तरभागे—

अस्योत्तरे विभागे तु पुरयोत्तमघर्जनम् ।
 विस्तरैण समाख्यात तीर्ययात्राविधानतः ॥
 अत्रैव रुष्णचरित विस्तरात् समुदीरितम् ।
 घर्जनं मम लोकस्य पितृश्राद्धविधिस्तथा ॥
 घर्णाश्रमाणा धर्माश्च कीर्त्तिता यत्र विस्तरान् ।
 विष्णुधर्मयुगाख्यानं प्रलयस्य च घर्जनम् ॥
 योगानां च समाख्यानं साख्यानाञ्चाऽपि घर्जनम् ।
 ब्रह्मवादसमुद्देश पुराणस्य च संशतम् ।
 एतद् ब्रह्मपुराणन्तु भागद्वयसमाचितम् ॥
 घर्णितं सर्व पापघ्नं सर्वसौख्यप्रदायकम् ॥

तत्फलश्रुति :—

सूतशीनकसम्पाद भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ।
 लिपिन्वैतन्पुराणं यो वैशाख्या हेमसंयुतम् ॥
 जलधेनुयुतञ्चापि भक्त्या दद्याद् द्विजातये ।

पौराणिकाय सम्पूज्य घन्त्रभोज्यविभूषणै ॥
 स वसेद् ब्रह्मणोलोके याचयन् द्रार्कतारकम् ।
 य पठेच्छृणुयाद्वाऽपि ब्रह्मानुकम्पणीं द्विज ।
 सोऽपि सर्वपुराणस्य श्रोतुर्नक्तुं फल लभेत् ।
 शृणोति य पुराणन्तु ग्राह्य सर्वं त्रिनेत्रिय ।
 हविष्याशो न नियमात् स लभेद् ब्रह्मण पदम् ।
 किमत्र बहुनोक्तेन यद् यदिच्छति मानव ।
 तत्सर्वं लभते वत्स पुराणस्यास्य कार्त्तनात् ।

पद्मपुराण

तत्स्थ निषयाणाम्प्रतिपादनम् नारदीयपुराणे उक्तं
 यथा :—

प्रथमे सृष्टिरण्डे •—

“पुलस्त्येन तु भोष्माय सृष्ट्यादि क्रमतो द्विज ।
 नानाएवमेतिहासाद्येयत्रोक्तो धर्मविस्तरः ।
 पुष्करस्य च माहात्म्यं विस्तरेण प्रकीर्तितम् ।
 ब्रह्मयज्ञविधानञ्च वेदपाठादिलक्षणम् ।
 दानानां कीर्त्तनं यत्र वृत्तानाञ्च पृथक् पृथक् ।
 विवाहं शैलजायाञ्च तारकाएवमेव महत् ।
 माहात्म्यञ्च भवादीनां कीर्त्तितं सर्वपुण्यदम् ।

कालकेयादि दैत्यानां वधो यत्र पृथक् पृथक् ।
 ग्रहाणामर्चनं दानं यत्र प्रोक्तं द्विजोत्तम ॥
 तत्सृष्टिखण्डमुद्दिष्टं व्यासेन सुमहात्मना ।

द्वितीये भूमि खण्डे :—

पितृमात्रादिपूज्यत्वे शिवशर्मकथा पुरः ।
 सुनृतस्य कथा पञ्चान् घृत्रस्य च घघस्तथा ।
 पृथोर्वेणस्य चाग्न्यान् घर्माग्न्यान् ततः परम् ।
 पितृशुश्रूषणाग्न्यान् ननुपस्य कथा ततः ।
 ययाति चरितञ्चैष गुर्तार्यनिरूपणम् ।
 रात्रा जैमिनि सम्यादो बह्वाश्चर्यकथायुत ।
 कथाह्यशोकसुन्दर्यां द्रुण्डदैत्यवधाचिता ।
 कामोदकाग्न्यान् तत्र विद्रुण्डवत्संयुतम् ।
 कुञ्जुगस्य च सम्यादश्च्यवनेन महान्मना ।
 सिद्धाग्न्यान् ततः प्रोक्तं खण्डम्याम्यफलोद्भूतम् ।
 सप्तशौनवसम्यादं भूमिखण्डमिदममृतम् ।

तृतीये स्वर्ग खण्डे :—

“ग्रहाण्डोत्पत्तिरुदिता यत्र किम्यश्चर्त्तानिना
 समून्लोकमस्यान् तीर्थाग्न्यान् ततः परम् ।
 नर्मदोत्पत्ति कथनं तत्तीर्थानां कथा पृथक् ।
 कुल्लेशादितीर्थानां कथा पुण्याः प्रकीर्तिताः ।
 कालिन्दी पुण्यकथनं काशीमाहात्म्यवर्णनम् ।

गयायाश्चैव माहात्म्यं प्रयागस्य च पुण्यकम् ।
 घर्णाश्रमानुरोधेन कर्मयोगनिरूपणम् ।
 व्यासजैमिनि सम्वादः पुण्यकर्मकथाचितः ।
 समुद्रमथनाख्यानं व्रताख्यानं ततःपरम् ।
 ऊर्ज्ज्वलपञ्चाहमाहात्म्यं स्तोत्रं सर्वापराधनुत् ।
 एतत्स्वर्गामिधं विप्र ! सर्वपातकनाशनम् ।”

चतुर्थे पातालखण्डे :—

“रामाश्वमेधे प्रथमं रामराज्याभिषेचनम् ।
 भगस्त्यागागमश्चैव पौलस्त्यान्वयकीर्तनम् ।
 अश्वमेधोपदेशश्च ह्यव्ययार्त्ततःपरम् ।
 नानाराजकथाः पुण्या जगन्नाथानुवर्णनम् ।
 घृन्दावनस्य माहात्म्यं सर्वपापप्रणाशनम् ।
 नित्यलीलानुकथनं यत्र कृष्णावतारिणः ।
 माधवस्नान माहात्म्ये स्नानदानार्चनेफलम् ।
 धराधराहसम्वादो यत्र ब्राह्मणयोः कथा ।
 सम्वादो राजदूतानां कृष्णस्तोत्रनिरूपणम् ।
 शिवशम्भुसमायोगो धर्मीच्याख्यानकन्ततः ।
 भस्ममाहात्म्यमनुलं शिवमाहात्म्यमुत्तमम् ।
 देधरातमुताख्यानं पुराणाञ्च प्रशंसनम् ।
 गौतमाख्यानफल्ग्वैव शिवगीता ततःस्मृता ।
 कल्पान्तरी रामकथा भारद्वाजाश्रमस्थितौ ।
 पातालखण्डमेतद्दि शृण्वतां क्षानिनां सदा ।

सर्वपापप्रशमनं सर्वाभीष्टफलप्रदम् ॥

पञ्चमे उत्तर खण्डे :—

पर्वताख्यानकं पूर्वं गौर्यै प्रोक्तं शिष्येन वै ।
जालन्धरकथा पश्चात् श्रीशैलाद्यनुकीर्तनम् ।
सागरस्य कथा पुण्या ततः परमुदीरिता ।
गंगाप्रयागकाशीनां गयायाश्चाग्निपुण्यकम् ।
आम्लादिदानमाहात्म्यं तन्महाद्वादशीघृतम् ।
चतुर्विंशैकादशीनां माहात्म्यं पृथगीरितम् ।
धिष्णुधर्मसमाख्यानं धिष्णुनामसहस्रकम् ।
कार्तिकव्रतमाहात्म्यं माघस्नान फलन्ततः ।
जम्बुद्वीपस्य तीर्थानां माहात्म्यं पापनाशनम् ।
साधुमत्याश्च माहात्म्यं नृसिंहोत्पत्तिवर्णनम् ।
देवशर्मादिकाख्यानं गीता माहात्म्यवर्णने ।
भक्ताख्यानञ्च माहात्म्यं श्रीमद्भागवतस्य ह ।
इन्द्रप्रस्थस्य माहात्म्यं बहुतीर्थकथाचितम् ।
मन्त्ररत्नामिधानञ्च त्रिपादुभूत्यनुवर्णनम् ।
अवतारकथा पुण्या मत्स्यादीनामत परम् ।
रामनाम शतं दिव्यं तन्माहात्म्यञ्च बाह्य ! ।
परीक्षणञ्च भृगुणा श्रीधिष्णोर्वैभवस्य च ।
इत्येतदुत्तरं खण्डं पञ्चमं सर्वपुण्यदम् ।

तत्फलश्रुतिः —

“पञ्चखण्डयुतं पादं यः शृणोतिनरोत्तमः ।

स लभेद्वैष्णवं धाम भुक्त्वा भोगानिहेप्सितान् ।
 एतद्वैपश्चपञ्चाशत् साहस्रं पद्मसञ्ज्ञकम् ।
 पुराणं लेखयित्वा वै ज्यैष्ठ्यां स्वर्णाज्यसंयुतम् ।
 यः प्रदद्यात्सुमतये पुराणज्ञाय मानद ।
 स याति वैष्णवं धाम सर्वदेवनमस्कृतः ।
 पद्मानुक्रमणोमेतां यः पठेच्छृणुयात्तथा ।
 सोऽपि पद्मपुराणस्य लभेत्प्रबणञ्जं फलम् ॥”

विष्णुपुराण

तत्प्रतिपाद्य विषयाश्च बृहन्नारदीये—६४ अध्याये उक्ता यथा—
 शृणु घटस्य प्रवक्ष्यामि पुराणं वैष्णवं महत् । त्रयोविंशति साहस्रं
 सर्वपातक नाशनम् । यत्रादिभागे निर्दिष्टाः पडंशाः शकृजेन ह ।
 मैत्रेयायादिभ्यो तत्र पुराणस्य चतारिका ।

तत्र प्रथमभागस्य प्रथमांशे :—

”आदिकारणसर्गश्च देवादीनाञ्चसम्भवः ।
 समुद्रमथनारव्यानं दक्षादीनां कथाचयः ।
 भृगुस्य चरितं चैव पृथोच्चरितमेव च ।
 प्राणितमं तथाऽन्यानं प्रह्लादस्य कथानथम् ।
 पृथुराज्याधिकाराख्यः प्रथमोऽंश इति स्मृतः ।

प्रथम भागस्य द्वितीयांशः :—

पातालनरकाख्यानं सप्तसर्गनिरूपणम् ।
 सव्यादिचारकथनं पृथग्लक्षणसंगतम् ।
 चरित भरतस्याथ मुक्तिमार्गनिर्दर्शनम् ।
 निदाघऋतुसम्वादे द्वितीयोऽशोऽददाहृत ।

प्रथमभागस्य तृतीयांशः :—

“मन्वन्तरसमाख्यानं चेदव्यासावतारकम् ।
 नरकोद्धारकं कर्म गदितञ्च तत परम् ।
 सगरस्यैवसम्वादे सर्वधर्मनिरूपणम् ।
 श्राद्धकथ्य तयोद्दिष्ट वर्णाश्रमनियन्धने ।
 सदाचारश्च कथितो मायामोहकथा तत ।
 तृतीयोऽशोऽयमुदित सर्वपापप्रणाशन ।”

प्रथमभागस्य चतुर्थांशः :—

“सूर्यप्रशक्त्या पुण्या सोमप्रशानुकीर्तनम्
 चतुर्थेऽशे मुनिप्रेष्ट नानाराजकथाचितम्”

प्रथमभागस्य पञ्चमांशः :—

“रृष्णावतारसम्प्रज्ञो गोत्रुगया कथा तत ।
 पूतनादिवधोबाल्येकीमारेऽद्यादिर्हिसनम् ।
 कैशोरे कसहनन माधुर चरितन्तथा ।
 ततस्तु यौधने प्रोक्ता लोला द्वारवतीमवा
 सर्वदैत्यवधो यत्र विद्याहाश्च पृथग्विधा ।

यत्र स्थित्वा जगन्नाथ वृष्णोयोगेश्वरेश्वर
भूभारहरण चक्रे परस्वहननादिभि ।
अष्टावक्रोयमार्यान् पञ्चमोऽशस्तीरित ।”

प्रथमभागस्य पद्यांशे :—

कलिज चरितम्प्रोक्त चातुर्विध्य लयस्य च ।
ब्रह्मज्ञानसमुद्देश स्त्राण्डिक्यस्य निरूपित ।
केशिध्वजेन चेत्येष पद्योऽश परिकीर्तित ।

तस्य द्वितीय भागे :—

अत परन्तु सूनेन शौनकादिभिरादरात् ।
पृष्टेन चोदिता शश्वत्विष्णुधर्मोत्तराद्वया ।
नाना धर्मकथा पुण्या व्रतानि नियमा यमा ।
धर्मशास्त्रार्थशास्त्र वेदान्त उपैतिपन्तथा ।
वंशाख्यानम्प्रकरणात् स्तोत्राणि मनवस्तथा ।
नाना विद्याश्रया प्रोक्ता सर्वलोकोपकारका ।
एतद्विष्णुपुराणं वै सर्व शास्त्रार्थसंग्रह ।”

तत्फलश्रुतिः —

“धाराह कल्पवृत्तान्त व्यासेनकथितन्त्विह ।
यो नर पठते भक्त्या य शृणोति च सादरम् ।
तावुमी विष्णुलोक हि व्रजेताम्भुक्तमोगकी ।
तल्लिपित्वा च योदद्यादापाढ्या धृतधेनुना ।
सहित विष्णुभक्ताय पुराणार्थविदे द्विज ।

स याति वैष्णवं धाम विमानेनार्कवर्चसा ।
 यश्च विष्णुपुराणस्य समनुक्रमणीं द्विज ।
 कथयेच्छृणुयाद्वाऽपि स पुराणफलं लभेत् ।

शिवपुराण

तत्स्थ विषयाणां प्रतिपादनम्

ज्ञानसंहितायाम्:—

ऋषिगणस्य प्रश्नः । ब्रह्मनारदसंवाद-ज्योतिर्लिङ्ग प्रादुर्भावश्च ।
 ओंकार प्रादुर्भावः, शिवस्यानुग्रहः, विष्णुरुत शिवस्तुतिः ।
 उभयोःकृते शिवस्य वरदानम् । ब्रह्मणो हंसरूपधारणस्य विष्णोः
 वराहरूपधारणस्य च कारणरूप निर्देशः, ब्रह्मादीनामुत्पत्तिकथनम् ।
 ऋष्यादीनां सृष्टिः । भगवत्या-देहत्यागस्य संक्षेपेण वृत्तान्त-
 कथनम् शिवपूजा विधिश्च । पावमान मन्त्रैः शिवपूजा विधिः ।
 तारकोपाख्यानं, ब्रह्मण समीपे देवादीनांगमनञ्च । ब्रह्मदेव संवादः
 शिवस्य तपो घर्जनञ्च मदनदहनम्, पार्वत्याश्च प्रत्यावर्त्तनम् ।
 पार्वत्यास्तपः । पार्वतीतपः समुद्दिश्य देवगणानामृषीणाञ्च
 शिवसन्निधाने गमनम्, जटिल ब्राह्मणवेशे पार्वत्याःसकाशं-
 शिवस्यागमनम् । हरपार्वती संवादः । शिवविवाहोद्योगः ।
 शिवविवाह यात्रा । शिवरूप दर्शने मेनकायाश्चेदस्तां प्रति

शिवलिङ्गमाहात्म्य कथनञ्च । अश्वमेधश्चर चर्णनप्रसंगेऽश्वकर्मर्द्धन
 कथनम् । शिवरात्रिव्रत सशय हेतुदधीचितनयानां दोषकथनम् ।
 सोमेश्वरकथा ज्योतिर्लिङ्गोत्पत्तिकथनञ्च । महाकालोका-
 रेश्वरयोत्पत्ति । वेङ्गारेश्वरप्रसङ्गः । भीमशङ्कर प्रादुर्भावः ।
 विश्वेश्वरस्य माहात्म्यम् गौरीप्रति शिवस्य काशीमाहात्म्य-
 कथनम् । गोपेश्वरमाहात्म्य कथनम् । काशीमरणान्मोक्षप्राप्ते-
 शङ्कानिवारणम् । गौतमस्य तपस्यातन्क्षेत्रकथनञ्च । गणेशपूजनं
 गौतमचरित्रञ्च । गौतमप्रशंसा, गङ्गास्थितिः कुशावर्तमाहात्म्यं
 श्यम्रकमाहात्म्यञ्च । राघवस्यतपस्या माहात्म्यम्, वैद्यनाथस्यो-
 त्पत्ति । रामेश्वर माहात्म्ये नागेशमाहात्म्यञ्च । घुम्पेश्वर माहा-
 त्म्यञ्च, घराह्रूपेण हिरण्याक्षप्रथः प्रह्लादचरित्रञ्च । प्रह्लादहिरण्य
 कशिपू प्रस्तावः । हिरण्यकशिपुवधः नृसिंहचरित्रञ्च । नल
 जन्मान्तर कथा । पाण्डवगण कर्तृक दुर्वाससः प्रीन्युत्पादनम् ।
 व्यासादेशेन इन्द्रकोल पर्यन्ते अर्जुनस्यतप इन्द्रसमागमश्च ।
 भित्तिरूपस्य शिवस्यागमनञ्च । भित्तिरेषधारि शिवस्यअर्जुनेन
 सह युद्ध । अर्जुनस्य घरदानम् । पार्थिवशिरःपूजाविधिः ।
 त्रिनेश्वरमाहात्म्यम् । विष्णुकर्तृक सहस्रकमलशिरःपूजा । शिव-
 वृषथा सुदर्शनचक्रलाभः । शिवसहस्रनाम चर्णनम् । विष्णुप्रभृतीन्
 शिवस्य शिवरात्रिव्रत कथनम् । शिवरात्रिव्रतस्योच्चापनविधिः ।
 व्याधयस्येतिहास कथनम् । अज्ञानेन कृतस्य शिवरात्रिव्रतस्य
 प्रशंसा । शिवरात्रिव्रतकरणेन पापिनो वेदनित्रे मुक्तिः । चतु-
 र्विध मुक्तिवर्णनम् । शिवकर्तृक विष्णुप्रभृतीनामुत्पत्ति कथनम् ।
 एकमात्रभक्तिसाधनेन शिवभक्तेर्लाभकथनम् ।

भगवत्याः स्नानोपदेशः । हरपार्वन्योर्विवाहः । कार्तिकेयस्य
जन्मः देवसेनापतित्वं तारकवधश्च एवं ब्रह्मणो वरेण तारकपुत्राणां
त्रिपुरेऽधिष्ठानम् । विष्णुसृष्टौ मुण्डिकर्तृक दैत्यगणानाम्मोहो-
त्पादनम् । मुण्डिन उपदेशेन दैत्यानां धर्मनाशः दरिद्रताञ्च
दृष्ट्वा विष्णुप्रभृतिदेवगणानां शिवस्तवः । विष्णुपदेशेन देव-
गणानां कोटिशिवमन्त्रज्ञापः शिवस्तवश्च । देवमयरथा-
रोहणे शिवकर्तृक त्रिपुरनाशः । देवगणानां घरलाभश्च ।
हरिकर्तृक लिङ्गार्चन फलकथनम् । अधिकारानुसारेण देवेभ्यस्तै-
जसादि लिङ्गदानम् । शिवपूजाविधि कथनम् । आह्निककर्तव्य
शिवपूजाविधिः । षोडशोपचारेण साम्बशिवपूजा । धान्यादिभिः
शिवपूजायाः फलविशेषकथनम् । जानकी शापेन केतकी पुष्पेण
शिवपूजायानिवेधः रामचरित्र कीर्तनञ्च । चम्पक पुष्पस्य शिव-
पूजार्थं राक्षोमोहस्तदुत्पादनपूर्वकं कृतदुष्कर्माग्राह्यण चम्पक-
पुष्पयोश्च नारदस्यशापः । गणेशचरित्रम् । गणेशकर्तृक शिव-
गणानांपराजयः शिवकर्तृक गणेशशिरश्छेदनञ्च । शिरश्छेदनेन-
देव्या क्रोध महादेवस्य च गणपते प्राणदानं गाणपत्यप्रदानञ्च ।
कार्तिक गणेशयोर्विवाहः गणेशस्य जयलाभश्च । गणेशस्य
विवाहस्तच्छ्रुत्वा कार्तिकस्यक्रोधः क्रौञ्चपर्वतगमनञ्च ।
रुद्राशुधारणमहात्म्यकथनम् । प्रधानज्योर्लिङ्गोपलिङ्गानां नाम-
स्थान कथनम् । नन्दिकेशतीर्थमाहात्म्ये गोवत्ससंवादादिः ।
नन्दिकेश तीर्थमाहात्म्यकथनम् । अत्रीश्वरलिङ्गमाहात्म्य-
कथनम् । ज्योतिर्लिङ्गादीनां समस्त वस्तूनां ग्राह्यत्वकथनम् ।

शिवलिङ्गमाहान्म्य कथनञ्च । अश्वक्वेष्वर वर्णनप्रसंगेऽश्वकमर्दन
 कथनम् । शिवरात्रिव्रत संशय हेतुद्धीचितनयानां दोषकथनम् ।
 सोमेश्वरकथा ज्योतिर्लिङ्गोत्पत्तिकथनञ्च । महाकालोका-
 रेश्वरयोत्पत्तिः । केदारेश्वरप्रसङ्गः । भीमशङ्कर प्रादुर्भावः ।
 विश्वेश्वरस्य माहान्म्यम् गौरीप्रति शिवस्य काशीमाहात्म्य-
 कथनम् । गोपेश्वरमाहान्म्य कथनम् । काशीमरणान्मोक्षप्राप्तेः
 शङ्कानिवारणम् । गौतमस्य तपस्यातत्प्रेषकथनञ्च । गणेशपूजनं
 गौतमचरित्रञ्च । गौतमप्रशंसा, गङ्गास्थितिः कुशाघर्तमाहात्म्यं
 श्यम्यकमाहात्म्यञ्च । राघवस्यतपस्या माहात्म्यम्, वैद्यनाथस्यो-
 त्पत्तिः । रामेश्वर माहान्म्ये नागेशमाहात्म्यञ्च । घुम्पेश्वर माहा-
 त्म्यञ्च, घराहुरूपेण हिरण्याक्षवधः प्रह्लादचरित्रञ्च । प्रह्लादहिरण्य
 कशिपू प्रस्तावः । हिरण्यकशिपुवधः नृसिंहचरित्रञ्च । नल
 जन्मान्तर कथा । पाण्डवगण कर्तृक दुर्वाससः प्रीत्युत्पादनम् ।
 श्यामादेशेन इन्द्रकील पर्वते अर्जुनस्यतपः इन्द्रसमागमञ्च ।
 मिहिरूपस्य शिवस्यागमनञ्च । मिह्रवेपधारि शिवस्यअर्जुनेन
 सह युद्धः । अर्जुनस्य घरदानम् । पार्थिवशिवपूजाविधिः ।
 विश्वेश्वरमाहान्म्यम् । विष्णुकर्तृक सहस्रकमलशिवपूजा । शिव-
 रूपया सुदर्शनचक्र लाभः । शिवसहस्रनाम वर्णनम् । विष्णुप्रभृतीन्
 शिवस्य शिवरात्रिव्रत कथनम् । शिवरात्रिव्रतस्योद्यापनविधिः ।
 व्याघ्रस्यनिहास कथनम् । अज्ञानेन हृतस्य शिवरात्रिव्रतस्य
 प्रशंसा । शिवरात्रिव्रतकरणेन पापिनो वेदनिवे मुक्तिः । चतु-
 र्विध मुक्तिवर्णनम् । शिवकर्तृक विष्णुप्रभृतीनामुत्पत्ति कथनम् ।
 एकमात्रभक्तिसाधनेन शिवभक्तेर्लाभकथनम् ।

विद्येश्वर संहितायाम्—

साध्यसाधन निरूपणम् । मननादि स्वरूपवर्णनम् । ध्रुव-
णाद्यशक्तव्यक्तीनां लिङ्गयूजनसाधनकथनम् । ब्रह्मविष्णोः युद्धं
दृष्ट्वा शिवसमीपे देवतानां गमनम् । ज्योतिर्मयलिङ्गप्रादुर्भाव-
स्तद् दृष्ट्वा ब्रह्म विष्णोश्चिवाद् शान्तिः । भैरवकर्तृक ब्रह्मणः
शिखण्डेष्टनं । ब्रह्माणं प्रति शिवस्यानुग्रहः । ब्रह्मविष्णु कृताशिव
पूजा लिंगनिर्माणं लिंगप्रतिष्ठा । लिंगपूजायाः नियम कथनम् ।
शिवतीर्थं सेवामाहात्म्यम् । विप्रादि सदाचारस्य नित्यकृत्यता ।
पञ्चमहायज्ञकथनम् । दिनविशेषे देवपूजायाः कर्तव्यताकथनम् ।
देशकालादि विशेषे पूजाफल कथनम् । पार्थिव प्रतिमा पूजाविधिः ।
प्रणवमाहात्म्यम् । शिवभक्तपूजाकथनम् । पङ्क्तिर्लिंग माहात्म्यम् ।
बन्धनमुक्तयोः स्वरूपकथनम् । लिंगक्रमकथनम् ।

कैलाश संहितायाम् :—

पाराणसीधाम्नि सूतकर्तृक मुनीनां निकटे प्रणवार्थ कथना
रम्भः । कैलाशधाम्नि देवीकृता शिवं प्रति प्रणवार्थ जिज्ञासा ।
प्रणवोक्ता मन्त्रदीक्षादि कथनम् । प्रणवोद्धारः, विविध पूजा एवं
न्यासान्तरादि विधिः ।

कार्तिवेयं प्रति घामदेव ऋषेः प्रणवस्य कृते प्रश्नः । कुमार
कर्तृकं घामदेवं प्रति प्रणवोपासना कथनम् । पङ्क्तिधार्थ परि-
ज्ञानं । पिस्तुत प्रणवार्थ कला तन्त्रादि विचर्ण कथनम् ।

सनत्कुमार मंहितायाम् :—

नैमिषारण्ये सनत्कुमारस्यागमनम् । व्यासादिमिर्मिलनम् । शिवपञ्चा विषये ऋषीणां प्रश्नः । सनत्कुमारस्य पृथ्व्यादेः संस्थानक्रमप्रभृतोनां कथनम् । प्रकृतितः महादादिक्रमे जगतः सृष्टिः सप्तद्वीपवर्णनञ्च । नरकादि वर्णनम् । उर्द्ध्वलोक योग-माहात्म्यकथनम् । सविस्तरं रुद्रमाहान्त्यं, पञ्चमूर्ति कथनम् । रुद्रकीर्तन फलम् । रुद्रस्तवः । सनत्कुमारस्य चरित्रम् । परमसिद्धिश्च । शिवसर्वज्ञादि कथनम् । रुद्रलोक ब्रह्मलोक विष्णुलोकानां कथनम् । रुद्रस्थानस्य सर्वं श्रेष्ठत्वं कथनम् । विभीषण महेश्वर संवादः । लिङ्ग पूजा शिवनाम कीर्तनफलञ्च । स्थान माहात्म्य कथनम् । ब्रह्म विष्णु महेश्वराणां मध्ये कस्य ज्यैष्ठ्यम् इति व्यास प्रश्ने सनत्कुमार समुत्तरदानं शिव लिङ्ग माहात्म्यादि कथनञ्च । लिङ्गस्थापनं शिवशक्त्योः पूजनविधिः शिव पूजायां पुष्पनिरूपणम् । अनशन विधिः । शिवप्रीतिकरः धर्मस्य संक्षिप्त उपदेशः । लक्ष्मणाष्टमीव्रतरूपनञ्च । अन्न-दान माहात्म्यं मित्र २ दानानां प्रशंसा च । विविध धर्मकार्याणां सुपदेशः । सविस्तरं नियमफलकथनम् । पार्वत्याः शिवस्य शिरसि चन्द्रधारणे विषमक्षय विषये च प्रश्नः । मम्म प्रशंसा मम्म धारणस्य फल कथनम् । शिवस्य अमशानवासहेतुः । शिवपूजायाः फलकथनम् । शिवविभूतिकथनम् । शिवस्थान-निर्देशः । प्रणवस्योपासना । प्रणवदेवता कथनम् । ध्यान योग कथनम् । दुर्वाससः महादेवं प्रति पुनर्ध्यानं वर्णनम् ।

तदर्थं काशीवासनिर्देशश्च । ध्यायुनाडिकादि निरूपणम् । - ध्यान-
निधेः प्रशंसा । प्रणवोपासना निरूपणम् । शरीरस्य सर्वदेव-
मयत्व कथनम् । नाडी विस्तार कथनम् । हरपार्वतीसंवादः
काशीमाहात्म्य कथनञ्च । मधूकस्थोपासनाम् । सपुत्रस्यप्रताप-
मुकुटराज्ञ ओंकारेश्वर दर्शनम् । ओंकारस्तवः । नन्दीश्वरस्य
तपस्या । नन्दिनं प्रति शिवस्य चरदानम् । महादेवस्य स्मरणम् ।
देवानामागमनम् । शिवस्यादेशेन देवानां नन्दिनः गाणत्या-
मिपेककरणम् । नन्दिन स्तवः नन्दिविवाहश्च । नीलकण्ठमाहात्म्यं,
स्तोत्रञ्च त्रिपुरधूतान्तम् । देवानां सुखं दृष्ट्वा महादेवस्य सन्तोषः ।
त्रिपुरनाशस्योद्योगः । त्रिपुरदाहः । पार्वत्याः प्रश्नः । शिवस्य
युह्यनश्च माहात्म्य कीर्तनम् । पाशुपतयोगः । देहस्थनाडीनां
विवर्णम् । विमलज्ञानेन ईश्वरपदप्राप्तिः । शिवस्थितिलोक-
कथनम् ।

वायवीय संहितायाम्—

महादेवकृपया श्रीकृष्णस्य पुत्रलाम कथनम् । वेदादि-
व्यवस्था । पुराण संख्या कथनम् । ब्रह्मणो निकटे ऋषीणां
शिवतत्त्व कथनम् । ब्रह्मण आदेशेन नैमिषारण्ये यज्ञार्थं गमनम् ।
नैमिषारण्ये श्रुतीन्प्रतिवायोः कुशलप्रश्नोक्तिः । शिवतत्त्वम्
मायास्वरूपकथनञ्च । शिवस्य कालरूपव्यप्रकटनम् । सविस्तरं-
फाल्गुमान कथनम् । प्रकृतिसृष्टि कथनम् । ब्रह्मकर्तृक वराहरूपे
ब्रह्मण जगद्व्यवस्थापनम् । शिवप्रसादाद्ब्रह्मणः सृष्टिकरणम् ।

ब्रह्म चिष्णु महेश्वराणां परम्परं वक्ष्येति कथनम् । ब्रह्मणश्च महा-
 देवादुत्पत्ति कथनम् । ब्रह्मार्ण प्रतिस्फुरणार्थं रुद्रस्यादेशः ।
 प्रजावृद्ध्यर्थं ब्रह्मण अर्धनारीश्वरप्रसादनम् । रुद्रकर्तृकस्त्रियाः
 सृष्टिः मेधुनसृष्टिश्च । दक्षयज्ञ कथनम् देव्याश्च देहत्यागः ।
 घोरभद्रनिरूपणम् । काल्याः सृष्टिः । दक्षयज्ञनाशः । घोरभद्रस्य
 शिवनिकटे देवानयनम् । दक्षस्य छागमुलता च । व्याघ्रं प्रतिपार्वत्या
 अनुग्रहः । शिवसमीपे देव्यागमनम् व्याघ्रस्य सोमनन्दी नाम करणञ्च ।
 देव्याः समीपे शिवकर्तृक अग्निष्टोमात्मक विश्वप्रपञ्च कथनम् ।
 त्रिविध शब्दार्थ कथनम् । जगतः शब्दरूपिन्धुकीर्तनम् । महर्षीणां
 शिव शक्त्योः कीर्तनम् । नास्तिकताविनाशाय तयोर्जन्म । घायुना
 सविस्तरं शिवतत्त्वकथनम् मुक्त्यर्थं ज्ञानस्य चोपदेशः । पाशुपत
 योगे मुक्तिलाभकथनम् । पाशुपतव्रतकथनं भस्ममाहात्म्य कथनञ्च ।
 दुग्धप्राप्त्यर्थमपमन्योः महादेवस्य प्रसादेन दुग्धसमुद्रप्राप्तिः ।

उत्तर भागे :—

श्वेतकल्पे प्रयागे मुनिगणैर्जिज्ञासितं प्रश्नं प्रति सूतस्य पायु-
 कथित शिवमाहात्म्यकथनरूपमुत्तरम् । श्रीकृष्णमपि उपमन्योः
 पाशुपत ज्ञानकथनम् । सुरेन्द्रादि परीक्षा । ब्रह्मचिष्णु प्रभृतभिः
 शिवस्वरूप कथनम् । श्रीपुरुषात्मक उग्रमहेश्वरयोर्जगत्प्रपञ्च-
 कत्वकथनम् । परब्रह्मापरब्रह्मणोरेकत्व कथनम् । महादेवस्य
 अप्रारुत रूपस्य प्रणवात्मकत्वकथनं प्रणवस्वरूप कथनञ्च ।
 भक्त्यादि द्वाग मानवानां शिवप्राप्तियोग्यता । ब्रह्मादिदेवान् देवी-
 मपि च शिवस्य वेदसार ज्ञानोपदेशः । शिवावतारस्य कल्प-

योगेश्वरस्य ॥ कथनम् शिवपञ्चाक्षर मन्त्रस्वरूपम् माहात्म्यञ्च ।
 शैवमन्त्रग्रहणस्य कथा । दीक्षाप्रयोगः । षडध्वशुद्धिप्रभृतिकथनम् ।
 शिवनाम्नः शिवमन्त्रस्य च साधनविधिः । आचार्यत्वसिद्धे-
 रभिषेकादीनां संस्काराणाञ्च कथनम् । शैवादीनामान्द्विफ कर्म
 कथनम् । अन्तर्याग बहिर्याग कथनक्रमश्च । नानाविधानेषु हर-
 पार्वत्याः पूजा विधिः । होमकुण्डानां परिमाणादीनां निर्णयः ।
 मासादि विशेषेषु नैमित्तिक शिवपूजा कथनम् । काम्यशिवपूजा
 कथनम् । शिवस्तोत्रम् प्रकारान्तरेण लिङ्ग पूजा च । शिवपूजाफले
 ब्रह्मादीनां स्वीयस्वीय पदप्राप्तिः । ब्रह्मविष्णोः लिङ्गदर्शनम् ।
 शिवप्रतिष्ठा शिवप्रोक्षणविधिश्च । योगोपदेशः । मुनीनां समीपे
 शिवचरितं पूर्वेकं पायोरन्तर्धानम् । यज्ञ समाप्तौ ब्रह्मणो निकटे
 मुनीनामागमनम् । ब्रह्मण आदेशेन सुमेरुं पर्यते सनत्कुमार
 समीपे मुनीनामागमनम् । नन्दिसमागमः । नन्दिकर्तृक शिवकथा
 वर्णनम् ।

धर्मसंहितायाम् :—

शिवमाहात्म्यनिरूपणम् । उपमन्योः समीपे श्रीकृष्णस्य
 शिवमन्त्रे दोक्षाग्रहणम् । रुद्रदैत्य वधः । गोपीप्रभृतिरूप महादेवेन
 सह अप्सरसां विहारः । उपाऽनिरुद्धयोः समागमः । चाणराज्ञोयुद्धादि
 कथनम् । काल्यास्तपस्या, आडोदैत्यवृत्तान्तः । वीरकस्य
 नन्दिरूपेण जन्म कारणम् । शिवस्य कामाचारो लिङ्गोद्भवकथा ॥
 शक्रादीनां कामर्किकरत्वकथनम् । महात्मनां कामक्षोभः । विश्वामित्र
 प्रभृतोनां कामचक्षुता कथनम् । श्रीरामस्य कामाधीनत्व कथनम् ।

नित्यनैमित्तिक शिव पूजाविधिः । शङ्करक्रियायोगस्तत्फलञ्च ।
 शिवभक्त पूजा तत्फलञ्च । विविधपाप कथनम् पापफलानि च ।
 धर्मप्रसङ्गः । अन्नदानविधिः । जलदान माहात्म्यम् । पुराण
 पाठस्य माहात्म्यम् धर्मध्वज माहात्म्यञ्च । महादानकथनम् ।
 सुवर्णं पृथिवी दानम् । कान्तारहस्ति दानम् । एकदिनस्याराधने-
 नैव शङ्करस्य कृपा । शिव सहस्रनाम वर्णनम् धर्मोपदेशस्तु-
 लापुरुषदानञ्च । परशुरामस्य तुलापुरुषदानम् । ब्रह्मणः प्रसङ्गः ।
 नरकादिकीर्तनम् । द्वीपादिकथनम् । भारतवर्षादिकथनम् ।
 ब्रह्मादीनां कथा मृत्युञ्जयोद्धारश्च । मन्त्रराजप्रभाव कीर्तनम् । पञ्च-
 ब्रह्मकथनं पञ्चब्रह्मविधानञ्च । तत्पुरुष विधानम् । अधोरक्त्य
 घामदेवकत्व सद्योजातकत्वादिकथनम् । संसार कथा स्त्री-
 स्वभावादिकथनञ्च । अरुन्धतीदेवानां सम्वादः । विद्याहकथा ।
 नृत्युचिन्हस्य आयुष प्रमाणम् । कालजयः । छाया पुरुषलक्षणम् ।
 धार्मिकाणां गतिर्लिङ्गपूजायाः कारणञ्च । विष्णुव्रत शिवस्तयः
 लिङ्ग पूजायाः फलञ्च । खट्वि कथनम् । प्रजापतिव्रत खट्वि-
 कथनम् । पृथु राज्ञः पूजायाः कथा । देवदानवादीनां खट्वि
 विस्तारः । आधिपत्यनिर्णयः । पृथु चरित वर्णनम् । मन्वन्तरा-
 दिवर्णनम् । सञ्ज्ञालायादीनां कथनम् । सूर्यवशवर्णनम् । सत्यव्रत
 सगरराज्ञोश्च विवरणकथनम् पितृकल्पस्यश्वाद्धस्य च कथा, पितृ-
 सप्तकवर्णनम् । मुनीनां जात्यन्तरप्राप्तिः । साधुसङ्गेन मुनिसप्तकम्य
 सद्गति लाभः । व्यासपूजा ।

विधान सहितं सम्यक् पुगणं फलदं धृतम् ।

तस्माद्विधानयुक्तं पुराणं फलमुत्तमम् ॥

भागवतम्

तत्प्रतिपादित विषयाश्च

प्रथमस्कन्धे :—

देवीभागवतस्य महापुराणत्वादि सिद्धान्त निर्णयः । ग्रन्थारम्भमंगलम्, ऋषीणां पुराणविषयप्रश्नः ग्रन्थ सङ्ख्या विषयश्च । ससंख्याक पुराणाख्या तत्तद्युगीय व्यासानुक्त्यनञ्च । देवीसर्वोत्तमेति कथनं प्रसङ्गतं शुकजन्म च । देव्यामहोत्कर्षः । मधुकैटभयोर्युद्धोद्योगः । ब्रह्मणा मधुकैटभभीतेन पराश्विकायाःस्तुतिः । आराध्यनिर्णयः । देवोपसादान्मधुकैटभयोर्हरिणावधः । शिवस्य परदानम् । युधोत्पत्तिः । पुरुरवस उत्पत्तिः । पुरुरवसउर्वश्याश्चरितम् । शुकस्योत्पत्तिः । शुकवैराग्यम् । शुकायैतत्पुराणोपदेशः । जनकस्य पराक्षार्थं शुकस्य मिथिलागमनम् । शुकायजनकोपदेशः । शुकस्य विषादादिकम् । शुकनिर्गमनोत्तरंव्यासरुत्योपवर्णनम् ।

द्वितीयस्कन्धे :—

व्यासजन्मवृत्तान्तवर्णनम् । पराशरादासकन्योदरे व्यासस्थजन्म । शन्तनो सत्यवत्या गङ्गाया च सह विवाहः वसूनामुत्पत्तिश्च । शन्तनुना सत्यवत्या परणम् । व्यासात् पुत्रत्रयोत्पत्तिः पाण्डवोत्पत्तिश्च । पाण्डवानां कथानकं मृतानां दर्शनञ्च । यदुबुलस्य-

नाशः उत्तरासूनोर्वृत्तञ्च । स्युरावृत्त कथनपूर्वको गुतगृहे
 राज्ञोवासः । तक्षकद्विजयोः सम्भाषणं तक्षकेण राज्ञोदर्शनञ्च
 सर्पसत्राय यद्वपरिकरस्य जनमेजयस्यास्तीक्ष्णेन निवारणम् ।
 व्यास्तोकस्योद्गमयो भागवतमाहात्म्यञ्च ।

तृतीय स्कन्धः—

भुवनेश्वरो निर्णयः । विमानेन ब्रह्मादीनां गतिः । विमानस्यै-
 र्हरादिभिर्देवी दर्शनम् । विष्णुनामृतं देवीस्तोत्रं तदुद्धवं हरस्तुतिर्ब्रह्म-
 स्तुतिश्च । ब्रह्मणे श्रीदेव्या उपदेशः । सत्त्वनिष्पणम् । गुणानां
 रूपसंन्यानादि । पुनरपि गुणानां लक्षणमधिहृत्य नारद प्रश्नः ।
 सत्यव्रतकथा । चाग्यीजोच्चारणान् सत्यव्रतस्य सिद्धिलामः ।
 अंघायज्ञविधिः । अग्निष्कामस्य विष्णुनानुष्ठानम् । राज-
 प्रश्नोत्तरं वैभयवर्णनञ्च । युधाजिह्वोरसेनयोर्वीहित्रार्थयुद्धम् ।
 युधाजितः सुदर्शनजिघांसया भरद्वाजाश्रमं प्रति गमनम् । विष्णा-
 मित्रकथोत्तरं राजपुत्रस्य कामयीजप्राप्तिः काशीराजस्य स्वसुता
 विवाहोद्योगः । सुदर्शनेन सह राज्ञां स्वयम्भवागमनम् । राज-
 संवाद् निवृत्तिपूर्वकं कन्याबोधः । राज्ञां कीलाहले कन्यासम्मत्तस्य
 राज्ञः स्यात् । सुदर्शनविवाहः सुबाहोः कन्याया विवाहश्च ।
 महारणेशत्रूणां देव्या व्यापादनम् । देवी महिमा काश्यां दुर्गा-
 घासश्च । अयिका तोषणं तत्पुरं देवीस्थापनञ्च । नवरात्रविधे
 नृपाय व्यासेन कथनम् । कुमारिकाकथनम् । रामायणकथा
 प्रश्नः । रामशोकः । नारदेन व्रतकथनम् ।

चतुर्थ स्कन्धे :—

कृष्णावतार प्रश्नः । कर्मणोजन्मादिकारणत्वनिरूपणम् ।
 अदितेः शापकथनम् । अधमजगतः स्थितिः । नारायणकथा ।
 नराग्रजेनोर्वशीसृष्टिः । अहंकारावर्तनम् । प्रह्लादनारायणोः समागमः
 प्रह्लादनारायणयुद्धम् । हरये भृगुणाशापदानम् । शुकस्य मन्त्रला-
 भायं गमनं शुकमातुर्वधश्च । भृगुणा शुकमातुरुज्जीवनम् । जयन्त्या
 शुकसेवार्थं प्रेषणम् । शुकरूपेण देवानां गुरुणा दैत्यवञ्चना । दैत्यानां
 शुक सम्प्राप्तिः । देवदानवयोर्युद्धशान्तिः । हरेर्नानावताराः । सुरां-
 गतानां नारायणाश्रमे गमनम् । दुष्टराजभाराक्रान्ताया मेदिन्या
 ब्रह्माणं प्रति गमनम् । देवैः शक्तिस्तवनम् । वासुदेवांशायतारकथा ।
 देवक्या सप्तानां पुत्राणां वधः । देवानामंशावतारणम् । कृष्ण-
 जन्मकथनम् । कृष्णकथा । पराशक्तेः सर्वज्ञत्वकथनम् ।

पञ्चम स्कन्धे :—

विष्णोरपेक्षया रद्रस्य श्रेष्ठत्वम् । देवीमाहात्म्यवर्णनम्
 महिपोत्पत्तिः । देवेन्द्रेण सह समरोद्योगः । देवानां सप्तदिविमर्शः ।
 देवसेनापराजयः । देवदानवयुद्धम् । पराभूतानां देवानां कैलास-
 गमनम् । जगदम्बायाः पलाशसमिधांज्वालनयोत्पत्ति कथनम् ।
 देवैर्महायुधैर्देव्यर्चनम् । रक्तदूतसंघादकीर्तनम् । महिपासुर-
 संसदि विमृश्यानाम्नोदूतस्य प्रेषणम् । ताम्रस्यागमनोत्तरं चाप्कल
 दुर्मुखयोः प्रेषणम् । चाप्कलदुर्मुखयोर्वधः । ताम्रचिक्षुरयो-
 र्देव्यावधः । महारणेऽसिलोमादीनां निधनम् । महिपासुरस्य

देव्या संवादः । मंदोदर्याः कथानकम् । महिषस्यवधः । देवैः कृता-
महादेवीस्तुतिः अन्तर्धानोत्तरं वृत्तकथनम् । शुम्भासुरकथा ।
परादेव्याः सुरकार्यार्थं प्रादुर्भावः । कौशिकोति प्रसिद्धाया देव्या-
गिरौप्रादुर्भावः । दूतसंवादकीर्तनम् । धूम्रलोचनवधः । चण्ड-
मुण्डयोः श्रीदेव्यासहयुद्धम् । रक्तबीजयुद्धम् । रक्तबीजवधः ।
शुम्भस्य युद्धस्यचिस्तरः । शुम्भस्ययुद्धोद्योगः । निशुम्भवधः ।
शुम्भासुरवधाश्रितकथा । राजवैश्योश्चरित्रत्रय सेवकयोर्वार्ता ।
भुजसुन्दर्या राज्ञेकथनम् । राज्ञे तापसोपदेशः । राजवैश्ययोर्देव्याः
प्रत्यक्षदर्शनम् ।

पष्ठ स्कन्धे :—

वृत्रदैत्यवधकथारम्भः । त्रिशिरोवधवर्णनम् । मित्राक्षया-
वृत्रस्य तपोधनगमनम् । वृत्रेण धरगर्वेण पराभूतानां देवानां
शंकरसमीपेगमनम् । देवीस्तुत्या देवैर्व्यप्रापणम् । वृत्रदैत्यवधा-
श्रिता कथा । वासवस्य गुप्तवासो नहुषस्य चेन्द्रपदेऽभिषेकः ।
नहुषेण प्रार्थितायाः शय्याश्चिता, देवीप्रसादतस्तस्या इन्द्रदर्शनम् ।
नहुषस्याधःपातः त्रिविधस्य कर्मणो रूपकथनम् । युगोद्भवानां
धर्माणां कथनं सप्तसङ्गमविनिर्णयश्च । आडोचकमहायुद्धस्य-
तीर्थयात्रा प्रसङ्गत उपवर्णनम् । शुनःशेपकथान्ते युद्धस्यस्मरणम् ।
षसिष्ठस्य मित्रावरुणापत्यत्वचिस्तरः । निमेर्देहान्तरेगतिः ह्यह्या-
नां कथा । ह्यह्येन मार्गवाणां वधः । देवीरूपया भृगुवंशस्तुतिः ।
ह्यह्यस्यकथा । हरेरश्विन्यां जन्म । ह्ययाजातस्य हरेः कथानकम् ।
एकवीरामिषेचनोद्ध्वस्तकथनम् । एकावल्याः कथानकम् ।

हैहयभूत कालकेतुना महायुद्धम् । विक्षेपशक्ति कथनम् ।
 व्यासेन स्वमोहोपपादनम् । नारदेनापि तथाकरणम् । नारदस्य
 चिदाह । पुरनपि तस्यैव विस्तारः । स्त्रीभाव गतस्यनारदस्य
 पुन पुन्यत्वप्राप्ति । हरिणा महामाया प्रभावकथनम् । भगवतो-
 ध्यानादिकम् ।

सप्तम स्कन्धे :—

सूर्य सोमोद्भवाणा कथारम्भ । तदन्वयस्यविस्तार । सुक
 न्यकाया व्यथनाय प्रदानम् । सुकन्या देवभिषजो सम्वाह ।
 रविपुत्रप्रसादजा व्यवनस्य युवावस्था । शर्यातेर्यज्ञकरणम् ।
 तत्राश्विनो सोमप नम् । तद्वशकथनम् । ककुत्स्थादीनामुत्पत्ति ।
 सत्यव्रतकथा । त्रिशङ्को कथानकम् । त्रिशङ्को स्वर्गवास ।
 हरिश्चन्द्रेनृपे सतित्रिशङ्कोर्विश्वामित्रेण समागम । हरिश्चन्द्र
 कथा । राह पुत्रोत्सव । शन शेषवधाश्रयाकथा । विश्वा-
 मित्रेण शन शेषस्य मोचनम् । हरिश्चन्द्रेण विश्वामित्रवैरम् ।
 हरिश्चन्द्रस्य राज्यविध्वंस । नृपस्य दक्षिणा दानयत्न । तत्कृत
 शोक । हरिश्चन्द्रेणात्मविषय । चाण्डागैः हरिश्चन्द्रवध ।
 हरिश्चन्द्रस्य चाण्डालगृहेऽवस्थानम् । भूभृत पुत्रभार्याकथा ।
 पद्मामभिषाय हरिश्चन्द्रस्य शोक । हरिश्चन्द्रस्य स्वर्गवास ।
 शताक्षा मदिमा । राजवार्ताया प्रश्न । गौरीजन्म नानापीडो
 दुभयश्च । पार्वत्या हिमाग्याज्जन्म । आत्मतत्त्वनिरूपणम् ।
 पित्रवरूपदर्शनम् । ज्ञानस्य मोक्षार्थत्वम् । मन्त्रसिद्धे साधनम् ।

ब्रह्मतत्त्वम् । भक्तिमहिमा । देव्या महोत्सवव्रतानि स्थानानि च ।
भगवती पूजनम् । ब्रह्मपूजा विधानम् ।

अष्टमस्कन्धे :—

मनवे देव्या घरदानम् । घराहेण घरोद्धरणम् । मनुवंशचर्णनम् ।
प्रियव्रतकथानकम् । भूमण्डलस्य विस्तारः । देवीघर्णनं देव्यु-
पास्तिश्च । मूलादूर्ध्वमहार्यघर्णनम् । इलावृत्तघर्णनम् । घर्षान्तर्गत
सेव्यसेवकत्यकथनम् । तत्र सेव्यसेवकरूपाणां घर्णनम् । घर्षान्तरे
क्रमप्राप्ता सेव्यसेवकता । द्वीपान्तरसमाचारः । शिष्टद्वीप
समाचारः । लोकालोऽग्निरिव्यवस्था । रवेर्गमनमांद्यादिप्रकारः ।
सोमादीनां गत्यनुसारेण विविधं फलम् । ध्रुवमण्डलसंस्थानम् ।
राट्टमण्डलं सूर्यचन्द्रोपरागश्च । तलादेर्वर्णनम् । तलातलस्थितिः ।
नरकस्वरूपम् । पातकोपपादनम् । शिष्टानां नरकाणां घर्णनम् ।
देव्याराधनम् ।

नवमस्कन्धे :—

संक्षेपेण शक्तिवर्णनम् । पंचप्रकृतिसंभवः । देवतादिच्छृष्टिः ।
सरस्वतीस्तोत्र पूजादि । धर्मात्मज्ञेन नारदाय सरस्वती महास्तोत्र
कथनम् । लक्ष्मीगंगा भारतीनां जन्म पृथ्वील्लोके । तासां
शापोद्धारप्रकारः । गङ्गादीनां समुत्पत्तिः कली वर्त्तनञ्च । शक्त्यु-
त्पत्तिप्रसङ्गतोभूमिशक्तेः समुत्पत्तिः । घरादेव्या अपराधेवृत्तेसति-
नरकादि फलप्राप्तिकथनम् । गङ्गोत्पत्तिः । ५१
संभवाया गङ्गाया गोलोके समुत्पत्तिः । जाह्नवी

जातेति कथनम् । गङ्गाविष्णवोः परस्पर सम्बन्धकरणम् ।
तुलस्युपाख्यानप्रश्नः । महालक्ष्म्या राजगृहे जन्म । धर्मध्वज-
सुतायास्तुलस्याः कथा । शङ्खचूडेन तुलस्याः सङ्गतिः संवादश्च ।
तयोर्विवाहानन्तरं देवानां वैकुण्ठगमनम् । शङ्खचूडस्य देवैः सह
संग्रामः । शङ्खचूडमहेशयोर्युद्धम् । शुद्धारम्भः । जनार्दनैः शङ्ख-
चूडस्य कवचहरणम् । तुलसीसंगमवर्णनं तन्माहात्म्यञ्च । महामन्त्र
सहितं तुलसीपूजनम् । सावित्र्याख्यानम् । तस्या राजोदरे जन्म ।
अध्यात्मप्रश्नः । दानधर्म फलम् । नानादान फलम् । सावित्री-
मूलशक्ति महामन्त्रदानम् । पातकानां फलानि । कुण्डेषु ये पतन्ति
तेषां लक्षणम् । अवशिष्टानां कुण्डानां कथनम् । पुनरपि शिष्टानां
कुण्डानां कथनम् । देवीभक्त्या यमपुरीत्रयनाश कथनम् ।
कुण्डानां लक्षणम् । देवीमहोत्कर्षः । महालक्ष्म्याख्यानम् । लक्ष्मी-
जन्मादेर्नारदाय कथनम् । शक्रस्य ब्रह्मलोकं प्रति गमनम् ।
महालक्ष्म्यर्चनक्रमादि । स्वाहाशक्तेरुपाख्यानम् । स्वधायाः-
समुपाख्यानम् । दक्षिणाया उपाख्यानम् । पृष्ठी देव्या उपाख्यानम् ।
मंगलचण्ड्याः कथा । मनसायाः कथास्तोत्रादि । सुरभ्याख्यानम् ।
राधाया दुर्गायाश्च चरित्रम् ।

दशमस्कन्धे :—

मनोः स्वायम्भुवस्याख्यानम् । भगवत्या विन्ध्याद्रिगमनम् ।
विन्ध्येन भानुमार्गनिरोधः । वृषध्वजस्तुतिस्तस्मै वृत्तान्तकथनञ्च ।
महाविष्णुस्तोत्रम् । अगस्त्येन देवी प्रार्थनातो विन्ध्याद्रेर्वृद्धि
कुण्ठनम् । मुनिना विन्ध्यवृद्धिकुण्ठनम् । स्वारोचिपस्य मनोः कथा ।

चाक्षुषस्य मनोः कथा । सावर्णेर्मनोः कथा । महाकालीचरितम् ।
महालक्ष्मीमहासरस्वत्योश्चरितम् । नवमादि मनूनां चरित्र
घर्णनम् ।

एकादशस्कन्धे :—

प्रातःकृत्यम् । शौचादि विधिः । स्नानादि विधिः स्नात
धारण महिमा च । रुद्राक्षाणां वटुविधत्त कथनम् । जपमाला
विधानम् । रुद्राक्ष महिमा । एकवक्त्रादि रुद्राक्षाणां घर्णनम् ।
भूत शुद्धिः । शिरोव्रतविधानम् । गौण मम्मदि घर्णनम् ।
तस्य त्रिविधत्वं माहात्म्यञ्च । मम्म धारण विस्तरः । मम्मनो-
महिमा । विभूति धारण माहात्म्यम् । त्रिपुन्द्रोर्ध्व पुण्ड्रयोर्महिमा ।
सन्ध्योपासनम् । सन्ध्यादि कृत्यम् । पूर्णोपचारादि कथनम् ।
मध्याह्न संध्या करणम् । ब्रह्मयज्ञादिकम् । गायत्री पुरश्चरणम् ।
वैश्यदेवादिकम् । भोजनान्ते करणीयं तत्परुच्छादि लक्षणञ्च ।
फाम्यकर्म संग्रहणं प्रायश्चित्तविधानञ्च ।

द्वादशस्कन्धे :—

गायत्र्या ऋष्यादि कथनम् । घर्णानां शस्त्र्यादि । जगन्मानुः
कथनम् । गायत्री हृदयम् । गायत्री स्तोत्रम् । गायत्री नाम
सहस्रम् । वीक्षा विधिः । केनोपनिषत्कथा । गौतम शापेन
ब्राह्मणानामन्यदेवतोपासनश्रद्धा । द्वीप घर्णनम् । पद्मरागादि
निर्मित प्राकार घर्णनम् । चिन्तामणि गृह घर्णनम् । जनमेजयेन
देर्षा मरयकरणम् । उपसंहारः पुराण फलदर्शनञ्च ।

संस्काराणाञ्च सर्वेषां लक्षणञ्चात्रकीर्तितम् ।
 पक्षत्यादितिर्यानाञ्च कल्पाः सप्त च कीर्तिताः ।
 अष्टमाद्याः शेषकल्पा वैष्णवेपर्वणि स्मृताः ।
 शैवे च कामतोमित्रा सौरेरान्त्यकथाचयः ।
 प्रतिसर्गाच्छ्रयं पश्चाद्भानाग्न्यानसमाचितम् ।
 पुराणस्योपसंहारः सहितं पर्व पञ्चमम् ।
 एषु पञ्चसु पूर्वस्मिन् ब्रह्मणो महिमाधिकः ।

द्वितीय तृतीय चतुर्थ पञ्चम पर्वणुः—

“धर्मे कामे च मोक्षे तु विष्णोश्चापिशिवस्य च ।
 द्वितीये च तृतीये च सौरो धर्मं ननुष्टये ।
 प्रतिसर्गाच्छ्रयन्त्यन्त्यं प्रोक्तं सर्वं कथाचितम् ।
 एतद्विष्यं निर्दिष्टं पर्वत्यासेन धीमता ।
 चतुर्दशसहस्रं तु पुराणं परिकीर्तितम् ।
 भविष्यं सर्वदेवानां साम्यं यत्र प्रकीर्तितम् ।
 गुणानां तारुम्येन समं ब्रह्मेति हि श्रुतिः” ।

तत्फलश्रुतिः :—

तद्विधित्वा तु यो दद्यात्सौम्यां विद्वान्निमन्सरः ।
 गुडधेनुयुतं हेम घस्त्रमात्यविभूषणैः ।
 पाचकम्पुस्तकञ्चापि पूजयित्वा विधानतः ।
 गन्धार्घ्यमौज्यमश्वैश्च रुचानीराजनादिकम् ।
 यो वै जिनेन्द्रियो भूत्वा सोपवासः समाहितः ।
 अथवा यो नरो भक्त्या कर्तयेच्छृणुयादपि ।

भविष्यपुराणम्

तत्प्रतिपाद्य विषयाश्च नारदीय पुराणे ४ पा० १०० अ

उक्ता यथा .—

अथ ते सम्प्रवक्ष्यामि पुराणसर्वसिद्धिदम् ।
भविष्य भवत सर्वलोकाभीष्टप्रदायकम् ॥
तत्राह सर्वदेवानामादिकर्त्ता समुद्यत ।
सृष्ट्यर्थं तत्र सञ्जातोमनु स्वायम्भुव पुरा ॥
स मा प्रणम्यप्रच्छ धर्मं सर्वार्थसाधकम् ।
अह तस्मै तदाप्रीत प्राचीन धर्मसहिताम् ॥
पुराणाना यदाव्यासो व्यासश्चक्रमहामति ।
तदा ता सहिता सर्वा पञ्चधा व्यभञ्जन्मुनि ॥
अथोत्कल्पवृत्तान्तनानाश्चर्यकथाचिताम् ।’

तत्र प्रथम पर्वाणि :—

“तत्रादिम रमृत पर्वा ग्राह्य यत्रास्त्युपक्रम ।
सुतशौनकसम्वादे पुराणप्रश्न सप्रम ।
आदित्य चरित प्राय सचारयान समाचित ।
सृष्ट्यादि लक्षणोपेत शास्त्रसर्वसरूपक ।
पुस्तकेष्वेतेषां लक्षणञ्च तत्परम् ।

प्रयोगाः कथंचंचैव सदस्रं स्तोत्रमेव च ।
गणेशसूर्यविष्णूनां शिवशक्त्योरनुक्रमात् ।
सनत्कुमार मुनिना नारदाय तृतीयके ।”

पूर्वभागे चतुर्थपादे :—

पुराण लक्षणञ्चैव प्रमाणं दानमेव च ।
पृथक् पृथक् समुद्दिष्टं दानकाल पुरःसरम् ।
चैत्रादि सर्वमासेषु तिथीनां च पृथक् पृथक् ।
प्रोक्तम्प्रतिपदादीनां व्रतं सर्वाघनाशनम् ।
सनातनेन मुनिना नारदाय चतुर्थके ।
पूर्वभागोऽयमुदितो बृहदाख्यान सञ्ज्ञितः ।”

तदुत्तरभागे :—

अस्योत्तरेष्विभागेषु प्रश्न एकादशी व्रते ।
षड्विष्टेनाथ सम्पादो मान्धातुः परिकीर्तितः ।
श्यामाङ्गद कथापुण्या मोहिन्युत्पत्तिकर्म च ।
षष्ठशापश्च मोहिन्यै पद्मादुद्धरणक्रिया ।
गङ्गा कथा पुण्यतमा गयायात्रानुकीर्तनम् ।
काश्यामाहान्म्यमनुलम्पुरोत्तम धर्षणम् ।
यात्रा विधानं क्षेत्रस्य ब्रह्माख्यानसमन्वितम् ।
प्रयागम्याथ माहान्म्यं कुरुक्षेत्रस्यत्तपरम् ।
हरिद्वारस्य चारव्यानं कामोदाख्यानफन्तया ।
यदरतीर्त्यमाहान्म्यं कामाख्यायास्तथैव च ।

स मुक्तं पातकैर्घोरैः प्रयाति ब्रह्मण पदम् ।
योऽप्यनुक्रमणीमेतां भविष्यस्य निरूपिताम् ।
पठेद्वा शृणुयाच्चेतो भुक्तिं मुक्तिञ्च विन्दत ।

नारदीय पुराणम्

तद्विषयाश्च :—

“शृणु धिप्र ! प्रवक्ष्यामि पुराणं नारदीयकम् ।
पञ्चविंशतिसाहस्रं बृहच्चित्रकथाश्रयम् ॥ १ ॥

तत्रपूर्वभागे प्रथमपादे :—

“सूत शौनक सम्वादं सृष्टिं सक्षेपं वर्णनम् ।
नानाधर्मकथां पुण्यां प्रवृत्ते समुदाहृता ।
प्राग्भागे प्रथमे पादे सनकेन महात्मना ।”

पूर्वभागे द्वितीयपादे :—

“द्वितीये मोक्षधर्माख्ये मोक्षोपायनिरूपणम् ।
वेदाङ्गानाञ्च कथनं शुक्लोत्पत्तिश्च धिस्तरात् ।
सनन्दनेन गदिता नारदाय महात्मने ।”

पूर्वभागे तृतीयपादे :—

महातन्त्रे समुद्दिष्टं पशुपाशविमोक्षणम् ।
मन्त्रार्णां शोधनं दीक्षा मन्त्रोद्धारश्च पूजनम् ।

प्रयोगाः कथंचनैव सहस्रं स्तोत्रमेव च ।
गणेशसूर्यचिष्णूनां शिवशक्त्योरनुकृतात् ।
सनत्कुमार मुनिना नारदाय तृतीयके ।”

पूर्वभागे चतुर्थपादे :—

पुराण लक्षणञ्चैव प्रमाणं दानमेव च ।
पृथक् पृथक् समुद्दिष्टं दानकाल पुरःसरम् ।
चैत्रादि सधर्मासेषु तिथीनां च पृथक् पृथक् ।
प्रोक्तप्रतिपदादीनां व्रतं सर्वाघनाशनम् ।
सनातनेन मुनिना नारदाय चतुर्थके ।
पूर्वभागोऽयमुदितो बृहदारण्यक सञ्ज्ञितः ।”

तदुत्तरभागे :—

अस्योत्तरेचिभागेतु प्रश्न एकादशी व्रते ।
पश्चिष्टेनाथ सम्वाद्यो मान्धातुः परिकीर्तितः ।
रुक्माङ्गद कथापुण्या मोहिन्युत्पत्तिकर्म च ।
पद्मशापश्च मोहिन्यै पञ्चादुद्धरणक्रिया ।
गंगा कथा पुण्यतमा गयायात्रानुकीर्तनम् ।
फाश्यामाहान्म्यमतुलम्पुरुषोत्तम घर्षणम् ।
यात्रा विधानं श्रेयस्य बह्मरयानसमन्वितम् ।
प्रयागस्याथ माहान्म्यं कुरुक्षेत्रस्यत्तपरम् ।
हरिद्वारस्य चारयानं कामोद्राग्यानकन्तथा ।
यदतीतीर्यमाहान्म्यं कामारय्यायास्तथैव च ।

प्रभासस्य च माहात्म्यं पुराणाख्यानकन्तथा ।
 गीतमाख्यानकम् पश्चाद् वेदपादस्तवस्ततः ।
 गोकर्णक्षेत्र माहात्म्यं लक्ष्मणाख्यानकं तथा ।
 सेतु माहात्म्य कथनं नर्मदातीर्थवर्णनम् ।
 अचन्त्याश्चैव माहात्म्यं मथुरायास्तत परम् ।
 वृन्दावनस्य महिमा यसोऽर्हन्नान्तिरेगतिः ।
 मोहिनीचरितम् पश्चादेवं वै नारदीयकम् ।

तत्फलश्रुतिः :—

यः शृणोति नरोभक्त्या श्रावयेद्वासमाहितः ।
 स याति ब्रह्मणो धाम नात्र कार्याधिचारणा ।
 यस्त्येतदिषपूर्णायां धेनूता सप्तकाचितम् ।
 प्रदद्याद्द्विजवर्याय स लभेन्मोक्षमेव च ।
 यश्चानुकम्पणीमेतां नारदीयस्य वर्णयेत् ।
 शृणुयाद्देकचित्तेन सोऽपिस्वर्गगतिलभेत् ।

मार्कण्डेय पुराणम्

तत्प्रतिपाद्यविषयाश्च नारदपुराणे पूर्वभागे

८७ अ० उक्ता यथा :—

“यत्राघिरुत्य शकुनीन् सर्वधर्म निरूपणम् ।

मार्कण्डेयेन मुनिना जैमिनेः प्राक् समीरितम् ॥

पक्षिणां धर्मसंज्ञानां ततो जन्म निरूपणम् ।
 पूर्वजन्मकथा चैषां विप्रिया च दिवस्पतेः ॥ .
 तीर्थयात्रा बलस्यातो द्रोपदेयकथानकम् ।
 हरिश्चन्द्रकथा पुण्या युद्धमाहीवकाभिघम् ॥ .
 पितापुत्रसमाख्यानं दत्तात्रेयकथा मतः ।
 द्रुह्यस्याथ चरितं महाख्यानसमाचितम् ॥
 मदालसाकथा प्रोक्ता ह्यलकाचरिताचिता ।
 सृष्टिर्नकीर्तनं पुण्यं नवधा परिकीर्तितम् ॥
 कल्पान्तकालनिर्देशो यक्षसृष्टिनिरूपणम् ।
 रूद्रादिसृष्टिरप्युक्ता द्रोपधर्मानुकीर्तनम् ॥
 मनूनां च कथा नाना कीर्तिताः पापहारिकाः ।
 तासु दुर्गाकथान्यन्तं पुण्यदा चाष्टमेऽन्तरै ॥
 तत्पश्चात्प्रणयोत्पत्तिस्त्रयीतेजः समुद्भवः ।
 मार्चण्डस्य च जन्माख्या तन्माहात्म्यसमाचिता ॥
 वैधस्यतान्वयश्चापि घटसव्याश्चरितं ततः ।
 घनित्रस्य ततः प्रोक्ता कथा पुण्या महात्मनः ॥
 भविष्यश्चरितंचैव किमिच्छ्य द्रुतकीर्तनम् ।
 नरिष्यन्तस्य चरितं इक्ष्वाकुचरितं ततः ॥
 तुलस्याश्चरितं पञ्चद्रामचन्द्रस्य सत्कथा ।
 कुशवंशसमाख्यानं सोमवंशानुकीर्तनम् ॥
 पुरुरवः कथा पुण्या नट्टपम्प्य कथादुता ।
 यपाति चरितं पुण्यं यदुर्वशानुकीर्तनम् ॥

श्रोतृणां बालचरितं माथुरं चरितं ततः ।
 द्वारकाचरितञ्चाथ कथा सर्वाद्यतारजा ॥
 ततः सांख्यसमुद्देश प्रपञ्चासत्त्वकीर्तनम् ।
 मार्कण्डेयस्य चरितं पुराणश्रवणे फलम् ।
 यः शृणोति नरोभक्त्या पुराणमिदमादरात् ।
 मार्कण्डेयाभिधं वत्स ॥ लभेत्परमां गतिम् ॥
 यस्तु व्याकुले चेतश्चैवं स लभते पदम् ।
 तत्प्रयच्छेद्भिस्त्रिभिः यः सौवर्णकरिसंयुतम् ॥
 कार्त्तिक्यां द्विजवर्षाय स लभेद्ब्रह्मणः पदम् ।
 शृणाति श्रावयेद्वापि यश्चानुक्रमणामिमाम् ॥
 मार्कण्डेय पुराणस्य सलभेद्वाञ्छितफलम् ।

अग्निपुराणम्

तत्प्रतिपाद्यविषयाश्च—

भगवतोऽवतारः, सृष्टिप्रकारः, विष्णुपूजा, अग्निपूजा, मुद्रादि-
 लक्षणम्, दीक्षा, अभिषेकः, मण्डपलक्षणम्, कुशमार्जनविधिः,
 पवित्रारोपः, देवतायतनादिनिर्माणप्रकारः, शान्तप्रामलक्षणपूजे,
 देवप्रतिष्ठानियामरुदीक्षा, देवप्रतिष्ठाविधिः, ब्रह्माण्डस्वरूपं, गङ्गा-
 दितीर्थमाहात्म्यं, दीपार्पणम्, ऊर्ध्वाधोलोकवर्णनम्, ज्योतिश्चक्र-
 स्वरूपम् । युद्धजयोपायदर्शनेष्विधानम्, यन्त्रमन्त्रोपधप्रकारः,

कुञ्जिकार्चनविधिः, कोटिहोमविधानम्, ब्रह्मचर्यधर्मः, श्राद्ध-
कल्पः, ग्रहयज्ञः, वैदिकस्मार्त्तकर्मणी, प्रायश्चित्तम्, तिथिमेदे-
यतमेदः, चारयत नक्षत्रव्रते, मासव्रतम्, दीपदानविधिः, नूतन-
व्यूहारम्मादि, नरक निरूपणम्, ढानव्रतम्, नाडी चक्रम् । सन्ध्या-
विधिः, गायत्र्यर्थः, शिखस्तोत्रं, राज्याभिषेकः, राजधर्मः,
राजाध्येय शास्त्रम्, शुभाशुभशकुनादि, मण्डलादि, रमणदीक्षा-
विधिः, श्रीरामनति, रत्नलक्षणम्, धनुर्विद्या, व्यवहारविधिः,
देवासुरयोर्युद्धम्, आयुर्वेदः, गजादिचिकित्सा, पूजाप्रकारः ।
शान्तिविधिः, छन्द शास्त्रम्, साहित्यम्, शिष्टानुशासनम्,
सृष्ट्यादि प्रलयवर्णने, शारीरिकरूपम्, नरकवर्णनम्, योग, ब्रह्म-
ज्ञानम्, पुराणमाहात्म्यञ्च ।

ब्रह्मवैवर्त्त पुराणम्

तत्प्रतिपाद्यविषयाश्च बृहन्नारदीये ४ पा० १०१ अ०

उक्ता यथा—

ब्रह्मोवाच— शृणु वत्स प्रवक्ष्यामि पुराणं दशमं तव ।
ब्रह्मवैवर्त्तकं नाम वेदमार्गानुदर्शकम् । सावर्णिर्यत्र भगवान्
साक्षाद्देवर्षयेऽतिथिः । नारदाय पुराणार्थं प्राह सर्वमलौकिकम् ।
धर्मार्थकाममोक्षागं सारं श्रीतिर्हरी हरे । तयोरमेदसिद्वयर्थं
ब्रह्मवैवर्त्तमुत्तमम् ।

- रथन्तरस्य कल्पस्य वृत्तान्तं यन्मयोदितम् ।
 शतकोटि पुराणं तत् संक्षिप्य ब्राह्म वेदवित् ॥
 व्यासश्चतुर्धा संव्यस्य ब्रह्मवैवर्तं संक्षितम् ।
 अष्टादश सहस्रान्तपुराणं परिकीर्तितम् ॥
 ब्रह्म १ प्रकृति २ विष्णेश ३ कृष्ण खण्ड ४ समाखितम् ।
 तत्र सूतर्षिसम्वादः पुराणोपक्रमो मतः ॥

तत्रप्रथमे ब्रह्मखण्डे :—

सृष्टिप्रकरणं त्वाद्यं ततो नारदवैध्वसोः ।
 विवाहः सुमहान् यत्र द्वयोरासीत्पराभवः ॥
 शिवलोकगतिं पश्चाज्ज्ञानलाभः शिवान्मुनेः ।
 शिष्याकथेन तत्पश्चात् मरीचेनारदस्य तु ॥
 मननञ्चैव सार्वर्णिर्ज्ञानार्थं सिद्धसेविते ।
 आश्रमे सुमहापुण्ये त्रैलोक्यप्राश्चर्यकारिणि ॥
 एतद्धि ब्रह्मखण्डं हि श्रुतं पापविनाशनम् ।

द्वितीये प्रकृति खण्डे :—

"ततः सार्वर्णिसम्वादो नारदस्य समीरितः ।
 कृष्णमाहात्म्यसंयुक्तो नानाध्यानकथोत्तरः ॥
 प्रह्तेरंशभूतानां फलानाश्चापि धर्जितम् ।
 माहात्म्यं पूजनाद्यश्च विस्तरेण यथास्थितम् ॥
 एतत्प्रकृतिखण्डं हि श्रुतं भूतिविधायकम् ।

तृतीये गणेश खण्डे :—

गणेशजन्मसम्प्रश्नः सपुण्यकमाद्यतम् ।

पार्वत्या कार्त्तिनेयेन सह चिञ्जेशसम्भव ॥
 चरित कार्त्तवीर्यस्य जामदग्न्यस्य चाद्भुतम् ।
 विवाद सुमहान्पञ्चाज्जामदग्न्यगणेशयो ॥
 एतद्विञ्जेशखण्ड हि सर्वं विघ्नविनाशनम् ।”

चतुर्थं श्रीकृष्णजन्मखण्डे :—

“श्रीकृष्णजन्म सम्प्रश्नो जन्माख्यात ततोऽद्भुतम् ।
 गोकुले गमन पञ्चात्पूतनादिवधोऽद्भुत ॥
 बाल्यक्रीडारजा लीलाविचित्रास्तत्र वर्णिता ।
 रासक्रीडा च गोपीभि शारदी समुदाहृता ॥
 रहस्ये राधया क्रीडा वर्णिता बहुविस्तरा ।
 सहामूरैण तत्पश्चान्मथुरा गमन हरे ॥
 कसादीना वधे धृत्ते सन्स्यद्धिजससृष्टि ।
 काश्य सान्दीपने पश्चाद् विद्योपादानमद्भुतम् ॥
 यवनस्य वध पश्चाद् द्वारकागमन हरे ।
 नरकादि वधस्तत्र दृष्टेन विहितोऽद्भुत ॥
 कृष्णखण्डमिदं विप्र । नृणां ससार खण्डनम् ।

तत्फलश्रुति :—

“पठितञ्च श्रुत ध्यातं पूजित चाभिवर्णितम् ।
 इत्येतद् ग्रहयैवत्तं पुराण चात्यलोकिकम् ॥
 व्यासोक्तं चादिसम्भूत पठन् शृण्वन् विमुच्यते ।
 विज्ञानज्ञानशमनाद् घोरात्ससारसागरात् ॥

लिखित्वेदं च यो दद्यान्माध्यां घेनुसमाचितम् ।
 ब्रह्मलोकमवाप्नोति स मुक्तोऽज्ञानबन्धनात् ॥
 यश्चानुकमणी चाऽपि पठेद् वा शृणुयादपि ।
 सोऽपि कृष्णप्रसादेन लभते चाञ्छितम्फलम् ॥

लिङ्गपुराणम्

व्यास प्रणीते महापुराणे प्रतिपाद्य विषयाः
 नारदपुराणे १०२ अ० उक्ता यथा :—
 ब्रह्मोवाच ।

शृणु पुत्र ! प्रपश्यामि पुराणं लिङ्गसंज्ञितम् ।
 स्मृतं शृण्वताञ्चैव भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥
 यच्चलिङ्गामिधे तिष्ठन् घट्टिलिङ्गे हरोऽभ्यधात् ।
 मह्यं धर्मादिसिद्धपर्यमग्निकल्पकथाश्रयम् ॥
 तदेव व्यासदेवेन भागद्वयसमाचितम् ।
 पुराणं लिङ्गमुद्रितं ब्रह्माख्यानविचित्रितम् ।
 तदेकादशसाहस्रं हरमाहात्म्यसूचकम् ।
 परं सर्वपुराणानां सारभूतं जगत्त्रये ।
 पुराणोपक्रमेप्रश्नः सृष्टि संक्षेपतः पुरा ॥

तत्र पूर्वभागे—

योगाख्यानं ततः प्रोक्तं ब्रह्माख्यानं ततः परम् ।
 लिङ्गोद्गमस्तदर्थं च कीर्तिता हि ततः परम् ॥

सनत्कुमारशैलादि संचादश्चाथ पावनः ।
 ततो दधीचिचरितं युगधर्मनिरूपणम् ॥
 ततो भुवनकोपाख्या सूर्यसोमान्वयस्ततः ।
 ततश्च विस्तरात्सर्गस्त्रिपुराख्यानकस्तथा ॥
 लिङ्गप्रतिष्ठा च ततः पशुपाशविमोक्षणम् ।
 शिष्यव्रतानि च तथा सदाचारनिरूपणम् ॥
 प्रायश्चित्तान्परिष्ठा नि काशीध्रुशैलवर्णनम् ।
 अन्धकारख्यानकंपश्चात् धाराहचरितं पुनः ॥
 नृसिंहचरितं पश्चाज्जलन्धरवधस्ततः ।
 शैवं सहस्रनामाथ दक्षयज्ञविनाशनम् ॥
 कामस्य दहनं पश्चात् गिरिजायाः करग्रह ।
 ततो विनायकाख्यानं नृत्याख्यानं शिवस्य च ॥
 उपमन्युकथा चापि पूर्वभाग इतीरितः ।”

उत्तर भागे—

विष्णुमाहात्म्यकथनमभ्यरीपकथा ततः ।
 सनत्कुमारनन्दीशसम्पादश्चपुनर्मुने ॥
 शिवमाहात्म्यसंयुक्तस्नानयागादिकं ततः ।
 सूर्यपूजाविधिश्चैत्र शिवपूजा च मुक्तिदा ॥
 दानानि बहुधोक्तानि श्राद्धप्रकरणन्ततः ।
 प्रतिष्ठा तत्र गदिता ततोऽघोरस्य फीर्त्तनम् ॥
 वज्रेश्वरी महाविद्या गायत्री महिमा ततः ।
 श्रम्यकस्य च माहात्म्यं पुराणध्रुवणस्य च ॥

एतस्योपरिभागस्ते लैगस्य कथितो मया ।
 व्यासेन हि निबद्धस्य रुद्रमाहात्म्यसूचिनः ॥
 लिखित्वैतत्पुराणन्तु तिलधेनुसमाचितम् ।
 फाल्गुन्यां पूर्णिमायां यो दद्याद्भक्त्या द्विजातये ॥
 यः पठेत्शृणुयाद्वापि लेङ्गं पापापहं नरः ।
 सभुक्तभोगोलोकेऽस्मिन्नन्ते शिवपुरम्भजेत् ॥
 लिङ्गानुक्रमणीमेतां पठेद्यः शृणुयात्तथा ।
 तावुमौ शिवभक्तौ तु लोकाद्विजयमोगिनी ॥
 जायेतां गिरिजाभर्तुः प्रसादान्नात्र संशयः ।

वराहपुराणम्

तद्विषयाश्च नारदीय पुराणे पूर्वभागे बृहदुपाख्याने
 चतुर्थभागे १०३ अध्याये उक्ता यथा :—

श्री ब्रह्मोवाच

‘शृणु धर्तस ! प्रवक्ष्यामि घाराहं वै पुराणकम् ।
 भागद्वययुतं शश्वद्विष्णुमाहात्म्यसूचकम् ।
 मानवस्य तु कल्पस्य प्रसङ्गं मत्कृतं पुरा ।
 नियमन्च पुराणेऽस्मिन्नुत्तुर्विंशसहस्रके ॥
 व्यासो हि विदुषां श्रेष्ठः साक्षान्नायायणो भुवि ।
 तत्रादीशुमसंपादः स्मृतो भूमिधरादयोः ।’

तत्र पूर्व भागे :—

“अथादिकृतवृत्तान्ते रम्यस्यचरितं ततः ।
 दुर्जयाय च तत्पश्चाच्छादकलपउदीरितः ॥ :
 महातपस आर्यानं गौर्युत्पत्तिस्तत परम् ।
 विनायकम्य नागाना सेनान्यदित्ययोरपि ॥
 गणानाञ्च तथा देव्या धनदस्य वृषस्य च ।
 आर्यानं सत्यतपसो अतार्यानसमन्वितम् ॥
 अगस्त्यगीता तत्पश्चाद्बुद्धगीता प्रकीर्तिता ।
 महिषासुरविध्वंसे माहात्म्यञ्च त्रिशक्तिजम् ।
 पर्व्याध्यायस्तत श्वेतोपाख्यानं गोप्रदानिकम् ।
 इत्यादिकृतवृत्तान्तं प्रथमोद्देशनामकम् ॥
 भगवद्ब्रह्मर्षे पञ्चाद्विंशत्यर्थकयानकम् ।
 द्वात्रिंशदपराधानां प्रायाश्चित्तं शरीरम् ॥
 तीर्थानाञ्चापि सर्वेषां माहात्म्यं पृथगीरितम् ।
 मथुराया विशेषेण श्राद्धादीनां विधिस्ततः ॥
 धर्षणं यमलोकस्य ऋषिपुत्रप्रसङ्गतः ।
 विपाकः कर्मणाञ्चैव विष्णव्रत निरूपणम् ॥
 गोकर्णस्य च माहात्म्यं कीर्तितं पापनाशनम् ।
 इत्येव पूर्वभागोऽस्य पुराणस्य निरूपितः ”

उत्तरभागे :—

उत्तरे प्रविभागे तु पुनस्त्यक्तुराजयोः ।
 संवादे सर्वतीर्थाना माहात्म्यं विस्तरात्पृथक् ॥

अशेषधर्माश्चाख्याता पौष्करपुण्यपर्व च ।

इत्येव सव धाराह प्रोक्तं पापविनाशनम् ।

तत्फलश्रुतिः :—

पठता शृण्वताञ्चैव भगवद्भक्तिर्द्धनम् ।

काञ्चनं गरुडं वृत्वा तिलधेनुसमाचितम् ॥

लिखित्वैतच्च यो दद्याच्चैत्र्या विप्राय भक्तितः ।

स लभेद्वैष्णवं धाम देवर्षिगणचन्द्रितम् ॥

यो धानुकमणीमेता शृणोत्यपि पठत्यपि ।

सोऽपि भक्तिं लभेद्विष्णौ संसारोच्छेदकारिणीम् ॥

वामन पुराणम्

तत्प्रतिपाद्य विषयाश्च नारद पुराणे उक्ता यथा :—

ब्रह्मोवाच ।

“शृणुवत्स ! प्रवक्ष्यामि पुराण वामनाभिधम् ।

त्रिधिक्रम चरित्राद्वय दशसाहस्रसरयकम् ॥

कूर्मकटप समारुशान धर्मत्रयकथानकम् ।

भागद्वय समायुक्त चकृत् श्रोतु शुभावहम् ॥”

तत्र पूर्वं भागे :—

“पुराणप्रश्न प्रथम ब्रह्मशीर्षेच्छिदा तत ।

कपालमोचनाख्यान दक्षयज्ञविहिंसनम् ॥

हरस्य कालरुवारुश कामस्य दहनन्तत ।

प्रह्लाद नारायणयो र्युद्धं देवासुराह्वयम् ॥
 सुकैश्यर्कसमाख्यानं ततो मुचनकोपकम् ।
 ततः काम्यव्रताख्यानं श्रोदुर्गाचरितं ततः ॥
 तपती चरितं पश्चात्कुरुक्षेत्रस्य वर्णनम् ।
 सरोमाहात्म्यमतुलं पार्वती जन्म कीर्त्तनम् ॥
 तपस्तस्या विद्याहश्च गौर्युपाख्यानकन्ततः ।
 ततः कौशिक्युपाख्यानं कुमारचरितं ततः
 ततोऽन्धकधधाख्यानं साध्योपाख्यानकन्ततः ।
 जायालिचरितं पश्चादरजायाः कथाद्भुता ॥
 अन्धश्रेष्ठरयोर्युद्धं गणत्वंचान्धकस्य च ।
 मरुतां जन्म कथनं घलेश्च चरितं ततः ॥
 ततस्तु लक्ष्म्याश्चरितं त्रैविक्रममत परम् ।
 प्रह्लाद तीर्थ यात्रायां प्रोच्यन्ते तत्कथाः शुभाः ॥
 ततश्च धुन्धु चरितं प्रेतोपाख्यानकततः ।
 नक्षत्र पुराणख्यानं श्रोदामचरितं ततः ॥
 त्रिविक्रम चरित्रान्ते ब्रह्मप्रोक्तः स्तमोत्तमः ।
 प्रह्लादवलिर्संवादे सुनले हस्तिंसनम् ॥
 इत्येष पूर्वं भागोऽस्य पुराणस्य तवोदितः ॥”

तदुचरे भागे बृहद्भामनाख्ये :—

शृणुतस्योत्तरं भागं बृहद्भुवामन सञ्ज्ञकम् ।
 मादेव्वरी भगवती सौरी गाणेव्वरी तथा ॥
 चतस्रः संहिताश्चात्र पृथक् साहस्रसंख्यया ।

माहेभ्यर्थान्तु कृष्णस्य सद्भक्तानाञ्च कीर्तनम् ॥

भागवत्याजगन्मातुरखतारकथाद्भुता ।

सौम्या सूर्यस्य महिमा गदित पापनाशन ॥

गणेश्वर्यां गणेशस्य चरितञ्च महेशितु ।

इत्येतद् घामन नाम पुराण सुविचित्रकम् ॥

पुलस्त्येन समाख्यातं नारदाय महात्मने ।

ततो नारदत प्राप्तं व्यासेन सुमहात्मना ॥

व्यासात्तु लब्धवान् पतस तच्छिष्यो रोमहर्षण ।

स चाख्यास्यति विप्रेभ्योनैमिषीयेभ्य एव च ॥

एव परम्पराप्राप्तं पुराण घामनं शुभम् ॥”

तत्फलश्रुति :—

“ये पठन्ति च शृण्वन्ति तेऽपियान्नि परागतिम् ।

लिखित्वैतत्पुराणन्तु य शरद्विपुत्रेऽर्पयेत् ॥

विषाय वेदविदुश्च घृत्रेनुसमाचितम् ।

स समृद्धय नरकान्नयेत्स्वर्गं पितृन् स्वकान् ॥

देहान्ते भुक्तभोगोऽसौ याति विष्णो परम्पदम् ।

मत्स्यपुराणम्

तत्प्रतिपाद्य त्रिषयाश्च तत्रैव २६० अध्याय उक्ता यथा—

सूतउवाच ।

एतद् कथितं सर्वं यदुक्तं विश्वरूपिणा ।

मात्स्यं पुराणमखिलं धर्मकामार्थसाधनम् ॥
 यत्रादौ मनुसम्वादे ब्रह्माण्डं कथनन्तथा ।
 सारस्यं शरीरकम्प्रोक्तं चतुर्मुखासुखोदुमवम् ॥
 देवासुराणामुत्पत्तिर्मारुतोत्पत्तिरेव च ।
 मदनद्वादशीतद्वल्लोकपालामिपूजनम् ॥
 मन्वन्तराणामुद्देशो वैवस्वराजाभिचर्जनम् ।
 सूर्याष्टैवस्यतोत्पत्तिर्ब्रह्मस्यागमनन्तथा ।
 पितृवंशानुक्तं धातृकाञ्चस्तथैव च ॥
 पितृतीर्थप्रशंसश्च सोमोत्पत्तिस्तथैव च ।
 कीर्त्तनं सोमवंशस्य ययातिचरितं तथा ॥
 कार्तवीर्यस्य माहात्म्यं वृष्णिवंशानुकीर्त्तनम् ।
 भृगुशापस्तथा विष्णोर्देवशापस्तथैव च ॥
 कीर्त्तनं पुरुषेशस्य वंशो हीताशनस्तथा ।
 पुराणकीर्त्तनं तद्वन् क्रियायोगस्तथैव च ॥
 यतं नक्षत्रसंख्याकं मार्कण्डेयशयनं तथा ।
 कृष्णाष्टमीव्रतंतद्वद्रोहिणी चन्द्रसंज्ञितम् ॥
 तडागविधिमाहात्म्यं पादयोःसर्ग एव च ।
 सीभाग्य शयनं तद्वदगस्त्यव्रतमेव च ॥
 तथानन्ततृतीया ॥ रसकल्याणिनी तथा ।
 आर्द्रानन्दकरी तद्वदुव्रतं सारस्वतं पुनः ॥
 उपरागामिपेक्षश्च सप्तमीव्रतं पुनः ।
 भीमाष्ट्या द्वादशी तद्वदनङ्गशयनं तथा ॥

अशून्यशयन तद्वत्तथैवागारक व्रतम् ।
 सप्तमोसप्तकं तद्वद्विशोकद्वादशी तथा ॥
 मेरुप्रदानं दशधा ग्रहशान्तिस्तथैव च ।
 ग्रहस्वरूपकथनं तथा शिवचतुर्दशी ॥
 तथा सर्वफलत्याग सूर्यवारव्रत तथा ।
 सक्रान्तिस्नपनं तद्वद्विभूतिद्वादशी व्रतम् ।
 पष्टि व्रतानां माहात्म्यं तथा स्नानविधिक्रमः ॥
 प्रयागस्य तु माहात्म्यं सर्वतीर्थानुकीर्तनम् ।
 पैलाश्रमफलं तद्वद् द्वीपलोकानुकीर्तनम् ॥
 स्थान्तरिक्षचारश्च ध्रुवमाहात्म्यमेव च ।
 भवनानि सुरेन्द्राणां त्रिपुरायोधनं तथा ॥
 पितृपिण्डदमाहात्म्यं मन्वन्तरं चिनिर्णय ।
 यज्ञाङ्गस्य तु सम्भूति तारकोत्पत्तिरेव च ॥
 तारकासुरमाहात्म्यं ग्रहदेवानुकीर्तनम् ।
 पार्वतीसम्भवस्तद्वत् तथा शिवतपोवनम् ॥
 भनङ्गदेहदाहस्तु रतिशोकस्तथैव च ।
 गौरीतपोवनं तद्वद्विश्वनाथप्रसादनम् ॥
 पार्वतऋषिसम्पादस्तथैवोद्गाहमङ्गलम् ।
 कुमारभग्मपतद्वत् कुमारविजयस्तथा ॥
 तारकस्य घघो घोरो नरसिंहोपवर्णनम् ।
 पद्मोद्भवधिसर्गस्तु तथेयान्ध्रपघातनम् ॥
 पाराजस्यास्तु माहात्म्यं नर्मदापारतथैव च ।

प्रवरानुक्रमस्तद्वत् पितृनाथानुकीर्तनम् ॥
 ततोभयमुखोदानं दानं कृष्णाजिनस्य च ।
 तथा सावित्र्युपाख्यानं राजधर्मास्तथैव च ॥
 यात्रानिमित्तकथनं स्वप्नमाङ्गल्यकीर्तनम् ।
 धामनस्य तु माहात्म्यं तथैवादिवराहकम् ॥
 क्षोरोदमथनं तद्वत्कालकूशमिशसनम् ।
 प्रासादलक्षगन्तद्वन्मण्डपानान्तु लक्षणम् ॥
 पुरुवंशे तु सप्तोक्तं भविष्यद्राजवर्णनम् ।
 तुलादानादि बहुशो महादानानुकीर्तनम् ॥
 कल्पानुकीर्तनं तद्वदुग्रन्यानुक्रमणी तथा ।
 एतत्पवित्रमायुष्यमेतत्कीर्तिविधर्पणम् ॥
 एतत्पवित्रं कल्याणं महापापहरं शुभम् ।

अस्मात् पुराणादपि पादमेकं पठेत् यः सोऽपि विमुक्तपापः ।
 नारायणारत्यं पदमेति नूनमनङ्गवदिव्यसुखानि भुङ्क्ते ॥

कूर्म पुराणम्

व्यास प्रणीतेषु अष्टादश महापुराणेषु पञ्चदशे पुराणे
 तत्प्रतिपाद्य विषयाश्च बृहन्नारदीये दर्शिता यथा :—
 श्री ब्रह्मोवाच—

शृणु घत्स ! मरीचेऽयं पुराणं कूर्मं संक्षिप्तम् ।
 लक्ष्मीकल्पानुचरितं यत्र कूर्मचपुर्हरिः ॥

धर्मार्थकाममोक्षाणां माहात्म्यञ्च पृथक् पृथक् ।

इन्द्रयुगप्रसङ्गेन प्राहर्षिभ्यो दयाधिकम् ॥

तत्सप्तदशसाहस्रं सचतुःसंहितं शुभम् ।

यत्र ब्राह्मण्य(संहिता)पुरा प्रोक्ता धर्मा नानाविधा मुने ॥

नानाकथाप्रसङ्गेन नृणां सद्गुणतदायकाः ।”

तत्पूर्व भागे—

“तत्र पूर्व विभागे तु पुराणोपक्रमः पुरा ।

लक्ष्मीप्रद्युम्नसम्वादः कूर्मर्षिगणसङ्ख्या ॥

वर्णाश्रमाचारकथा जगदुत्पत्तिकीर्तनम् ।

कालसंख्या समासेन लयान्ते स्तवनं विभोः ॥

ततः सङ्क्षेपतः सर्गः शाङ्करचरितं तथा ।

सहस्रनाम पार्वत्या योगस्य च निरूपणम् ॥

भृगुवंशसमाख्यानं ततः स्वायम्भुवस्य च ।

देवादीनां समुत्पत्तिर्दक्षयज्ञाहतिस्ततः ॥

दक्षसृष्टि कथा पश्चात् कश्यपान्वयकीर्तनम् ।

आग्नेयवंशकथनं कृष्णाय चरितं शुभम् ॥

माकर्कण्डरुष्णसंवादो व्यासपाण्डवसंकथा ।

युगधर्मानुकथनं व्यासजैमिनिकी कथा ॥

घाराणस्याश्च माहात्म्यं प्रयागस्य ततः परम् ।

त्रैलोक्यवर्गनञ्चैव वेदशास्त्रानिरूपणम् ॥”

तदुत्तर भागे—

उत्तरेण विभागे तु पुरा गीतेश्वरोक्तः ।

व्यासस्याता ततः प्रोक्ता नाना धर्मप्रबोधिनी ॥

नानाविधानां तीर्थानां माहात्म्यञ्च पृथक् ततः ।

नानाधर्म प्रकथनं ब्राह्मण्यं संहिता स्मृता ॥

अतः परं भगवती संहितार्थनिरूपणे ।

कथिता यत्र वर्णानां पृथग् वृत्तिरुदाहृता ॥

तदुत्तर भागे भगवत्याख्यद्वितीयसंहितायाः पञ्चसु पादेषु—

“पादेऽस्याः प्रथमे प्रोक्ता ब्राह्मणानां व्यवस्थितिः ।

सदाचारात्मिका घत्स ! भोगसौख्यविवर्द्धिनी ॥

द्वितीये क्षत्रियाणान्तु वृत्तिः सम्यक्प्रकीर्तिता ।

यया स्वाधितया पापं विघ्नयेद् यजेद्विभम् ।

तृतीये वैश्यजातीनां वृत्तिरुक्ता चतुर्विधा ।

यया चरितया सम्यक् लभते गतिमुत्तमाम् ॥

चतुर्थेऽस्यास्तथा पादे शूद्रवृत्तिरुदाहृता ।

यया सन्तुष्यति श्राशो नृणां श्रेयो विचर्द्धनः ॥

पञ्चमेऽस्यान्ततः पादे वृत्तिः सङ्कुरजन्मनाम् ।

यया चरितयाऽऽप्नोति भाविनीमुत्तमांजनिम् ॥

इत्येव पञ्चपाद्युक्ता द्वितीया संहिता मुने ।

तृतीयाप्रोदिता सौरो नृणां कामविधायिनी ।

षोढा षट्कर्मसिद्धि सा वाधयन्ती च कामिनाम् ।

चतुर्थी वैष्णवी नाम मोक्षदा परिकीर्तिता ।

चतुष्पदी द्विजादीनां साक्षाद् द्युस्यरूपिणी ।

ताः यस्मात् षट्चतुर्दश साहस्राः परिकीर्तिताः ॥

तत्फलश्रुतिः :—

“एतत्कूर्मपुराणन्तु चतुर्वर्गफलप्रदम् ।

पठता शृण्वता नृणा सर्वोत्कृष्टगतिप्रदम् ॥

लिखित्वैतत्तु यो भक्त्या हेमकूर्मसमन्वितम् ।

ब्राह्मणायायने दद्यात् स याति परमागतिम् ॥

स्कन्दपुराणम्

तन्प्रतिपाद्यविषयाश्च

श्री नारदीयपुराणे पूर्वभागे बृहदुपाख्याने चतुर्थपादे

१०४ अध्याये उक्ता यथा

ब्रह्मोवाच ।

शृणु षड्ये मरीचे च पुराण स्कन्दसंक्षिप्तम् ।

यस्मिन् प्रतिपद साक्षान्महादेवो व्यवस्थितः ॥

पुराणे शतकोटी तु यच्छैव वर्णितं मया ।

लक्षितस्यार्थज्ञातस्य सारो व्यासेन कीर्तितः ॥

स्कन्दाह्वयस्यत्र खण्डा सप्तैव परिकल्पिताः ।

पञ्चाशीति सहस्रन्तु स्कान्द सव्यागवृन्तनम् ॥

यः शृणोति पठेद्वापि स तु साक्षाच्छिव स्थितः ।

यत्र माहेश्वरा धर्मा षण्मुनेन प्रकाशिताः ।

षण्पे त'पुराणैस्तु सर्गसिद्धिविधायिकाः ॥

तत्र माहेश्वर खण्डे :—

“तस्य माहेश्वरख्याय खण्ड पापप्रणाशः ॥

किञ्चिन्न्यूनार्फसाहस्यो बहुपुण्यो बृहत्कथः ।
 सुचरित्रशतैर्युक्तः स्कन्दमाहात्म्यसूचकः ॥
 यत्र केदारमाहात्म्ये पुराणोपक्रमः पुरा ।
 दक्षयज्ञकथा पञ्चाब्धिपलिङ्गार्चनेफलम् ॥
 समद्रमथनायानं देवेन्द्रचरितं ततः ।
 पार्वत्या समुपायानं विषाहस्तदनन्तरम् ॥
 कुमारोत्पत्तिकथनं ततस्तारकसङ्गरः ।
 ततः पशुपतायानं खण्डायानसमाचितम् ॥
 द्यूतप्रवर्त्तनायानं नारदेन समागम ।
 ततः कुमारमाहात्म्ये पञ्चतीर्थकथानकम् ॥
 धर्मवर्म्मनृपायानं नदीसागरकीर्त्तनम् ।
 इन्द्रद्युम्नकथा पञ्चान्नाडीजङ्घकथाचिता ॥
 प्रादुर्माचस्ततो महाः कथा दमनकस्य च ।
 महीसागरसंयोगः कुमारेशकथा ततः ॥
 ततस्तारकयुद्धञ्च नानायानसमाचितम् ।
 धवदय तारकस्याथ पञ्चलिङ्गनिवेशनम् ॥
 द्वीपायानं ततः पुण्यं ऊर्ध्वलोफव्यवस्थितः ।
 ग्रहाण्डस्थितिमानञ्च चक्रेशकथानकम् ॥
 महाकालसमुद्रभूनिः कथा चास्य महादुभुना ।
 पासुदेवस्य माहात्म्यं कोरितीर्थं ततः परम् ॥
 नानातीर्थसमायानं गुप्तक्षेत्रे प्रकीर्त्तितम् ।
 पाण्डवानां कथापुण्या महाविद्या प्रसाधनम् ॥

तीर्थयात्रासमानिश्च फौमारमिदमद्भुतम् ।
 अरुणाचलमाहात्म्ये सनकब्रह्मसंकथा ॥
 गौरीतपःसमाख्यानं तत्तत्तीर्थनिरूपणम् ।
 महिषासुरजाख्यानं वधश्चास्य महाद्भुतः ॥
 शोणाचलेशिघारख्यानं नित्यदा परिकीर्त्तिनम् ।
 इत्येष कथितः स्कान्दे खण्डो माहेश्वरोऽद्भुतः ॥

द्वितीये वैष्णव खण्डे :—

द्वितीयो वैष्णवः खण्डस्तस्याख्यानानि मे शृणु ।
 प्रथमं भूमिबाराहं समाख्यानं प्रकीर्तितम् ॥
 यत्र षोडशकुम्भस्य माहात्म्यं पापनाशनम् ।
 कमलायाः कथा पुण्या धीनिवासस्थितिस्ततः ॥
 कुलालाख्यानकञ्चात्र सुवर्णमुखरी कथा ।
 नानाख्यानसमायुक्ता भारद्वाजकथाद्भुता ॥
 मठङ्गाञ्जनसंवादः कीर्त्तितः पापनाशनः ।
 पुरयोत्तममाहात्म्यं कीर्त्तितं चोत्कले ततः ॥
 मार्कण्डेयसमाख्यानमम्बरापस्य भूपते ।
 इन्द्रद्युम्नस्य चाख्यानं विद्यापतिकथा शुभा ॥
 जैमिनेः समुपाख्यानं नारदस्यापि चाडव ।
 नीलकण्ठसमाख्यानं नारसिंहोपवर्णनम् ॥
 अश्वमेधकथा राज्ञो ब्रह्मलोकगतिस्तथा ।
 रथयात्राविधिः पञ्चाञ्जनमस्नानविधिस्तथा ॥
 दक्षिणामूर्त्युपाख्यानं गुण्डिचाख्यानकं ततः ॥

रथरक्षा विधानञ्च शयनोत्सवकीर्त्तनम् ॥
 श्वेतोपाशानमत्रोक्तं वदन्त्युत्सवनिरूपणम् ।
 द्योलोत्सवो भगवतो ग्रनं सांवत्सराभिधम् ॥
 पूजा च कामिमिर्विण्णोरुद्दालकनियोगकः ।
 मोक्षसाधनमत्रोक्तं तानायोगनिरूपणम् ॥
 दशावतारकथनं स्नानादि परिकीर्त्तनम् ।
 ततो वदरिकायाञ्च माहात्म्यं पापनाशनम् ॥
 श्रग्व्यादि तीर्थमाहात्म्यं चैननेयशिलाभवम् ।
 कारणं भगवद्भासे तीर्थं कापालमोचनम् ॥
 पञ्चधाराभिधं तीर्थं मेरुस्वस्थापनं तथा ।
 ततः कार्तिकमाहात्म्ये माहात्म्यं मद्भालसम् ॥
 धृत्रकोशसमाग्यानं दिनवृत्त्यानि कार्तिके ।
 पञ्चभीष्मत्रताग्यानं कीर्त्तिदं भुक्तिमुक्तिदम् ॥
 तद्व्रतस्य च माहात्म्ये विधानं स्नानजं तथा ।
 पुष्पादिकीर्त्तनञ्चात्र मालाधारणपुण्यकम् ॥
 पञ्चामृतस्नानपुण्यं घण्टानादाद्विजं फलम् ।
 नानापुष्पार्चनफलं तुलसीदलजम्फलम् ॥
 नैवेद्यस्य च माहात्म्यं हरिवासन (२) कीर्त्तनम् ।
 श्रवण्डैकादशी पुण्यं तथा जागरणस्य च ॥
 मत्स्योत्सवविधानञ्च नाम माहात्म्यकीर्त्तनम् ।
 ध्यानादि पुण्यकथनं माहात्म्यं मयुराभवम् ॥

घनानां द्वादशानाञ्च माहात्म्यं कीर्तितं ततः ॥
 श्रीमद्भुवनेश्वरस्यैव माहात्म्यं कीर्तितं परम् ।
 पञ्चशाण्डित्यसम्वादादमन्तलीलाप्रकाशकम् ॥
 ततो माघस्य माहात्म्यं स्नानदानजपोद्भवम् ।
 नानारथानसमायुक्तं दशाध्याये निरूपितम् ॥
 ततो वैशाखमाहात्म्ये शय्यादानादिजम्फलम् ।
 जलदानादि विधयः कामारुण्यानमतः परम् ॥
 श्रुतदेवस्य चरितं व्याधोपारयानमद्भुतम् ॥
 तथाक्षयतृनायादेर्विशेषात्पुण्यकीर्तनम् ।
 ततस्त्वयोध्या माहात्म्ये चक्रप्रज्ञावहतीर्थके ॥
 ऋणपापविमोक्षाये तथाधारसहस्रकम् ।
 स्वर्गद्वारचन्द्रहरिधर्महृदयुपवर्णनम् ॥
 स्वर्गवृष्टेरुपारयानतिलोदासरयूयुतिः ।
 सीताकुण्डगुप्तहरिसरयूर्ध्वरात्रयः ॥
 गोप्रचारश्च दुग्धोद्गुरुकुण्डादिपञ्चकम् ।
 घोषार्कादीनि तीर्थानि त्रयोदशततः परम् ॥
 गयातृपस्य माहात्म्यं सर्वाध्विनिवर्त्तकम् ।
 माण्ड्याश्रमपूर्वाणि तीर्थानि तदनन्तरम् ॥
 अजितादिमानसादितीर्थानि गदितानि च ।
 इत्येष वैष्णवखण्डो द्वितीयपरिकीर्तितः ॥

तृतीये ब्रह्मखण्डे—

“अतः परं ब्रह्मखण्डं मरीचे शृणु पुण्यदम् ।

यत्र वै सेतुमाहात्म्ये फलं स्नानेक्षणोद्भूतम् ॥
 गालवस्य तपश्चर्या राक्षसाख्यानकं तत ।
 चमतीर्थादि माहात्म्य देवीपतनमयुतम् ॥
 घेतालतीर्थमहिमा पापनाशादि कीर्तनम् ।
 मङ्गलादिकमाहात्म्यं ब्रह्मकुण्डादि वर्णनम् ॥
 हनूमन कुण्डमहिमागस्त्यतीर्थमवम्फलम् ।
 रामतीर्थादि कथनं लक्ष्मीतीर्थनिरूपणम् ॥
 शङ्खादितीर्थमहिमा तथासाध्यामृतादिज ।
 धनुष्कोट्यादि माहात्म्यं क्षीरकुण्डादिजं तथा ॥
 गायत्र्यादिक तीर्थानां माहात्म्यं चार कीर्तितम् ।
 रामनाथस्य महिमा तत्त्वज्ञानोपदेशनम् ॥
 यात्राविधानकथनं सेतो मुक्तिप्रदं नृणाम् ।
 धर्म्मरण्यस्य माहात्म्यं तत परमुदीरितम् ॥
 स्याणु स्कन्दाय भगवान् यत्र तत्त्वमुपादिशत ।
 धर्म्मरण्यसुप्तंभूतिस्तत्पुण्य परिकीर्तनम् ॥
 कर्म्मसिद्धे समाख्यानं ऋषिवंश निरूपणम् ।
 अप्सरसतीर्थमुखाणां माहात्म्यं यत्र कीर्तनम् ॥
 वर्णानामाश्रमाणाञ्च धर्म्मतत्त्वनिरूपणम् ।
 देवस्थानविभागश्च वसुधार्क कथा शुभा ॥
 छत्रा नन्दा तथा शान्ता श्रीमाता च मतङ्गिनी ।
 पुण्यद्राक्ष्यः समाख्याता यत्र देव्यः समास्थिता ॥
 इन्द्रेश्वरादि माहात्म्यं द्वारकादि निरूपणम् ।

लोहासुरसमाख्यानं गङ्गाकूपनिरूपणम् ॥
 श्रीरामचरितञ्चैव सत्यमन्दिरवर्णनम् ।
 जीर्णोद्धारस्यकथनं शासनप्रतिपादनम् ॥
 जातिभेदप्रकथनं स्मृतिधर्मनिरूपणम् ।
 ततस्तु वैष्णवा धर्म्मा नानाख्यानैरुदीरिताः ॥
 चातुर्म्मास्ये ततः पुण्ये सर्वधर्मनिरूपणम् ।
 दानप्रशंसा तत्पश्चाद् व्रतस्य महिमा ततः ॥
 तपसश्चैव पूजायाः सच्छिद्रकथनस्ततः ।
 प्रकृतीनां भिदाख्यानं शालग्रामनिरूपणम् ॥
 तारकस्य घघोपायो त्र्यक्षार्धमहिमा तथा ।
 विष्णोः शापश्च वृक्षं पार्श्वत्यनुनयस्ततः ॥
 हरस्य ताण्डवं नृत्यं रामनामनिरूपणम् ।
 हरस्य लिङ्गपतनं कथायै जवनस्य च ॥
 पार्यतीजन्मचरितं तारकस्य घघोऽद्भुतः ।
 प्रणवैश्वर्यं कथनं तारकाचरितं पुनः ॥
 दक्षयज्ञं समाप्तिञ्च द्वादशाक्षररूपणम् ।
 ज्ञानयोगसमाख्यानं महिमा द्वादशार्णजः ॥
 श्रवणादिकं पुण्यञ्च कीर्तितं शर्माद नृणाम् ।

तृतीय ब्रह्मसूत्रोत्तर भागे—

“ततो ब्रह्मोत्तरे भागे शिषस्य महिमाद्भुतः ।
 पञ्चाक्षरस्य महिमा गोफर्णमहिमा ततः ॥
 शिषरात्रेद्य महिमा ब्रह्मोपव्रतकीर्तनम् ।

सोमचारवत्तद्वापि सोमन्तिन्याः कथानकम् ॥
 भद्रायुत्पत्ति कथनं सदाचारनिरूपणम् ।
 शिववर्म समुद्देशो भद्रायुद्वाहवर्णनम् ॥
 भद्रायुमहिमा चापि भस्ममाहात्म्य कीर्तनम् ।
 शयरात्म्यानकञ्चैव उमामाहेश्वर व्रतम् ॥
 रुद्राक्षस्य च माहात्म्य रुद्राध्यायस्य पुण्यकम् ।
 ध्रुवणादिक पुण्यञ्च ब्रह्मखण्डोऽयमस्ति ॥ ”

चतुर्थं काशी खण्डे—

“भक्तः परं चतुर्थन्तु काशाखण्डं नुत्तमम् ।
 विन्ध्यनारदयोर्यत्र सम्वादः परिकीर्तितः ॥
 सत्यलोकप्रभावध्यागम्यावासे सुरागमः ।
 पतिव्रता चरित्रञ्च तीर्थचर्या प्रशसनम् ॥
 ततश्च सप्त पुराण्या संयमिन्या निरूपणम् ।
 धनस्य च तयेन्द्राद्वयोर्लोकान्तिः शिवशर्मणः ॥
 अग्नेः समुद्रवत्त्वैव ब्रह्माद्वरणसम्मवः ।
 गन्धवत्यलकापुर्य्योरीक्ष्यर्याश्च समुद्रवः ॥
 चन्द्रोद्बुधलोकाणां कुजेज्यार्कमुवां क्रमान् ।
 सप्तर्षिणां ध्रुवस्यापि तपोलोकस्य वर्णनम् ॥
 ध्रुवलोक कथा पुण्या सत्यलोक निरीक्षणम् ।
 स्कन्दागम्य समालापो मणिकर्णो समुद्रवः ॥
 प्रभावध्यापि गङ्गाया गङ्गानाम सहस्रकम् ।
 धाराणसी प्रशसा च भैरवाविर्भवस्ततः ॥

दष्टपाणी ज्ञानवाप्योरुद्वयः समनन्तरम् ।
 ततः कलावत्याख्यानं सदाचारनिरूपणम् ॥
 ब्रह्मचारिसमाख्यानं ततः स्त्रीलक्षणानि च ।
 कृत्याकृत्यविनिर्देशो ह्यविमुक्तेशवर्णनम् ॥
 गृहस्थयोगिनो धर्म्माः कालज्ञानं ततः परम् ।
 द्विषोदास कथा पुण्या काशीवर्णनमेव च ॥
 योगिचर्चा च लोलाकौस्तुभशाम्यकजा कथा ।
 द्रुपदार्कस्य ताक्ष्यार्यारणार्कस्योदयस्ततः ॥
 दशार्थमेधतीर्थाख्या मन्दराश्च गणागमः ।
 पिशाचमोचनाख्यानं गणेशप्रेषणन्ततः ॥
 मायागणपतेर्ध्याय भुवि प्रादुर्भवस्ततः ।
 विष्णुमाया प्रपञ्चोऽथ द्विषोदासविमोक्षणम् ॥
 ततः पञ्चनदोत्पत्तिर्बिन्दुमाधय सम्भवः ।
 ततो वैष्णवतीर्थाख्या शूलिनः काशिकागमः ॥
 जैर्गापत्र्येण सम्वादो ज्येष्ठे शाखा महेशितुः ।
 क्षेत्राख्यानं कन्दुकेश्वरपार्श्वेश्वरसमुद्भवः ॥
 शैलेश्वरनेश्वरयोः कृत्तिवासस्य चोद्भवः ।
 देवतानामधिष्ठानं दुर्गापुर पराक्रमः ॥
 दुर्गाया विजयध्याय ओङ्कारेशस्य वर्णनम् ।
 पुनरोङ्कारमाहात्म्यं त्रिलोचन समुद्भवः ॥
 वेदाराख्या च धर्म्मेश कथा पिश्वभुजोद्भवा ।
 परेश्वरसमाख्यानं गङ्गामाहात्म्यकीर्तनम् ॥

विश्वकर्म्मेश महिमा दक्षयज्ञोद्भवस्तथा
 सर्वाशम्यामृतेगादेर्मुञ्जस्तम्भः पराशरे ॥
 क्षेत्रनीयं कदम्बश्च मुक्तिमण्डपसकथा ।
 विश्वेश विभवश्चाथ ततो यात्रा परिक्रमः ॥

पञ्चमे अग्रन्ती स्रष्टुः—

“अतः परं न्ययन्त्यास्य शृणु क्षण्डञ्च पञ्चकम् ।
 महाकालयनागयान ब्रह्मशीर्षच्छिद्रा तनः ॥
 प्रायश्चित्तविधिध्वानेरुत्पत्तिश्च समागमः ।
 देवर्षीणां शिवस्तोत्रं नानापातकनाशनम् ॥
 कपालमौचनागयान महाकालचनम्बितिः ।
 तीर्थं कलकलेशम्य सर्वपापप्रणाशनम् ॥
 कुण्डमप्सरसञ्जञ्च सर्गे रक्ष्म्य पुण्यदम् ।
 कुटुम्बेगञ्च विद्याभ्रमर्कटेश्वरतीर्थकम् ॥
 म्यर्गद्वारं ननु सिन्धुतीर्थं शङ्करयापिका ।
 सफरार्कं गन्धवर्नी तीर्थं पापप्रणाशनम् ॥
 शशाङ्गमेकानशा तीर्थं च हरिसिद्धिदम् ।
 पिशाचकादि यात्रा च हनूमत्कथमेश्वरी ॥
 महाकालेशयात्रा च घर्त्मकेश्वरतीर्थकम् ।
 शत्रुघ्नमेशोपागयान कुशाम्बल्याः प्रदक्षिणम् ॥
 वनरमन्दाकिन्यङ्कपादचन्द्रार्कवैभवम् ।
 कर्मेश कुम्भुतेज लङ्केशादि तीर्थकम् ॥
 मार्कण्डेश यक्षवर्षी सोमेश नरकान्तकम् ।

केदारेश्वर रामेश सौभाग्येश नरार्ककम् ॥
 केशार्क शक्तिभेदश्च स्वर्णक्षरमुपानि च ।
 ओङ्कारेशादि तीर्थानि अन्धकस्तुतिकीर्तनम् ॥
 फालारण्ये लिङ्गसरया स्वर्णशृङ्गामिधानकम् ।
 कुशस्थलया अवन्त्याश्चोच्चयिन्या अभिधानकम् ॥
 पद्मावती कुमुद्वत्यमरावतीति नामकम् ।
 पिशाला प्रतिकल्पाभिधाने च ज्वरशान्तिकम् ॥
 शिप्रास्नानादिकफलं नागोन्मीता शिवस्तुति ।
 हिरण्याक्षवधारयान तीर्थं सुन्दरकुण्डकम् ॥
 नीलगङ्गा पुष्करास्यं बिन्ध्यावासन तीर्थकम् ।
 पुरुयोत्तमाधिमासं तत्तीर्थञ्चाघनाशनम् ॥
 गोमती घामने कुण्डे विष्णोर्नाम सहस्रकम् ।
 धीरेश्वरसरः फालभैरवस्य च तीर्थके ॥
 महिमा नागपञ्चम्यां नृसिंहस्य जयन्तिका ।
 कुटुघेश्वरयात्रा च देवसाधककीर्तनम् ॥
 फर्कराजारायतीर्थञ्च विघ्नेशादि सुरोहनम् ।
 रत्नकुण्डप्रभृतिषु बहुतीर्थनिरूपणम् ॥
 यात्राष्टतीर्थजा पुण्या रेवामाहात्म्यमुच्यते ।
 धर्मपुण्यस्यवैराग्ये मार्कण्डेयेन सङ्गमः ॥
 प्राग्लयानुमवारयान अमृता परिकीर्तनम् ।
 फल्पे कल्पे पृथक् नाम नर्मदायाः प्रकीर्तितम् ॥
 -स्तवमार्यं नार्मदश्च फालरात्रिकया ततः ।

महादेवस्तुतिः पश्चात् पृथक्कल्पकथाद्रुता ॥
 विशल्यास्यानरुं पश्चात्त्रालेश्वरकथा तथा ।
 गौरीत्रतसमाख्यान त्रिपुरञ्जालनन्तत ॥
 देहपातविधानञ्च कावेरीसुदुमस्तत ।
 शम्भ्याय प्रलयवर्जं यत्रेश्वर कथानकम् ॥
 अग्नितीर्थं रवितीर्थं मेघनाद विदारकम् ।
 देवतीर्थं नर्मदेशं कपिलाख्य करञ्जकम् ।
 तुण्डलेश पिप्पलाद चिमलेशञ्च शलभिन् ॥
 शचीहरणमाख्यातमन्धकस्यवधस्तत ।
 शूलमेघोदुमयो यत्र दानधर्मा पृथग्विधा ॥
 आख्यात दीर्घतपसऋष्यशृङ्ग कथा तत ।
 चित्रसेनकथा पुण्या काशिराजस्य मोक्षणम् ॥
 ततो देवशिलास्थान शवरी चरिताचितम् ।
 व्याघ्राख्यात तत पुण्य पुष्करिण्यर्कतीर्थकम् ॥
 आपि येश्वर तीर्थञ्च शत्रुतीर्थं करोदिकम् ।
 कुमारेशमगस्त्येश च्यवनेशञ्च मातृजम् ॥
 लोकेश धनदेशञ्च मङ्गलेशञ्च कामजम् ।
 नागेशञ्चापि गोपात्रं गौतमं शङ्खचूडजम् ॥
 नारदेश नन्दिशेन वरुणेश्वरतीर्थकम् ।
 दधिस्कन्दादितीर्थानि हनूमन्तेश्वरस्तत ॥
 रामेश्वरादि तीर्थानि सोमेशं विङ्गलेश्वरम् ।
 ऋणमोक्षं कपिशेन पूतिशेन जलेशयम् ॥

चण्डार्कयमतीर्थञ्च कटहोटीशञ्च नान्दिकम् ।
 नारायणञ्च कोटीश व्यासतीर्थं ग्रभासिकम् ॥
 नागेश सङ्कर्षणकं मन्मथेश्वरतीर्थकम् ।
 एरण्डीसङ्गम पुण्य सुवर्णशिलतीर्थकम् ॥
 करञ्ज कामह तीर्थ माण्डीर रोहिणीभवम् ।
 चक्रतीर्थं धौतपापं स्कान्दमाङ्गिरसाह्वयम् ॥
 कोटितीर्थमपोन्यायमङ्गाराख्यं त्रिलोचनम् ।
 इन्द्रेश कम्बुकेशञ्च सोमेशं कोहनैशकम् ॥
 नार्म्मद चार्कमाग्नेय भार्गवेश्वरसत्तमम् ।
 ब्राह्म दैव च भागेशमादि चाराहणंकये ॥
 रामेशमथ सिद्धेश माहात्म्य कङ्कटेश्वरम् ।
 शाक सौम्यञ्च नान्देश तापेश रक्मिणीभवम् ॥
 योजनेश घराहेश द्वादशी शिव तीर्थके ।
 सिद्धेश मङ्गलेशञ्च लिङ्गवाराहतीर्थकम् ॥
 कुण्डेश श्वेतवाराह भार्गवेश रघीश्वरम् ।
 शुक्लादीनि च तीर्थानि हूँकारस्वामितीर्थकम् ॥
 सङ्गमेगं नारकेशं मोक्ष सार्पञ्च गोपकम् ।
 नाग साम्बञ्च सिद्धेश मार्कण्डाकूरतीर्थके ॥
 कामोदशूलारोपायो माण्डव्य गोपकेश्वरम् ।
 कपिलेश पिंगलेश भूतेश गागगीतमे ॥
 आश्वमेधं भृगुकच्छं वेदारेशञ्च पापनुत् ।
 फनखलेशं जालेशं शालग्रामं घराहकम् ॥

चन्द्रप्रभासमादित्य श्रीपत्न्यास्यञ्च हंसकम् ।
 मूलस्थानञ्च शृङ्गेशमाग्रायाचित्रदैवकम् ॥
 शिखीशं कोटितोर्यञ्च दशकन्य सुवर्णकम् ।
 शृण्मोक्षं मारमूर्तिरत्रान्ते पुष्पमुण्डमम् ॥
 आमलेश कपालेश शृङ्गेरण्डीमवन्तत ।
 कोटितोर्यं लोटनेश फल्गुस्तुतिरत परम् ।
 तृमिजङ्गन्माहान्म्ये रोहिताश्वकथातत ॥
 धुन्धुमारसमान्ध्यान धधोपायस्ततोऽन्य च ।
 धधो धुन्धोस्तत पञ्चात सतश्चित्रवहोद्वय ।
 महिमान्य कनश्चण्डोशप्रभापोरतोऽन्य ॥
 नेदारेशो लक्ष्मीशं ततो विष्णुपर्दीमयम् ।
 मुखार च्यवनान्धाव्यं ब्रह्मणश्च सरन्तत ॥
 चनाय्य ललितायान तीर्थञ्चशृङ्गोमयम् ।
 रत्नावतंञ्च मार्कण्ड तीर्थं पापप्रणाशनम् ॥
 रावणेश शुद्धपट् देवान्पुष्पैततायंकम् ।
 जिहोदनायसम्मूर्ति शिवोद्भूमेर्दं फल्गुस्तुति ॥
 एव खण्डो ह्यवन्याय्य शृण्वता पापनाशन ।

पष्टे नागरखण्डः—

“यत पर नागराय्य खण्डः षष्ठोऽभिधायते ।
 त्रिङ्गोत्पत्तिसमायान हरिश्चन्द्रकथा शुभा ॥
 विज्वामित्रस्य माहान्ध्य त्रिशङ्कम्वर्गतिस्तथा ।
 हाट्केन्यरमाहा म्ये वृत्रासुरवधस्तथा ॥

नागधिलं शङ्खतीर्थमन्त्रलेश्वरघर्जनम् ।
 चमत्कारपुराख्यानं चमत्कारकरं परम् ।
 गयशीर्षं घालशाख्यं घालमण्डं मृगाह्वयम् ॥
 चिष्णुपादञ्च गोकर्णं युगरूपं समाश्रयः ।
 सिद्धेश्वरं नागसरः सप्तार्षेयं ह्यगस्तकम् ॥
 भ्रूणगर्तनलेशञ्च भीष्मं दुर्वैरमर्ककम् ।
 शार्मिष्ठं सोमनाथञ्च दौर्गमानर्जकेश्वरम् ॥
 जमदग्निवधाख्यानं नैःसत्रियकथानकम् ।
 रामहृदं नागपुरं जङ्गलिङ्गञ्च यक्षभूः ॥
 मुण्डीरादि त्रिकार्कञ्च सतीपरिणयस्तथा ।
 घालखिल्यञ्च यागेशं घालखिल्यञ्च गारुडम् ॥
 लक्ष्मीशापः सामर्धिशः सोमप्रासादमेव च ।
 भ्रम्बावृद्धं पादुफारुयमाणेयं ब्रह्मकुण्डकम् ॥
 गोमुखं लोहयष्ट्याख्यमजापालेश्वरी तथा ।
 शानैश्वरं राजवापी रामेशो लक्ष्मणेश्वरः ।
 कुशेशाख्यं लवेपाख्यं लिङ्गं सर्वोत्तमोत्तमम् ।
 अष्टपष्टिसमाख्यानं दमयन्त्यास्त्रिजातकम् ॥
 ततोऽम्बारेचती चात्र भद्रिकातीर्थसम्भयम् ।
 क्षेमद्वुरी च केदारं शुक्लतीर्थं मुखारकम् ॥
 सत्यसन्धेश्वराख्यानं तथा कर्णोत्पला कथा ।
 अट्टेश्वरं याज्ञवल्क्यं गौर्ध्यं गाणेशमेव च ॥
 ततोधास्तुपदाख्यानमजागहकथानकम् ।

सौभाग्यान्त्रकशूलेशं धर्मराजकयात्तकम् ॥ ८८ ॥
 मिश्राप्रदेश्वराख्यानं गाणपथ्यत्रयं ततः । ८९ ॥
 जागन्निचरितिकैव मकरेशकथा ततः ॥
 कालिङ्ग्यन्त्रकाख्यानं कुण्डमाप्सरसन्तया ।
 पुण्यादिन्य रौहिताक्षं नागरोन्पत्तिकीर्तनम् ॥
 भार्गव चरितं चैव वैश्यामैत्रं ततः परम् ॥
 सारम्भन पैप्पलादं कंसारीशञ्च पैण्डिकम् ॥
 ग्रहणो यज्ञचरितं सावित्र्याख्यानमंगुतम् ॥
 रैवतं भर्तृयज्ञार्यं मुख्यतीर्थनिरीक्षणम् ।
 फौर्यं हाटकेशार्यं प्रभासं क्षेत्रकत्रयम् ॥
 पौष्कर नैमिष धार्म्ममरण्यत्रितयं स्मृतम् ।
 धाराणसीद्वारकाख्याचन्धार्येति पुरीत्रयम् ॥
 वृन्दावनं छाण्डवार्थ मद्रैकाग्र्यं चनत्रयम् ।
 फल्गु शालस्तथा नन्दोग्रामत्रयमनुत्तमम् ॥
 असिशुद्रपिनृसञ्ज्ञं तीर्थत्रयमुदाहृतम् ।
 श्र्यमुद्रौ रैवतञ्चैव पर्वतत्रयमुत्तमम् ॥
 नन्दानां त्रितयं गङ्गा नर्मदा च सरस्वती ॥
 सार्द्धफोटित्रयफलमेकैकञ्चैषु कीर्तितम् ।
 वृषिका शङ्खतीर्थञ्चामरक वाल्मण्डनम् ।
 हाटकेशक्षेत्रफलप्रदं प्रोक्तं चतुष्टयम् ॥ ९० ॥
 शाम्यादित्यं ध्राद्वकल्पं यौविष्टिरमयान्धकम् ।
 जलशायि चतुर्मास्यमश्विन्यश्विनत्रयम् । ९१ ॥

मङ्कणेशं शिचरात्रिस्तुलापुरुषदानकम् ।
 पृथ्वीदानं चाणकेशं कपालमोचनेश्वरम् ।
 पापपिण्डं साप्तलैङ्गं युगमानादिकीर्तनम् ।
 निम्बेशशाकम्भर्याख्या रुद्रैकादश कीर्तनम् ।
 दानेमाहात्म्यकथनं द्वादशादित्यकीर्तनम् ।
 इत्येष नागरः खण्डः प्रभासारयोऽधुनोच्यते ।

सप्तमे प्रभास खण्डे :—

“सोमेशो यत्र विश्वेशोऽर्कस्थलं पुण्यदं महत् ।
 सिद्धेश्वरादिकाख्यानं पृथगत्र प्रकीर्तितम् ॥
 अग्नितीर्थं कपर्दीशं केदारेशं गतिप्रदम् ।
 भीममैरघचण्डीशभास्कराङ्गारकेश्वराः ।
 बुधेज्यभृगुसौरेन्द्रशिखीशाहरविग्रहाः ।
 सिद्धेश्वराद्या पञ्चान्ये रक्षास्तत्र व्यवस्थिताः ।
 वरारोहा ह्यजापाला मंगला ललितेश्वरी ।
 लक्ष्मीशोऽवाङ्मेशश्चाधीशः कामेश्वरस्तथा ॥
 गौरीशवर्यणेशाख्यमुशीपञ्च गणेश्वरम् ।
 कुमारेशश्च शाकल्यं शकुलोत्तङ्कगौतमम् ॥
 दैत्यघ्नेशं चक्रतीर्थं सन्निहत्यान्धयन्तथा ।
 भूतेशादीनि लिङ्गानि आदिनारायणाह्वयम् ॥
 ततश्चक्रधराख्यानं शाम्बादित्यकथानकम् ।
 कथा कण्टकशोधिण्या महिषघ्न्यास्ततः परम् ॥
 कपालीश्वरकोटीशयालग्रहाह्वयसत् क्रथा ।

नरकेश सम्बर्त्तेश निर्धोश्वरकथा तत ।
 बलमद्रेश्वरस्याथ गंगाया गणपत्य च ।
 जाम्बवत्याप्यसक्ति पाण्डुकूपस्यसन्कथा ।
 शतमेघलक्षमेघकोटिमेघकथा तथा ।
 दुर्व्यासार्वयदुम्यान हिरण्याम्बगमोन्कथा ॥
 नगरार्कस्य कृष्णस्य सद्गुर्येणसमुद्रयोः ।
 कुमाय्या, क्षेत्रपालस्य ग्रहेशस्य कथा पृथक् ॥
 पिंगला मंगमेशस्य शंकरार्कऋद्रयोः ।
 ऋषितोत्रस्य नन्दार्कचित्तकृत्यस्य कर्त्तनम् ॥
 शशोपानस्य पर्णार्कन्यद्रुमन्यो कथाद्रुता ।
 धाराहन्त्यामित्रुत्तान्त छायालिगाख्यगुप्तयोः ।
 कथा कनकनन्दायाः कुन्तीगंगेशयोस्तथा ॥
 चमसोद्वेदविदुरत्रिलोकेशकथा तत ।
 मद्रूपेश त्रैपुरेश पण्डितार्थ कथा तथा ॥
 सूर्यप्रार्चात्रोक्षणयोस्मानाथ कथा तथा ।
 भृङ्गारालम्ब्यलयोद्व्यवनार्कजयोस्तथा ।
 अत्रापालेशालार्कऋषेशस्यरत्ना कथा ॥
 ऋषितोया कथा पुण्या मंगान्द्रेश्वरकर्त्तनम् ।
 नारदादिन्यकथनं नारायणनिम्पणम् ॥
 ततकुण्डस्य माहान्त्यं मूलचण्डोशवर्गनम् ।
 चतुर्मुख गंगाध्यक्ष कलम्येश्वरयो कथा ।
 गोपालम्बामित्रकुलम्बामिनोर्मन्त्रा कथा ।

क्षेमाकौश्लतविघ्नेशजलस्वामिकथा तथा ।
 फालमेघस्य रुक्मिण्या ऊज्वशीश्वरभद्रयोः ।
 शङ्खावर्त्तमोक्षतीर्थं गोप्पदाच्युतसन्ननाम् ।
 जालेश्वरस्य हृङ्कारकूपचण्डीशयोः कथा ।
 आशापुरस्थविघ्नेशकलानुण्डकथाऽद्भुता ॥
 फलेशस्य च कथा जरदुग्धशिवस्य च ।
 नलककौटकेश्वरयोर्हाटकेश्वरजा कथा ॥
 नारदेशमन्त्रभूषा दुर्गकूटगणेशजा ।
 सुपर्णलारयभैरवयोर्मल्लतीर्थमद्या कथा ॥
 कीर्त्तनं कर्द्दमालस्य गुप्तसोमेश्वरस्य च ।
 बहुस्यर्णेशशृंगेश कोटीश्वरकथा ततः ।
 मार्कण्डेश्वरकोटीश दामोदरगृहोत्कथा ।
 स्वर्णरेखा ब्रह्मकुण्डं कुन्तीभीमेश्वरी तथा ॥
 मृगीकुण्डश्च सर्वस्यं क्षेत्रे वस्त्रापथे स्मृतम् ।
 दुन्नाविल्येशगंगेशरैघतानां कथाऽद्भुता ॥
 ततोऽर्जुदेश्वरकथा अचलेश्वरकीर्त्तनम् ।
 नागतीर्थस्य च कथा वशिष्ठाश्रमवर्णनम् ।
 भद्रं कर्णस्य माहात्म्यं त्रिनेत्रस्य ततः परम् ॥
 केदारस्य च माहात्म्यं तीर्थागमनकीर्त्तनम् ।
 कोटीश्वररूपतीर्थहृषीकेशकथा ततः ।
 सिद्धेश शुक्लेश्वरयोर्मणिकर्णेशकीर्त्तनम् ॥
 पद्भुतीर्थ-यमतीर्थ-चाराहतीर्थवर्णनम् ।

चन्द्रप्रभासपिण्डोद् श्रीमाता शुक्लतीर्थजम् ॥
 कात्यायन्याश्च माहात्म्यं ततः पिण्डारकस्य च ।
 ततः कनकलस्याथ चक्रमानुपतीर्थयोः ॥
 कपिलाग्नितीर्थकथा तथा रक्तानुबन्धजा ।
 गणेशपार्येश्वरयोर्यात्राया मुद्गलस्य च ॥
 घण्टीस्थानं नागमण्डिरः कुण्डमहेशजा ।
 कामेश्वरस्य मार्कण्डेयोत्पत्तेश्च कथा ततः ॥
 उद्दालकेश सिद्धेश गततीर्थकथा पृथक् ।
 श्रीदेवमातोत्पत्तिश्च व्यासगौतमतोर्थयोः ॥
 कुलसन्तारमाहात्म्य रामकोट्याह्वतीर्थयो ।
 चन्द्रोद्देशात्तद्गङ्गा स्नानोद्भवोद्भवम् ॥
 त्रिपुष्कर-रद्रहद-गुहेश्वर-कथा शुभा ।
 शक्तिमुक्तस्य माहात्म्यमुमामाहेश्वरस्य च ॥
 महोजसः प्रभाषश्च जम्बुतीर्थस्य धर्षणम् ।
 गङ्गाधरमिश्रकयोः कथाचाय फलश्रुतिः ॥
 ढाङ्कायाश्च माहात्म्ये चन्द्रशर्मकथानकम् ।
 जागराद्यान्यत्रश्च व्रतमेकादशीभवम् ।
 महाढादशीकाव्यान प्रह्लादपि समागमः ।
 दुर्व्यासस उपार्यान यानोपक्रमकीर्तनम् ॥
 गोमत्युत्पत्तिकथनं तस्यां स्नानादिजम्फलम् ।
 चन्द्रतीर्थस्य माहात्म्यं गोमत्युदधिसङ्गमः ॥
 सनकादिहडाण्यनं नृगतीर्थकथा ततः ।

एकोनविंशत्याहम् तद्विष्णुकल्पकथाचितम् ॥

तत्र पूर्वखण्डे :—

पुराणोपक्रमो यत्र सर्गः संक्षेपतस्ततः ।
 सूर्यादिपूजनविधि दीक्षाविधिरतः परम् ।
 श्यादिपूजा ततः पञ्चाग्रव्यूहार्चनं द्विज ।
 पूजाविधानञ्च वैष्णवं तथा पञ्चरन्ततः ।
 योगाश्चायम्स्तनो विष्णो नामसाहस्रकीर्तनम् ।
 ध्यानं विष्णोस्तनः सूर्यपूजामृत्युञ्जयार्चनम् ।
 माला मंत्रा शिवाद्यां गणपूजा ततः परम् ।
 गोपालपूजा त्रैलोक्यमोहनं श्रीधरार्चनम् ।
 विष्ण्वर्चा पञ्चनत्त्वार्चा चक्रार्चा देवपूजनम् ।
 न्यासादि मन्त्रोपास्तिश्च दुर्गाद्यांयमुरार्चनम् ।
 पूजा मातेश्वरी चानः पवित्रारोहणार्चनम् ।
 मूर्तिध्यानं धाम्नुमानं प्रासादानाञ्च लक्षणम् ।
 प्रतिष्ठा सर्वदेवानां पृथक् पूजाविधानतः ।
 योगोऽष्टाङ्गो दानधर्मः प्रायश्चित्तविधिक्रिया ।
 ह्रीं पेशन्तरकाम्यानं सूर्यव्यूहश्च ज्योतिषम् ।
 सामुद्रिकं म्वरध्यानं नवरत्नपरीक्षणम् ।
 माहात्म्यमथ तीर्थानां गयामाहात्म्यमुत्तमम् ।
 तनो मन्त्रन्तराभ्यानं पृथक्पृथग्विभागशः ।
 पित्राभ्यानं घर्णधर्मा द्रव्यशुद्धिस्समर्पणम् ।
 श्राद्धं विष्णुकस्यार्चा ग्रहयत्रस्तथाऽऽग्रनाः ।

मलहास्या प्रेताशौचं नीचिसारोद्यतोक्तयः ।
 सूर्यवंश सोमवंशोऽघतारकथनं हरेः ।
 रामायणं ह्रिदंशो भारताख्यानकन्तनः ।
 आयुर्वेदे निदानमप्राक् चिकित्साद्रव्यजागुणाः ।
 रोगघ्नं कवचं विष्णो गारुडस्त्रैपुरोमनुः ।
 प्रश्नचूडामणिध्वान्ते हयायुर्वेदकीर्तनम् ।
 शोषधीनामकथनं ततो व्याकरणोहनम् ।
 छन्दः शास्त्रं सदाचारस्ततः स्नानविधि स्मृतः ।
 तर्पणं वैश्वदेवञ्च सध्यापार्यणकर्म च ।
 नित्यश्राद्धं सपिण्डाख्यं धर्मसारोऽघनिष्टृतिः ।
 प्रतिसङ्क्रम उक्तोऽस्माद् युगधर्माः कृतेः फलम् ।
 योगशास्त्रं विष्णुभक्तिर्नमस्कृति फलं हरेः ।
 माहात्म्यं वैष्णवञ्चाथ नारसिंहस्तयोत्तमम् ।
 ज्ञानामृतं शृङ्गाष्टकं स्तोत्रं विष्णवर्चनाह्वयम् ।
 वेदान्तसारस्यसिद्धान्तं ब्रह्मज्ञानात्मकं तथा ।
 गीतासारः फलोत्कीर्तिः पूर्वखण्डोऽयमीरितः ।

उत्तरखण्डे प्रेतकल्पे :—

अथास्यैवोत्तरे खण्डे प्रेतकल्पः पुरोदितः ।
 यत्र ताक्ष्येण संस्पृष्टो भगवानाह घाड्य ।
 धर्मप्रकटनं पूर्वं योनीनां गतिकारणम् ।
 दानादिकम्फलञ्चापि प्रोक्तमत्रोर्ध्वदेहिकम् ।

यमलोकस्य मार्गस्थ वर्णनञ्च ततः परम् ।
 षोडशश्राद्धफलकं वृत्तानाञ्चात्र वर्णितम् ।
 निष्कृतिर्यममार्गस्य धर्मराजस्य वैभवम् ।
 प्रेतपीडा विनिर्देशः प्रेतचिन्हनिरूपणम् ।
 प्रेतानां चरितार्यानं कारणप्रेततां प्रति ।
 प्रेतदृश्यविचारश्च सपिण्डीकरणोक्तयः ।
 प्रेतत्वमोक्षणार्यानं दानानि च विमुक्तये ।
 आचक्ष्यकोत्तरं दानं प्रेतसौख्यकरं हितम् ।
 शारीरकविनिर्देशो यमलोकस्य वर्णनम् ।
 प्रेतन्योद्धारकथनं कर्मकर्तृविनिर्णयः ।
 मृत्योः पूर्वक्रियार्यानं पश्चात्कर्मनिरूपणम् ।
 मर्त्यं षोडशकं श्राद्धं स्वर्गप्राप्तिक्रियोद्गमम् ।
 सप्तकस्याथ संख्यानं नारायणबलिक्रिया ।
 वृषोत्सर्गस्य माहात्म्यं निषिद्धपरिवर्जनम् ।
 अपमृत्युक्रियोक्तिश्च विपाकः कर्मणां नृणाम् ।
 दृश्यादृश्यविचारश्च विष्णुध्यानं विमुक्तये ।
 म्यर्गती विहितार्यानं स्वर्गसौख्यनिरूपणम् ।
 भूलोकवर्णनञ्चैव सप्तधालोक वर्णनम् ।
 पञ्चोर्ध्वलोककथनं ब्रह्माण्डस्थिति कीर्तनम् ।
 ब्रह्माण्डानेकचरितं ब्रह्मजीवनिरूपणम् ।
 आत्यन्तिकलयान्यानं फलस्तुतिनिरूपणम् ।
 इत्येनद्गुणारङ्गनाम पुराणमुक्तिमुक्तिदम् ॥

तत्फलश्रुतिः—

कीर्तितं पापशमनं पटतां शृण्वतां नृणाम् ।

लिखित्वैत्पुराणन्तु विपुवे यः प्रयच्छति ॥

सौवर्णं हंसयुग्माढ्यं विप्राय स दिवं व्रजेत् ।

ब्रह्माण्डपुराणम्

नारदीय पुराणे ४ पा० १०६ अध्याय उक्ता

अस्य विषयाः ।

शृणु वत्स ! प्रवक्ष्यामि ब्रह्माण्डाख्यं पुरातनम् ।

तच्च द्वादशस्ताहस्रं भागिकल्पकधायुतम् ॥

प्रक्रियाख्योऽनुपङ्गाख्य उपोद्घातस्तृतीयकः ।

चतुर्थे उपसंहारः पादाश्चत्वार एव हि ॥

पूर्वपादद्वयं पूर्वो भागोऽत्र समुदाहृतः ।

तृतीयोऽप्यमो भागश्चतुर्थस्तृत्तरोमतः ॥

तत्रपूर्वभागे प्रक्रियापादे :—

“आदौ रस्यसमुद्देशो नैमिषाख्यानकं ततः ।

हिरण्यगर्भोत्पत्तिश्च लोककल्पनमेव च ॥

एव वै प्रथमःपादो द्वितीयं शृणु नारद ।

पूर्वभागेऽनुपङ्गपादे :—

कल्पमन्थन्तराख्यानं लोकज्ञानं ततः परम् ।

मानस सृष्टिकथनं सृष्टप्रसववर्णनम् ॥

महादेवविभूतिश्च ऋषिसर्गस्ततः परम् ।
 अग्निनां विचयश्चाथ कालसद्भाववर्णनम् ॥
 प्रियव्रताच्च योद्देशः पृथिव्या याम विस्तरः ।
 वर्णनं भारतम्याम्य ततोऽन्येषां निरूपणम् ॥
 जम्बादिसप्तद्वीपाख्या ततोऽधोलोकवर्णनम् ।
 ऊर्ध्वलोकानुकथनं ग्रहचारस्ततः परम् ॥
 आद्रिन्वज्यहकथनं देवग्रहानुकीर्तनम् ।
 नीलकण्ठान्ह्याग्यानं महादेवस्य वैभवम् ॥
 यमाचाम्यानुकथनं युगतत्त्वनिरूपणम् ।
 यज्ञप्रवर्तनञ्चाथ युगयोरन्त्ययोः कृतिः ॥
 युगप्रजालक्षणञ्च ऋषिप्रवरवर्णनम् ।
 वेदाता व्यमनाग्यानं स्यावम्भुवनिरूपणम् ॥
 शेषमन्यन्तराग्यानं पृथिवीदोहनन्ततः ।
 चाक्षुषेऽघनने सर्गोद्दितीयोऽङ्घ्रि पुरोदले ॥

मध्यभागे उपाद्वात पादे :—

"अथोपाद्वातपादे च सप्तर्षिपरिकीर्तनम् ।
 राजाफलयन्त्रयस्तस्मादेवादीनां समुद्भवः ॥
 ततो जयाभिध्याहारौ मरुदुत्पत्तिकीर्तनम् ।
 काश्यपेयानुकथनं ऋषिवंशानिरूपणम् ॥
 पितृकल्याणानुकथनं धादकल्पस्ततः परम् ।
 वैद्यशतममुत्पत्तिस्सृष्टिस्तम्य ततः परम् ॥
 मनुषुत्राचयश्चातो गान्धर्वश्च निरूपणम् ।

इक्ष्वाकुवशकथन वशोऽत्रे सुमहान्मन ॥
 अमावसोराचयश्च रज्जेश्चरितमद्भुतम् ।
 ययातिचरितञ्चाथ यदुवशनिरूपणम् ॥
 धार्तरथीर्यस्यचरित जामदग्न्य तत परम् ।
 वृष्णिवशानुकथन सगरस्याथ सम्भय ॥
 भार्गवस्यानुचरित तथार्यकथयाश्रयम् ।
 सगरस्याथचरित भार्गवस्य कथा पुन ॥
 देवासुराहवकथा वृष्णाचिर्भायवर्णनम् ।
 इतस्य च स्तव पुण्य शुक्रेण परिकीर्तित ॥
 विष्णुमाहात्म्यकथन वशीत्रशनिरूपणम् ।
 भविष्यराजचरित सम्प्राप्तेऽथकलौ युगे ॥
 एवमुद्धातपादोऽय तृतीयो मध्यमे दले ।

उत्तरभागे उपसंहार पादे :—

चतुर्थमुपसंहार वक्ष्ये खण्डे तथोत्तरे ॥
 वैवस्वतान्तराख्यान विस्तरैण यथातथम् ।
 पूर्वमेव समुद्दिष्ट सक्षेपादिह कथ्यते ॥
 भविष्याणा मनूनाच चरित हि तत परम् ।
 कल्पप्रलय निर्देश कालमान तत परम् ॥
 लोकाश्चतुर्दश तत कथिता मानलक्षणे ।
 वर्णन नरकाणाञ्च विकर्माचरणैस्तत ॥
 मनोमयपुराख्यान लय श्रावितस्तत ।
 शैवस्याथ पुरस्यापि वर्णनञ्च तत परम् ॥

त्रिविधाद् गुणसम्बन्धाज्जन्तूनां कीर्तिता गतिः ।
 अनिर्देश्या प्रवक्तव्यस्य ब्रह्मणः परमात्मनः ॥
 अन्यथ व्यतिरेकाम्यां धर्षणं हि ततः परम् ।
 इत्येष उपसंहारः पादो वृत्तः सचोत्तरः ॥
 चतुर्पादं पुराणन्ते ब्रह्माण्ड समुदाहृतम् ।
 अष्टादशमर्गोपम्यं सारान्सारतरं द्विजः ! ॥
 ब्रह्माऽञ्चतुर्लक्षं पुराणत्वेन पट्यते ।
 तदेव व्यम्य गदितमत्राष्टादशधा पृथक् ॥
 पारागर्येण मुनिना सर्वेषामपि मानद ।
 धम्नुद्रष्टाव तेनैव मुनीनां भावितात्मनाम् ॥
 मत्तः श्रुत्वा पुराणानि लोकेभ्यः प्रवकाशिरं ।
 मुनयो धर्मशीलाम्ने क्षीनानुग्रहकारिणः ॥
 मया चेदं पुराणन्तु वशिष्ठाय पुरोदितम् ।
 तेन शक्तिमुनायोक्तं जानूकार्णाय तेन च ॥
 व्यासो लब्ध्वा ततश्चेतन् प्रमञ्जनमुन्मोदुगतम् ।
 प्रमाणीकृत्यलोकेऽस्मिन् प्रावर्त्तयदनुत्तमम् ॥

तत्फलश्रुतिः—

य इदं कीर्तयेद्वत्सं ! शृणोति च समाहितः ।
 स विभ्रूयेह पापानि याति लोकमनामयम् ॥
 लिगित्वै तत् पुराणन्तु म्बर्णसिंहासनस्थितम् ।
 पात्रेणाच्छादितं यस्तु ब्राह्मणाय प्रयच्छति ॥
 स याति ब्रह्मणोलोकं नात्र कार्या विचारणा ।

मरीचे ! ऽष्टादशैतानि मया प्रोक्तानि यानि ते ॥
 पुराणानि तु संक्षेपाच्छीतव्यानि च धिन्तरात् ।
 अष्टादश पुराणानि यः शृणोति नरोत्तमः ॥
 कथयेद्वा विधानेन नेह भूयः स जायते ।
 सूत्रमेतत्पुराणानां यन्मयोक्तं तथाऽधुना ॥
 तन्नित्यं शीलनीयं हि पुराणं फलमिच्छता ।
 न दाम्भिकाय पापाय देवगुर्वनुसूयवे ।
 देयं कदापि साधूनां द्वेपिणे न शठाय च ।
 शान्तायारामिचित्ताय शुश्रूषामिरताय च ॥
 निर्मत्सराय शुचये देयं सदैष्णवाय च ।

विष्णुभागवतम् ।

‘तत्प्रतिपाद्यविषयाश्च नारद पु० ६६ अ० उक्ता यथा—

मरीचे ! शृणु वक्ष्यामि वेदव्यासेन यत्कृतम् ।
 श्रीमद्भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसंमितम् ॥
 तदष्टादशसाहस्रं कीर्तितं पापनाशनम् ।
 सुरपादपरूपोऽयं स्कन्धैर्द्वादशभिर्गुप्तः ॥
 भगवानेव विप्रेन्द्र ! विश्वरूपी समीरितः ।

तस्य प्रथमस्कन्धे :—

तत्र तु प्रथमे स्कन्धे सूतर्षीणां समागमः ।
 व्यासस्य चरितं पुण्यं पाण्डवानां तथैवच ॥
 पारिक्षितमुपाख्यानमितोदं समुदाहृतम् ।”

द्वितीयस्कन्धे :—

“परोक्षिद्भुकसम्वादे सृतिद्वयनिष्पन्नम् ।
ब्रह्मनारदसंवादेऽवतारचरितामृतम् ॥
पुराणलक्षणञ्चैव सृष्टिकारणसम्मवः ।
द्वितीयोऽयंसमुद्धितः स्कन्धो व्यासेन धीमता ॥”

तृतीयस्कन्धे :—

“चरितं विदुरम्याय मैत्रेयेणाम्य सङ्गम् ।
मृष्टिप्रकरणं पञ्चाद्ब्रह्मणः परमात्मनः ॥
कापिलं सांग्यमप्यत्र तृतीयोऽयमुदाहृतः ।

चतुर्थस्कन्धे :—

“सत्याश्चरितमार्दो तु ध्रुवम्यचरितं ततः ।
पृथोः पुण्यसमाल्यानं ततः प्राचीनवर्हिषः ॥
इत्येष नृप्यो गदितो विसर्गो स्कन्ध उत्तमः ।”

पञ्चमस्कन्धे :—

“प्रियत्रतम्य चरितं तद्व्यंश्यानाञ्च पुण्यदम् ।
प्रह्माण्डान्तर्गतानाञ्च लोकानां वर्जनन्ततः ॥
नरकस्थितिरित्येव संस्थाने पञ्चमोमतः ।

षष्ठस्कन्धे :—

अज्ञामिलम्य चरितं दक्षमृष्टिनिष्पन्नम् ।
वृत्राभ्यानं ततः पञ्चान्ममतां जन्म पुण्यदम् ॥
षष्ठोऽयमुद्धितस्कन्धो व्यासेन परिपोषणे ।

सप्तमस्कन्धे :—

“प्रहादचरितं पुण्यं घर्णाश्रमनिरूपणम् ।
सप्तमोगदितो यत्स ! वासनाकर्मकीर्त्तने ॥

अष्टमस्कन्धे :—

“गजेन्द्रमोक्षणाख्यानं मन्वन्तरनिरूपणम् ।
समुद्रमथनञ्चैव यलिवैभयचन्धनम् ॥
मत्स्यापतारचरितमष्टमोऽयं प्रकीर्त्तितः ।

नवमस्कन्धे :—

“सूर्यवंशसमाख्यानं सोमवंशनिरूपणम् ।
वंश्यानुचरिते प्रोक्तो नवमोऽयं महामते ॥

दशमस्कन्धे :—

“कृणस्य बालचरितं कौमारञ्च व्रजस्थितिः ।
कैशोरं मथुरास्थानं यौवने द्वारकास्थितिः ॥
भूभारहरणञ्चात्र निरोधे दशमः स्मृतः ।

एकादशस्कन्धे :—

“नारदेन तु संवादो वसुदेवस्य कीर्त्तितः ।
यदोश्च दत्तात्रेयेण श्रीकृष्णेनोद्धवस्य च ॥
यादवानां मिथोऽन्तश्च मुक्तावेकादशः स्मृतः ।

द्वादशस्कन्धे :—

“भविष्यकलिनिर्देशो मोक्षो राज्ञः परीक्षितः ।
वेदशास्त्राग्रणयनं मार्कण्डेयतपः स्मृतम् ॥

सौरी विभूतिरुदिता सात्त्वती च तत परम् ।
पुराणसंन्याकथनमाश्रये द्वादशो ह्यहम् ॥
इत्येवं कथितं चत्स ! श्रीमद्भागवतं तव ।

तत्फलश्रुतिः :—

“वक्तुः श्रोतुश्चोपदेष्टुरनुमोदितुरेव च ।
साहाय्यकर्तृर्गङ्गिणं मक्तिभुक्तिविमुक्तिदम् ॥
प्राष्टपद्यां पूर्णिमायां हेमसिंहसमाचितम् ।
दैवं भागवतायेदं द्विजाय प्रातिपूर्वकम् ॥
सम्पूज्य चन्द्रहेमाद्यैर्मगवद्भक्तिमिच्छता ।
सोऽप्यनुक्रमणीमेतां श्रावयेच्छृणुयात्तथा ॥
स पुराणश्रवणजं प्राप्नोति फलमुत्तमम् ।

अष्टादशपुराणानामनुक्रमतोऽ चतुर्णवर्णनम्वायुपुराणं
प्रतिपादितम् :—

सर्वपापहरं पुण्यं पवित्रं च यशस्वि च ।
ब्रह्मा ददौ गान्धर्वादिं पुराणं मातरिष्वने ॥ ५८ ॥
तस्माद्योशनसा प्राप्तं तस्माद्यापि बृहस्पति ।
बृहस्पतिस्तु श्रोत्राच्च सवित्रे तदनन्तरम् ॥ ५९ ॥
सविता मृत्युरे प्राह मृत्युश्चन्द्राय वै पुनः ।
इन्द्रज्ञापि षशिष्ठाय सोऽपि सारस्वताय च ॥ ६० ॥
सारस्वतस्त्रिधाम्ने च त्रिधामा च शरद्धने ।
शरद्धतस्त्रिविष्टाय सोऽन्तरिक्षाय दत्तवान् ॥ ६१ ॥

पर्पिणे चान्तरिक्षो वै सोऽपि त्रय्यारुणाय च ।
 त्रय्यारुणो धनञ्जये सच प्रादात्तृतञ्जये ॥ ६२ ॥
 तृतञ्जयात्तृणञ्जयो [भरद्वाजाय सोऽप्यथ ।
 गौतमाय भरद्वाज सोऽपि निर्यन्तरे पुन ॥ ६३ ॥
 निर्यन्तरस्तु प्रोवाच तथा वाजश्रवाय च ।
 स ददौ सोममुष्माय स ददौ तृणविन्दवे ॥ ६४ ॥
 तृणविन्दुस्तु दक्षाय दक्ष प्रोवाच शक्तये ।
 शक्ते पराशरश्चापि गर्मस्य श्रुतवानिदम् ॥ ६५ ॥
 पराशराज्जातुकर्णस्तस्माद्द्वैपायन प्रभु ।
 द्वैपायनात्पुनश्चापि मया प्रोक्त द्विजोत्तमा ॥ ६६ ॥

शांशपायन उवाच :—

मया वै तत्पुन प्रोक्तं पुत्रायामितदुद्धये ।
 इत्येव वाचा ब्रह्मादिगुरुणा समुदाहृता ॥



पुराण परिचय (परिशिष्ट)

कतिपय सम्मतयः

एफ० मैक्समूलरः प्रतिपादयति स्वकीय ग्रन्थे

India what can it teach us

By Rt Hon

F Maxmuller,

(Longmans Green & Co.)

India, 1919.

COLLECTED WORKS

नामके

Page 3

"If I were to look over the whole world to find out the country richly endowed with all the wealth, power and beauty that nature can bestow—in some parts a very paradise on earth—I should point to India. If I were

यदि सारे संसार भर में मुझे ऐसे देश को खोजने के लिये कहा जाय जो धन, जन और प्राकृतिक सौन्दर्य साधन सम्पत्ति से परिपूर्ण हो और कुछ अंश में पृथ्वी पर स्वर्ग सदृश हो तो मेरा केन्द्र बिन्दु भारत होगा। यदि मुझे यह पूछा जाय कि विश्व में मानव मस्तिष्क के अधिकाधिक पवित्रतम

asked under what sky the human mind has most freely developed some of its choicest gifts, has most deeply pondered on the greatest problems of life and has found solutions of some of them which will deserve the attention even of those who have studied Plato and Kant I should point to India

And if I were to ask myself from what literature we here in Europe, we, who have been nurtured almost exclusively on the thoughts of Greeks and Romans and of one Semitic race the Jewish, may draw that

विकास की सुन्दरतम भेंट फ्रीड से देश को प्राप्त हुई और किस देश के विचारियों ने जीवन की महती समस्याओं पर गम्भीर रूप से विचार किया है और उनका निश्चित समाधान भी पूर्ण रूप से प्राप्त कर लिया जिसके लिये प्लेटो और काण्ट जैसे दार्शनिकों की रचनाओं के प्रेमी भी अपने को अध्ययन करने का अधिकारी मानते हैं तो मेरा सङ्केत भारत भूमि के लिये होगा ।

और यदि मुझे फिर एक प्रश्नवाचक चिन्ह द्वारा यह कहा जाय कि यूरोप में हमलोगों ने जिनके आदर्श पूर्णतया ग्रीस और रोमन जाति की विचार धारा पर आश्रित हैं और यहूदी जाति से भी प्रेरणा प्राप्त की है ऐसे सभी को किस साहित्य द्वारा

corrective which is most wanted in order to make our inner life more perfect, more comprehensive, more universal, in fact, more lively human—a life not for this life only, but a transfigured and eternal life—again I should point to India.

14

That very Sanskrit the study of which may at first seem so tedious to you and so useless, if only you will carry it on, as you may carry it on here at Cambridge better than anywhere else, open before you large

पूर्णता प्राप्ति की आन्तरिक रूप से पूर्ण बनने की, सर्वांशतः सार्वभौम और विकसनशील बनने की प्रेरणा मिली है। वास्तव में ऐहिक जीवन के सम्यन्ध में ही नहीं बल्कि आध्यात्मिक सत्य शाश्वत जीवन के लिये महत्त्वपूर्ण साहित्य से देन मिली तो मेरा सङ्कल्प फिर भी भारत ही होगा।

१४

यह संस्कृत भाषा का अध्ययन ही है जो पहले आप लोगों की कठिन परिश्रमसाध्य और अनुपयोगी लगता है यदि इसका सतत स्वाध्याय जैसा आप लोग कैम्ब्रिज में करते हैं वैसी ही गति और उत्साह से सदा ही करते रहे तो आपके सामने ऐसा साहित्यिक उन्मेष की गवेषणा दृष्टिगोचर होगा जो अभी तक

layers of literature as yet almost unknown and unexplored and allow you an insight into strata of thought deeper than any you have known before and rich in lessons that appeal to the deepest sympathies of the human heart.

“India occupies a place second to no other country.”

15

Whatever sphere of the human mind you may select for your special study, whether it be language, or religion, or mythology or philosophy, whether it be laws or customs, primitive

अज्ञाय और अनुसन्धान रहित थी और अन्तर्दर्शन की ऐसी सूक्ष्म क्षमता प्रदान करेगी अब शिक्षाप्रद उपदेशों से हमें उदात्त मानव यत्न की बराबर प्रेरणा मिलती रहेगी, मानव हृदय की गम्भीर सहानुभूतियों को भी पूर्णतया प्रभावित करती है।

सत्यान्वेषण के मार्ग में भारत राष्ट्र का ही सर्व प्रथम प्रमुख स्थान है।

मानव मस्तिष्क के विकास की कोई भी देश को अपने विशेष अध्ययन के लिये हम क्यों न ले भले ही यह भाषा हो, धर्म हो, पौराणिक गाथा हो, दर्शन हो, व्यवहार हो, रीति नीति हो या आरम्भिक कला या विज्ञान हो हमें उसका स्रोत भारत ही

art or primitive science, everywhere you have to go to India ; whether you like it or not, because some of the most valuable and most instructive materials in the history of man are treasured up in India, and in India only."

August wilhelm fon Schlegel :—

It is perhaps the deepest and loftiest thing the world has to show.

"Schopen Hauer. The production of the highest Human Wisdom."

"Almost Super—Human Conception."

"It is the most satisfying and elevating reading (with the exception of the original texts) which is possible in the world ; it has been the solace of my life and will be the solace of my death."

मिलेगा। आप इस में सहमत हों या न हों सबसे अधिक मूल्यवान् और सर्वाधिक शिक्षाप्रद सामग्री जो मानव के इतिहास में उपलब्ध होती है उसकी सञ्चित निधि केवल भारत में ही है अन्यत्र नहीं।

आगष्ट विन्डेल्म फोनश्लेजर कहते हैं—भारत की आध्यात्मिक विशेषता गम्भीर और उदात्त घस्नुतत्त्वों की संसार को देन है।

शोपेन हावर कहता है—भारतीय दर्शन मनुष्य की उच्चतम विकसित बुद्धि का अपूर्व आदर्श है जो कि विचारांश में अतिमानव प्रायः है।

"Now, if Einstein is right, or even partly right no physicists before his time knew quite well what they were talking about. When they used the ideas of distance and time and practically every statement that they made which purported to be accurate was false "

Possible worlds by
J. B. S. Haldane

Science is not yet in contact with ultimate reality.

यह यह भी सम्मति देता है कि उपनिषद् साहित्य का अध्ययन सन्तोष दायक, उपायक विचारों से पूर्ण है इसका म्याध्याय जैसे मुझे जीवन में शान्ति और स्फूर्तिदायक हुआ यह मृत्यु शय्या पर भी वैसे ही शान्तिदायक होगा ।

यदि सापेक्षवाद का अनुसन्धान कर्ता आइन्स्टीन ठीक हो या अंशतः ठीक हो तो कोई भी विज्ञान नेता इस के पूर्व इस से अनभिज्ञ था कि आजकल वैज्ञानिक लोग क्या क्या नई गवेषणा कर रहे हैं । जब उन्होंने दूरी समय औसतसमयन्धी प्रत्येक विपरण तैयार किया और जिसे उस समय बिल्कुल ठीक यत्नाने थे आज मिथ्या मालूम होता है ।

—जी० पी० एस० हाटडे

विज्ञान थमी तक पूर्ण सत्य के सम्पर्क में नहीं आया है ।

Once more then, if we mean by primitive, people who inhabited this earth as soon as the vanishing of the glacial period make this earth inhabitable, the Vedic poets were certainly not primitive. If we mean by primitive, people who were without a knowledge of fire, who used unpolished flints, and ate raw flesh, the Vedic poets were not primitive. If we mean by primitive, people who did not cultivate soil, had no fixed abodes, no kings, no sacrifices, no laws, again I say, the Vedic poets were not primitive. But if we mean by primitive the people who have been the first of the Aryan race to leave behind literary relics of their existence

एक बार फिर यदि हम आरम्भिक से ऐसे लोगोंको समझें जिन्होंने आदि कालमें सृष्टिको निवास योग्य बनाया तो वैदिक ऋषि आरम्भिक नहीं थे। पुन यदि हमारा अभिप्राय आदि निवासी से ऐसी जातिका हो जिन्हें अग्नि का ज्ञान नहीं था जो सरसरे चकमकसे अग्नि जलाते थे और फचा मांस खाते थे तो इस अर्थ में वैदिक ऋषि आदिकालीन नहीं थे। पुन यदि हमारा यह अभिप्राय हो कि वे ऐसे आदिवासी थे जिन्होंने भूमि पर हल नहीं चलाया न स्थिरनिवासकी योजनाकी न उनके राजा थे न वे यज्ञ करते थे और न उनकेलिये राज्यके नियन्त्रण करनेवाले

on earth, then I say the Vedic poets are primitive, the Vedic language is primitive, the Vedic religion is primitive, and taken as a whole, more primitive than anything else that we are ever likely to recover in the whole history of our race

The prosperity of a country depends not on the abundance of its revenues, not on the strength of its fortifications not on the beauty of its public buildings but it consists in the number of its cultivated citizens, in the men of education, enlightenment and character

नियम थे तो वैदिक ऋषिप्राचीन नहीं थे । परन्तु यदि हमारा अभि-
प्राय यह हो कि आदिकालीन वही है, जिन्होंने आर्य जातिके आदि
पुरुष होकर अपनी स्थिति में एक ऐसा अखण्डसाहित्य छोड़ा
जिसकी शानो से सभी गौरव अनुभव करते हैं, तो मैं कहूँगा
कि वैदिकऋषि आदि हैं वेदविद्या आदिकाल की है, वैदिक धर्म
आद्य है और वे ऋषि सम्पूर्ण मानव सभ्यसत्तार के इतिहास में
भी सर्वप्रथम सम्य होने का गौरव रखते हैं ।

जिसी देशकी समृद्धि नती इससे करोंकी प्रभूत संप्रदाय सम्पत्ति
पर आश्रित है; ॥ इसका सुषुप्त रक्षा पटक्ति पर निर्भर है और न
इससे सार्वजनिक शोभायुक्त स्थानों पर अचलस्थित है। परन्तु इसका
आधार तो सुसभ्य, नागरिक और शिक्षित जन जो नैतिक और
धार्मिक विकास में आगे बढ़े हुए हैं और जो उन्नतिशील हैं वे ही
देश की समृद्धि के धाम्नीय मापदण्ड हैं ।

Lecture II

Warren Hastings thus speaks of the Hindus general —

“They are gentle and benevolent, more susceptible of gratitude for kindness shown them, and less prompted to vengeance for wrongs inflicted than any people on the face of the earth, faithful, affectionate, submissive to legal authority

But it is not Europe alone that has profited from this revival of the study of Sanskrit India herself has lost the recollection of her past, her literature was sinking in oblivion numerous works of her celebrated writers had perished and others were annually perishing, her ancient language had died away and was

घारेन हँसिगज कहता है कि भारतीय भद्र, उदार, कृता, सत्कार की सम्मन् ज्ञातियों में जो बदला लेने की भावना है उसमें ऊपर उठे हुए विश्वासी, प्रेममय, और न्यायके लिये नतमस्तक होनेवाले अनुप्य हैं ।

संस्कृत विद्याके पुनरुद्धार एवं पुनरुज्जीवनका केवल यूरोपने लाभ नहीं उठाया बल्कि और देशोंने भी विशेषरूपेण पूर्ण लाभ प्राप्त की है । परन्तु भारत अपने गौरवपूर्ण अतीत के कारणों की स्वयं गो चुका है । इस देश में प्रसिद्ध ग्रन्थों के महत्वपूर्ण ग्रन्थ सदा के लिये विलय हो गये और

cultivated merely by a few of her sons, and last but not least her social fabric and religious belief had come to rest on mediaeval and modern works professedly derived from, and in harmony with her most ancient sacred texts but in truth the composition of an interested degenerated priesthood, corrupting her faith depraving her morality and sapping the very foundations of her life

Introduction to Jaiminiya
Nyaya Mala Vistar
Edited by—Theoder Goldstucker
London Edition 1878

प्रतिवर्ष नष्ट हो रहे हैं। उसकी प्राचीन गौरवमयी भाषा मृत प्राय हो गई और केवल कुछ थोड़ेसे सरस्वतीके सुपुत्रों द्वारा पढ़ी जाती है। और अन्तमें, उसका सामाजिक ढांचा तथा धार्मिक विश्वास मध्यकालीन एवं वर्तमानकालीन ग्रन्थोंकी रचनापर आधारित है। कहनेको तो उनका स्रोत भी प्राचीन वैदिक साहित्य कहा जाता है परन्तु वास्तवमें यह सर्व निर्माण आधुनिक स्थायी पौरोहित्य कला विशों का है इससे उसके निवासियोंका धार्मिक विश्वास चिह्नित, उसकी नैतिक पतनकी पराकाष्ठा एवं उसके जीवनकी आधारभूत शिलायें भी निष्प्राण एवं गतिहीन हो गई हैं।

थ्योडोर गोल्डस्टुकर द्वारा सम्पादित जैमिनीयन्यायमाला
पिस्तरकी अंग्रेजी भूमिकासे लन्दन संस्करण १८७८ सन्

Religious experience is a reality.

Science and theology as art forms.

Reality seems to concern religious beliefs much more than any others.

Page 326. The nature of the physical world : Eddington.

(Cambridge University edition)

Science is not yet in contact with ultimate reality. [Encyclopedia of modern knowledge the world ; whence and how].

Sir James Jeans.

(साइन्स और थ्योलोजी: एड्ज आर्ट फार्मस से)

धार्मिक विश्वासोंका सत्यके साथ अन्य वस्तुओंसे कहीं घनिष्ठतर सम्बन्ध है ।

३२६ पृ० (दी नेचर आय् दी फीजिकल वर्ल्ड)

एडिङ्गटन द्वारा (कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय संस्करण)

विज्ञान अन्तिम सत्यके सन्निकट नहीं पहुँचा है ।

धार्मिक अनुभव वास्तविक तथ्य है ।

इन्साइक्लोपिडिया ऑफ़ माडर्न नालेज ।

अभीतक हम वास्तविक तथ्यके सम्पर्कमें नहीं आये हैं

पदार्थका वस्तुतत्त्व हमारे मनस्तत्त्व और बुद्धितत्त्व के गम्य

नहीं है—

दी वर्ल्ड व्हेन्स अण्ड हाऊ: सर जेम्स जीन्स

(21)
We are not yet in contact with ultimate reality

Real essence of substance is beyond our knowledge

When we consider the modern estimates we may be inclined to sympathise rather with ancient Brahmins who thought that the world had always existed

Science News
Penguin Books 10

Bishop Auber said —

The Hindus are brave courteous, intelligent most eager for knowledge and improvement sober, industrious, dutiful to parents, affectionate to their children, uniformly gentle and

जब हम आधुनिक विचारण पर विचार करते हैं तो हमें प्राचीन ब्राह्मणों के विचारों में सत्य दीखता है जो ससार को शाश्वत बतलाते हैं ।

पेइग्विन न्यूज पेइग्विन बुक्स १०

बिशप ओबर कहते हैं ।

भारतीय हिन्दू धीर, चिन्मय, बुद्धिमान, विवेकी, ज्ञानकी अमर जिज्ञासा रखनेवाले और विकासशील जाति है जो गौरवपूर्ण परिश्रमशील, माता पिता के प्रति कर्तव्यपरायण और बालकोंको

patient and more easily affected by kindness and attention to their wants and feelings than any people I ever met with.

Let us not forget that just as moral strength is the backbone of British prestige and power, as art is the backbone of life in France, so also religion is the bedrock of India's future prosperity and happiness. Religion plays a signal role in our lives in bringing the three hundred sixty two million people of India with numerous barriers of sects and castes in them together under one banner whether we are rich or poor, whether we are Hindus, Jains or Christians.

स्नेह भरी दृष्टि से देखनेवाले, एक समान उदार दयालु, धीर गम्भीर और सरलता पूर्वक मनाये जाने और सबकी भावनाओं का अधिकाधिक आदर करनेवाले राष्ट्र के व्यक्ति हैं ।

हमें यह नहीं भूल जाना चाहिये कि जिस प्रकार ब्रिटिश गौरव और शक्तिका आधार उस राष्ट्र की नौ सेना है और फ्रांस देशवासियोंके जीवन का मेरुदण्ड कलानिर्माणकी श्रृंखला है इसी प्रकार भारतीय भार्या समृद्धि और आनन्द की आधारशिला धर्म है । ३६ करोड़ भारतीयों के विभिन्न जाति, भाषा, धर्म आदि की विभिन्न बाधाओं के रहते हुए भी एक पताका के नीचे लानेवाला तत्त्व धर्म ही है । फिर भले ही कोई धनी या

We are all in a sense receiving our vital sustenance from the pulse beat of faith in one God

Members of the Sanskrit Text Society —
Patron

His Royal Highness the Prince of Wales
Vice Patron

His Majesty the king of Belgians.

The Rt Hon the secretary of state for India
President

His Royal Highness the
Duc D' Aumala

निर्धन हो, चाहे कोई हिन्दू, जैन, फारसी या ईसाई हो हम सब, एक शब्द में, अपनी धमनियों की अव्यर्थ जीवनी शक्तिके स्रोत के लिये आत्मामें ईश्वर दृढ़ विश्वास को ही मानते हैं।

इङ्ग्लैण्ड में स्थापित संस्कृत ग्रन्थ प्रकाशन समिति के सदस्यों की नामावलि—

संरक्षक—हिज रायल हाइनेस वेल्स के राजकुमार ।

उपसंरक्षक—

हिज मेजेस्टी वेल्जियन्स के राजा व माननीय भारत मंत्री ।

समापति—

हिज रायल हाइनेस ड्यूक ड आमला ।

Vice Presidents :

His Excellency Mr. Van De Weyer.

The Right Hon. Lord Dufferin and Clanerboye

Treasurer :

David Salomons Esqr. M. M.

Hon'y Secy :

Octane Depierre, Esqr.

उपसभापि—

हिज एक्सेलेन्सी थ्रो वानडेवेयर, माननीय लार्ड डफरिन और
क्लेनर बाय ।

कोषाध्यक्ष—डेविड सलोमन्स एम० एम० ।

अधैतनिक मंत्री—ओक्टने डे पियर ।

अणुभाष्येऽपि :—

अलौकिको हि वेदार्थो न युक्त्या प्रतिपद्यते ।
 तपसा वेद युतया तु प्रसादात्परमात्मनः ॥
 सन्देहवारकं शास्त्रं धुद्धिदोपात्तदुद्भवः ।
 विरुद्धशास्त्रसम्भेदादङ्गैश्चाशङ्क्यनिश्चयः ॥
 तस्मात्सूत्रानुसारेण कर्तव्यः सर्वनिर्णयः ।
 अन्यथा म्रश्यते स्वार्थान्मध्यमश्च तथाऽऽदिमः ॥
 “श्रुतिस्मृति पुराणानां विरोधो यत्र दृश्यते ।
 तत्र श्रौतं प्रमाणन्तु तयोर्द्वेधे स्मृतिर्वरा ॥ ४ ॥”

व्यास स्मृति १ अध्याय

वेदवेदाङ्गशास्त्राणि सेतिहासानि चाभ्यसेत् ।
 अध्यापयेद्य तच्छिष्यान् सद्विप्रांश्च द्विजोत्तमः ॥
 इतिहासपुराणानां वेदोपनिषदां द्विजः ।

शक्त्या सम्यक्पठेन्नित्यमल्पमप्यासमापनात् ॥ १०

त यज्ञदानतपसामखिलं फलमाप्नुयात् । वेदेभ्योऽन्यत्र सग-
 स चिप्रः शूद्रतामियात् । तस्मादहर्द्वेदं द्विजोऽधीयीत ध्यात्वा

ब्रह्मपुराणेऽपि

इतिहासपुराणानि यदन्यच्छब्दगोचरम् । स्वतो मुखे मम
 यादमूत्र स्मृतिगोचरम् । वेदार्थश्च मया सर्वो ज्ञातोऽसौ तत्त्वं
 नन्द । ततः पुण्यसक्तं तदस्मरं लोकविश्रुतम् । यज्ञोपक-
 सयं तदुत्तमं त्यक्त्ययम् ।

१६१ अ० २७-२८ श्र

ब्राह्मणं च पुरस्कृत्य ब्राह्मणेन च कीर्तितम् ।
 पुराणं शृणुयान्नित्यं महापापदवानलम् ॥
 पुराणं सर्वतीर्थेषु तीर्थञ्चाधिकमुच्यते ।
 यस्यैकपादश्रवणाद्धरिरेव प्रसीदति ।
 सर्वेषां जगतामेव हरिरालोकहेतवे ।
 तयैवान्त प्रकाशाय पुराणाधयवो हरिः ।
 विचरैदिह भूनेषु पुराणं पावनं परम् ।
 तस्माद्यदि हरैः प्रीतेरुत्पादे धीयते मतिः ।
 श्रोतव्यमनिश पुष्मि पुराणं कृष्णरूपिणः ।
 विष्णुमत्तेन शान्तेन श्रोतव्यमिति दुर्लभम् ।
 पुराणाप्यानममलममलीकरणं परम् ।
 यस्मिन्वेदार्थमाहृत्य हरिणा व्यासरूपिणा ।
 पुराणं निर्मितं विप्र तस्मात्तत्परमो भवेत् ।
 पुराणो निश्चितो धर्मो धर्मश्च केशवः स्वयम् ।
 तस्मान्मृती पुराणे हि ध्रुते विष्णुमवेदिति ।
 तथा गङ्गामुसेरेण नाशयेत्किल्बिषं स्वयम् ।
 केशवो द्रवरूपेण पापात्तारयते महीम् ।
 वैष्णवो विष्णुमजनस्याऽऽकाङ्क्षी यदि धर्तते ।
 गङ्गामुसेकममलममलीकरणं चरेत् ।
 विष्णुमक्तिप्रदा देवी गङ्गा भुवि च गीयते ।
 विष्णुरुपा हि सा गङ्गा लोकनिस्तारकारिणी ।

ब्राह्मणेषु पुराणेषु गङ्गाया गोपु पिप्पले ।

नारायणधियापुम्भिर्मक्ति कार्या ह्यहैतुकी ।

पद्मपुराण आदिखण्डे ६२ अध्याय—५८ ७०

योऽधीते श्रुतिमेवाऽऽदौ समस्यात्तपसा मुने । श्रुतेऽध्यापनात्पुण्य
यदाप्नोति द्विजोत्तम । तदध्यायाच्च जप्याच्च द्विगुण फलमश्नुते ।
जगद्यथा निरालोक जायते शशिभास्करौ । विना तथा पुराण
हि ध्येयमस्मान्महामुने ॥ तपमान सदाह्वानयो धारयति शास्त्रत
सम्योधयति लोकञ्च तस्मात्पूज्यतमो गुरु । सर्वेषाञ्चैव पात्राणा
श्रेष्ठ पात्र पुराणवित् पतनात्प्रायते यस्मात्तस्मात्पात्रमुदाहृतम् ।

धिष्णोरायतने यस्तु कारयेद्धर्म पुस्तक देव्या शम्भोर्गणेशस्य
धर्मस्यच तथा पुन ॥ राजसूयाश्वमेधाभ्या फलमप्राप्नोति मानव ।
इतिहासपुराणाना पुण्य पुस्तकवाचनम् सर्वान्कामानवाप्नोति
सूर्यलोकमिनिति ॥ । सूर्यलोकञ्च भित्वाऽसौ ब्रह्मलोकञ्च गच्छति ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कार्यम्पुस्तकवाचनम् । इतिहासपुराणाना

[पद्मपुराण उत्तर खण्ड]

वैष्णव दक्षिणो बाहु शैव धामो महेशितु ।

उरु भागवतप्रोक्त नामि स्यान्तारदीयकम् ।

मार्कण्डेयञ्च दक्षाद्भिर्चामो ह्याग्नेयमुच्यते ।

भविष्य दक्षिणो जानुर्धिष्णोरेव महात्मन ।

ब्रह्मवैवर्तसम्प्रन्तु धामजानुदाहृत ।

ऐङ्गन्तु गुल्फ दक्ष धाराह धामगुल्फम् ।

स्कान्दं पुराणं लोमानि त्वगस्य धामनं स्मृतम् ।

कौमं पृष्ठं समाख्यातं मात्स्यं मेदः प्रकीर्त्यते ।

मज्जा तु गारुडम्प्रोक्तं ब्रह्माण्डमसि गीयते ।

एवमेवामचट्टिष्णुः पुराणावयवो हरिः ।

[पद्मपुराण आदिम खण्ड]

अथ विष्णोः परैशस्य नानाविग्रहधारिणः ।

एकं पुराणफलकं तच्छृणुष्व द्विजोत्तमाः ।

तत्र ब्रह्मकल्पवृत्तान्तोद्भवं ब्राह्मं हरेर्मस्तकं पद्मकल्पवृत्तान्तो-
द्भवं पद्मं हृदयं, धाराहकल्पवृत्तान्तोद्भवं वैष्णवं दक्षिणबाहुः,
श्वेतकल्पवृत्तान्तोद्भवं शिवपुराणं धामबाहुः, सारम्यतकल्पवृत्ता-
न्तोद्भवं भागवतं धक्ष.स्थलं, बृहत्कल्पवृत्तान्तोद्भवं नास्दीयं नाभिः,
श्वेतधाराहकल्पवृत्तान्तोद्भवं मार्कण्डेयं दक्षिणाट्टिभिः, ईशानकल्प-
वृत्तान्तोद्भवं आग्नेयं धामाग्निः, अघोरकल्पवृत्तान्तोद्भवं भविष्यं
दक्षिणजानुः, रथन्तरकल्पवृत्तान्तोद्भवं ब्रह्मचैवर्तं धामजानुः,
कल्पान्तवृत्तान्तोद्भवं लैङ्गं दक्षिणगुल्फः, मनुकल्पवृत्तान्तोद्भवं
धाराहं धामगुल्फः, तत्पुरुषकल्पवृत्तान्तोद्भवं स्कान्दं हरेः रोमानि,
शिवकल्पानुपद्भिः धामनं शरीरत्वक्, लक्ष्मीकल्पवृत्तान्तोद्भवं
कौमं पृष्ठं, कल्पादी सतकल्पवृत्तान्तोद्भवं मात्स्यं मेदम्, गारुड-
कल्पवृत्तान्तोद्भवं गारुडं दक्षिणं पादाग्रं, भविष्यकल्पानां वृत्तान्तो-
द्भवं ब्रह्माण्डं धामपादाग्रं, एवं सत्त्वरजस्तम आद्यान्मकमष्टादश
पुराणरूपो हरिः पुराणेषु प्रकाशने । तत्र सात्त्विक पुराणे विष्णो
रधिकमाह्वान्यं गजसे प्रकृतिप्रहसूर्याणां तामसेऽग्निशिव-

भैरवादीनां माहात्म्यम् । मिश्रे तु पितृणां माहात्म्यम् । एव-
मष्टादशं मुख्यपुराणसंख्यासमूहश्चतुर्लक्ष एव ।

(इतिपाद्ममात्स्ययोः)

अथ च अष्टादशम्यश्च पृथक् पुराणं यत्प्रदृश्यते । विजानीध्वं
द्विजश्रेष्ठास्तदेतेभ्यो विनिर्गतम् ।

तन्त्रवार्तिके प्रथमाध्यायस्य तृतीय पादे:—

एपेधेतिहासपुराणयोरप्युपदेशवाच्यानां गतिः ।

उपाख्यानानि त्वर्थघादेषु व्याख्यातानि ।

यस्तु पृथिवीविभागकथनं तद्धर्माधर्मसाधनफलोपभोग-
प्रदेशविधेकाय किञ्चिद्दर्शनपूर्वकं किञ्चिद्वेदमूलम् ।

वंशानुकमणमपि-ब्राह्मणक्षत्रियजातिगोत्रज्ञानार्थं
दर्शनस्मरणमूलम् । देशकालपरिमाणमपि लोकज्योतिः-
शास्त्रव्यवहारसिद्ध्यर्थं दर्शनगणितसम्प्रदायानुमान-
पूर्वकम् भायिकथनमपि त्वनादिकालप्रवृत्तयुगस्वभाव-
धर्माधर्मानुष्ठानफलविपाकवैचित्र्यज्ञानद्वारेण वेदमूलम्
अद्भुतविद्यानामपिऋतधर्मपुरुषार्थप्रतिपादनं लोकवेदपूर्वकत्वेन
विधेयत्वम्—

इससे स्पष्ट हो गया कि धर्मशास्त्रों के पढ़े बिना विशाल
भावना का निर्माण असम्भव है । विशाल भावना के बिना शान्ति,
चेष्टा और मुशील की अभिवृद्धि कभी नहीं हुआ करती ।

कुछ विद्वानों की यह धारणा है कि पुराणों में अनेक स्थलों
पर उत्तरवर्ती आचार्यों ने अपने अपने मतों के स्थापन तथा पुष्टि

लिये अनेक प्रक्षिप्त पाठ समाविष्ट कर दिये हैं; परन्तु जहाँ तक इन पुराणोंका पारायण व मनन किया है उससे मेरी तुच्छ व इसी निष्कर्ष पर पहुँची है कि इन अष्टादश पुराणों में कहीं प्रक्षिप्त पाठ का समावेश नहीं किया है। अन्य श्रीमद्भागवत व उपपुराणोंमें चाहे प्रक्षिप्त ग्लोक समाविष्ट कर दिये गये हों तु अष्टादश महापुराणों में महर्षिप्रणीत पुरातन पाठ ही ज्यों त्यों अपरिचर्जित तथा अपरिचिद्धित रूपमें चला आ रहा है में किसी प्रकार की वृद्धि साम्प्रदायिक आचार्यों के द्वारा की गई प्रतीत होती है। प्रत्युत धराद्विपुराण में तो महर्षि-त पूरा पाठ भी नहीं उपलब्ध हो रहा है। इनमें आया हुआ एक शब्द भ्रम सत्य तथा सृष्टि कल्याण भावना से ओत-है। उसमें किसी प्रकार आशंका व सन्देह का अवकाश नहीं ईश्वरीय प्रकृति की मर्यादारूप से इनमें स्थिति है। इनकी कारी न होने के कारण ही आज का मानव मनमाने कर्म व नाना कष्टों का शिकार बना हुआ है, अतः आत्म कल्याण-गर्भी प्रत्येक मानव को इनका मनन करना नितान्त आवश्यक है।

आजकाल विशाल भावनाएँ किन्तु संकुचित होती जा रही हैं इसी बातसे स्पष्ट है कि बालकों के असीम ज्ञान को थोड़े समय के लिये दिये गये प्रश्नपत्रों द्वारा ही परीक्षा कर लेने योग्यता का प्रमाण पत्र दे दिया जाता है। इससे आसन्नहीनता, प्राचीन गुरुशिष्य-परम्परा का अभाव और

और इनकी विशाल ज्ञान राशि पाने पर भी धनान्धकारमें धात्र-फलके नययुधकों का मस्तिष्क मटकता है कि इन्हें केवल सद्गुरु, अशान्ति और कलह की चिनगारी सुलगाने में ही आनन्द आता है।

आज फल हमारे बालकों को जो पुस्तकें पढ़ाई जाती हैं उससे बिकास बिलकुल ही रुक जाता है। आज तो कुछ प्रश्नपत्र पढ़ाकर उनके अपेक्षित उत्तरों से सन्तोष माननेवाला अध्यापक सब शिष्य और उनके अभिभावकगण कृतकृत्य हो जाते हैं, सब एकही ध्येय धनाये रहते हैं; उत्तीर्ण होना। क्या बालक के माता पिता, क्या भाई बहिन क्या अन्य शुभचिन्तक एक ही बात कहते हैं कि हमारा बालक उत्तीर्ण हो।

इसका घुरा परिणाम यहाँ तक देखने में आता है कि नौनिहाल राष्ट्र की भावी उन्नति ये बालक और ये नययुधक अपने जीवन तक की भी बाजी लगा देते हैं। अर्थात् इस पर भी दुर्भाग्य से उत्तीर्ण होने का सुसमाचार न मिला तो लज्जित होकर वह नययुधक आत्महत्या तक कर लेते हैं। ऐसे सुन्दर ज्ञान की प्राप्ति के लिये धुणित उपाय काम में लेते हैं जैसे, नकल करना, परीक्षक को अनाचार का शिफारश घना उससे अनुचित रीति से अड्डा ले लेना। कहां तक कहें यदि कहीं थोड़ा सा भी प्रश्नपत्र कठिन आ जावे तो परीक्षा भवन में हो हल्ला मचा कर उद्दण्डता से प्रश्नपत्र के विरोध में हड़ताल कर देना अनुशासन तोड़ना, और यहांतक कि परीक्षा भवन के अध्यक्ष की हत्यातक भी की गई देखी गई है। ऐसे राष्ट्र की जड़ को खोखला

घनानेवाले दृष्टित तत्त्व इस शिक्षा के अनिवार्य अङ्ग बन चुके हैं ।
यस ऐसे विकास से भगवान् ही रक्षा करे । हमें विकास की अवश्य
आवश्यकता है परन्तु शक्तिहीन करने वाला विकास अनिच्छित है ।

ऊपर निवेदन किया है कि सारा यह दोष आजके विद्यार्थी
का ही नहीं है इसमें उनकी शिक्षा पद्धति का बाह्य और अन्त
रूप घनाने वाली विश्वविद्यालय जैसी संस्थाओं का भी कम
दोष नहीं है । वे सब समय एक ही दृष्टि से काम करने
हैं । किसी प्रकार विश्व-विद्यालय के परीक्षार्थी छात्रों की
संख्या बढ़े । वे यह कमी नहीं सोचते कि जहां पञ्चवर्षीय
योजना के लिये बड़े भारी रूप में जो नदी बाध योज-
नायें पितृ-उत्पादनशक्तिकेन्द्र और अन्नोत्पादनार्थ नहरें बनाई
जा रही हैं उनके पीछे सब को चलाने वाले इस बौद्धिक केन्द्र
मनुष्यरूपी शक्ति का सञ्चालन करने के लिये हमने क्यों उपेक्षा
और अनवधानता कर रखी है ? आज तक इस शिक्षाको भारतीय
रूपरेखा में ढालने का प्रयत्न हुआ अवश्य लेकिन सब ही नकार
पाने में तृती की आवाज ही सिद्ध हुई । आज उत्तीर्ण होने के
लिये प्रयत्न जोंगों से बालू है और संसार यात्रामें प्रवेश करने पर
उस कर्तव्याकर्तव्यशून्य व्यक्ति का ज्ञान उसे सदा भ्रमों से
सीधा करता है ।

इस प्रकार हमें अपने आपको भावी सन्तान की विकाश
शील प्रवृत्ति के लिये सचेष्ट रूपमें प्रयत्न करना चाहिये इसीमें
सब का कल्याण है ।

और इतनी विशाल ज्ञान राशि पाने पर भी अग्रनान्यकारमें धात्र फलके नवयुषकों का मन्त्रिष्क भटवता है कि इन्हें केवल सद्गुरु, अशान्ति और फलद की चिनगारी सुग्गानेमें ही धानन्द आता है।

राज फल हमारे बाल्य की जो पुष्पयें पढ़ाई जाती हैं उससे विफाश बिलकुल ही रह जाता है। आज तो कुछ प्रश्नपत्र पढ़ाकर उनके अपेक्षित उत्तरों से सन्तोष माननेवाग अध्यापक सब शिष्य और उनके अभिभावकगण हतहृत् हो जाते हैं, सब एकही ध्येय घनाये रहते हैं; उत्तीर्ण होना। क्या बाल्य के मात पिता, क्या भाई बहिन क्या अन्य शुभचिन्तक एव ही बात कहते हैं कि हमारा बाल्य उत्तीर्ण हो।

इसका घुरा परिणाम यहा तक देखने में आता है कि नौनिहाल राष्ट्र की भाषी उन्नति ये बाल्य और ये नवयुषक अपने जीवन तक का भी धात्री लगा देते हैं। अर्थात् इस पर न दुर्भाग्य से उत्तीर्ण होने का सुसमाचार न मिला तो लज्जित होकर वह नवयुषक आत्महत्या तक कर लेते हैं। ऐसे सुन्द ज्ञान की प्राप्ति के लिये घृणित उपाय काम में लेते हैं जैसे नफल करना, परीक्षक को अनाचार का शिकार बना उससे अनुचित रीति से अड्ड ले लेना। कहा तक कहें यदि कहीं थोडा सा भी प्रश्नपत्र कठिन आ जावे तो परीक्षा भवन में हो हल मचा कर उद्दण्डता से प्रश्नपत्र के विरोध में हडताल कर देना अनुशासन तोड़ना, और यहातक कि परीक्षा भवन के अध्यक्ष व हत्यातक भी की गई देखी गई हैं। ऐसे राष्ट्र की जड को खोद

घनानेवाले दूषित तत्त्व इस शिक्षा के अनिवार्य अङ्ग बन चुके हैं।
यस ऐसे विकास से भगवान् ही रक्षा करे। हमें विकास की अवश्य
आवश्यकता है परन्तु शक्तिश्रीण करने वाला विकास अनिच्छित है।

ऊपर निवेदन किया है कि सारा यह दोष आजके विद्यार्थी
का ही नहीं है इसमें उनकी शिक्षा पद्धति का बाह्य और अन्त
रूप घनाने वाली विश्वविद्यालय जैसी संस्थाओं का भी कम
दोष नहीं है। वे सब समय एक ही दृष्टि से काम करते
हैं। किसी प्रकार विश्व विद्यालय के परीक्षार्थी छात्रों की
संख्या बढ़े। ये यह कभी नहीं सोचते कि जहाँ पञ्चवर्षीय
योजना के लिये बड़े भारी रूप में जो नवी बाध योज-
नायें विद्युत् उत्पादनशक्तिकेन्द्र और अन्तःउत्पादनार्थ नहरें बनाई
जा रही हैं उनके पीछे सब को चलाने वाले इस धीन्द्रिक केन्द्र
मनुष्यरूपी शक्ति का सञ्चालन करने के लिये हमने क्यों उपेक्षा
और अनवधानता कर रखी है ? आज तक इस शिक्षाको भारतीय
रूपरेखा में ढालने का प्रयत्न हुआ अवश्य लेकिन सब ही नकार
जाने में तूती की आवाज ही सिद्ध हुई। आज उत्तीर्ण होने के
लिये प्रयत्न जोरों से चालू है और ससार यात्रामें प्रवेश करने पर
उस कर्तव्याकर्तव्यशून्य व्यक्ति का ज्ञान उसे सदा थपेड़ों से
सीधा करता है।

इस प्रकार हमें अपने आपको भावी सन्तान की विकाश
शील प्रवृत्ति के लिये सचेष्ट रूपमें प्रयत्न करना चाहिये इसीमें
सब का कल्याण है।

धर्मशास्त्र ग्रन्थों में महर्षियों ने ज्ञान विज्ञान को कूट कूट पर भर दिया है। इन पुण्यश्लोक महर्षियों के लक्ष्य को उन्हीं के समान उदार लोकोपकारितापूर्ण बुद्धिसम्पन्न व्यक्ति ही जान सकते हैं क्योंकि इनका निर्माण ही तप, पूत महर्षियों की कल्याणमयी प्रवृत्ति एवं सद्बिचारपूर्ण भाषनाओं से हुआ है।

आधुनिक लोग सत्यमार्ग यताने वाले शास्त्रों के अध्ययन को एक किनारे छोड़ बड़ीर डिग्रियों के लिये एटी बोटी का पसीना एक कर देने हैं। अपनी विद्वत्ता की कसौटी उन्हीं उपाधियों के प्रमाण पत्रों को ही समझते हैं। परन्तु यह सब शास्त्रीय ज्ञान एवं साहित्य को सङ्कुचित करने में ही अधिक सहायक हुआ है और साथ ही उस सुन्दर ज्ञान की खिल्ली उड़ाने में भी। क्योंकि इन गम्भीर परोक्ष अर्थों से पूर्ण शास्त्रों को सङ्कुचित भाषोंसे देखने से ही अपना पराया किसी का भी हित साधन नहीं हो सकता है। इसी का परिणाम है सृष्टि की अशान्ति। मुझे तो जेद और दुःख तब होता है जब मैं यह सोचता हूँ कि ऐसे महानुभाव श्रुति स्मृति एवं पुराणादि के बिना अपने को सङ्कीर्ण मनोवृत्ति का शिकार बना अपनी उपाधियों से गौरवान्वित होकर हमारी भावी पीढ़ी को किस प्रकार शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आत्मिक एवं सर्वाङ्गीण शिक्षा देकर उन्नत बनाने के लिये शिक्षा के अधिकारी कर्णधारों द्वारा चुने जाते हैं। क्या ये कभी भावी सन्तान को उन्नत शिक्षा दे सकेंगे? यह सब

प्रभु ही साक्षात्प से जानें। मुझे तो किसी प्रकार भी उन भावी सन्तानों का उद्धार इनसे असम्भव सा ही लगता है।

शास्त्र स्पष्ट कहते हैं कि शास्त्रों के बिना जो भी कार्य करता है वह अपना पद अपने से सम्यन्धित सभी का अत्यधिक अहित करता है।

श्रुतिर्हीनाय विप्राय स्मृतिर्हीने तथैव च । दानम्मोजनमन्यश्च दत्त कुलघिनाशनम् ।

अस्तु, सृष्टि में शान्ति स्थापना इनमें निहित भाषों को व्यापक दृष्टि से प्रचार करने से ही हो सकती है। इसका एकमात्र उपाय है यथुश्रुतता, श्रुति स्मृति पुराणादिकी पूरी सङ्गति बिठाना एवं उदार प्राणिहित की भावना से अर्थ का प्रकाश करना।

बुद्धिबुद्धिकराण्याशु धन्यानि च हितानि च । नित्य शास्त्राण्य-
वेक्षेत निगमाञ्चैव चैदिकान् ॥ यथा यथा हि पुरय शास्त्र
समधिगच्छति । तथा तथा विजानाति विज्ञानञ्चास्य रोचते ।
मनुस्मृति अ० ४।१६।२० ।

शास्त्रों की बुद्धिके द्वारा कर्सीटी पर कस कर पूर्ण सङ्गत बर्थ निकालना चाहिये जो सर्व प्राणि हित में पूर्ण सहायक हो क्योंकि इनका एक एक शब्द ईश्वराज्ञा है जिसका स्वार्थमय अभिप्राय मानव की अपूर्णता और अवनति का द्योतक और हमारे लिये सदा ही घातक है।

जो लोग इस ज्ञानमें वञ्चित हैं उनकी बाली डिप्रिया

उपाधिमात्र है। “ज्ञानं भारः क्रियामिना ।” स्वरूपकी उपलब्धि युक्त क्रिया के बिना ज्ञान भार स्वरूप है।

“शास्त्राण्यधीत्यापि भवन्ति मूर्खा यस्तु क्रियावान् पुरुषः स विद्वान्” शास्त्राध्ययन करनेपर भी क्रिया रहित उच्च भाशय से जीवनमें शास्त्र के सिद्धान्तों का आचरण न करने से प्राणिमात्र का उपकार न कर सकने के कारण ऐसे व्यक्ति के सब धन्यों का पठन अपूर्ण ही माना जाता है। आज तो जब परीक्षा पिशाचिनी का जोर बढ़ रहा है तो ग्रन्थका उच्च लक्ष्य से भाशय बिलकुल समझा ही नहीं जाता और “पुस्तकी भवति पण्डितः” होकर अपने को धन्य समझनेमें ही उनके लक्ष्य की पूर्ति हो जाती है। फलतः शास्त्र जीवन शास्त्रबुद्धि और संस्कृति का रूप सब विहृत हो गया है ऐसे लोगोंको शास्त्र का तत्त्व दुरधिगम है।

गुरु प्रसाद, भगवत्कृपा और शास्त्र बुद्धिसे इनका स्याध्याय उदार हृदय और लोकोपकारितापूर्ण भावना द्वारा अध्ययन करने से ही शास्त्र जीवनी प्रचलित हो सकती है। सभी प्राणीमात्र का पूर्ण कल्याण है।

इस लिये सभी से मेरी चिन्मय प्रार्थना है कि शास्त्रों में जो तत्त्व फूट फूटकर भरा है उसे यथार्थ रूपमें जानने का प्रयत्न हो इसी से शान्ति प्राप्त होकर अमरता, सफलता और स्थायिता मिलती है। अतः विशाल हृदय और उच्च भावना से इनका स्याध्याय कर प्राणी मात्र के कल्याण में संलग्न रहें। साथही

यह ध्यान रहे बुद्धि के बिना तत्त्व परिणाम और ज्ञान की वृद्धि नहीं होती एवं ज्ञान की प्राप्ति के बिना मोक्ष असम्भव है। संस्कृत का अक्षर ज्ञान मुझे स्वल्प है न तो मैं स्वयं व्याकरण के व्युत्पत्ति लभ्य शब्द अर्थ का ज्ञाता हूँ, न ही मैंने साहित्य का किसी प्रकार से विशेष अध्ययन किया है परन्तु मेरा मन सदा से ही इधर लगा है। हां, गतदशकों से मैं संस्कृत साहित्य का यत्किञ्चिन् आस्थादन पण्डितों की सहायता से कर पाया हूँ। ज्यों ज्यों मेरा प्रवेश होता गया त्यों त्यों ज्ञानवृद्धि के साथ मेरा प्रेम और आकर्षण इस भौलौकिक साहित्य के प्रति अधिकाधिक अगाध श्रद्धा के साथ बढ़ता गया। मुझे प्रति दिन अमित धन राशि मिलती जाती है। मेरा समय दूसरे व्यवहार के कार्यों में लगा रहनेपर भी अपना मन अहर्निश इनके स्वाध्याय में प्रवृत्त होकर अमित आनन्द लूटने का अभि लाषा करता है। अवश्य ही जीवन में इनका स्वाध्याय स्पृहणीय है।

इसी अगाध श्रद्धा एवं प्रेम का ही प्रत्यक्ष फल यह पुराण परिचयके रूपमें इन पृष्ठोंमें एकत्रित संग्रह थोड़ा बहुत सेवा में प्रस्तुत है। मैं अपने नित्य स्वाध्यायसे जो कुछ इस महान् अगाध समुद्र में से प्राप्त करता हूँ वह सब यथासमय पत्रों द्वारा निवेदन किया जाता ही है।

आशा है, उदार पाठकगण अभिनव, स्वतन्त्रता के चिकसन शील घातावरण में सर्वाधिक शास्त्रमय जीवन बनाकर आदर्श

एवं यथार्थवादी कसौटी पर सिद्धान्तों का निर्धारण कर इन महान् ग्रन्थों में प्रस्तुत ज्ञान का सच्चे अर्थों में प्रचार करेंगे ।

इनमें जो कुछ सुन्दर वन सफा है वह आप उदार सज्जनोंकी महनीय कृपा का फल है और कोई त्रुटिपूर्ण या असुन्दर वस्तु भूल से रह गई हो उसके लिये मैं करबद्ध क्षमा प्रार्थी हूँ । मैं अहर्निश आप सभी महानुभावों के शुभाशीर्वाद का इच्छुक हूँ जिससे प्रभु कृपा द्वारा शक्ति एवं सत्प्रेरणा से कर्तव्य पालन में लगा रहूँ । अपने विनम्र निवेदन का उपसंहार करते हुए प्रभु से हम सब को सद्बुद्धि प्रदान एवं कर्तव्य पालन क्षमता की सतत प्रार्थना है ।

ॐ तत्सद् ब्रह्मार्पणमस्तु ।

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

श्रीब्रह्मपुराण में आये हुए विषयों का अनुक्रम

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

१ नैमिषारण्यवर्णनम्, मुनिगणलोमहर्षणसंवाद- वर्णनम् ।

मगलाचरण के श्लोक, नैमिषारण्य का वर्णन, मुनियों का शुभागमन, नैमिषारण्य में सूतजी का जाना तथा ऋषियों का उनके प्रति पुराण सुनाने के लिये सानुरोध प्रश्न, श्री लोमहर्षण द्वारा पुराणकथा का आरम्भ ।

१ आदिगर्गवर्णनम् ।

५

सृष्टि के सम्यन्ध में चिवरण, जल की उत्पत्ति, ब्रह्माजी का आचिर्भाष, ब्रह्मा द्वारा अण्ड का दो भाग करना, ब्रह्मा से मरीचि आदि ऋषियों की उत्पत्ति । रुद्र आदि का उद्भव, वैवस्वत मनु की उत्पत्ति, आदि सर्ग के सुनने का फल ।

२ स्वायम्भुवमनुवंशवर्णनम्, पृथ्वीउत्पत्तिः, तद्वंशवर्णनञ्च, दक्षवंशवर्णनम् ।

७

स्वायम्भुव मनु के साथ शतरूपा का विवाह, शतरूपासे प्रिय-
वत, उच्चानाद दो पुत्र एवं कामया नामक कन्या के जन्म

पा आख्यान । उत्तानपाद के घश का घर्णन । प्रसङ्ग से पृथुका जन्म । प्रचेताओं की उत्पत्ति प्रचेताओं के मुप से निकली हुई अग्नि से वृक्षों का जलना । उनका वृक्षकन्या के साथ विवाह । वृक्षकन्या में दक्ष की उत्पत्ति एव दक्ष का वशाघर्णन एव इस कथा के सुनने का फल ।

३ देवदानोत्पत्तिवर्णनम् ।

१३

देवताओं की उत्पत्ति कथन । सर्व प्रथम दक्ष की मानसिक सन्तान का घर्णन पुन मैथुन धर्म से असिक्ती नामक पत्नी में हर्यश्वों का जन्म । पिता की आज्ञा से घश बढ़ाने के लिये इच्छुक हर्यश्वों को नारदजी का उपदेश और उनका घन में जाना । फिर शयलाश्व नाम पुत्रों की उत्पत्ति, उनका भी नारद जो के उपदेश से पूर्यवत् घन में जाना । शयलाश्व को नष्ट जान कर दक्ष ने फिर ६० कन्याओं का उत्पत्ति क उनका विवाह एव उनका सन्तानों का घर्णन । महर्षि की उत्पत्ति ।

भक्तृत्वा पादयो शौच दिति शयनमाविशत् ।

निद्रा चाहारयागस तस्या कुक्षिं प्रविश्य ॥

वज्रपाणिस्ततो गर्भं सप्तधा त न्यवृन्तयत् ।

स पाट्यमानो गर्भाऽथ घञ्जेण प्रचरोदह ॥

मा रोदीरिति त शक्र पुन पुनरयाव्रवीत् ।

सोऽमवत् सप्तधा गर्भं स्तमिन्द्रो रुषित पुन ॥

एकैव सप्तधा चक्रे घञ्जेणैवारिकर्षण ।

मरुतो नाम ते देवा यमृषु द्विजसत्तमाः ॥

भूत सर्ग के सुनने का फल ।

४ पृथुमारभ्य सर्वदेवदानवादीनां राज्याभिषेकवर्णनम्
पृथुचरित्रवर्णनम्, पृथुपृथ्वीसंवादवर्णनम् २५

पितामह द्वारा उन-उन स्थलों पर किये गये देव दानवों का राज्याभिषेकवर्णन ।

पृथुचरित्र का आरम्भ । वेन का चरित्र । वेन के दुश्चरित्रों को देखकर ऋषियों द्वारा शाप देना । ऋषियों के शाप से मरे हुये वेन की यादु के मथन से पृथु का जन्म, पृथु का राज्याभिषेक, पृथु के राज्यकी स्थितिका वर्णन, सृत, मागध एवं यन्दी जन द्वारा पृथु की स्तुति ।

आपस्तम्बस्मिरे तस्य समुद्रमभियास्यतः ।

पर्यताश्च द्दुर्माणं भवजमङ्गक्ष नाभवत् ॥

अरुणपत्न्या पृथिवी सिध्यन्त्यन्नानि चिन्तनात् ।

सर्वकामदुघा गावः पुटके पुटके मधु ।

पृथु का पृथ्वी पर शासन ।

५ पृथ्वीदोहनवर्णनम् ३५

पृथु का पृथ्वी के दोहने का वर्णन ।

तत उत्सारयामास शैलान् शतसहस्रशः ।

धनुष्कोट्या तदा घैर्यस्तेन शैला विघर्दिता ॥

नहि पूर्व विसर्गे वै विपमे पृथिवीतले ।

का आख्यान । उत्तानपाद के वंश का वर्णन । प्रसङ्ग से पृथुका जन्म । प्रचेताओं की उत्पत्ति प्रचेताओं के मुख से निकली हुई अग्नि से वृक्षों का जलना । उनका वृक्षकन्या के साथ विवाह । वृक्षकन्या में दक्ष की उत्पत्ति एवं दक्ष का वंशवर्णन एवं इस कथा के सुनने का फल ।

३ देवदानवोत्पत्तिवर्णनम् ।

१३

देवताओं की उत्पत्ति कथन । सर्व प्रथम दक्ष की मानसिक सन्तान का वर्णन पुनः मैथुन धर्म से असिक्ती नामक पत्नी में हर्यश्वो का जन्म । पिता की आज्ञा से वंश बढ़ाने के लिये इच्छुक हर्यश्वों को नारदजी का उपदेश और उनका घन में जाना । फिर शबलाश्व नाम पुत्रों की उत्पत्ति, उनका भी नारद जी के उपदेश से पूर्यवत् घन में जाना । शबलाश्वों को नष्ट जान कर दक्ष ने फिर ६० कन्याओं की उत्पत्ति की उनका विवाह एवं उनको सन्तानों का वर्णन । मरुद्गण की उत्पत्ति ।

अट्टवा पादयो. शौचं दिति शयनमाविशत् ।

निद्रा चादारयामास तस्या कुक्षिं प्रविश्य सः ॥

घञ्जपाणिस्ततो गर्भं सप्तधा त न्यवृन्तयत् ।

स पाटयमानो गर्भाऽथ घञ्जेण प्ररुददद् ॥

मा रोदीरिति त शक्र. पुन पुनरथाव्रवीत् ।

सोऽमघत् सप्तधा गर्भं स्तमिन्द्रो रुषितः पुनः ॥

एकैक सप्तधा चक्रे घञ्जेणैवारिकर्षणः ।'

मरुतो नाम ते देवा यमूषु द्विजसत्तमाः ॥

भूत सर्ग के सुनने का फल ।

४ पृथुमारभ्य सर्वदेवदानवादीनां राज्याभिषेकवर्णनम्

पृथुचरित्रवर्णनम्, पृथुपृथ्वीसंवादवर्णनम् २५

पितामह द्वारा उन-उन स्थलों पर किये गये देव दानवों का राज्याभिषेकवर्णन ।

पृथुचरित का आरम्भ । घेन का चरित । घेन के दुश्चरित्रों को देखकर ऋषियों द्वारा शाप देना । ऋषियों के शाप से मरे हुये घेन की बाहु के मथन से पृथु का जन्म, पृथु का राज्याभिषेक, पृथु के राज्यकी स्थितिका वर्णन, सत्, मागध एवं यन्दी जन द्वारा पृथु की स्तुति ।

आपस्तस्तम्भिरै तस्य समुद्रमभियास्यत ।

पर्यताश्च ददुर्मागं ध्वजमङ्गश्च नामवत् ॥

अकृष्टपत्न्या पृथिवी सिध्यन्त्यत्रानि चिन्तनात् ।

सर्वकामदुघा गाव पुटके पुटके मधु ।

पृथु का पृथ्वी पर शासन ।

४ पृथ्वीदोहनवर्णनम्

३५

पृथु का पृथ्वी के दोहने का वर्णन ।

तत उत्सारयामास शैलान् शतसहस्रश ।

धनुष्कोट्या तदा वैन्यस्तेन शैला विधर्दिता ॥

नहि पूर्व विसर्गे वै विपमे पृथिवीतले ।

सविभाग पुराणा वा ग्रामाणा धामयत्तदा ॥

॥ शस्यानि न मोरह्य न वृषिर्न घणिक् पथ ।

नैव सत्यानृतं चासीन्न लोमो न च मत्सर ॥

यैवस्थतेऽन्तरे तस्मिन् साम्प्रत समुपस्थिते ।

यैव्यात्प्रभृति वै विप्रा सर्वस्यैतस्य सम्भव ॥

यत्र यत्र सम त्वस्या भूमेरासीत्तदा द्विजा ।

तत्र तत्र प्रजा सर्वा विद्यास समरोचयन् ॥

धाहार कलमूलानि प्रजानामभयत्तदा ।

वृच्छेण महता युक्त इत्येवमनुशुभ्रम् ॥

स कल्पयित्वा घत्स तु मनु स्वायम्भुव प्रभुम् ।

स्वपाणौ पुरुषय्याघ्रो दुदोह पृथिवी तत ॥

शस्य जातानि सर्वाणि पृथुर्वैव्य प्रतापवान् ।

तेनान्नेन प्रजा सर्वा वर्तन्तेऽद्यापि सर्वश ॥

दोहने मे घत्स, पात्र, दुग्ध और दोहनेवालों का वर्णन ।

ऋषयश्च तदा देवा पितरोऽथ सरीसृपा । ६८

दैत्या यक्षा पुण्यजना गन्धर्वा पर्वता नगा ॥

एते पुरा द्विजश्रेष्ठा दुदुर्ध्वरणी किल ।

क्षीर घत्सश्च पात्रञ्च तेषा दोग्धा पृथक् पृथक् ॥

ऋषीणामभयत्सोमो घत्सो दोग्धा बृहस्पति ।

क्षीर तेषा तपो ब्रह्म पात्र छन्दासि भो द्विजा ॥

देवाना फाञ्चन पात्र घत्सस्तेषा शतक्रतु ।

क्षीरमोजस्करञ्चैव दोग्धा च भगवान् रवि ।

पितृणां रजतं पात्रं यमोवत्सः प्रतापवान् ।

अन्तकश्चाभवद् दोग्धा क्षीरं तेषां सुधा स्मृता ॥

नागानां तक्षकोवत्सः पात्रं चालाबुसंज्ञकम् ।

दोग्धा त्वैरावतो नागस्तेषां क्षीरं चिप्यं स्मृतम् ॥

असुराणां मधुर्दोग्धा क्षीरं मायामयं स्मृतम् ।

धिरोचनस्तु घत्सोऽमूदायसं पात्रमेव च ॥

यक्षाणामामपात्रं तु घत्सो वैश्रवणः प्रभुः ।

दोग्धा रजतनामस्तु क्षीरान्तर्धानमेव च ॥

सुमाली राक्षसेन्द्राणां घत्सं क्षीरञ्च शोणितम् ।

दोग्धा रजतं नामस्तु कपालं पात्रमेव च ॥

गन्धर्वाणां चित्ररथो घत्स पात्रं च पट्टजम् ।

दोग्धा च सुरचिः क्षीरं तेषां गन्धः शुचिः स्मृतः ॥

शैलं पात्रं पर्वतानां क्षीरं रत्नोपधीस्तथा ।

घत्सस्तु हिमवानासीद् दोग्धा मेरुर्महागिरिः ॥

प्लक्षो घत्सस्तु वृक्षाणां दोग्धा शालस्तु पुष्पितः ।

पालाशपात्रं क्षीरञ्च छिन्नदग्धप्ररोहणम् ॥

सैयं धात्री विधात्री च पावनी च वसुन्धरा ।

चराचरस्य सर्वस्य प्रतिष्ठा योनिरेव च ॥

सर्वकामदुग्धा दोग्धो सर्वशस्यप्ररोहिणी ।

आसीदियं समुद्रान्ता मेदिनी परिचिन्नुता ।

मधुकैटमयोः कृत्स्ना मेदसा सममिप्लुता ।

तेनेयं मेदिनी देवी उच्यते ब्रह्मवादिभिः ॥

५ मन्वन्तरवर्णनम् ३७

मन्वन्तरो में देवर्षि इन्द्रादिकों का निरूपण । महाप्रलय एवं अल्प प्रलय का वर्णन ।

६ आदित्योत्पत्तिवर्णनम् ४४

आदित्य के पुत्र एवं कन्या का वर्णन, छाया एवं संज्ञा का संवाद और उनका चरित्र वर्णन । विवस्वान् (सूर्य) एवं यम का संवाद । छाया का घोड़ी रूप धारण करना, सूर्य का अश्व रूप से छाया के साथ संगम । देववैद्य अश्विनी-कुमारों की उत्पत्ति । संक्षेप से सूर्य पुत्र यमुना, शनैश्चर सार्वर्णि का वर्णन, देव सृष्टि के सुनने का माहात्म्य ।

७ सूर्यवंशवर्णनम्, इलोपाख्यानवर्णनम्, कुवल्या-

श्वचरित्रवर्णनम्, मत्स्यव्रतचरित्रवर्णनञ्च ४६

सूर्य वंशमें इलाको उत्पत्ति इला एवं मैत्रावरुण का संवाद । इलाका युधके साथ समागम । सुयुष्मादिकों का जन्म उनका वंश वर्णन, इक्ष्वाकु आदि मनु पुत्रों का वंश वर्णन । कुश-स्थलीका निर्माण । बलदेव और देवतीका विवाह । कुवल्याश्वके चरित्रका वर्णन । पिताके द्वारा कुवल्याश्वका चरित्र वर्णन । पिता के द्वारा कुवल्याश्व का राज्याभिषेक एवं कुवल्याश्वके घरमें उत्तङ्क मुनिका आगमन और उनकेद्वारा धुन्धु राक्षस के चरित्रका वर्णन । पिताकी आज्ञासे कुवल्याश्व का उत्तङ्क के साथ धुन्धु राक्षस को मारने के लिये जाना । धुन्धु राक्षस

का वध । धुन्धुमार को उसङ्क का वरदान । धुन्धुमार के वंशमें होने वाले राजाओं का संक्षेप में चरित्र वर्णन । सत्यव्रत राजाका चरित्र वर्णन एवं गालव चरित्र कथन ।

समा द्वादश मो विप्रास्तेनाधर्मेण वै तदा ।
 दासस्तु तस्य विषये विश्वामित्रो महातपाः ॥
 सन्यस्य सागरास्तेतु चकार विपुलं तपः ।
 तस्य पत्नी गले बद्ध्वा मध्यमं पुत्रमौरसम् ॥
 शेषस्य भरणायां व्यक्तीनाद् गौगते न वै ।
 तं च धत्तं गले दृष्ट्वा विक्रमार्थं नृपात्मजः ॥
 महर्षिपुत्रं धर्मात्मा मोक्षयामास मो द्विजाः ।
 सत्यव्रतो महाबाहुर्मरणं तस्य चाकरोत् ॥
 विश्वामित्रस्य तुष्ट्यर्थमनुकम्पार्थमेव च ।
 सोऽभवद्गालवोनाम गलेबन्धान्महातपाः ॥
 महर्षिः कौशिको धीमांस्तेन धीरेण मोक्षितः ।

८ सत्यव्रतचरित्रवर्णनम्, मगरोपाख्यानवर्णनम्, सगरवंश-
 वर्णनम् ६०

सत्यव्रतका त्रिशंकु नाम प्राप्ति करना, सशरीर त्रिशंकु का स्वर्ग जाना । हरिश्चन्द्र का जन्म कथन ।

बद्धं शकानां शिरसो मुण्डयित्वा व्यसर्जयत् ।
 यवनानां शिरः सर्वं काम्बोजानां तथैव च ॥
 पारदा मुक्तकेशाश्च दत्त्वाः श्मश्रुधारिणः ।

नि स्याध्यायघण्टाकारा वृणास्तेन महात्मना ॥
 शका यघनकाश्वोजा पारदाश्च द्विजोत्तमा ।
 कोणिसर्पा माहिरका दर्पाश्चोला सकेरलाः ॥

राजा सगर का अश्वमेध यज्ञ करना । घोड़े को खोजने के लिये पृथ्वी को खोदते हुये साठ हजार सगर के पुत्रों को कपिल मुनिका शाप । अवशिष्ट चार पुत्रोंको कपिलजी का परदान । साठ हजार पुत्रों का जन्मकथन ।

घृतपूर्णेषु कुम्भेषु तान् गर्मान्निदधे तत ।
 धात्रीक्षैकैकश प्रादात्तावती पोषणे नृप ॥
 ततो दशसु मासेषु समुत्तस्थुर्यथा क्रमम् ।
 कुमारास्ते यथाकाल सगरप्रीतिषर्द्धना ॥
 पष्टि पुत्र सहस्राणि तस्यैवमभवन् द्विजा ।

भगीरथ की उत्पत्ति गंगाका भागीरथी नाम प्राप्त करना ।

६ सोमोत्पत्तिर्णनम्

७०

अत्रि ऋषि का तप करना एवं अत्रि के नेत्रों द्वारा दश तरह की सृष्टि का वर्णन । चन्द्र की उत्पत्ति । चन्द्र का बीज और औषधियोंका स्वामी बनना एवं राजसूय यज्ञारंभ । चन्द्र द्वारा बृहस्पतिजी की स्त्री तारा का हरण उसके निमित्त देव दानवों का युद्ध । बृहस्पति का तारा की प्राप्ति । गर्भ त्याग के लिये तारा के प्रति बृहस्पति का क्रोधयुक्त घचन कहना । इषीकास्तम्भ में तारा द्वारा गर्भ त्याग एवं बुधका पादुर्भाव ।

१० सोमवंशवर्णनम्

७३

सोम पुत्र बुध के अंश से पुरूरवा की उत्पत्ति । पुरूरवा के पुत्र का आख्यान वर्णन । गाधिराजका जन्म । गाधि कन्या सतीका ऋचीक ऋषिके साथ विवाह । एक समय सत्यवती एवं उसकी माता ने पुत्र के लिये ऋचीक से प्रार्थना की । तदनन्तर ऋचीक ने दोनों के लिये दो चरुओं का निर्माण किया पुनः सत्यवती ने माता को अपना चरु दिया एवं माता का आप भक्षण कर गई इससे उलट-पलट सन्तानों का जन्म । सत्यवती के प्रति ऋचीक का धरदान । जमदग्नि की उत्पत्ति । रैणुका एवं जमदग्नि का विवाह । परशुराम की उत्पत्ति । विश्वामित्र का जन्म एवं तप आदि का वर्णन ।

११ सोमवंशवर्णनमायुवंशवर्णनञ्च

८०

आयु के पांच पुत्रों की उत्पत्ति । रजिका चरित्र वर्णन । रजि से ५०० सौ पुत्रों की उत्पत्तिकथन । देव दानवों का युद्ध । दैत्यों को जीतने के लिये देवताओं द्वारा रजि की प्रार्थना करना । रजि द्वारा इन्द्रपद की मांग करना तदनन्तर रजि ने दैत्यों को हरा दिया पुनः रजिको इन्द्र पद की प्राप्ति । रजि और इन्द्र का प्रेमालाप । रजि के पुत्रों द्वारा इन्द्रपद का हरण करना एवं इन्द्र द्वारा उनका पथ । इन्द्र को अपने पद की प्राप्ति । राजा अनेता का

सन्तान का घर्णन । धनु नाम के राजा से धन्यन्तरि का जन्म तथा भरद्वाज से आयुर्वेद की प्राप्ति । आयुर्वेद के आठ भाग करके अपने शिष्यों को वितरण करना । काशी को निकुम्भ का शापदान तथा शाप के अन्त में अलर्क द्वारा पुनः स्थापना करना ।

१२ सोमवंशघर्णने ययातिचरित्रवर्णनम् ८६
नहुष से ययाति भादि पुत्रों का जन्म । ययाति के वंश का घर्णन । ययाति से पञ्च पुत्रों की उत्पत्ति । "मउजरां गृहाण" मेरी वृद्धावस्था को ग्रहण करो इस प्रकार यदु के प्रति ययाति की आज्ञा । जरा नहीं ग्रहण करने वाले यदु को ययातिका शाप । पुरुसे ययातिको युवावस्था का दान और भोगनेके बाद ययातिको ज्ञान ।

न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ।

हृषिपा रुष्णचर्मैव भूयष्वामिवर्द्धते ॥

यत्पृथिव्यां प्रीद्वियं हिरण्यं पशवःस्त्रियः ।

नाल मेकस्य तत्सर्वं मिति कृत्वा न मुह्यति ॥

१३ पुरुवंशघर्णनम् । ६२

पुरुवंश का घर्णन । पुरुवंश के अन्तर्गत यंगवंशकथन । दुष्यन्त का जन्म । दुष्यन्त से शकुन्तला नामक पत्नी में भरत की उत्पत्ति । "भरत प्रभृति वंशजातानां पुरुषानां मारता इति संज्ञा" । जह्नु के द्वारा गङ्गाजी को शाप । कुरु से निर्मित कुरुक्षेत्र का घर्णन । सोम वंश में प्रसिद्ध शान्तनु

आदि जनमेजय तक राजाओं का वर्णन। पुरु वंश की समाप्ति। कार्तवीर्यार्जुन का वर्णन कार्तवीर्य को आपव मुनि का शाप।

१४ यदुपुत्रक्रोष्टुवंशवर्णनम् ११२

यदु के पुत्र क्रोष्टु के वंशका वर्णन। वसुदेव का जन्म। वसुदेव की चौदह पत्नियों की नामावलि। सशुप में कृष्ण जन्मवर्णन। कालयवन के भय से कृष्ण सहित यादवों का (पलायन) भाग जाना।

मानुष्यां गर्गमार्याया नियोगाच्छूलपाणिनः ।

स कालयवनो नाम्ना जने राजा महायलः ॥

१५ वृष्णिवंशवर्णनम् ११७

चमन्कार युक्त राजा ज्यामघ का चरित्र वर्णन। वज्र ए ? देवावृध की महिमाका वर्णन। देवकके साथ कन्याओं का उत्पन्न होना एवं कंस का जन्म।

१६ सत्राजिद्रुपाग्न्यानवर्णनम् । स्यमन्तक्रोपाग्न्यानम् १२४

सत्राजिन् के चरित्र का वर्णन। स्यमन्तक मणि का आख्यान। कृष्ण का जाम्बवती के साथ विवाह। ऋक्षराज जाम्बवान् से स्यमन्तक मणि का लाना। कृष्ण और सत्यभामा का विवाह वर्णन।

१७ स्यमन्तक्रोपाग्न्यानवर्णनम् १२६

स्यमन्तरु के लिये शतधन्वा के द्वारा सत्राजिन् की मृत्यु।

अक्रूर के पास स्यमन्तक मणि का मिलना ।

१८ भुवनकोशद्वीपवर्णनम्

१३४

मुनियों का लोमहर्षण के साथ सवाद । भूगोल का वर्णन ।
सप्त द्वीप का वर्णन ।

एते द्वीपा समुद्रेस्तु सप्तसप्तमिरावृता ।

लवणेशुसुरासर्विद्धिदुग्धजलै समम् ॥

जम्बू द्वीप का वर्णन एव मेरु पर्वत का वर्णन । भरतादि-
खण्डों का वर्णन ।

अनीलोत्तरमग्धोर्धि समभ्येति द्विजोत्तमा ।

आनीलनिपधायामौ माल्यवदुगन्धमादनौ ॥

तयोर्मध्यगती मेरु कर्णिकाकारसस्थित ।

भारता वेतुमालाश्च भद्राश्वा कुरवस्तथा ॥

पत्राणि लोकशैलाऽप्य मर्यादा शैलवाह्यत ।

जठरो देवकूटश्च मर्यादापर्वतायुभौ ॥

तौ दक्षिणोत्तरायामाघानीलनिपधायतौ ।

गन्धमादनकैलासी पूर्व पश्चात् तावुभौ ॥

अशीति ॥ राजनायामाघर्णधान्तर्व्यवस्थितौ ।

निपध पारियात्रश्च मर्यादापर्वतायुभौ ॥

तौ दक्षिणोत्तरायामाघानीलनिपधायतौ ।

मेरो पश्चिम दिग्भागे यथा पूर्वो तथा स्थितौ ॥

मर्यादा पर्वतों का वर्णन

१६ जम्बूद्वीपवर्णनम्

१४०

भारतवर्षका वर्णन । नदी एव उपनदियोंकी नामोत्पत्तिका कथन । जम्बूद्वीप की प्रशंसा वर्णन ।

गायन्तिदेवा किलगीतकानि धन्यास्तु ये भारतभूमिभागे ।
स्वर्गापधर्गास्पदहेतुभूने भवन्ति भूय पुरुषा मनुष्या ॥
कर्माण्यसकृत्पिततत्फलानि सन्यस्यधिष्णो परमात्मरूपे ।
अचाप्यता कर्म महीमनन्ते तस्मिँल्लयं ये त्वमला प्रयान्ति ॥
जानीम नो तत्तु धय धिलीने स्वर्गप्रदे कर्मणि देहबन्धम् ।
प्राप्स्यन्तिधन्या खलु ते मनुष्या ये भारतेनेन्द्रियचिप्रहीना ॥

२० जम्बूद्वीपवर्णनम्, समुद्रद्वीपपरिमाणवर्णनञ्च १४३

जम्बूद्वीपका वर्णन । प्लक्षद्वीपका वर्णन तथा वहा पर रहने वाले मनुष्यों की आयु का प्रमाण । शात्मलद्वीप, कुशद्वीप, द्रौञ्चद्वीप, शाकद्वीप, पुष्करद्वीप और लोका लोक पर्यंत का वर्णन ।

२१ पातालप्रमाणवर्णनम् ।

१४२

पातालादि सप्तलोकों का वर्णन तथा अनन्त का पराक्रम वर्णन ।

२२ नरकवर्णनम् ।

१४५

रौरवादि नरकों की नामावलि । पापों का वर्णन । पाप से नरक प्राप्ति ।

याचन्तो जन्तव म्यर्गे तावन्तो नरकाकस ।

पापट्टु याति नरकं प्रायश्चित्तपराट्मुग्य ॥

पापी पुरुषो के पापों को नाश करने के लिये हरि स्मरण ही प्रायश्चित्त बताया है ।

कृते पापेऽनुतापो वै यस्य पुनः प्रजायते ।
 प्रायश्चित्तन्तु तस्यैक हरिसंस्मरणम्परम् ॥
 प्रातर्निशि तथा सन्ध्या मध्याह्नादिषु सस्मरन् ।
 नारायणमवाप्नोति सद्यः पापक्षयाग्नरः ॥
 विष्णुसंस्मरणात् क्षीणसमस्तबलेशसञ्चयः ।
 मुक्तिं प्रयाति भो विप्रा विष्णोस्तस्यानुकीर्तनात् ॥
 घासुदेवे मनोयस्य जपहोमाचनाविषु ।
 तस्यान्तरायो विप्रेन्द्रा देवेन्द्रत्वादिक फलम् ॥
 ष माकपृष्ठगमन पुनरावृत्तिलक्षणम् ।
 क जपो घासुदेवेति मुक्तियोजनमुत्तमम् ॥
 तस्मादहर्निश विष्णु सस्मरन् पुरुषो द्विजः ।
 न याति नरकशुद्धः सक्षीणाखिलपातकः ॥
 मनः प्रीतिकरो स्वर्गो नरकस्तद्विपर्ययः ।
 नरकस्पर्गसङ्गो वै पापपुण्ये द्विजोत्तमाः ॥
 घस्त्येकमेव दुःखाय सुखायेष्वोदयाय च ।
 कोपाय च यतस्तस्माद्वस्तु दुःखात्मकं पुरुषः ॥
 तदेव प्रीतये भूया पुनर्दुःखाय जायते ।
 तदेव कोपाय यतः प्रसादाय च जायते ॥
 तस्माद्दुःखात्मकं नास्ति न च विश्वसुखात्मकम् ।
 मनसः परिणामोऽयं सुखदुःखादिलक्षणः ॥

ज्ञानमेव परं ब्रह्म ज्ञानं यन्धाय चेप्यते ।

ज्ञानात्मकमिदं विश्वं न ज्ञानाद्विद्यते परम् ॥

२३ भूर्भुवः स्वरादिलोकवर्णनम् ।

१६०

आकाश और पृथ्वी का वर्णन । सौरादि मण्डलों का तथा भूर्भुवादि सप्तलोकों का प्रमाण वर्णन । महदादि की उत्पत्तिका वर्णन ।

२४ ध्रुवमंस्थितिनिरूपणम् ।

१६५

शिशुमार चक्रका वर्णन ध्रुवस्थिति का वर्णन ।

वृष्ट्या धृतमिदं सर्वं जगत्स्थावरजङ्गमम् ।

सापि निष्पद्यते वृष्टि सचित्रा मुनिसत्तमा ॥

२५ सर्वतीर्थमाहात्म्यवर्णनम् ।

१६७

शरीर तीर्थ का वर्णन जैसे—

यस्य हस्तौ च पादौ च मनश्चैव सुसंयतम् ।

विद्या तपश्च कीर्तिश्च स तीर्थं फलमश्नुते ॥

मनो विशुद्धं पुरुषस्य तीर्थं पाचां तथा चेन्द्रियनिग्रहश्च ।

एतानि तीर्थानि शरीरजानि म्यर्गस्य मार्गं प्रतियोधयन्ति ॥

चित्तमन्तर्गतं दुष्टं तीर्थस्नानेन शुद्ध्यति ।

शतशोऽपि जलैर्घातं सुरामाण्डमिवाशुचि ॥

जितेन्द्रिय पुरुष की प्रशंसा वर्णन । संक्षेप से तीर्थों का नामावली ।

प्रथमं पुष्करं तीर्थं नैमिषारण्यमेव च ।

प्रयाग च प्रवक्ष्यामि धर्मारण्यं द्विजोत्तमाः ॥

लोहाकुलं सकेदारं मन्दरारण्यमेव च ।

शाकम्भरी देवतीर्थं सुवर्णाक्षं कलिहृदम् ।

तीर्थों के माहात्म्य पढ़ने का फलवर्णन ।

२६ स्वयम्भूव्रह्मर्षिसंवादवर्णनम् । १७६

वेद व्यासजी का मुनियों का संवाद । ब्रह्माजी के प्रति मोक्ष के विषय में मुनियों का प्रश्न वर्णन ।

२७ भारतवर्षवर्णनम् । १८०

भरत खण्ड की प्रशंसा । भरत खण्ड में होने वाले पर्वत और नदियों का वर्णन और वहाँ पर होने वाले नाना देशों का वर्णन । भरत खण्ड के माहात्म्य का पठन एवं श्रवण का फल ।

२८ कोणादित्यमाहात्म्यवर्णनम् । १८७

ओण्ड्र (उड़ीसा) का वर्णन तथा वहाँ पर रहनेवाले ब्राह्मणों की प्रशंसा । कोणादित्य नामक सूर्य की महिमा का वर्णन । सूर्य की पूजा विधि का वर्णन । मदनभञ्जिका नामक यात्रा की प्रशंसा । रामेश्वर नामक शिव लिंग की महिमा का वर्णन ।

२९ सूर्यपूजावर्णनम् । १९४

सूर्य के ध्यान, पूजा और भक्ति के माहात्म्य का वर्णन । "माघे च सित सप्तम्यां" माघ मास में सप्तमी के दिन सूर्य

की आराधना से विशेष फलप्राप्ति का वर्णन ।

३० आदित्यमाहात्म्यवर्णनम् ।

२००

सम्पूर्ण जगत् की उत्पत्ति सूर्यसे ही है ऐसा वर्णन आया है।
इन्द्र, धाता आदि बारह सूर्यों से शत्रुनाश एवं त्रिविध प्रजा
की उत्पत्ति । आदित्याख्यान का फलकथन ।

३१ आदित्य-नाममाहात्म्यवर्णनम् ।

२०२

त्रिलोकी का मूल एवं परम देव सूर्य ही है ऐसा बताया है ।

अग्नी प्रान्तादुत्तिः सम्यग् आदित्यमुपतिष्ठते ।

आदित्याज्जायते घृष्टिर्बृष्टेरन्नं ततः प्रजा ॥

सूर्यात्प्रसूयते सर्वं तत्र च न प्रलीयते ।

भाषामार्वा हि लोकानामादित्याग्निस्सुता पुरा ॥

आदित्य के सामान्यतः द्वादशनामों का वर्णन । विष्णु आदि
बारह आदित्यों का क्षेत्र आदि द्वादश महिनों में तपन कथन
अर्थात् कौनसा आदित्य कितनी किरणों से तपता है इसका
वर्णन आया है । सूर्यके विकर्षणादि २१ नामों का वर्णन
एवं फल कथन; इसका पाठ शरीर आरोग्य, धन और
यशको बढ़ानेवाला है ।

३२ मार्तण्डजन्ममाहात्म्यवर्णनम् ।

२१३

दैत्यों से पीड़ित देवताओं के दुःख नाश के लिये अदिति
द्वारा सूर्य की आराधना एवं स्तुति । अदिति को सूर्य
का दर्शन । अदिति की प्रार्थना से सूर्य ने प्रसन्न होकर

“घरं वृष्णीष्व” (घर मांगो) ऐसा कहा । तब अदिति ने “मेरे पुत्रों को यज्ञभागी बनाओ ।” मैं तुम्हारे जन्म लेकर तुम्हारे शत्रुओं का नाश करूँगा ऐसा कहते हुए सूर्य का भलक्षित होना । देवमाता अदिति के गर्भमें सूर्यकी स्थिति । कृच्छ्र एवं चान्द्रायणादि व्रतों से गर्भ धारण करती हुई अदिति को कश्यपजी ने कहा “गर्भाण्डं मारयसि किं” अर्थात् इतने क्लिष्ट व्रतादिकों से गर्भ को क्यों नष्ट करती हो । तदनन्तर पति के वचनों से क्रोधित अदिति का गर्भ त्याग । गर्भाण्ड से प्रकट हुए आदित्य की कलाप (कश्यप) के द्वारा स्तुति । यह मार्तण्ड नामक तुम्हारा पुत्र होगा इस प्रकार आकाशवाणी हुई । आकाशवाणी का वचन सुन कर देवताओं का आगमन । मार्तण्ड की सहायता से देवताओं का दैत्यों के साथ युद्ध । युद्ध में दैत्यों की पराजय । प्रसन्न हुए देवताओं द्वारा सूर्यकी स्तुति । सूर्य का संज्ञा के साथ विवाह । सूर्य की सन्तानों का वर्णन । संज्ञा और छाया का संवाद । संज्ञा का पिता के घर जाना । तदनन्तर छाया की सन्तानों का वर्णन । छाया का संज्ञा की सन्तानों के साथ विषम भाव—

पदा तज्जयसे यस्मात्पितुर्भार्या गरीयसीम् ।

तस्मात्तयैष धरणः पतिप्यति न संशयः ॥

यमस्तु तेन शम्भेन भृशं पीडितमानसः ।

भनुना सह धर्मात्मा पित्रे सधं न्यवेदयत् ॥

चथा और संज्ञा के सवाद में सूर्य चरित्र वर्णन । देवगुप्त
सूर्यस्तुति । सूर्य के तेज का शान्ति (शमन) ।

मार्तण्डमाहात्म्यवर्णनम्

२२४

अग्निप्रकार से विमृष्ट ब्रह्मादि देवों द्वारा सूर्य का स्तुति ।

नमो नम कारणकारणाय नमो नम पापविमोचनाय ।

नमो नमन्ने दितिजार्जनाय नमो नमो रोगविनाशनाय ॥

नमो नम सर्ववरप्रदाय नमो नम सर्वसुखप्रदाय ।

नमो नम सर्वधनप्रदाय नमो नम सर्वमतिप्रदाय ॥

देवताओं को सूर्यदेव का धरदान । रवि के १०८ नामों का

माहात्म्य (ॐ सूर्योऽर्यमा इत्यादि से मंत्रेय कहणान्वित

इत्यन्त) और उसका फल ।

रुद्रारयानवर्णनम्

२३०

रुद्र की महिमा का वर्णन । मक्षेप से दक्षकथा । सती

आदि दक्ष पुत्रियों का यमोत्सव देखने के लिये पिता के घर

जाना । दक्ष और सती का सवाद । क्रोधयुक्त सती का

योगाग्नि से शरीर टाह । शकर और दक्ष का परस्पर शाप

दान । ब्रह्मा और मुनियों का सवाद ।

पार्वत्युपाख्यानवर्णनम्

२३८

पार्वती के आरुशन का आरम्भ । हिमालय से उमा की

उत्पत्ति । कश्यप और हिमालय का सवाद । तप करने

हुए हिमालय को ब्रह्मा का धरदान । हिमालय से मेना

नामक पत्नी में तीन कन्याओं की उत्पत्ति एवं उनका नामकरण । तप करती हुई पार्वती को ब्रह्मा का घरदान ।

३५ पार्वत्युपाख्यानवर्णनम्

२४१

उमा का देवताओं के साथ संवाद । विहृतरूपधारी महादेव का पार्वती के पास जाना । विहृत रूप का वर्णन जैसे—

विहृतं रूपमास्थाय हस्यो बाहुक एव च ।

विभग्ननासिको भूत्वा कुब्जः केशान्तपिङ्गलः ॥

शिष्य पार्वती का संवाद ।

पार्वतीजी कहती है—

भगवन्न स्वतन्त्राहं पिता मे त्वग्रणीर्गृहे ।

स प्रभुर्मम दाने वै कन्याहं द्विजपुङ्गव ॥

गत्वा याचस्व पितरं मम शैलेन्द्रमश्रयम् ।

स चेद्ददाति मां विप्र तुभ्यं तदुचितं मम ॥

विहृतरूपी शिव का हिमालय के साथ वार्तालाप ।

“अयं शिव.” ऐसा जान कर पार्वती का शिष्यजी को वरण करना ।

अशोक वृक्ष के प्रति शिवजी का घरदान । शिष्यजी का अन्तर्धान होना । ब्राह्म से ग्रस्त बालक का रोदन एवं पार्वती तथा ब्राह्म का संवाद । “मेरा तप नष्ट हो गया” यह जान कर पार्वती का पुनः तप करना और पार्वती को शंकर का घरदान ।

६ पार्वतीस्वयम्बरवर्णनम्

२४६

पार्वती के स्वयम्बर में सम्पूर्ण देवताओं का आना । देवताओं द्वारा पार्वती की प्रशंसा । शिशु रूप से पार्वती की गोद में शंकर का शयन । क्रोधयुक्त इन्द्रादि देवताओं द्वारा शिवजी पर शस्त्र प्रहार । शिवजी ने सम्पूर्ण देवताओं को अपनी माया से स्तम्भित (रोका) किया । सम्पूर्ण देवताओं को छुड़ाने के लिये ब्रह्माजी द्वारा शिवस्तुति ।

प्रधान पुरुषो यन्त्र ग्रह भ्येय सक्षरम् ।

अमृत परमात्मा च ईश्वर कारण महत् ॥

ग्रह सृक् प्रकृते स्रष्टा सर्वकृत् प्रकृते परः ।

इयञ्च प्रकृति र्देवी सदा ते सृष्टि कारणम् ॥

पक्षी रूप समास्थाय जगत्कारणमागता ।

स्तुति सुन कर शंकर का प्रादुर्भाव । पार्वती के द्वारा शंकर के चरणों में माला का अर्पण । ब्रह्माजी का हिमालय की प्रशंसा करना । शिवजी के विवाह के लिये ब्रह्माजी द्वारा नगर का निर्माण । देव गन्धर्वादिकों का आगमन एवं घसन्तादि पद (छै) श्रुतियों का आना ।

असितजलदधीरध्वानचित्रस्तहंसा ।

विमलसलिलधारोत्पातनघ्रोत्पलाग्रा ॥

सुरमिकुसुमरेणुक्लमसर्वाङ्गशोभा ।

गिरिदुहितृविवाहे प्रावृडाविर्भूव ॥

निर्मुक्तासितमेघवञ्चुकपटा पूर्णेन्दुमिवानना ।

नीलाम्मोज्ज्विलोचना रचिकरप्रोद्विग्नपद्मस्तनी ॥

नानापुष्परजःसुगन्धिपवनप्रहादिनी चेतसां ।

तत्राऽऽसीत्कलहंसनूपूररघा देव्या विधाहे शरत् ॥

अत्यर्थं शीतलाम्मोमिः प्लावयन्ती दिशः सदा ।

भ्रूतू हेमन्तशिशिरी आजग्मतु रतिद्युती ॥

विधाहे गिरिकन्याया यस्यन्तः समगादृतुः ।

विधिपूर्वक पार्वती और शंकर का विवाह ।

३७ शिवस्तुतिवर्णनम्

२६५

देवकृत महेश्वर की स्तुति ।

पुरुषाय नमस्तेऽस्तु पुरुषेच्छाकराय च ।

नमः पुरुषसंयोगप्रधानगुणकारिणे ॥

प्रवर्तकाय प्रकृतेः पुरुषस्य च सर्वशः ।

कृताकृतस्य सत्कर्त्रे फलसंयोगदाय च ॥

शिवजी के सम्मुख देवताओं का घर के लिये आना । अपने

गणों के साथ महादेवजी का अपने स्थान पर जाना ।

३८ मदनदहनवर्णनम्

२६६

कामदेव का महेश्वर की नेत्राग्नि से दाह । रति को महेश्वर

का घरदान । पार्वती और शंकर का क्रीडन । पार्वती

का माता के घर जाना । माता मेना के द्वारा पार्वती का

उपहास । महादेव के आगे माता के उपहास का वर्णन ।

पार्वतीके क्रोध शान्तिके लिये महादेवका सुन्दर हास्यालाप ।

३६ दक्षयज्ञविध्वंसनम्

२७४

इन्द्रादिक देवताओं का दक्ष के पास जाना, देवताओं के प्रति
दर्धाचि का सवाह ।

दर्धाचिरवाच—

अपूज्यपूजने चैव पूयानाञ्चाप्यपूजने ।

नर पापमवाप्नोति महद्वै नात्र मशय ॥

ऋषि दर्धाचिका दक्षने साथ सवाह । पार्वता और महेश्वर
का सवाह वर्णन । वीरभद्र की उत्पत्ति और शिवजी की
आज्ञा से वीरभद्र का दक्ष के यज्ञ में जाना एव यज्ञ का
विध्वंस ।

इन्द्रादिकों का वीरभद्र के प्रति प्रश्न “को भवानिति” ।
उत्तर में वीरभद्र ने कहा ‘वीरभद्रोऽहं’ अर्थात् महादेव की
आज्ञा से यज्ञ नष्ट करने के लिये आया हूँ । मृगरूप धारण
कर दक्ष का आकाश में जाना । त्रिशूल गणेशजी के
हस्तात् से स्वेद चिन्तु (पर्वाण) से अग्नि का उत्पत्ति ।
यहाँ पर उत्पन्न हुए पुरुष के द्वारा यज्ञका विध्वंस । यज्ञ
कर्म में देवता आपको भाग देंगे इस प्रकार ब्रह्मा का शंकर
के प्रति वचन । शंकर से दक्ष की वरप्राप्ति ।

४० दक्षकृतशिवस्तुतिवर्णनम्

२८५

दक्ष द्वारा शिव सहस्र (१०००) नामों का वर्णन तथा
प्रसन्न होकर शंकर का दक्ष की वरदान । सम्पूर्ण धन्तुओं

में शंकर के द्वारा ज्वर का विमाजित करना । ज्वरोत्पत्ति के पठन और श्रवण का फल । दक्ष के स्तोत्र का फल कथन ।

इमां ज्वरोत्पत्तिमदीनमानसः,

पठेत्सदा यः सुसमाहितो नरः ।

विमुक्त रोगः स नरो मुदायुतो,

लभेत् कामांश्च यथा मनीषितान् ॥

४१ एकाम्रकक्षेत्रमाहात्म्यकथनम् २६६

एकाम्रकक्षेत्र का माहात्म्य वर्णन ।

४२ उत्कलक्षेत्रवर्णनम् ३०८

विरजा देवी, वैतरणी और कपिलादि अष्ट तीर्थों का वर्णन । उत्कल तीर्थ का वर्णन और वहाँ पर पुरुषोत्तम क्षेत्र का माहात्म्य वहाँ ही रुद्रादिक देवों के स्थानों का वर्णन ।

४३ अवन्तिकावर्णनम् ३१३

ब्रह्मा के प्रति मुनियों का प्रश्न और अवन्ति नगरी का वर्णन । महाकाल नामक शिव की महिमा का वर्णन तथा क्षिप्रा नदी का वर्णन । और वहाँ पर गोविन्द स्वामी नामक विष्णु की महिमा का वर्णन ।

४४ इन्द्रद्युम्नस्यदक्षिणोदधितटगमनम् ३२१

अघन्तीदेश के राजा इन्द्रद्युम्न का वर्णन और सम्पूर्ण नगर वासियों के साथ दक्षिण समुद्र के तट पर जाना ।

४५ पुरुषोत्तमक्षेत्रार्णनम्

३२६

ब्रह्मा के प्रति मुनियों का प्रश्न । मुनियों के संदेह दूर करने के लिये इतिहासकथन । सुमेरु पर्वत के ऊपर बैठे हुए श्रीलक्ष्मी और विष्णु का संचाद । विष्णु के द्वारा पुरुषोत्तम नामक तीर्थघर्णन के प्रसंग में सृष्टि का घर्णन । ब्रह्मा और विष्णु का वार्तालाप । पुरुषोत्तम क्षेत्र में स्थित न्यग्रोध (वट) वृक्ष का घर्णन । घटवृक्ष के दक्षिण की तरफ मन्दिर में विष्णु मूर्ति का दर्शन करने से सब मनुष्यों का वैकुण्ठगमन । तदनन्तर यम के द्वारा विष्णु की स्तुति । मूर्ति के आच्छादन (ढकने) के लिये यम की प्रार्थना । इसके बाद यमराज का अपनी नगरी समयनी को जाना ।

४६ पुरुषोत्तमक्षेत्रार्णनम्

३३८

पुरुषोत्तम क्षेत्रका घर्णन और वहाँ पर स्थितोत्पला नामक नदीका माहात्म्य । नदी के दोनों तरफ के गावों, वहाँ पर रहनेवाले सब घर्णाश्रम धर्म को धारण करने वाले पुरुषों और स्त्रियों का घर्णन । राजा इन्द्रद्युम्न ने इतना रमणीय स्थान देख कर “सम्पूर्ण मन इच्छा पूर्ति करूँगा” ऐसा सकल्प किया ।

४७ इन्द्रद्युम्नस्य ग्रामादकृष्णार्थं राजामाह्वानम् ३४१

महीपतीनामागमनम्, इन्द्रद्युम्नस्यगालिमेधयज्ञकरणम् ।

राजा इन्द्रद्युम्न ने कारीगरोंको बुलाकर शुभ मुहूर्तमें मन्दिर

का निर्माणआरम्भ किया । इन्द्रद्युम्न की आज्ञासे उत्तम शिला लाने के लिये कलिङ्गादि माण्डलिक राजाओंका चिन्धाचल के प्रति प्रस्थान । इन्द्रद्युम्न के दूत द्वारा संसार के सम्पूर्ण राजाओं को सूचना देने पर उन क्षेत्र में आने का घर्णन । इन्द्रद्युम्न का राजाओं के साथ सम्वाद । राजा के द्वारा यह सिद्धिके लिये सब सामग्रियों का जुटाना । इन्द्रद्युम्न का आज्ञा से उसके पुरोहित द्वारा यहस्थल के बनवाने का और यहस्थल में सब लोगों के प्रवेश का घर्णन । यह का आरंभ यह के सम्भार को देखकर राजा को हर्षप्राप्ति । यह के छोड़े आदि सब पदार्थ लाने के लिये राजा का आदेश । ब्राह्मणों को वस्त्र आभूषण आदि अनेक दान देने का घर्णन । सबकी भक्ष के द्वारा तृप्ति । यह समाप्ति और प्रासाद समाप्ति ।

४८ इन्द्रद्युम्नस्य प्रतिमानिर्माणम् ३५१
प्रतिमा प्राप्ति के लिये दिन रात चिन्ता से व्याकुल राजा का सब भोगों का परित्याग ।

४९ इन्द्रद्युम्नकृत भगवत्स्तुतिः ३५३
राजा के द्वारा भगवान् की स्तुति । स्तुति पाठ का फल ।

५० प्रतिमोत्पत्तिकथनम् ३६०
चिन्ताग्रस्त राजा को स्वप्न में भगवान् का दर्शन ।

प्रतिमा प्राप्ति का उपाय बताना । प्रातः काल उठ कर

नित्यकर्म करने के बाद असहाय राजा का मूर्ति को खोजने के लिये जाना। बड़े वृक्ष को काटते हुए राजा के प्रति ब्राह्मण चेषधारी विष्णु एवं विश्वकर्मा का प्रश्न। प्रतिमा निर्माण करता है ऐसा कहने पर भगवान् प्रसन्न हुए और विश्वकर्मा को तीन प्रतिमा बनाने की आज्ञा दी। विष्णु की आज्ञा से विश्वकर्मा द्वारा तीन मूर्तियों का निर्माण। मूर्ति दर्शन को कौतुक भरा दृष्टि से देखते हुए राजा का “आप कौन हैं” यह प्रश्न।

५१ भगवद्इन्द्रद्युम्नमगाटकथनम्

३६६

सर्वजगन्निष्कृत्व आदि गुणों से युक्त मैं हा पुरुषोत्तम हूँ ऐसा भगवान् का वचन। राजाका निर्गुण आदि गुण विशिष्ट भगवत्पद प्राप्ति के लिये स्तुति पूर्वक याचना। भगवान् का घरदान तुम्हारी इच्छानुसार सब कुछ होगा इसके बाद भगवान् अन्तर्धान हो गये और पुरुषोत्तम क्षेत्र में तीनों मूर्तियाँ का शुभ मुहूर्त में स्थापन। इस प्रकार राजा के मनोरथ की पूर्ति एवं विष्णुपद की प्राप्ति। ब्रह्माजी द्वारा पुरुषोत्तम मे आये हुए पाँच तीर्थों का वर्णन।

५२ मार्कण्डेयार्यानम्

३७४

मार्कण्डेय आर्यान का आरम्भ कल्पक्षय में अनेक तरह के कलेशों से व्याकुल चित्त मार्कण्डेय को घटवृक्ष का दर्शन।

५३ मार्कण्डेयाख्यानम्

३७६

महाप्रलय के मेघों से आप्लावित पृथ्वी पर एकार्णव जल में स्नान करते हुए मार्कण्डेय को भगवान् के दर्शन । मार्कण्डेय को अभयदायक भगवान् के आश्वासन पूर्ण ध्यान । क्रोधयुक्त मार्कण्डेय को भगवान् की उक्ति । क्रोध के शान्त होने पर मार्कण्डेय को वटवृक्ष में भगवान् के दर्शन । मार्कण्डेय को भगवान् का आश्वासन ।

५४ मार्कण्डेयाख्यानम्

३८१

भगवान् के उदर में मार्कण्डेय का प्रवेश । उदरस्थ मार्कण्डेय को सम्पूर्ण लोकों का दर्शन ।

५५ मार्कण्डेयाख्यानम्

३८३

मार्कण्डेय का भगवान् के उदरसे बाहर निकलना । मार्कण्डेय कृत बालमुकुन्दस्तुति ।

५६ विस्तरेण विष्णुमार्कण्डेयसम्वादवर्णनम्

३८७

विस्तार से विष्णु एवं मार्कण्डेय का सम्वाद और भगवान् का अन्तर्धान ।

५७ पञ्चतीर्थविधिवर्णनम्

३९५

पञ्चतीर्थों का वर्णन तथा मार्कण्डेय तालाव की प्रशंसा ।

„ वटवृक्ष पूजाविधि कथनम्

३९७

„ कृष्णदर्शनमाहात्म्यवर्णनम्

”

घटवृक्ष की पूजाविधि, विशेष रूप से पञ्चतीर्था का घर्जन
वृष्णदर्शन का माहात्म्य ।

५८ नरसिंहमाहात्म्यवर्णनम् ४०१

ब्रह्मा और मुनियों के सम्वादमें नरसिंह पूजा का विधान तथा
नरसिंहमाहात्म्य का घर्जन ।

५९ श्वेतमाधवमाहात्म्य वर्णनम् ४०८

कपाल गौतम ऋषि के मृतपुत्र को जिलाने के लिये श्वेत
राजा की प्रतिज्ञा । ब्रह्मा के प्रति श्वेतमाधव की स्थापना
के लिये मुनियों का प्रश्न । वैष्णव पद का प्राप्ति के लिये
श्वेतहृत् विष्णु स्तुति । श्वेत राजा को विष्णु का वरदान ।

६० समुद्रस्नानार्वाधिवर्णनम् ४१८

अमृतस्यारणिस्त्व हि देवयोनिरपा पते ।

वृजिन हर मे सर्वं सार्थराज नमोऽस्तुते ॥

नारायण के अष्टाक्षर मन्त्र का प्रणसा पर नारायण कवच
का घर्जन ।

किं कार्यं बहुभिर्मन्त्रैर्मनोविभ्रमकारकैः ।

ॐ नमोनारायणायेति यद्यदन्ति मनीषिणः ॥ (मन्त्र सर्वार्थसाधक) ॥

आपो नरस्य सूनुत्वान्नारा इतीह कीर्तिता ।

विष्णोस्तास्त्वय न पूर्यंते नारायण स्मृतः ॥

नारायणपरा वेदा नारायणपरा द्विजा ।

नारायणपरा यज्ञा नारायणपरा क्रिया ॥

नारायणपरा पृथ्वी नारायणपरं जलम् ।

नारायणपरोघहिर्नारायणपरं नमः ॥

नारायणपरो घायुर्नारायणपरं मनः ।

अहकारश्च बुद्धिश्च उभे नारायणात्मके ॥

जले स्थले च पाताले स्वर्गलोकेऽभ्यरे नगे ।

अवष्टभ्य इदं सर्वमास्तेनारायणः प्रभुः ॥

किं चात्र बहुनोक्तेन जगदेतच्चराचरम् ।

ग्रहादिस्तम्बपर्यन्तं सर्वनारायणात्मकम् ॥

नारायणात्परं किञ्चिन्नेह पश्यामि भो द्विजाः ।

तेन व्याप्तमिदं सर्वं दृश्यादृश्यं चराचरम् ॥

आपो ह्यायतनं विष्णोः स च एवाग्रसांपतिः ।

तस्मादप्सुस्मरेन्नित्यं नारायणमघापहम् ॥

स्नानकाले विशेषेण चोपस्थाय जले शुचिः ।

स्मरेन्नारायणं ध्यायेद्धस्ते काये च विन्यसेत् ॥

आस्तीर्य च कुशान्साप्रांस्तानावाहा स्वमन्त्रतः ।

प्राचीनाग्रेषु चै देवान्याम्याग्रेषु तथा पितॄन् ॥

समुद्र स्नान की विधि का वर्णन । जलमें ही स्नान के अङ्ग

सन्ध्या आदि नित्य कर्म एवं देवता ऋषि पितृ तर्पण करे ।

६१ पूजाविधिकथनम्

४२४

शरीरशुद्धि का वर्णन । षोडशोपचार सहित पूजन विधि का वर्णन ।

यथा देहे तथा देवे सर्वतत्त्वानि योजयेत् ।

६२ समुद्रस्नानमाहात्म्यवर्णनम्

४३०

समुद्र में स्नान करने का माहात्म्य ।

तावद्गर्जन्ति तीर्थानि माहात्म्यैः स्वैः पृथक् पृथक् ।

यावन्न तीर्थराजस्य माहात्म्यं घर्ष्यते द्विजाः ॥

६३ पञ्चतीर्थांमाहात्म्यनिरूपणम्

४३३

पांच तीर्थों के माहात्म्यका घर्षण ।

अश्वमेधाङ्गसम्भूत तीर्थ सर्वाघनाशन ।

ज्ञानं त्वयि करोम्यद्य पापं हर नमोऽस्तुते ॥

पृथिव्यां यानि तीर्थानि सरितश्च सरांसि च ।

पुष्करिण्यस्तङ्गागानि घाप्यः कृपास्तथा हृदाः ।

नानानद्यः समुद्राश्च सप्ताहं पुरुषोत्तमे ।

६४ महाज्यैष्ठीप्रशंसावर्णनम्

४३५

महाज्यैष्ठी (ज्येष्ठा नक्षत्र युक्त जो तिथि है) की प्रशंसा का घर्षण । प्रयागादि तीर्थों तथा गङ्गादि नदियों में सूर्य और चन्द्र ग्रहण के अवसर पर स्नान-दान करने से जो फल होता है उतना ही महाज्यैष्ठी में राम, कृष्ण और सुमद्राका दर्शन करने से मिलता है ।

६५ कृष्णस्नानमाहात्म्यवर्णनम्, कृष्णावलोकने फलप्राप्ति-

कथनम्

४३८

कृष्ण के स्नान की विधि तथा स्नानका माहात्म्य । देवताओं

का कृष्ण की स्तुति करना । कृष्ण की मूर्ति का दर्शन करने से फल प्राप्ति ।

कपिलाशतदानेन यत्फलं पुष्करे स्मृतम् ।

तत्फलं कृष्णमालोक्य मञ्जुस्थं सहलायुधम् ॥

सुमद्रां च मुनिश्रेष्ठाः प्राप्नोति शुभकृन्नरः ।

भूमिदानेन विधिघट्यत्फलं समुदाहृतम् ।

तत्फलं कृष्णमालोक्य मञ्जुस्थं लभते नरः ॥

यत्फलं चान्नदानेन अर्घातिथ्येन कीर्तितम् ।

तत्फलं कृष्णमालोक्य मञ्जुस्थं लभते नरः ॥

यत्फलं तोयदानेन ग्रीष्मे वाऽन्यत्र कीर्तितम् ।

तत्फलं कृष्णमालोक्य मञ्जुस्थं लभते नरः ॥

ततः समस्ततीर्थानां लभेत्स्नानादिकं फलम् ।

स्नानशेषेण कृष्णस्य तोयेनाऽऽत्माभिषिच्यते ॥

घण्ट्या मृतप्रजा या तु दुर्भगा ग्रहपीडिता ।

राक्षसाद्यैर्गृहीता या तथा रोगैश्च संहताः ॥

सद्यस्ताः स्नानशेषेण उदकेनाभिषेचिताः ।

प्राप्नुयन्तीप्सितान् कामान्यान्यान्वाञ्छन्ति चेप्सितान् ।

६६ गुड़िया यात्रामाहात्म्यवर्णनम्

४४८

गुड़िया यात्रा का माहात्म्य ।

राजा इन्द्रद्युम्न ने भगवान् से प्रार्थना की कि हे भगवन् आपकी

यात्रा सात दिन तक मेरे सालाखके पास होनी चाहिए ।

तदनन्तर भगवान् ने कहा ऐसा ही होगा उस यात्रा को गुडिचायात्रा कहने हैं ।

६७ द्वादशयात्रामाहात्म्यवर्णनम् ४५१

प्रत्येक यात्रा का फल कथन । यात्रा के प्रसंग से पूजा विधि वर्णन । द्वादश (१२) यात्राओं का फल वर्णन ।

६८ विष्णुलोकवर्णनम् ४५६

विष्णुमन्दिर, विष्णुस्वरूप और विष्णुलोक के महत्त्व का वर्णन । वहां पर जाने वालों का निर्णय ।

६९ पुरुषोत्तममाहात्म्यनिरूपणम् ४६७

पुरुषोत्तम क्षेत्र का माहात्म्य ।

७० ब्रह्माणं प्रति तीर्थमंख्याविषयको नारदग्रन्थः ४७१

ब्रह्माजी के प्रति तीर्थ संख्या विषयक नारदजी का ग्रन्थ ।

७१ चतुर्विधतीर्थलक्षणकथनम् ४७३

चतुर्विध तीर्थों का लक्षण तथा स्वल्प एवं उनके भेद वर्णन । गौतमी माहात्म्य का आरंभ ।

७२ गङ्गोत्पत्ति कथोपक्रमः, तारकाश्रुत्या देवकृता

विष्णुस्तुतिः ४७६

गङ्गा की उत्पत्ति का वर्णन । तारकासुर के मय से देवताओंका विष्णुकी स्तुति करना । विष्णुकी आज्ञासे देवताओंका हिमालय के प्रति गमन ।

७१ बृहस्पतेराज्ञया मदनस्य शिवान्तिकंगमनम् ४७६

बृहस्पति की आज्ञा से कामदेव का शकर के पास जाना
और शकरकी नेत्राग्नि से कामदेव का दाह ।

७२ हिमवद्वर्णनम्, शम्भुविवाहविधिकथनम् ४८१

हिमालय का वर्णन । शम्भु के विवाह का वर्णन । गौरी के
रूपदर्शन से प्रयाजी का धीर्यपात तथा उसी धीर्य से बाल
खिल्यो को उत्पत्ति ।

ममानुकम्पया चैष लोकानाहितकाम्यया ।

एतच्चकार लोकेश शृणु नारद यत्नतः ।

पापिना पापमोक्षाय भूमिरापो भविष्यति ।

तयोश्च सारसर्वस्वमाहरिष्यामि पावनम् ।

एव निश्चित्य भगवास्तयो सारं समाहरत् ॥

आपो वै मानरोदेयो भूमिर्याता तथाऽपरा ।

स्थिरद्युत्पत्तिविनाशाना हेतुत्वमुभयो स्थितिम् ॥

अत्र प्रतिष्ठितो धर्मो ह्यत्र यज्ञ सनातनः ।

अत्र भुक्तिश्चमुक्तिश्च स्थावरंजङ्गमन्तथा ॥

स्मरणान्मानस पाप ध्वनाद्वाचिकं तथा ।

स्नानपानामिषेकाद्य प्रणश्यत्यपि पापिकम् ॥

७३ बलिप्रशंमाणर्णनम् ४८५

राजा बलि को प्रशंसा । राजा बलि के ऐश्वर्य को सदन न
कर देवतामाँ का चिष्णु के पास जाना ।

७३ देवकृता विष्णुस्तुतिः ४८७

देवतार्था का विष्णु की स्तुति करना । माता अदिति के गर्म से धामन की उत्पत्ति । राजा बलि के यज्ञ में धामनजी का गमन । राजा बलि और शुक्राचार्य का सवाद ।

१) धामनाय भूमिदानम् ४८६

धामनजी को भूमिदान तथा बलि और धामनजी का परस्पर सवाद । भगवान् धामन का राजा बलि को घरदान ।

१) गङ्गायामहेश्वरजटागमननिरूपणम् ४८९

गङ्गाजी का महेश्वर की जटा में गमन घर्णन ।

७४ गङ्गायाद्वैरूप्यकथनम् ४८३

गङ्गाजी के दो रूपों का कथन । शकरको जटा से गंगा को अलग करने के लिये पार्वती और गणेश की धार्ता ।

रसवृत्ती स्थितो यस्मात्त्रिममे रसमुत्तमम् ।

रसिकत्वात्प्रियत्वाच्च स्त्र्येणत्वात्पावनत्वात् ॥

१) गौतमाश्रमप्रशंभार्णनम् ४८५

गौतम की प्रशंसा, तथा आश्रम का घर्णन ।

१) गौतमाश्रमप्रति विघ्नराडगमनम् ४८७

गौतमाश्रमे गोरूपधारिण्याजयायापतनम्

गौतमप्रिनायस्मवादकथनम् ।

स्वामी कार्तिकेय के साथ गणेशजीका गौतमजी के आश्रम

में जाना । गणेशजी की आज्ञा से गोरूप धारण करके जया (गणेशजी को वह्नि) का गौतमजी के आश्रम में जाना, गौतम के रोकने पर जया का गिरना । गोवध के पाप को दूर करने के लिये गौतमजी को उपाय बतलाना । अपने संकल्प की सिद्धि के लिये “भयतां प्रसादोऽस्तु” इस प्रकार गौतम की प्रार्थना । सम्पूर्ण जनों का अपने २ स्थान में जाना । शंकर को प्रसन्न करने के लिये गौतमजी का कैलास पर्वत पर गमन ।

७५ गौतमकृतमुमामहेश्वरस्तवनम्, गौतमस्योमामहेश्वर-
दर्शनम् । ५०३

गंगाप्रशंसा, गौतम्यानयनञ्च ।

गौतम का उमामहेश्वर की स्तुति करना । गौतमजी को उमामहेश्वर का दर्शन । तदनन्तर गङ्गा प्राप्ति के लिये गौतम की प्रार्थना । गङ्गा की प्रशंसा और गौतमी का लाना ।

श्लाघ्यं कृते तपः प्रोक्तं त्रेतायां यज्ञकर्म च ।

द्वापरे यज्ञदाने च दातमेव कलौ युगे ।

७६ स्वर्गादौपञ्चदशाकृत्यागङ्गायागमनम् ५१०

स्वर्ग, मर्त्य और पाताल में विमाजित होकर १५ आकृति से गङ्गा का गमन । गोदावरी तीर्थ की स्नान विधि ।

ब्राह्मणान् भोजयित्वा च तेषामाज्ञां प्रगृह्य च ।

ब्रह्मचर्येण गच्छन्ति पतितालापवर्जिताः ॥

यस्य हस्तौ च पादौ च मनश्चैव सुसंयतम् । . . .

विद्यातपश्च कीर्तिश्च स तीर्थफलमश्नुते ॥

७७ गौतमीमहत्त्ववर्णनम्

५१३

गौतमी का महत्त्व वर्णन कर सब नदियों में गौतमी को श्रेष्ठ बताया है ।

७८ सगराख्यानवर्णनम्

५१५

पुत्रहीन राजा सगर का वशिष्ठजी के प्रति सन्तानविषयक प्रश्न । वशिष्ठ के घरदान से सगर को पुत्रों की प्राप्ति । इन्द्र द्वारा चुराये गये घोड़े की खोज के लिये सगर पुत्रोंका इधर उधर जाना । निद्रासुप्तके अनुभवके लिये देवताओं की आज्ञा से कपिलजी का रसातल में गमन । सगर पुत्रों की कपिल के प्रति कठोर उक्ति (वचन) । कपिलजी के क्रोधसे सगर के पुत्रों का भस्म होना । सगर को नारद से अपने पुत्रों के नष्ट होने का वृत्तश्रवण । असमञ्जस को स्वदेश से निकालना । कपिल की आज्ञा से पूर्वजों के उद्धार के लिये भगीरथ का कैलास के प्रति गमन । भगीरथ की स्तुति से प्रसन्न होकर शंकर का घरदान । कपिलजी के शाप से मृत पूर्वजों को पवित्र करने के लिये गङ्गाजी के साथ भगीरथ का रसातल में जाना ।

७९ वराहतीर्थवर्णनम्

५२३

वराह तीर्थ का माहात्म्य वर्णन ।

८० कपोततीर्थवर्णनम्

५२६

लुब्धक चरित्र का घणन । कपोती के विरह से दुःखित कपोत का विलाप । कपोत के विलाप को सुन कर पति के प्रति कपोतकी का घचन । कपोती द्वारा अतिथि की प्रशंसा । लुब्धक के लिये कपोत का अग्नि प्रवेश । लुब्धक से कपोतो की मुक्ति । कपोती वृत्त पतिव्रताधर्म की प्रशंसा । कपोती का देहत्याग । कपोत और कपोती का स्वर्ग गमन ।

गच्छावस्त्रिदशस्थानमाष्टोऽसि महामुने ।

आधयो.स्वर्गसोपानमतिथिस्त्यं नमोऽस्तुते ॥

पाप दूर करने के लिये लुब्धक की प्रार्थना, तदनन्तर गौतमी ज्ञान से सथा पाप कथन से स्वर्गप्राप्ति वर्णन ।

८१ कुमारतीर्थवर्णनम्

५३६

स्वामी कार्तिकेय की विषयों में आसक्ति । कुमारतीर्थ का वर्णन ।

८२ कृत्तिकातीर्थवर्णनम्

५३८

नारद के घचन से कृत्तिकाओं का षण्मुख के पास जाना, कृत्तिकातीर्थवर्णन का उपसंहार ।

८३ दशाश्वमेधतीर्थवर्णनम्

५४०

भौवन का कश्यपजी के प्रति प्रश्न ? किस देश में यह की सफलता प्राप्त होगी । गुरु और गौतमी के प्रसाद से भौवन

को एक अश्वमेध से दश अश्वमेधों के फल की प्राप्ति ।
आकाशवाणी का वचन । दशाश्वमेधतीर्थ का विधान ।

८४ पेशाचतीर्थवर्णनम् ५४४

वैसरी धानर का दक्षिण समुद्र के प्रति गमन । अञ्जन पर्वत
के ऊपर अगस्त्यजी का आना । अगस्त्यजी से अञ्जना
और अद्रिका को पुत्र प्राप्ति का वरदान । निर्मृति और
घायु के सम्पर्क से अञ्जना और अद्रिका को पुत्रप्राप्ति ।
पेशाच तीर्थ का विधान एवं प्रयोजन ।

८५ क्षुधातीर्थवर्णनम् ५४६

गौतमजी के पेश्वर्ष को नहीं सहन करते हुए कण्व का
सम्पत्ति उपाज्जन के लिए गमन । कण्वरुन गङ्गा एवं क्षुधा
की स्तुति और उसकी संनिधि में दो वरदानों को प्रार्थना ।
क्षुधातीर्थ का प्रयोजनकथन ।

८६ चक्रतीर्थगणिकामङ्गमवर्णनम् ५४८

विश्वधर वैश्य का पुत्र के मरने पर शोकाकुल होता । यम-
राजका संयमिनी से गौतमी के प्रति गमन । पृथ्वी का इन्द्र
के पास जाना । पृथ्वी और इन्द्र का संवाद । इन्द्र की
आज्ञा से सिद्धकिन्नरों का वैवस्वतपुर से यमराज को लानेके
लिए जाना । इन्द्रका सूर्य के प्रति प्रश्न ? यम वहाँ है—
तब सूर्य ने कहा कि गौतमी पर तप करने के लिए गया है ।
यमराज के तप को नाश करने के लिये तुम्हारे में से कौनसी

अप्सरा की शक्ति है ऐसा प्रश्न। चतुर्थीय का कारण वर्णन। तब भग करने के लिए इन्द्र की प्रेरणा से गणिका का यमराज के पास गमन। प्रजाओं के नाश करने वाला अपना कार्य करो ऐसी यमराज को सूर्य की उक्ति नदनन्तर यमराज ने कहा ऐसा निन्दित कर्म मैं नहीं करूँगा। पुन दोनों का अपने २ स्थानों पर गमन।

८७ अहल्यासगमेन्द्रतीर्थवर्णनम्

५५६

ब्रह्माजी ने गौतम से कहा कि अहल्या की यौवन प्राप्ति पयन्त रक्षा करो फिर मेरे पास ले आना। जो पुरुष पृथिवी की परिक्रमा कर सूर्य प्रथम मेरे पास आयेगा उसीको यह कन्या दी जायेगी ऐसी ब्रह्माजी की प्रतिज्ञा। तत अहिल्या प्राप्ति के लिए देवताओं का पृथ्वी की परिक्रमा करना। फिर ब्रह्माजी ने सम्पूर्ण देवों को छोड़ कर गौतम का अहिल्याप्राप्ति का उपायकथन। विवाह के पश्चात् ब्रह्माजी के पास देवतार्थ का आगमन। विप्र वेश से इन्द्र का अहल्या के लिये गौतम के आश्रम में जाना। तदन्तर गौतम का इन्द्र को शाप पुन इन्द्र का गौतम से शापोद्धार के लिये प्रार्थना। गौतमी स्नान से पापों का दूरीकरण ऐसा गौतम का कथन। इन्द्रतीर्थ के आख्यान का वर्णन।

८८ जनस्थानतीर्थवर्णनम्

५६३

राजा जनक ने याज्ञवल्क्यजी से पूछा कि सुख से मुक्ति कैसे होगी? याज्ञवल्क्य ने कहा कि धरुण से पूछो ऐसा

कह कर जनक और याज्ञवल्क्य वरुण के पास गये तदनन्तर वरुण ने कहा—

द्विधा तु संस्थिता मुक्तिः कर्मद्वारेऽप्यकर्मणि ।

वेदे च निश्चिनो मार्गः कर्म ज्याप्यो ह्यकर्मणः ॥

सर्वं च कर्मणा यद्धं पुण्यार्थवतुष्टयम् ।

अकर्मणेवाऽऽप्यत इति मुक्तिः मार्गो मृषोऽन्यते ॥

कर्मणा सर्वधान्यानि सेत्स्यन्मि नृपसत्तम ।

तस्मान्सर्वात्मना कर्म कर्तव्यं वैदिकं नृभिः ।

नेन भुक्तिश्च मुक्तिश्च प्राप्नुवन्तोह मानवाः ॥

गृहम्य से ही भुक्ति एवं मुक्ति मिलनी है ऐसा वरुण का मत दर्शन । जनक और याज्ञवल्क्य ने वरुण से पूछा कि भुक्ति मुक्ति प्रदायक कौन देश, कौन तीर्थ है; इस पर वरुण ने कहा गौतमी सयने श्रेष्ठ तीर्थ है ऐसा सुन कर दोनों अपने २ स्थान पर चले गये । जनस्थान तीर्थ का प्रयोजन ।

८२ अरुणावरुणामंगमाश्वमानुतीर्थवर्णनम् ५६६

सूर्य पत्नी उषा ने छाया से कहा कि मैं पिता के घर जाती हूँ मेरे गौतमी तक बालकों का पालन करो । तदनन्तर छाया का पिता के घर जाना । त्वष्टा का पुनः पति के घर जानेका आदेश । उषा का उत्तर कुरुदेश में तप करने के लिए जाना । छाया की सन्तानों का जन्म कथन । छाया ने यमराज को शाप दिया इसका वर्णन । यमराज ने पिता से कहा कि यह मुझे क्रोध दृष्टि से देखती है अतः मेरी

माता नहीं है। उत्तर पुरु में घोड़ी का रूप धारण कर उपा रहती है ऐसा जान कर घोड़े के रूप को धारण कर सूर्य का वधा जाना। आत्मरक्षा के लिये गौतमी पर बड़वा का जाना उसके बाद सूर्य का जाना। ऋषियों के प्रति सूर्य का शाप कथन। पुन अश्विनीकुमारों की उत्पत्ति। त्वष्टा ने सूर्य से कहा कि उपा के निमित्त तेज को शमन करो।

६० गरुडतीर्थवर्णनम्

५७१

गरुड से अभयदान प्राप्ति के लिये मणिनाग नामक शेष पुत्र द्वारा शिव की स्तुति। शकर से घरदान प्राप्त करके मणिनाग का इधर उधर भ्रमण। नन्दिकेश्वर ने शकर के प्रति कहा—मालूम होता है कि गरुड ने नागको भक्षण कर लिया है अथवा बाध लिया है इस लिये नहीं आया है। शकर की आज्ञा से नाग को लाने के लिये नन्दीश्वर विष्णु के पास गया। विष्णु ने गरुड से कहा कि नन्दी को सर्प दो तब गरुड ने गर्वपूर्वक उत्तर दिया कि मेरे बल से ही दैत्याको पराजित करते हो तदनन्तर भगवान् ने गरुड का गर्व दूर किया। गरुड के द्वारा विष्णु की स्तुति। विष्णु की आज्ञा से नाग सहित गरुड का शकर के पास गमन। शिव की आज्ञा से गरुड गौतमी पर स्नान करने को गया और उसका शरीर घट्ट की तरह हो गया अपि च विष्णु की प्राप्ति हुई।

६१ गोवर्धनतीर्थवर्णनम्

५७६

नन्दी के द्वारा गायों का हरण । गायोंको लानेके लिये
देवताओंका शकर के पास जाना । देवताओं की गायों की
प्राप्ति । गोवर्धन तीर्थ का कथन ।

६२ पापप्रणाशनतीर्थवर्णनम्

५७७

ध्रुवत का पत्ता महाका गाल्याश्रम में जाना । पापप्रणा
शनतीर्थ का माहात्म्य ।

६३ त्रिशामित्रतीर्थवर्णनम्

५८३

त्रिशामित्र तीर्थ के स्वरूप का वर्णन । भूख से पीड़ित
त्रिशामित्र से प्रेरित शिष्योंका भिक्षा लाने के लिये जाना ।
शिष्यों द्वारा लाये गये मृग कुत्तेका पाक करण । इन्द्र और
त्रिशामित्रका सवाद । इन्द्रकी आज्ञासे मैत्रोंका अमृत
की वर्षा करना ।

६४ श्वेततीर्थवर्णनम्

५८६

शिवभक्त श्वेतविप्रको पूर्णायु होने पर यमदूत लानेको गये ।
यमदूतों के देरी करने पर विप्र ने मृत्यु से कहा कि
श्वेत विप्र कैसे नहीं आता है और दूत भी अभी तक नहीं
आये हैं । क्या कारण है ? मृत्यु और यमदूतों का सवाद ।
मृत्यु के वध को सुनकर क्रोधित यमराज का श्वेतके पास
जाना । शिवदूतों के साथ यमराज का युद्ध । कार्तिकेय
द्वारा यमराज का वध । विष्णु आदि देवताओं का यम-

राज के पास गमन । देवताओं द्वारा शिव स्तुति । देवताओं ने शंकर से प्रार्थना की कि यमराज को जीवदान दो फिर शंकर ने कहा मेरे भक्त की मृत्यु न हो इस ध्वन के पालन से यम को पुनः जीवदान ।

६५ शुक्रतीर्थवर्णनम्

५६२

भार्गव और अङ्गिरा का संवाद । गुरु की पुत्र और शिष्य में विषमता देख कर शुक्र का गौतम के पास जाना और उनकी आज्ञासे गंगा पर जाकर शुक्र ने शिवकी स्तुति की । शुक्राचार्यको शिव द्वारा मृतसंजीवनी विद्या की प्राप्ति ।

६६ पुण्यासिक्तासंगमेन्द्रतीर्थादिसप्तसहस्रतीर्थवर्णनम् ५६६

ब्रह्महत्या से डरे हुए इन्द्र का कमलनाल में घास । ब्रह्मा की आज्ञा से देवताओंका गौतमी के प्रति जाना तदनन्तर गौतम के भय से नर्मदा के प्रति गमन । देवताओं द्वारा माण्डव्य ऋषि की प्रशंसा । मालवदेश का विधान तथा पुण्यासिक्तादि सातहजार तीर्थों का वर्णन ।

६७ पौलस्त्यतीर्थवर्णनम्

५६६

माता के ध्वन से रावण, कुम्भकरण और विभीषण का सप करने के लिये धन में जाना । रावण द्वारा कुबेर की पराजय । रावण को पुष्पकादि की प्राप्ति । भाई द्वारा निकाले गये वैश्रवण का पुलस्त्य के पास जाना । पुलस्त्य जी को आज्ञा से स्त्री सहित गौतमी पर गमन वहां कुबेर

द्वारा शंकर की स्तुति । पश्चात् आकाशघार्षी हुई । शंकर का अपने स्थान पर गमन । पौलस्त्य तीर्थ का माहात्म्य ।

६८ अग्नितीर्थवर्णनम्

६०४

मधुदेत्य से जानवेदा और दक्ष का वध । भार्ग के मरने पर अग्नि का गङ्गा में प्रवेश । अग्नि के पास देवताओं का जाना । देवताओं ने कहा—

देवाजीवय हव्येन कव्येन च पितृंस्तथा ।

मानुषानन्नपात्रेन रीजाना वलेदनेन च ।

अग्नि तीर्थ का माहात्म्य वर्णन ।

६९ ऋणप्रमोचनतीर्थवर्णनम्

६०६

कर्षीयान् ने पुत्रों से कहा कि ऋणमय (तीनों ऋण) से मुक्त होने के लिये विवाह करो—पुत्रों को विवाह के लिये उदासीन देख कर स्नान के लिये गौतमी पर जाने की आज्ञा ऋण मोचन तीर्थ का माहात्म्य ।

७० कद्रूमुपर्णातीर्थवर्णनम्

६०८

यालविल्वों ने कश्यपजी से कहा—हमारे दिये हुए आधे तपसे इन्द्र के दर्प (घमण्ड) को दूर करनेवाला पुत्र उत्पन्न करो । पुनः प्रजापति कश्यप ने अर्धतप को ग्रहण कर सुपर्णा एवं कद्रू में गर्भ की स्थापना कर कहीं भी न जाने की आज्ञा दी । कद्रू और सुपर्णाका ऋषियज्ञमें जाना । घर्षा पर शीर्षों को नदी होने का शाप । यालविल्वों ने कश्यपजी से

गौतमी पर जाकर शंकर की स्तुति करने से फिर स्त्री होंगी । कश्यपजी को स्तुति करने पर स्त्रियों की प्राप्ति । कद्रू को ऋषि का शाप ।

१०१ सरस्वतीसंगमपुरूरवसब्रह्मतीर्थसिद्धेश्वरतीर्थ-
वर्णनम् । ६१२

ब्रह्मा की सभा में पुरूरवा का जाना । उर्वशी और पुरूरवा का संभाषण । पुरूरवा के पास सरस्वती का गमन । ब्रह्मा के शाप से भयभीत सरस्वतीका गौतमी पर गमन । सरस्वती के शाप को दूर करने के लिए ब्रह्मा के प्रति गङ्गा का कथन । स्त्रियों के स्वभाष का वर्णन ।

१०२ पञ्चतीर्थमाहात्म्यवर्णनम् ६१४

हरिण रूपधारी ब्रह्मा को व्याधरूपधारी शिष्य का वचन । सावित्री आदि पञ्चनदियोंका ब्रह्माकेपास जाना । पञ्चतीर्थों का माहात्म्य ।

१०३ शम्पादितीर्थवर्णनम् ६१६

प्रियव्रत के यज्ञ में हिरण्यक दानव के जाने पर इन्द्रादि देवताओं का मित्र २ स्थानों पर पलायन (भागना) । दैत्य को रोकने के लिए वशिष्ठजी ने पुनः यज्ञारम्भ किया शम्पादि तीर्थों का वर्णन ।

१०४ विश्वामित्रादि द्वाविंशतिमहस्रतीर्थवर्णनम् ६१७

हरिश्चन्द्र के घर नारद और पर्वत ऋषि का गमन । हरिश्चन्द्र

ने उनसे प्रश्न किया कि पुत्र से क्या होगा । पुत्रवान् पुरुष की प्रशंसा ।

नापुत्रस्य परो लोको विद्यते नृपसत्तम ।

जाते पुत्रे पिता स्नानं करोति जनाधिप ॥

दशानामभ्युपेक्षानामभिपेक्षफलं लभेत् ।

आत्मप्रतिष्ठापुत्रात्स्यजायते चामरोत्तम ॥

अमृतेनामरा देवा पुत्रेण ग्राहणादयः ।

त्रिप्रदणान्मोचयेत्पुत्रं पितरञ्च पितामहान् ॥

पुत्र एव परो लोको धर्मं कामोऽर्थ एव च ।

पुत्रो मुक्तिं परञ्ज्योतिस्तारकं सर्वदेहिनाम् ।

ऋषियों के प्रति पुत्रोत्पादन विषयक हरिश्चन्द्र का प्रश्न ।

पुत्र प्राप्ति के लिए वरुणाराधन कथन । वरुण की प्रसन्नता

से हरिश्चन्द्र को पुत्र प्राप्ति । वरुण और हरिश्चन्द्र की

परस्पर उक्ति प्रत्युक्ति । विष्णुयजन के लिए रोहित की

प्रार्थना । अजीगर्त और रोहित का प्रश्नोत्तर । रोहित का

घन में जाना । वरुण के कोप से हरिश्चन्द्र को जलोदर की

प्राप्ति । अजीगर्त की रोहित के साथ पुत्र खरीदने के

विषय में वातचीत । अजीगर्त के द्वारा पुत्र का विषय ।

रोहित ने अजीगर्त के पुत्र शुन शेष को हरिश्चन्द्र के लिए

दिया । शुन शेष के यज्ञ में आकाशवाणी से यज्ञ की समाप्ति

और विश्वामित्र को शुन शेष पर ऋषा परच पुत्रत्व स्वीकार

कर सब पुत्रों में शुन शेष को ज्येष्ठ बना दिया ।

१०५ सोमतीर्थवर्णनम्

६२८

सोमतीर्थ का वर्णन ।

१०६ देवदानवानां मेरुपर्वतं ग्राप्य मन्त्रकरणम् ६३१

देव दानवों ने सुमेरु पर्वत पर मन्त्रणा की पश्चात् समुद्र मथन । सागर से अमृतप्राप्ति । अमृत चाटने के विषय में बृहस्पति से यातचीत । अमृत पीने के लिये विष्णु आदि देवताओं का सुमेरु पर गमन उनके साथ राहु का भी वहाँ जाना । विष्णु ने राहु का शिर काट दिया । पश्चात् राहु का अभिषेक ।

१०७ बृद्धासंगमतीर्थवर्णनम् । बृद्धगौतमाख्यानम् ६३८

एकान्त में ब्रह्मचर्य में अवस्थित बृद्धा के साथ बृद्ध गौतम का संवाद । गौतम का सूर्य से विद्या प्राप्त कर बृद्धा को पत्नीत्व रूप से स्वीकार । अगस्त्य और गौतम का संवाद । बृद्धा को गङ्गा के अभिषेक से यौवन प्राप्ति । गङ्गाजी के द्वारा घर प्राप्त करने से बृद्धा के साथ सुख प्राप्ति ।

१०८ इलातीर्थवर्णनम्-इलोपाख्यानम् ६४६

इलका हिमालय में निवास । यक्षोंका इल के समीप आना । यक्षों के साथ इलका युद्ध । इलका उमाचन में जाना और वहाँ उसको स्त्री रूप की प्राप्ति । यक्षिणी का इल के साथ संवाद । इल के स्त्री रूप होने पर बुध

के आश्रम में जाना । इला का बुध के साथ सम्वाद और दोनों का विवाह । बुधसे इलामें पुत्रोत्पत्ति व देवताओं का धर्मा आना । बालक का पुरुरवा नामकरण । इला के साथ उसका सम्वाद । पुरुरवा को इक्ष्वाकु कुल का वर्णन और अपना पहले का वृत्तान्त कथन । बुध और पेल का सम्वाद । इला की पुंस्त्व प्राप्ति के लिये पुरुरवाका प्रयत्न । पेल और इला का हिमालय पर जाना वहाँ पर शंकर को स्तुति । देवी से पुंस्त्व की याचना । शंकर और पार्वती के अनुग्रह से पुंस्त्व प्राप्ति । पेल का अभिषेक ।

६ चक्रतीर्थवर्णनम्

६६०

पार्वती का दक्ष यज्ञ में जाना । वहाँ पर शिव निन्दा सुनकर—

पिनरं नाशये पापं क्षमेय न कथंचन ।

शृण्वती दोषवाक्यानि पित्रा श्लोकानि भर्तारि ॥

पत्युः शृण्वन्ति या निन्दा तासां पापावधिः कुतः ।

यादृशस्तादृशोवाऽपि पतिः स्त्रीणां परागतिः ॥

पार्वती का दह त्याग । महेश्वर का दक्ष यज्ञ में आना ।

यज्ञ का वर्णन । धीरभद्र द्वारा यज्ञ विध्वंस । देवताओं

द्वारा शिव स्तुति । दक्षरुत शिव स्तुति । देवताओं द्वारा

विष्णु की स्तुति । दैत्यों से उत्पन्न भय को जान कर

देवताओं के साथ विष्णु का परामर्श । विष्णु के द्वारा चक्र

प्राप्ति के लिये शिव की आराधना । विष्णु को शंकर का

घरदान और चक्र का होना ।

११० पिप्पलतीर्थवर्णनम्-दधीचेरुपाख्यानम् ६६७

पिप्पल तीर्थ का वर्णन । दधीचि ऋषि एवं लोपामुद्रा का वर्णन । दधीचि ऋषि के आश्रम में सब देवताओं का आगमन । अस्त्रों को रखने के लिये देवताओं का दधीचि से प्रश्न ? लोपामुद्रा का दधीचि के साथ वार्तालाप । देवताओं का दधीचि के पास अस्त्रों का रखना ।

एतदेव फलं पुंसां जीयतां मुनिसत्तम ।

तीर्थाण्डुतिभूतदया दर्शनं च भवादृशम् ॥

दैत्यों के डरसे दधीचि द्वारा अस्त्रों के तेज का पान । दैत्यों से देवताओं को भय प्राप्ति । देवताओं का दधीचि पास अस्त्रों के लिये जाना । देवताओं के लिये दधीचि का अस्थि दान । देवताओं का अस्त्र धनाना । दधीचि शशि पत्नी का आगमन और उसका अग्नि के साथ सम्पादन तदनंतर अग्निवृत्त समाधान, प्रातिघेयों के द्वारा बुद्धि पुत्र का निष्कालना । प्रातिघेयों का अग्निप्रवेश, आश्रम निधन पृथ्वी का विलाप । दधीचि के पुत्र को अमृत प्राप्ति तथा पिप्पलाद नाम की प्राप्ति ।

प्राप्ति और सोम की आज्ञा से शकर की स्तुति की। प्रसन्न हुए शकर से देवताओं को नाश करने के लिये घर मागना। पिप्पलाद के तप का घर्षण और शकर के तृतीय नेत्र का दर्शन। तृतीय नेत्र से उत्पन्न वृत्त्या को देवताओं के संहार के लिये आदेश। वृत्त्या से अग्नि की उत्पत्ति तथा अग्नि के डरसे देवताओं का शकर के पास जाना। देवताओं द्वारा शकर की स्तुति। शकर एवं देवताओं का संवाद। देवताओं का पिप्पलाद के साथ संवाद। पिप्पलाद ने देवताओं से कहा कि मेरे माता पिता को दिप्रायो। पिप्पलाद का स्वर्गलोक में जाना वहाँ पर माता पिता का दर्शन। विवाह करने के लिये दधीचि और पिप्पलाद का संवाद। देवताओं के संहार के लिये उत्पन्न वृत्त्या का समाधान। वृत्त्या को नदी रूप की प्राप्ति। शकर के साथ देवताओं का संवाद। दधीचि की अस्थियों का पर देवताओं का तथा गायोंका पवित्र होना। देवताओं का अपने २ स्थानों पर जाना पर सूर्यका वहीं रहना। पिप्पलाद का गौतम की पुत्री के साथ विवाह। पिप्पलाद तीर्थ पर पिप्पलेश्वर नामकी प्राप्ति।

११ नागतीर्थघर्षणम्

६६८

सोमवंशभयशूरसेनाग्रयानम्, भोगयत्याः त्रिग्रहघर्षणम्
भोगयत्या मह सर्पसंवादः ।

नागतीर्थ का घर्जन । सोमवंशीत्पन्न शूरसेन के चरित्र का घर्जन । शूरसेन से सर्प की उत्पत्ति । सर्प एवं शूरसेन का वैवाहिक विषय में सम्वाद ।

क्षत्रियाणां विवाहाश्च भवेयुर्वहुधा नृप ।
तस्माच्छस्त्रैरलंकारैर्विवाहं स्यान्महामते ॥
क्षत्रिया ब्राह्मणाश्चैव सत्यां याचं वदन्ति हि ।
तस्माच्छस्त्रैरलंकारैर्विवाहस्त्वनुमन्यताम् ॥

विजय की पुत्री भोगवती का शस्त्र के साथ विवाह । भोगवती के साथ सर्प का सम्वाद । सर्प के शाप का घर्जन और दिव्य रूप की प्राप्ति । नागतीर्थ की प्रसिद्धि ।

११२ मातृतीर्थघर्जनम् ७०७

मातृतीर्थ का घर्जन, देवदानवों का युद्ध । ब्रह्मा के द्वारा शंकर की स्तुति । राक्षसों का रसातल में जाना ।

११३ ब्रह्मतीर्थघर्जनम् ७११

ब्रह्मतीर्थ का घर्जन । ब्रह्मा के पांचवें मुखका संहार कर शंकर ने उसको धारण किया ।

११४ अविघ्नतीर्थघर्जनम् ७१३

अविघ्न तीर्थ का घर्जन । देवताओं का यज्ञारंभ और गणेश की स्तुति । देवों का विनायक के साथ संवाद ।

५ शेषतीर्थवर्णनम् ७१७

शेषतीर्थ का वर्णन । शेष का ग्रन्था के साथ संवाद । शेष ने शंकर को स्तुति की और उसको त्रिशूल की प्राप्ति हुई ।

६ षड्वादिमहन्त्रतीर्थवर्णनम् ७२०

षड्वादि सहस्र तीर्थों का वर्णन । राक्षसों के द्वारा ऋषियों के यज्ञ में उत्पात । ऋषियों ने तथा मृत्यु ने शंकर की स्तुति की । देवदानवों का आपस में वैर ।

७ आन्मतीर्थवर्णनम् ७२३

दत्तात्रेय का अत्रि के साथ सम्वाद । दत्त द्वारा शिष्य स्तुति । शंकर द्वारा दत्त को आन्मज्ञानरूप वरदान ।

८ अश्वत्थादितीर्थवर्णनम् ७२७

अश्वत्थादि तीर्थों का वर्णन । अगस्त्यजी का दक्षिण दिशा में गमन । अश्वत्थ और विष्णु नामक राक्षसों का वर्णन । शनिधर के द्वारा राक्षस की मृत्यु ।

९ सोमतीर्थवर्णनम् ७३०

सोमतीर्थ का वर्णन । आपधियों का ग्रन्था के साथ संवाद । गङ्गाव्रत सोम और आपधियों का विवाद ।

१० धान्यतीर्थवर्णनम् ७३३

धान्य तीर्थ का वर्णन । गङ्गा तट पर दान का माहात्म्य ।

१२१ विदर्भासंगमरेवतीमंगमादितीर्थवर्णनम् ७३५

विदर्भा और रेवती का गङ्गा के साथ संगम । रेवती के साथ फट का विवाह ।

१२२ पूर्णादितीर्थवर्णनम् ७३६

पूर्णादि तीर्थों का वर्णन । ब्रह्मा के साथ राजा धन्वन्तरि का सवाद । धन्वन्तरि का तप भग । धन्वन्तरि एत विष्णु स्तुति और उसको देवराज्य की प्राप्ति । ब्रह्मा, बृहस्पति और इन्द्र का सवाद । इन्द्र द्वारा हरिहर की स्तुति । हरिहर के साथ इन्द्र का सवाद । बृहस्पति के द्वारा इन्द्र का अभिषेक ।

१२३ रामतीर्थवर्णनम् । दशरथचरित्रवर्णनम् ७५०

रामकृतशिवस्तोत्रम् ।

रामतीर्थ का वर्णन । राजा दशरथ का वर्णन । देवदानवों का युद्ध । देवदानवों का दशरथ के पास आना । दशरथ द्वारा देवताओं की सहायता । युद्ध में कैकेयी का वर्णन । दशरथ के द्वारा मुनिपुत्र की मृत्यु । पुत्र की मृत्यु । माता पिता का विलाप और उसी शोकमें मृत्यु । रामादिकों का जन्म कथन । विश्वामित्र को पुत्र समर्पण । अहल्या का उद्धार और राक्षस का घघ । सीता का विवाह । दशरथ की मृत्यु और नरकों की प्राप्ति तथा नरकों से मुक्ति । दशरथ का यमकिंकरों के साथ संवाद । राम लक्ष्मण और

दशरथ का सवाद और दशरथ का दुःख धर्षण करना ।
शोक निवृत्ति के लिये सीता का वचन । देवताओं के साथ
राम का सवाद । राम के द्वारा शक्र की स्तुति ।

१२४ पुत्रतीर्थार्णनम् । मरुतांजन्मकथनम् ७७४

पुत्र तीर्थ का धर्षण । कश्यप के माय दिति का सवाद ।
दिति और दनु का सवाद । मय के साथ इन्द्र का सवाद
और मरुतों का जन्म ।

अथ प्रभृति ये कुर्युरनयाद्वातुवातनम् ।

वशाच्छेदो विपत्तिश्च नित्य तेषा भविष्यति ।

१२५ यमतीर्थार्णनम् ७६१

कपोत और उलूक का युद्ध । हेति नाम की कपोतकी का
अग्नि की स्तुति करना और उलूका के द्वारा यम की स्तुति ।
उलूकी के साथ यम का सवाद । यमतीर्थ का धर्षण ।

१२६ तपस्तीर्थार्णनम् ७६८

अग्नि का धर्षण । देव, ऋषा और मुनियों का संवाद ।
तपस्तीर्थ का धर्षण ।

१२७ देवतीर्थार्णनम् ८०३

आर्षिणेय राजा का आश्वान पर हयमेध का
धर्षण । मिथुनामक दैत्य द्वारा पुरोहित सहित दीक्षित
राजा को रसातलमें ले जाना । पुरोहित पुत्र देवापि ने अपनी
माता से पूछा कि पिता कहाँ है ? उत्तर में माता ने

पुत्रको पिता का सम्पूर्ण वृत्तान्त कह दिया । देवापि की प्रतिज्ञा । नन्दि द्वारा मिथु की मृत्यु । रसातल से देवापि की पिता का आगमन । हयमेघ की समाप्ति । अनेक तीर्थों का वर्णन ।

१२८ तपोवनादितीर्थावर्णनम्

८१०

संक्षेप से कार्तिकेय का आख्यान । सन्तान के विषय में अग्नि और स्वाहा का सवाद । तारकामुर के भय से दुःखित देवों द्वारा अग्नि की प्रार्थना । शुक रूप से अग्नि का शिव के पास जाना । शिष्य पार्ष्णी सवाद । अग्नि पत्नी स्वाहा के गर्भ से मिथुन (जोड़ा) की उत्पत्ति और उनका नामकरण (सुवर्ण सुवर्णा) एवं विवाह । सुवर्णा और सुवर्ण को सुरासुर का शाप । शाप विमोचन के लिये ब्रह्मा के वचन से अग्नि का गौतमी के पास जाना वहाँ पर अग्नि द्वारा शिष्य की स्तुति । शाप मुक्ति के लिये शंकर का वरदान । गौतमी तट पर शिवलिङ्ग की स्थापना । तपोवनादि तीर्थों का वर्णन ।

१२९ इन्द्रतीर्थावर्णनम्

८२०

गंगा और फेना का संगम । इन्द्र द्वारा नमुचि दैत्य का वध । हिरण्य दैत्य के पुत्र महाशनि से इन्द्र की पराजय । इन्द्र की पाताल में स्थिति । वरुण को पराजित करने के लिये महाशनि का प्रस्थान । घारुणी और महाशनि का

के वचन से इन्द्र ने विष्णु की आराधना को पुनः प्रसन्न होकर भगवान् विष्णु ने महाशनि दैत्य को मार दिया ।

१३० आपस्तम्बतीर्थवर्णनम्, आपस्तम्बोपाख्यानम् ८३५

आपस्तम्बकृत शिवस्तुतिः ।

आपस्तम्ब मुनि की प्रशंसा और उन के आश्रम में अगस्त्य मुनि का गमन । आपस्तम्ब ने अगस्त्यकी पूजा की और पूछा कि तीनों देवों में कौन श्रेष्ठ है ? अगस्त्य ने कहा कि तीनों देवों में भेद न होते हुए भी शिव ही सर्वसिद्धियों को देने वाला है । अगस्त्य के वचन से आपस्तम्ब का गौतमी पर जाना और वहाँ पर शंकर की स्तुति तदनन्तर आपस्तम्ब को शंकर का घरदान और आपस्तम्ब तीर्थ की महिमा ।

१३१ यमतीर्थवर्णनम्, सरमाख्यानवर्णनम् ८४०

यमतीर्थ के प्रसंग में सरमा के आख्यान का कथन । दैत्य-गायों की रक्षा करने वाली सरमा को द्रव्य देकर दैत्यों ने गो हरण किया । सरमा ने इन्द्र से कहा कि मेरे को यांच कर दैत्य गायों को ले गये । पश्चात् घृहस्पति ने इन्द्र से कहा कि सरमा झुठ बोलती है तब इन्द्र ने सरमा को लात मारी और शपथ दिया । गायों को लाने के लिये इन्द्र ने विष्णु की स्तुति की । विष्णु और दैत्यों का युद्ध तथा दैत्यों की पराजय । दैत्यतार्जा की गायों की प्राप्ति । अपनी

माता को शाप से छुड़ाने के लिये सरमा के पुत्र का यम से प्रश्न ? सूर्य और यम का सवाद । सूर्य के घचन से यम का गौतमी पर आना । गौतमी तीरस्थ अनेक तीर्थों का घर्णन और वहाँ पर स्नान करने वालों को अनेक फल की प्राप्ति ।

१३२ यक्षिणीसंगममाहात्म्यकथनम् ८४७

यज्ञ करने वाले ऋषियों का विधावसु की यज्ञित विष्पला को शाप । विधावसु की प्रार्थना से शाप का निवारण । दुर्गा तीर्थ का घर्णन और यक्षिणी संगम तीर्थका माहात्म्य ।

१३३ शुक्लतीर्थवर्णनम् ८४८

शुक्लतीर्थ में भरद्वाज का यज्ञ घर्णन । यज्ञ में पुरोडाश को भक्षण करते हुए हव्यघ्न नामक राक्षस को मुनि का घचन । भरद्वाज और हव्यघ्न का सवाद । सम्पूर्ण अमृतों (जलों) में गौतमी जल की विशेषता । गौतमी जल से हव्यघ्न का अभिषेक और कृष्ण रूप से शुक्लत्व प्राप्ति एवं यज्ञ की समाप्ति । शुक्लादि तीर्थों का घर्णन ।

१३४ चक्रतीर्थवर्णनम् ८५१

चक्रतीर्थ में षशिष्ठादि सप्त ऋषियों का यज्ञारंभ । राक्षसों के विघ्न करने पर ब्रह्मा के पास जाना । ब्रह्मा की आज्ञा से माया द्वारा विघ्नका निवारण फिर यज्ञारंभ । जब शम्बर दैत्य ने माया को भक्षणकर लिया तब ऋषियों द्वारा

विष्णु की प्रार्थना । पश्चान् विष्णु ने उनकी स्थापना
 कर दिया और उस चक्र से राक्षसों का वध कर वक्र की
 समाप्ति । गङ्गाजल में चक्र का प्रक्षालन । यशनीर्गादि
 पांच सौ तीर्थों का वर्णन ।

१३५ वाणीसंगमतीर्थवर्णनम्

८५३

ब्रह्मा और विष्णु का अपने २ महस्व पर संवाद । ब्रह्मा और
 विष्णु को आकाशवाणी की उक्ति । तत्पश्चात् ज्योतिर्मूर्ति
 सत्तक शिवलिङ्ग के अन्त को खोजने के लिये ब्रह्मा विष्णु का
 प्रस्थान । अन्त को न देखने हुए विष्णु और ब्रह्मा का
 शिव के पास प्रभु से सत्य और असत्य कहना । ब्रह्माजी
 के मुख से निकली हुई वाणी की हरिहर का शाप । पुनः
 शाप का निवारण । गौतमी और वाणी संगम का अनेक
 तरह से वर्णन । दोनों के तटों पर स्थित एक सौ उन्नीस
 तीर्थों का माहात्म्य ।

१३६ विष्णुतीर्थवर्णनम्

८५६

मौद्गल्य खरिष का वर्णन । मौद्गल्य द्वारा सदाचार
 का वर्णन । विष्णु और मौद्गल्य का संवाद । मौद्गल्य
 द्वारा दान की प्रशंसा । विष्णु तीर्थ की प्रशंसा ।

१३७ लक्ष्मीतीर्थवर्णनम्

८६१

अपनी २ ज्येष्ठता के विषय में लक्ष्मी और दक्षिणा संवाद ।
 ब्रह्मा के पास दोनों का गमन ब्रह्मा के कहने से गौतमी पर

जाना । गौतमा द्वारा लक्ष्मी की प्रशंसा । लक्ष्मी तीर्थादि
छः हजार तीर्थों का वर्णन ।

८ मन्वादित्रिसहस्रतीर्थवर्णनम् । मानुतीर्थवर्णनम् ८६६
मानुतीर्थ के प्रसङ्ग में शर्याति राजाका चरित्र वर्णन । शर्याति
का दिग्विजय के लिये प्रस्थान । मार्ग में उसके पुरोहित
मधुच्छन्द का राजा के साथ सम्वाद । मधुच्छन्द द्वारा सूर्य
की आराधना । मानुकार्य के निकटवर्ती तीन हजार तीर्थों
वर्णन ।

३९ खड्गतीर्थवर्णनम् ८७१
खड्गतीर्थ के प्रसङ्ग से कश्यप के पुत्र पैलूय नामक मुनि का
चरित्र निरूपण । खड्गतीर्थ के निकटवर्ती छः हजार तीर्थों
का वर्णन ।

४० आत्रेयतीर्थवर्णनम् ८७३
आत्रेय ऋषि का आश्रयान । ब्रह्माजी के घर प्रसाद से आत्रेय
को इन्द्रपद की प्राप्ति । दिति के पुत्रों द्वारा सताये जाने पर
इन्द्रपद का त्याग ।

४१ कपिलामंगमाख्यतीर्थवर्णनम् ८८०
कपिल नामक मुनि का चरित्र उसीके प्रसंग में वृष्ण राजाका
संक्षेप से चरित्र वर्णन ।

ततो गोरूपमास्थाय भूम्यासीत्कपिलान्तिके ।

दुशोद च मर्होपध्या राजा येनफरोद्धपः ॥

यत्र देवा सगन्धर्वा ऋषयः कपिलोमुनिः ।

महीं गोरूपमापन्ना नर्मदाया मदामुने ॥

सरस्वत्या भागीरथ्या गोदधर्या विशेषतः ।

महानदीषु सर्वासु दुदुहेऽसौ पयो महत् ॥

सा दुह्यमाना पृथुना पुण्यतोयाऽमघशरी ।

गौतम्या सगता चाभूत्तदुदुतमिचामयत् ॥

कपिला सगम के निकटघर्ती अठ्ठासी हजार तीर्थोंका घर्णन ।

१४२ देवस्थानाख्यतीर्थवर्णनम्

८८३

सिंहिका के पुत्र राहु के लडके मेघहास नामक दैत्य का चरित्र उसके द्वारा तप किया जाना । देवस्थानोंके निकटघर्ती अठारह तीर्थों का घर्णन ।

१४३ सिद्धतीर्थवर्णनम्

८८५

रावण को ब्रह्माजी से शिवजी के एक सौ आठ नामों की प्राप्ति । रावण के तपका घर्णन । रावण के द्वारा कैलास को हिलाना । रावण को शिवजी से तलवार की प्राप्ति । सिद्धतीर्थ के निकट एक सौ आठ तीर्थों का घर्णन ।

१४४ परुष्णीसंगमतीर्थवर्णनम्

८८८

अत्रि ऋषिका उपाख्यान अत्रि को चार पुत्ररत्नों की प्राप्ति । आत्रेयी नामक अत्रि ऋषिकी कन्याका चरित्र । आत्रेयी और उघलनका आख्यान । परुष्णी सगम के निकटघर्ती तीन हजार तीर्थों का घर्णन ।

१४५ मार्कण्डेयतीर्थवर्णनम् ८६२

मार्कण्डेय आदि मुनियोंका ब्रह्माजीके साथ सम्वाद । मार्कण्डेय तीर्थ की महिमा का निरूपण उसके निकटस्थ अट्टानवें तीर्थोंका वर्णन ।

१४६ कालञ्जरतीर्थवर्णनम् ८६४

ययाति का आरयान । कालञ्जर के निकटवर्ती एक सौ आठ तीर्थों का वर्णन ।

१४७ अप्सरोयुगसंगमतीर्थवर्णनम् ८६६

दो अप्सराओं द्वारा विश्वामित्र ऋषि के तपोभंग का वर्णन । विश्वामित्र के शाप से अप्सराओं को नदीत्य की प्राप्ति ।

१४८ कोटितीर्थवर्णनम् ८७२

प्रसंगानुसार कण्व के पुत्र बाहीकका आख्यान । कण्वतीर्थ के निकट पचास तीर्थों का वर्णन ।

१४९ नारसिंहतीर्थवर्णनम् ८७५

हिरण्यकशिपु की प्रशंसा । नरसिंह द्वारा हिरण्यकशिपु का वध । नरसिंह का गौतमी के प्रति आगमन व अमर्य संज्ञक दैत्यका हनन । नारसिंह तीर्थ में स्नान दान आदि करने वालों को नाना फलों की प्राप्ति का कथन । नारसिंहादि आठ तीर्थों का वर्णन ।

१५० पैशाचतीर्थवर्णनम् ८७७

पैशाचतीर्थ का वर्णन । अजीगर्त का आख्यान । अजीगर्त

द्वारा शुन शेष नामक सपुत्र का वचन । पुत्र को वचने के पाप से अजीगर्त को नरक प्राप्ति । रोते हुए पिशाच के प्रति शुन-शेषका प्रश्न ? पिशाच की योनि में पड़े हुए अपने पिता के वचन सुन कर दुःखितअन्त करण शुन शेष द्वारा पिशाच के ऊपर गौतमी जल का छिड़कना । गौतमी जल के स्पर्श होते ही अजीगर्त को विष्णुपद की प्राप्ति । पैशाच तीर्थ की प्रशंसा । पैशाच आदि तीनसौ तीर्थों का वर्णन ।

१५१ निम्नभेदतीर्थवर्णनम् ६१०

उर्वशी गमन से दुःखित पुरूरवा के प्रति वसिष्ठ का उपदेश । निम्नभेद आदि सात सौ तीर्थों का वर्णन ।

१५२ आनन्दतीर्थवर्णनम् ६१३

चन्द्र द्वारा तारा का हरण । शुक के पास गुरु का जाना । शुक के लिये स्त्री हरण कथन । तारा को लाने के लिए शुक की प्रतिज्ञा । चन्द्र को शुक का शाप । तारा की शुद्धि के लिये देवताओं के प्रति शुक का प्रश्न ? गङ्गा को गुरु का वचन । आनन्द तीर्थका वर्णन ।

१५३ भावतीर्थवर्णनम् ६१८

भावतीर्थ आदि सात तीर्थों का वर्णन ।

१५४ सहस्रकुण्डलतीर्थवर्णनम् ६२०

रावणादि को मार कर अयोध्या के प्रति सपरिचार रामका गमन । लोक में अपवाद से यात्रीके के आश्रम के

पास राम की आज्ञा से लक्ष्मण, द्वारा, सीता का त्याग॥
राम के अश्वमेध में लघुकुश का जाना। सहस्रकुण्डादि
दश तीर्थों का वर्णन।

१५५ कपिलातीर्थवर्णनम् ६२३

अङ्गिरा को दक्षिणा मे आदित्य द्वारा भूमिदान। कपिला
संगमादि १०० तीर्थों का वर्णन।

१५६ शङ्खहृदतीर्थवर्णनम् ६२५

ब्रह्मा को भक्षण करने के लिये आते हुए राक्षसों का विष्णु
चक्र द्वारा घथ। शङ्ख तीर्थादि अयुत तीर्थों का वर्णन।

१५७ किष्किन्धातीर्थवर्णनम् ६२६

रावण के मरने पर सीता और लक्ष्मणके साथ श्रीराम का
गौतमी पर आना। रामरुत गौतमी प्रशंसा। राम एवं
धानरों का गौतमी पर स्नान और शिवलिङ्गपूजादि वर्णन।
राम के प्रति विभीषण का घवन। किष्किन्धा तीर्थ का
महत्त्व।

१५८ व्यासतीर्थवर्णनम् ६३२

अङ्गिरसों की उत्पत्ति। माता की आज्ञा के बिना तप करने
के लिए गये हुए आङ्गिरसों को विघ्न होना। अगस्त्य के
आश्रम में आङ्गिरसों का गमन व संपाद। अगस्त्य की
आज्ञा से उनका गौतमी पर आना। व्यास तीर्थ की
महिमा।

१५६ वंजरासंगमतीर्थवर्णनम्

६३६

दास भाव को प्राप्त हुए गरुड़ का अपनी माता विनता के प्रति प्रश्न ? उत्तर में माता ने कहा कि मैं अपने ही अपराध से दासी भाव को प्राप्त हुई । कद्रू के घवन से गरुड़ का सर्पों को सूर्यलोक में ले जाना और उनका अधःपतन । तन्निमित्त कद्रू का विनता के प्रति क्रोधपात्र । सर्पों की जरा दूर करने के लिये गरुड़ का रसातल से जल लाना । उस जल के प्रोक्षण से सर्पों का जरा दूरीकरण और उसीसे वंजर की उत्पत्ति । वंजर संगमादि सवा लाख तीर्थों का वर्णन ।

१६० देवागमतीर्थवर्णनम्

६४२

धन के निमित्त देवदामर्षों की ईर्ष्या । ब्रह्माकी आज्ञासे देवताओं का असुरों के साथ युद्धारम्भ । युद्ध के आरम्भ में गौतमी तट पर देवताओं का विष्णु एवं शंकर की स्तुति करना । गौतमी, हरि एवं शंकर की कृपा से देवताओं की विजय ।

१६१ कुशतर्पणतीर्थवर्णनम्

६४५

कुशतर्पण तीर्थ का वर्णन । ब्रह्मा की उत्पत्ति और सृष्टि-प्रक्रम । यज्ञसामग्री का वर्णन । विराट् पुरुष की उत्पत्ति । प्रणीता संगम कुश तीर्थ आदि छियासी हजार तीर्थों का वर्णन ।

२ मन्युतीर्थवर्णनम्

६५३

अपनी विजय के लिए और शूरवीर पुरुष की प्राप्ति के लिए देवताओं द्वारा महेश्वर की स्तुति । शंकर की रूपा से प्राप्त मन्यु नामक पुरुष के प्रति सामर्थ्यपरीक्षा के लिये देवताओं का वचन । मन्यु के स्वरूप का वर्णन । देवों द्वारा मन्यु की स्तुति । मन्यु के आश्रय से देवताओं को विजय प्राप्ति ।

३ मारस्यततीर्थवर्णनम्, ब्रह्मरूपधारिपरशुनामक-

रक्षमउपास्यानम्

६५७

परशु नामक राक्षस ने ब्राह्मण रूप धारण कर शाकन्य मुनि से कहा कि मुझे भोजन दो ।

दूरादभ्यागत भ्रान्तमनुगच्छन्ति देवता ।

तस्मिंस्त्वृप्ते तु तृप्ता स्युरतृप्ते तु विपर्यय ॥

अतिथिश्चापवादी च द्वानेती विश्ववान्धवी ।

अपवादी हरेत्पापमतिथि स्वर्गसङ्क्रम ॥

अभ्यागत पथिभ्रान्त सायत्र योऽमिवीक्षने ।

तत्क्षणादेव नश्यन्ति तस्य धर्मयशश्चिय ॥

भोजन के समय परशु ने शाकन्य से कहा कि मैं ब्राह्मण नहीं हूँ तुम्हारा शत्रु हूँ तुम्हें खाने के लिये आया हूँ फिर शाकन्य ने अपना अपूर्ण शरीर दिखाया । परशुराक्षस

ने शाकल्यकी स्तुति की। शाकल्यकी आज्ञासे पर
ने, सरस्वतीकी स्तुति की और उसको स्वर्ग प्राप्ति।

१.६४ चिच्चिकतीर्थवर्णनम्

६६३

पवमान राजा का चिच्चिक नामक पक्षी से संवाद। पवमान
राजा के प्रति चिच्चिक पक्षी का पूर्वजन्म वृत्तान्तकथन।
ब्रह्महत्या सहस्र पापों का वर्णन।

अविज्ञातं चोपचिष्टं विमेमीति च वादिनम् ।

तं यदि क्षत्रियो हन्यात्सतु स्याद्ब्रह्मघातकः ॥

अधीतं विस्मरति यस्त्वं करोति तथोत्तमम् ।

अनादरञ्च गुरुषु तमाहुर्ब्रह्मघातकम् ॥

प्रत्यक्षे च म्रियं धत्ति परोक्षे परुषाणि च ।

अन्यद्भृदि धत्तस्यन्यत्करोत्यन्यत्सदैव यः ॥

गुरुणां शपथं कर्ता द्वेषा ब्राह्मणनिन्दकः ।

मिथ्याविनीतः पापात्मा स तु स्वाद्ब्रह्मघातकः ॥

देवं वेदमथाध्यात्मं धर्मब्राह्मणसंगतिम् ।

एतां निन्दति यो द्वेषात्सतु स्याद्ब्रह्मघातकः ॥

चिच्चिक की मुक्ति के लिए राजा का प्रश्न। चिच्चिक ने
राजा से प्रार्थना की कि मुझे मुक्तिके लिए श्वेत पर्वत स्थित
भगवान् गदाधर के पास ले चलो। राजाके साथ गंगा, और
गदाधर के दर्शन के लिए चिच्चिक का गमन। चिच्चिक
द्वारा गंगा का स्तवन एवं स्वर्ग प्राप्ति। राजा पवमान का
अपने सेवकों के साथ अपने नगर में आना।

६५ भद्रतीर्थवर्णनम्

६६८

कन्या के विवाह विषय में सूर्य का विचार । विवाह की अवधिफयन । कन्यादान के लिए कुल आदि का विचार । कन्या की प्रशंसा । कन्या आदि के विक्रय में निषेध । विवाह काल के उल्लङ्घन में दोष वर्णन । विश्वरूप और विष्टि का विवाह । भद्रतीर्थ का वर्णन ।

१६६ पतत्रितीर्थवर्णनम् ।

६७४

पतत्रि तीर्थ का वर्णन ।

१६७ विप्रतीर्थवर्णनम्

६७५

सोते हुए ब्राह्मण पुत्र आसन्दिष को लेकर राक्षसी का भागना । आसन्दिष और राक्षसी का संवाद । किसी ब्राह्मण कन्या के साथ आसन्दिष का विवाह । नारायण द्वारा राक्षसी का घथ । विप्रतीर्थ का वर्णन ।

६८ भानुतीर्थवर्णनम्

६८०

राजा अमिष्टुत का हयमेघ आरम्भ । याचना का लुप्तत्व वर्णन । ब्राह्मण वेशधारिदैत्या का यज्ञ में जाना । भान्वादि सौ तीर्थों का वर्णन ।

१६९ मिह्रतीर्थवर्णनम्

६८४

वेद नामक ब्राह्मण का शिवपूजा के अनन्तर मिश्राटन के लिए गमन । व्याघ्र का शिवपूजा प्रकार । विधान से की

हुई पूजा को विध्वंस करनेवाले के लिए वेद के मन में क्रोध की उत्पत्ति । आदिकेश और वेद का संवाद । व्याघ्र की भक्ति का वर्णन । व्याघ्र को घर प्राप्ति ।

१७० चक्षुस्तीर्थवर्णनम्

६८६

चक्षु तीर्थ का वर्णन । गौतम और कुण्डल का धन उपार्जन विषयक संवाद । पुत्र धर्म का वर्णन । धर्म की प्रशंसा । धर्म प्रशंसा करने वाले कुण्डल के नेत्रों का नाश । विभीषण का पुत्र के साथ संवाद । कुण्डल वैश्य को नेत्रादि का प्राप्ति । महाराजा नामक राजा की पुत्री को नेत्रों की प्राप्ति (बह जन्मान्ध थी) । कुण्डलको राजकन्याकी प्राप्ति ।

१७१ उर्वशीतीर्थवर्णनम्

६६६

इन्द्र और प्रमिति का संवाद । इन्द्र और प्रमिति का क्रीडन वर्णन । प्रमिति और चित्रसेन का क्रीडन वर्णन । मधुच्छन्द के साथ प्रमिति पुत्र सुमति के द्वारा प्रमिति को पाश खेलने से गये हुए राज्य की प्राप्ति । श्रेष्ठ पुरुषों के लिये बिना छलकी वृत्ति का विधान ।

अकैतवी च या वृत्तिः सा प्रशस्ता द्विजन्मनाम् ।

कृपिगोरक्ष्यदाणिज्यमपि कुर्यान्न कैतवम् ॥

यस्तु कैतववृत्त्या हि धनमाहर्तुमिच्छति ।

धर्मार्थकामाभिजनैः स विमुच्येत पौरुषात् ॥

७२ समुद्रतीर्थवर्णनम्

१००५

गङ्गा और सागर का संवाद । गङ्गा के सप्त रूप का वर्णन ।

१७३ भीमेश्वरतीर्थवर्णनम्

१००८

गङ्गा के सात नामों का वर्णन ।

सप्तधा व्यमजन् गङ्गामृषयः सप्त नारद ।
 घाशिष्ठो दाक्षिणेयी स्याद्वैश्वामित्री तदुत्तरा ॥
 घामदेश्यपरा ज्ञेया गौतमी मध्यतः शुभा ।
 मारद्वाजी स्मृता चान्या आत्रेयी चेत्यथापरा ॥
 जामदग्नी तथा चान्या व्यपदिष्टा तु सप्तधा ।

ऋषि यज्ञ में देव शत्रु विश्वरूप का आगमन । विश्वरूप और
 ऋषि का संघाद ।

कर्मणा तात लभ्यन्ते फलानि विविधानि च ।
 त्रयाणां कारणानां च कर्म प्रथमकारणम् ॥
 कर्मणां कारणत्वं च कारणे पुष्कले सति ।
 भावामासी फले दृष्टौ तस्मात्कर्माधितं फलम् ॥
 भावात्प्रारभते तद्व्यावैः फलमवाप्यते ।
 धर्मार्थकाममोक्षाणां कर्म चैव हि कारणम् ॥
 भावस्थितं भवेत्कर्म मुक्तिदं बन्धकारणम् ।
 स्वभावानुगुणं कर्म स्वस्यैवेह परत्र च ।

भीमेश्वर तीर्थ का वर्णन ।

१७४ गङ्गासागरसंगमवर्णनम्, सोमतीर्थवर्णनम् १०१२

गङ्गा और सागर का संगम वर्णन । देवताओं द्वारा हर और
 विष्णु का स्तवन । सोम तीर्थ का माहात्म्य । नारदकृत

सोम स्तुति । आदित्य और वार्हस्पत्यादि तीर्थों का वर्णन ।

१७५ तीर्थादीनांचातुर्विध्यादिनिरूपणम् १०१६

गंगा की ब्रह्मा के कमण्डलु में, विष्णुके पद में, शिवजी की जटाजूट में, ब्रह्मगिरि में और पूर्व समुद्र में क्रम से स्थिति का वर्णन । चार प्रकार के तीर्थों का यताना । तीर्थों का सत्ययुगादि में क्रम से त्रिदैवत्व भाव होने से कलियुग में भी दैवत्व भाव का निरूपण बताया है । तीर्थों का युग क्रम से दैव, आसुर, आर्ष और मनुष्यत्व प्राप्ति का वर्णन । गणेशजी को शंकर की जटा से गंगावतरण का पार्वती द्वारा कथन । पार्वती और गणेशजी के संवाद में ब्रह्मगिरि पर्वत से समुद्र पर्यन्त गौतमी के दोनों तटों की स्थिति विषयक गौतम के प्रति हर्षपुलकित शिवजी का घर प्रदान । शिवजी द्वारा वर्णित गौतमी की यात्रादि का वर्णन । विस्तार सहित गौतमी माहात्म्य का फल कथन ।

१७६ अनन्तवासुदेवमाहात्म्यवर्णनम् १०२६

अनन्तवासुदेव भगवान् का माहात्म्य । ब्रह्माजी की विश्वकर्मा की वासुदेव भगवान् की मूर्ति बनाने के लिये आज्ञा । देवताअकि साथ रावणका संग्राम । रावण द्वारा इन्द्रकी पराजय । रावणका इन्द्रपुरी में गमन । वहाँ पर स्थित भगवान् वासुदेवकी मूर्तिको पुष्पक विमान द्वारा लङ्कामें ले जाना । रावणसे विभीषणको मूर्तिकी

प्राप्ति । राम और रावण का युद्ध । युद्ध में रावण की मृत्यु । भगवान् राम का अयोध्या के प्रति गमन ।

७७ पुरुषोत्तमक्षेत्रमाहात्म्यवर्णनम् १०३२

पुरुषोत्तम क्षेत्र के माहात्म्य का वर्णन ।

७८ कण्डुचरित्रवर्णनम् १०३६

कण्डु के आश्रम में तपनाश करने के लिये प्रम्लोचा का जाना । कण्डु और प्रम्लोचा का संवाद । तप नष्ट होने से कण्डु का पुरुषोत्तम क्षेत्र में जाना और विष्णु की स्तुति एवं धरदान की प्राप्ति तदनन्तर मुक्ति । कण्डु की आख्यायिका का पठन एवं श्रवण का फल और पुरुषोत्तम क्षेत्रकी महिमा का वर्णन ।

७९ वादरायणं प्रतिश्रीकृष्णावतारविषयको मुनीनां

प्रश्नः १०५६

संशयाविष्ट मुनियों द्वारा कृष्णावतार के विषय में व्यासजी से प्रश्न ।

वसुदेवकुले धोमान्वासुदेवत्वमागतः ।

अमरैश्चाऽऽवृतं पुण्यं पुण्यरुद्विरलंगृतम् ॥

देवलोकं किमुत्सृज्य मर्त्यलोक इहाऽऽगतः ।

देवमानुषयोर्नेता योर्मुघः प्रमथोऽय्ययः ॥

किमर्थं दिव्यमात्मानं मानुषेषु न्ययोजयत् ।

यश्चक्रः घर्तपत्येको मानुषाणामनामयम् ॥

१८० श्रीकृष्णचरितारम्भः । चतुर्व्यूहवर्णनम् १०६३

मुनियों के प्रशोत्तरमें व्यासवृत्तभगवत्स्तुति व नानावतारों का वर्णन । चतुर्व्यूहकथन ।

१८१ अवतारप्रयोजनवर्णनम् १०६८

भाराक्रान्तायाः पृथ्व्या ब्रह्मणः समीपेगमनम् ।

ब्रह्माणं प्रति भगवद्वाक्यम् । हरेरंशान्तारनिरूपणम् ।

भगवान् के अवतार धारण करने का प्रयोजन वर्णन । भार से पीड़ित पृथ्वी का ब्रह्माजी के पास जाना और अपने दुःख का निवेदन ।

अग्नि सुवर्णस्य गुरुर्गवा सूर्योऽपरो गुरु ।

ममाप्यखिललोकानां धन्योनारायणो गुरु ॥

तत्साप्रतमिमेदैत्या कालनेमिपुरोगमा ।

मर्त्यलोकं समागम्य बाधन्तेऽहर्निशं प्रजा ॥

भगवान् की प्रशंसा से गर्वित देवताओं के प्रति ब्रह्माजी का कथन । ब्रह्माजी द्वारा विष्णुस्तुति । स्तुतिश्रवण के अनन्तर विष्णु के द्वारा ब्रह्मा को सफेद और कृष्ण दो केशों का दान । विष्णु की सहायता के लिये इन्द्रादि देवताओं का अवतार । नारदजी ने कस से कहा कि देवकी के माठवें गर्भ से तुम्हारी मृत्यु होगी ऐसा सुन कर क्रोधित कसने वसुदेव तथा देवकीको कारागारमें डाल दिया । देवकी

के छे पुत्रा का कस द्वारा धध । विष्णु और माया के
संवाद में माया के प्रति भगवान् की आज्ञा ।

त्वं भूतिः संततिः कीर्तिः कान्तिर्नृ पृथिवी धृतिः ।

लज्जा पुष्टिरथा या च काचिदन्या त्वमेव सा ॥

ये त्वामार्यति दुर्गति वेदगर्भेऽम्बिकेति च ।

भट्टेति भद्रकालीति क्षेम्या क्षेमकरीति च ॥

प्रातश्चैवऽपराह्णे च स्तोप्यन्त्यानम्रमूर्तयः ।

तेषां हि घाञ्छितं सर्वं मत्प्रसादाद्विविप्यति ॥

१८२ श्रीकृष्णोत्पत्तिकथानिरूपणम् ।

१०७४

भगवान् की आज्ञासे माया द्वारा देवकी के गर्भ का आकर्षण
और रोहिणी के गर्भ में स्थापन । यशोदा के उदर में माया
की स्थिति । देवकी के उदर में भगवान् का प्रवेश । भा-
गवान् के अवतार के समय देवताओं द्वारा पुष्प वृष्टि । ऋ-
देव देवकी द्वारा भगवान् की स्तुति । देवकीके प्रति माया
का ध्वन । गोकुल में जाकर धनुदेव द्वारा यशोदा के गर्भ
में पुत्रकी स्थापना कर कन्या को लाना । यशोदा के गर्भ
सुप्त कर देवकी के पुत्र जन्म का दूसरी भाग देवकी के गर्भ-
गार में कस का आगमन । यशोदा के गर्भ में भगवान् के
हुई देवकी से कन्या का आकर्षण तत्पश्चात् भगवान् का
गमन ।

१८३ कर्मविचारकथनम् ।

१०७५

अशान्त कस द्वारा प्रलम्बादि दैत्यों के भय

‘कथन । कंस ने दैत्यों को बालकों के मारने का आदेश दिया । कंस ने वसुदेव देवकी के बन्धन को सोल पर उन्हें शान्ति करवाई ।

१८४ श्रीकृष्णबालचरितवर्णनम् ।

१०७६

मथुरा में ही नन्द के पास वसुदेव का जाना । वसुदेव और नन्द का प्रेम सवाद । वसुदेव की यात्रा से नन्दादि गोपों का गोकुल में आना । कृष्ण के द्वारा पूतना का घब । गोपुच्छादि से कृष्ण की रक्षा । नन्द ने कृष्ण का स्वस्ति घावन करवाया । बालक के चरण प्रहार से शकट (गाड़ी) का गिरना । उससे गोपियों का आश्चर्य । तदनन्तर यशोदा द्वारा शकट की पूजा । वसुदेव से प्रेरित गर्ग द्वारा गुप्त रूप से बालकों का नामकरण । बाललोला का वर्णन । यमलाजुन का उद्धार । उत्पातों के भय से गोप गोपियों का वृन्दावन प्रवेश । वृन्दावन को शोभा का वर्णन । बालकों की क्रीडा का वर्णन ।

१८५ कालीयदमनारुहानम् ।

१०८५

बलराम के बिना गोपों के साथ कृष्ण का कालीयहृद पर आगमन । उसको विषयुक्त देख कर कृष्ण का कालीयहृद में कूदना । वहाँ पर सपरिवार कालीय का आगमन एवं कृष्ण को डँसना । गोपियों का विथाप । नन्दादिकों के दुःख को छुड़ाने के लिए बलदेव का कृष्ण के प्रति स्पर्शी

करण । नागपत्नी द्वारा कृष्ण की स्तुति । कालीय द्वारा कृष्ण की स्तुति । समुद्र में जाने के लिये कालीय के प्रति कृष्ण की आज्ञा । सपरिवार कालीय का समुद्र के प्रति गमन । कृष्ण का हृद से बाहर आना ।

१८६ धेनुकप्रधास्यानम् । १०६१

गोपों के साथ बलराम और कृष्ण का ताल वन के प्रति जाना । ताल फल की इच्छा से गोपों का रामकृष्ण के प्रति विज्ञापन । रामकृष्ण द्वारा तालफल को गिराना । धेनुकासुर द्वारा रामकृष्ण के वक्षस्थल का ताटन । कृष्ण द्वारा धेनुकासुर का वध ।

१८७ रामकृष्णकृतप्रहृषिणीलीलावर्णनम् १०६३

बाह्यग्राहक लक्षण खेल के मिय से बलदेव द्वारा प्रलयासुर का वध । गोपों द्वारा बलराम की प्रशंसा । ब्रज के प्रति गमन । शत्रु का घणन । गोवर्धनलीला का वर्णन ।

१८८ गोवर्धनास्यानवर्णनम् ११००

कृष्ण द्वारा गोवर्धन पर्वत का उद्धार और इन्द्र का मान भंग । इन्द्र द्वारा कृष्ण स्तुति । कृष्ण को गोविन्द नामकी प्राप्ति । इन्द्र द्वारा अर्जुन के विषय में प्रार्थना । इन्द्र और कृष्ण का अपने २ स्थान में जाना ।

१८९ अरिष्टप्रधनिरूपणम् ११०५

राक्षसोडा का वर्णन और अरिष्टासुर का वध ।

१६० केशिवधनिरूपणम्

११११

कंस और नारद का सम्वाद । बलराम और कृष्ण को लाने के लिये कंस का अक्रूर को भेजना । बलराम और कृष्ण को मारने के लिये कंस की मलयुद्धयोजना । कृष्ण के वध के लिये केशि का वृन्दावन जाना । केशि के शब्दों गोपों को भय । कृष्ण द्वारा केशि वध । नारदरत्न कृष्णवर्णन ।

१६१ अक्रूरगमनवर्णनम्

१११६

अक्रूर का गोकुल गमन । अक्रूर द्वारा कृष्ण का वर्णन ।

१६२ अक्रूरमृत्यागमनवर्णनम्

११२०

अक्रूर द्वारा कृष्ण को नमस्कार । अक्रूर द्वारा 'कंस की उक्ति का कथन । कंस के वध के लिये कृष्ण की उक्ति । मथुरा के लिये राम कृष्ण और अक्रूर का गमन । कृष्ण के गमन से दुःखित गोपियों का परस्पर संभाषण । यमुना जल में अक्रूर को भगवान् के दर्शन । अक्रूर द्वारा कृष्ण स्तुति । कृष्ण और अक्रूर का संवाद । मथुरा में बलराम और कृष्ण का पराक्रमवर्णन ।

१६३ कुञ्जोद्धारवर्णनम् । कंसवधनिरूपणम्

११२६

कुञ्जा के प्रति कृष्ण का कथन । कृष्णरुत अनुग्रह वर्णन । बलराम और कृष्ण को मारने के लिये चाणूर व मुष्टिक को कंस की आज्ञा । नागरिकों द्वारा बलराम और कृष्ण का

वर्णन । कृष्ण और चाणूर का युद्ध । मुष्टिक और बलराम का युद्ध । चाणूर और मुष्टिक का वध । कंस वध ; वसुदेव द्वारा भगवत्स्तुति ।

६४ देवकीवसुदेवाम्यां मह कृष्णमंवादः ११३६

देवकी और वसुदेव के साथ कृष्ण का मवाद । कृष्ण द्वारा कंस की पत्नी का समाधान । कृष्ण द्वारा उग्रसेन का राज्याभिषेक । उग्रसेन को सुयर्मा नामक सभा का प्राप्ति । उल्लोच और कृष्ण को गुरु सार्दीपनि द्वारा अस्त्रप्रदान । सार्दीपनि को पुत्रप्राप्ति ।

६५ जरासन्धेन मह रामजनार्दनयुद्धवर्णनम् ११४२

जरासन्ध के साथ रामजनार्दन का युद्ध । जरासन्ध का विर-
म्कार । जरासन्ध का युद्ध के लिये फिर आना । जरासन्ध की पराजय ।

६६ कालयवनोपागमनम् ११४४

कालयवन की उत्पत्ति का वर्णन । कालयवन द्वारा यादवों का नाश । यादवों की रक्षा के लिये कृष्ण द्वारा द्वारका का निर्माण । मुचुकुन्द द्वारा कालयवन का नाश । मुचुकुन्द द्वारा भगवत्स्वरूप का वर्णन ।

६७ गोकुले बलप्रन्यागमनवर्णनम् ११४६

मुचुकुन्द को भगवान् का वर प्रदान । तप के लिये मुचुकुन्द

का गन्धमादन के प्रति गमन । चलदेवजी का गोकुल में आना ।

१६८ हलक्रीडावर्णनम् ११५१

घरुण और घारुणो का संवाद । यमुना और चलदेवजी का संवाद । चलदेवजी का मधुरा में गमन ।

१६९ रुक्मिणीविवाहवर्णनम् ११५३

कृष्ण द्वारा रुक्मिणी का हरण । कृष्ण से रुक्मी की पराजय । रुक्मिणी विवाह एवं प्रद्युम्न की उत्पत्ति ।

२०० प्रद्युम्नाख्यानवर्णनम् ११५५

शम्बरानुर द्वारा प्रद्युम्न का हरण । शम्बर का प्रद्युम्न को समुद्र में फेंकना । मत्स्य के उदर से शम्बर की स्त्री की प्रद्युम्न की प्राप्ति । शम्बर की स्त्री से नारद का संवाद । शम्बर और प्रद्युम्न का युद्ध । शम्बर का घघ । द्वारका में प्रद्युम्न का आगमन । श्रीकृष्ण नारद संवाद ।

२०१ अनिरुद्धविवाहे रुक्मिराधनिरूपणम् ११५८

रुक्मिणी के पुत्रों के नाम । कृष्ण की स्त्रियों के नाम । अनिरुद्ध का विवाह । रुक्मी और चलदेव का सून बनना । चलदेव द्वारा रुक्मी का घघ ।

२०२ नरकाधवर्णनम् ११६२

इन्द्र का द्वारका में आना । इन्द्र द्वारा नरकासुर की घेरावा का वर्णन । उद्योतिगपुर के प्रति कृष्ण का गमन । कृष्ण

द्वारा मुरदेत्य का घघ । कृष्ण द्वारा नरकासुर का घघ ।
पृथ्वी द्वारा कृष्ण को कुण्डल दान । अदितिको कुण्डल
देने के लिये भगवान् का स्वर्गगमन ।

२०३ अदितिकृता भगवत्स्तुतिः

११६६

पारिजातहरणवर्णनम् । शक्रस्तववर्णनम्

अदितिहस्त भगवत्स्तुति । कृष्ण और अदिति का सवाद ।
सत्यमामाके घघनसे कृष्ण द्वारा कल्पवृक्ष का उतार ।
घनपालों के साथ श्रीकृष्ण का सवाद । घनपालों को
सत्यमामा की गर्वोक्ति । देवताओं के साथ श्रीकृष्ण का
युद्ध । इन्द्र के साथ सत्यमामा का सवाद । इन्द्र द्वारा
भगवद्वर्णन ।

२०४ इन्द्रकृष्णसंवादवर्णनम्

११६७

इन्द्र के साथ श्रीकृष्ण का सवाद । इन्द्रका नैऋत का
आगमन । कल्पवृक्ष का वर्णन ।

२०५ अनिरुद्धचरित्रवर्णनम् । बाणयुद्धवर्णनम् । ११६८

रुक्मिणी आदि छिपोंके पुनः पुनः पौरोहित्य के वर्णन । दुरा
और अनिरुद्ध के विवाह का वर्णन । शक्र द्वारा दुरा का
उपा का गोरी से सवाद । शक्र द्वारा दुरा के चतुरता
की चतुरता का वर्णन ।

२०६ बाणयुद्धवर्णनम्

११६९

द्वारा मुद्गैत्य का घघ । कृष्ण द्वारा नरकासुर का घघ ।
पृथ्वी द्वारा कृष्ण को कुण्डल दान । अदितिको कुण्डल
देने के लिये भगवान् का स्वर्गगमन ।

२०३ अदितिकृता भगवत्स्तुतिः

११६६

पारिजातहरणवर्णनम् । शक्रस्तववर्णनम्

अदितिकृत भगवत्स्तुति । कृष्ण और अदिति का संवाद ।
सत्यमामाके घघनसे कृष्ण द्वारा कल्पवृक्ष का छाता ।
घनपालों के साथ श्रीकृष्ण का संवाद । घनपालों को
सत्यमामा की गर्वोक्ति । देवताओं के साथ श्रीकृष्ण का
युद्ध । इन्द्र के साथ सत्यमामा का संवाद । इन्द्र द्वारा
भगवद्वर्णन ।

२०४ इन्द्रकृष्णसंवादवर्णनम्

११७४

इन्द्र के साथ श्रीकृष्ण का संवाद । द्वारका में भगवान् का
आगमन । कल्पवृक्ष का वर्णन ।

२०५ अनिरुद्धचरित्रवर्णनम् । बाणयुद्धवर्णनम् । ११७५

रुक्मिणी आदि स्त्रियोंके पुत्र एवं पौत्रोंके नामोंका वर्णन । उपा
और अनिरुद्ध के विवाह का कथन । बाणासुर की लड़की
उपा का गौरव से संवाद । चित्रलेखा की लेखनकला
की चतुरता का वर्णन ।

२०६ बाणयुद्धवर्णनम्

११७६

भगवान् शंकर के साथ बाणासुर का संवाद और युद्ध के

का गन्धमादन के प्रति गमन । बलदेवजी का गोकुल में आना ।

१६८ हलक्रीडावर्णनम् ११५१

धृष्ण और चारुणी का संचाद । यमुना और बलदेवजी का संचाद । बलदेवजी का मथुरा में गमन ।

१६९ रुक्मिणीविवाहवर्णनम् ११५३

कृष्ण द्वारा रुक्मिणी का हरण । कृष्ण से रुक्मी को पराजय । रुक्मिणी विवाह एवं प्रद्युम्न की उत्पत्ति ।

२०० प्रद्युम्नाख्यानवर्णनम् ११५५

शम्बरानुर द्वारा प्रद्युम्न का हरण । शम्बर का प्रद्युम्न को समुद्र में फेंकना । मत्स्य के उदर से शम्बर की स्त्री को प्रद्युम्न की प्राप्ति । शम्बर की स्त्री से नारद का संचाद । शम्बर और प्रद्युम्न का युद्ध । शम्बर का घघ । द्वारका में प्रद्युम्न का आगमन । श्रीकृष्ण नारद संचाद ।

२०१ अनिरुद्धविवाह रुक्मिण्यधनिरूपणम् ११५८

रुक्मिणी के पुत्रों के नाम । कृष्ण की स्त्रियों के नाम । अनिरुद्ध का विवाह । रुक्मी और बलदेव का दूत घणन । यन्त्रेय द्वारा रुक्मी का घघ ।

२०२ नरकाधवर्णनम् ११६२

इन्द्र का दारुणता में आना । इन्द्र द्वारा नरकासुर की घेरावा घर्जन । उपोतिषपुर के प्रति कृष्ण का गमन । कृष्ण

द्वारा मुरदैत्य का घघ । कृष्ण द्वारा नरकासुर का घघ ।
पृथ्वी द्वारा कृष्ण को कुण्डल दान । अदितिको कुण्डल
देने के लिये भगवान् का स्वर्गगमन ।

२०३ अदितिकृता भगवत्स्तुतिः

११६६

पारिजातहरणवर्णनम् । शक्रस्तववर्णनम्

अदितिकृत भगवत्स्तुति । कृष्ण और अदिति का संवाद ।
सत्यमामाके घघनसे कृष्ण द्वारा कल्पवृक्ष का लाना ।
घनपालों के साथ श्रीकृष्ण का संवाद । घनशालों को
सत्यमामा की गयींक्ति । देवनाओं के साथ श्रीकृष्ण का
युद्ध । इन्द्र के साथ सत्यमामा का संवाद । इन्द्र द्वारा
भगवद्वर्णन ।

२०४ इन्द्रकृष्णसंवादवर्णनम्

११७४

इन्द्र के साथ श्रीकृष्ण का संवाद । द्वारका में भगवान् का
आगमन । कल्पवृक्ष का घर्णन ।

२०५ अनिरुद्धचरित्रवर्णनम् । बाणयुद्धवर्णनम् । ११७५

रुक्मिणी आदि स्त्रियोंके पुत्र एवं पौत्रोंके नामोंका घर्णन । उषा
और अनिरुद्ध के विवाह का कथन । बाणासुर की लड़की
उषा का गौरी से संवाद । चित्रलेखा की लेखनकला
को चतुरता का वर्णन ।

२०६ बाणयुद्धवर्णनम्

११७६

भगवान् शंकर के साथ बाणासुर का संवाद और युद्ध के

लिये प्रार्थना । उषा के भन्तःपुर में चित्रलेखा द्वारा अनि
फा लाना । याणासुर और अनिष्टद का युद्ध । अनि
का बन्धन । कृष्ण और बलदेव का युद्ध के लिये आ
याणासुर के साथ भगवान् का युद्ध । भगवान् और शंकर
युद्ध । हरिहर संवाद । भगवान् का सपत्नीक अनिष्टद
साथ द्वारका में आना ।

२०७ पौण्ड्रकवधवर्णनम्

११८

काशिराज पौण्ड्रक के दूत का द्वारका में आगमन । दूत
साथ कृष्ण का संवाद । श्रीकृष्ण के साथ पौण्ड्रक
युद्ध । पौण्ड्रक का वध । शंकर के घरदान से फाद्रि
के पुत्र द्वारा कृत्या का उत्पादन । सुदर्शन चक्र के भ
कृत्या का वाराणसी में प्रवेश । चक्र द्वारा वाराणसी
दाह पश्चात् चक्र का कृष्ण के हाथ में वापिस आना ।

२०८ बलदेवमाहात्म्यवर्णनम्

११९

व्यास और ऋषियों के संवाद में बलदेवजी के पराक्रम
वर्णन । साम्ब द्वारा दुर्योधन की कन्या का हरण । दुर्योध
दिकों द्वारा साम्ब का बन्धन । बलदेवजी का हस्तिना
में आगमन । कौरवों के साथ बलदेव का संवाद । बल
रुत हस्तिनापुर का आकर्षण । कौरवों द्वारा बलदेव
प्रार्थना ।

६ द्विविदवानरवधवर्णनम्

११६३

व्यासजी और ऋषियों का संवाद । बलदेव कृत द्विविद-
वानर वध ।

७ भूमिभारावतरणकथनम् । यादवकुलमंहार- ११६६
वर्णनम् ।

व्यासजी और ऋषियों के संवाद में भूमि के भारावतरण का
कथन । यादव कुल के उपमहार का वर्णन । भगवान् का
द्वारका त्याग तथा निजबाम गमन । यादवों के शाप का
हेतु कथन । देवताओं द्वारा भेजे हुए दूत का आगमन तथा
कृष्ण के साथ संवाद । महोत्पातों के गमन के क्रिये यादवों
का प्रमास में जाना । भगवान् का उद्भव के साथ संवाद ।
यादवों का नाश वर्णन ।

१ कृष्णमानुषोत्सर्गकथनम्

१२०२

भगवान् की कृपा से लुब्धक (याध) का स्वर्ग गमन ।

२ रुक्मिण्यादीनां परलोकगमनम्

१२०४

आभीरार्जुनमंवाद कथनम् । आभीरार्जुनयुद्धवर्णनम् ।

अर्जुनविषादकथनम् । व्यामार्जुनमंवादकथनम् ।

अष्टावक्राख्यानम् ।

रुक्मिणी आदि राज्ञियों का स्वर्गरोहण । आभीर और

अर्जुन का संवाद एवं युद्ध । अर्जुन की पराजय । म्लेच्छों द्वारा श्रेष्ठ स्त्रियों का हरण । अर्जुन के विपाद का घर्णन । व्यासजी और अर्जुन के संवाद में व्यासजी द्वारा अर्जुन का समाधान । अष्टावक्र के आश्रय का घर्णन । अष्टावक्र के तप का घर्णन । तिलोत्तमा रम्भा आदि अप्सराओं द्वारा अष्टावक्र की प्रशंसा । रम्भा को पुण्योत्तम पति प्राप्ति एवं अष्टावक्र का घर प्रदान । जल से बाहर आये मुनि के शरीर का टेढ़ापन देख कर रम्भा द्वारा हास्य । रम्भा के हास्यसे क्रुपित मुनिका शाप पश्चात् प्रसन्न होकर घरप्रदान । सयान्धव पाण्डवों का महाप्रस्थान । परीक्षित को राज्य दान तदुपरान्त घनगमन । कृष्ण चरित्र की समाप्ति कथन ।

२१३ वराहावतारवर्णनम् । नृसिंहावतारवर्णनम् १२२४

वामनावतारवर्णनम् । दत्तात्रेयावतारवर्णनम् ।

परशुरामावतारवर्णनम् । रामावतारवर्णनम् ।

विष्णोः प्रादुर्भावानुकीर्तनम् ।

वराह अवतार का घर्णन । वराहरूपी परमेश्वर के शरीर के अङ्गों का घर्णन । यक्षवराह कृत पृथ्वी का उद्धरण । नृसिंह अवतार का घर्णन । हिरण्यकशिपु के तप का घर्णन एवं घरप्रदान । ब्रह्मा के साथ देवताओं का भगवान् के पास गमन । देवताओं द्वारा भगवान् की स्तुति । भगवान् का नृसिंह रूप में अवतरित होना । नृसिंह भगवान् द्वारा

दक्षिण मार्ग से जाने वाले प्राणियों के दुःखों का घर्णन ।
चित्रगुप्त द्वारा पापियों का घर्णन । भयंकर नरकोंका घर्णन ।
अनेक प्रकार के पापों का घर्णन । पापों के अनुरोध से
नरक प्राप्ति कथन ।

२१६ नरकगतदुःखनिवारणाय धर्माचरणवर्णनम् । १२६०

धार्मिकाणां सुगतिनिरूपणम्

नरकों के दुःख निवारण के लिये मुनिर्या द्वारा व्यास के
प्रति प्रश्न । व्यासजी द्वारा धर्म के आचरण से सुगति
प्राप्ति का घर्णन ।

प्राणान्त्यजति यो मर्त्यः स्मरन्विष्णुं सनातनम् ।

यानेनार्कप्रकाशेन याति धर्मपुरं नरः ॥

सर्वार्थेषु यत्पुण्यं सर्वयज्ञेषु यत्फलम् ।

अर्मासभक्षणे विप्रास्तश्च तच्च च तत्समम् ॥

ये तु तं धर्मराजानं नराः पुण्यानुभावतः ।

पश्यन्ति सौम्यमनसं पितृभूतमिवाऽऽत्मनः ॥

तस्माद्धर्मः सेवितव्यः सदा मुक्तिफलप्रदः ।

धर्मादर्थस्तथाकामो मोक्षश्चपरिकीर्त्यते ॥

धर्मोमाता पिताम्राता धर्मोनाथःसुहृत्तथा ।

धर्मः स्वामी सखागोप्ता तथा धाता च पोषकः ॥

धर्मस्तु सेवितोविप्रास्त्रायते महतोमयात् ।

देयत्वं च द्विजत्वं च धर्मात्प्राप्नोत्यसंशयम् ॥

ये नरा नरकध्वंसिवासुदेवमनुवताः ।

ते स्वप्नेऽपि न पश्यन्ति यमं वा नरकार्णवम् ॥

कर्मणा मनसा वाचा येऽच्युतं शरणंगताः ।

न समर्थो यमस्तेषां ते मुक्तिफलभागिनः ॥

२१७ धर्मश्रेष्ठ्यर्णनम् । शरीरोत्पत्तिकथनम् । १२६६

पुण्यपापानुरोधेन नानायोगिपुजननवर्णनम् ।

धर्म की श्रेष्ठता का वर्णन । शरीर की उत्पत्ति का वर्णन ।

पुण्य एवं पाप के अनुरोध से अनेक योगियों में जनन वर्णन ।

तदनन्तर पापपुण्य का वर्णन ।

२१८ अन्नदानप्रशंसारणनम् १२८१-

शुभप्राप्ति विषयक मुनियों का व्यास के प्रति प्रश्न । अन्नकी प्रशंसा । अन्नदान से शुभ प्राप्ति का कथन ।

नर कृत्वाऽप्यकर्माणि ततो धर्मेण युज्यते ।

सर्वेषामेव दानानामन्नं श्रेष्ठमुदाहृतम् ॥

सर्वमन्नं प्रदातव्यमृजुनाधर्ममिच्छता ।

प्राणाहान्नं मनुष्याणां तस्माज्जन्तु प्रजायते ॥

अन्ने प्रतिष्ठिता लोकास्तस्मादन्नं प्रशस्यते ।

अन्नमेव प्रशंसन्ति देवर्षिपितृमानवाः ॥

अन्नस्य हि प्रदानेन स्वर्गमाप्नोति मानव ।

न्यायलब्धं प्रदातव्यं द्विजातिभ्योऽन्नमुत्तमम् ॥

२१६ श्राद्धविधिर्घर्णनम्

१२८४

श्राद्धविधिका निरूपण । पितरेश्वरों के साथ चन्द्रमा की कन्या का संवाद । चन्द्रमा का पितरों को शाप । सोमजा का कोका नामक नदी बनना । पितरों द्वारा भगवान की स्तुति । पितरों के उद्धार का कथन । अग्निकरण और पिण्डदान की विधि ।

२२० श्राद्धकल्पघर्णनम्

१२९६

श्राद्धकल्प का घर्णन । प्रतिपद् आदि तिथि क्रमसे श्राद्ध करने का फल कथन । सपिण्डोकरण का विधान । श्राद्ध में ग्राह्य विचार । पिण्डदान कथन ।

२२१ सदाचारघर्णनम् । भक्ष्याभक्ष्यघर्णनम्

१३१६

सदाचार का कथन ।

गृहस्थेन सदा कार्यमाचारपरिरक्षणम् ।

न ह्याचारविहीनस्य भद्रमन्न परन्न वा ॥

दुराचारो हि पुच्छते नेहाऽऽयुर्विन्दते महन् ।

कार्यो धर्मः सदाचार आचारस्यैव लक्षणम् ॥

धर्म घर्णन । मलादिकों की त्याग विधिका घर्णन एवं आचमन विधि । अनध्याय कथन । कन्या घर्णन तथा श्रुतुकाल में गमनप्रकार । देव पूजा कथन । देवता तथा पितरों के तर्पण का घर्णन । वैश्वदेव का विधान । विप्रों के घसने योग्य देशों का घर्णन । सूतक का विचार ।

वृत्त्यथ धर्महेतोर्धा कामकारात्तथैव च ।
 अनृतं ये न भाषन्ते ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
 श्लक्ष्णां घाणी स्वच्छवर्णा मधुरां पापवर्जिताम् ।
 स्वागतेनाभिभाषन्ते ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
 परुषं ये न भाषन्ते कटुकं निष्ठुरं तथा ।
 न पैशुन्यरताः सन्तस्ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
 न कोपाद्बुद्ध्याहरन्ते ये वाच हृदयदारिणीम् ।
 शान्तिं विन्दन्ति ये क्रुद्धास्ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
 अरण्ये विजने न्यस्तं परस्वं दृश्यते यदा ।
 मनसाऽपि न गृह्णन्ति ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
 तथैव परदारान्ये कामवृत्ता रहोगताः ।
 मनसाऽपि न हिंसन्ति ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
 अथैरा ये त्वनायासा मैत्रचित्तरताः सदा ।
 सर्वभूतदयायन्तस्ते नराः स्वर्गगामिनः ॥

कर्म के फलोदय का फल कथन ।

पापेन कर्मणा देवि युक्तो हिंसादिभिर्यतः ।
 बहितः सर्वभूतानां हीनायुष्यजायते ॥
 शुभेन कर्मणा देवि प्राणिघातविषर्जितः ।
 निक्षिप्तशस्त्रो निर्दण्डो न हिंसन्ति कदाचन ॥
 न घातयति नो हन्ति घ्नन्तं नैवानुमोदते ।
 सर्वभूतेषु सस्नेहो यथाऽऽत्मनि तथा परे ॥

ईदृशः पुरुषो नित्यं देवि देवत्वमश्नुते ।

उपपन्नान्सुखान्भोगान्सदाऽश्नाति मुदायुतः ॥

२२५ उमामहेश्वरसंवादे देवलोकप्राप्तिकारणकथनम् १३५१

कृपणादीनां नरकप्राप्तिकथनम् ।

स्वधर्मनिरतानां वर्णनम् ।

उमामहेश्वर के संवाद में देवलोक प्राप्ति का कथन । कृपणा-
दिकों को नरक प्राप्ति का वर्णन । स्वधर्मरत प्राणियों का
वर्णन । पाप में रत प्राणियों को नरक प्राप्ति का कथन ।

२२६ मुनिमहेश्वरसंवादे वासुदेवमहिमवर्णनम् १३५७

मुनि महेश्वर संवाद में वासुदेव भगवान् की महिमा एवं
भगवत् स्वरूप का वर्णन । मनु के वंश का वर्णन । व्यासजी
और मुनियों के संवाद में कृष्णपूजा के फल का कथन ।

२२६ (द्वि०) मुनिव्याससंवादे विष्णुपूजाकथनम् १३६४

वैष्णवानांगतिवर्णनम्

व्यास और मुनियों के संवाद में विष्णु भगवान् की पूजा
का वर्णन ।

२२७ व्यासमुनिसंवादे विष्णुपूजाकथनम् । १३६६

चाण्डालराक्षससंवादवर्णनम् । उर्वशीमूर्त्तिसंवादकथनम्

विष्णु भगवान् के जागरणमें भगवद्भजन का फल । चाण्डाल और राक्षस का संवाद ।

धर्मार्थकाममोक्षाणां शरीरं साधनं यतः ।

महता तु प्रयत्नेन शरीरं पालयेद्वबुधः ॥

जीवधर्मार्थसुख नरस्तथाप्नोति मोक्षगतिमग्याम् ।

जीवन्कीर्तिमुपैति च भवति मृतस्य का कथालोके ॥

सत्य की प्रशंसा :—

सत्येनार्कः प्रवपति सत्येनाऽऽपो रसात्मिकाः ।

उपलस्यग्निश्च सत्येन घाति सत्येन मादतः ॥

धर्मार्थकामसंप्राप्ति मोक्षप्राप्तिश्च दुर्लभा ।

सत्येन जायते पुंसां तस्मात्सत्यं न संत्यजेत् ॥

सत्यं ब्रह्म परंलोके सत्यं यज्ञेषु चात्तमम् ।

सत्यं स्वर्गसमायातं तस्मात्सत्यं न संत्यजेत् ॥

जागरण की पुण्य प्राप्ति के लिये राक्षस द्वारा मातङ्ग की प्रार्थना । ब्रह्मराक्षस के पूर्वजन्म का कथन एवं राक्षसत्व की प्राप्ति । चाण्डाल के पूर्वजन्म का कथन । मूर्ख ब्राह्मण और उर्ध्वरी का संवाद । शकटदान का माहात्म्य ।

२२८ व्यासमुनिसंवादे विष्णुभक्तिहेतुकथनम्

१३८५

भगवन्माया वर्णनम् । कामदमनारूपानम् ।

ध्यास और मुनियोंके संवादमें विष्णुभक्तिका हेतु कथन ।

मृयादि देवोंकी आराधना कथन । भगवान्की मायाका

कथन । कामदमनका आरथान । कपालमोचन तीर्थका
उत्पत्ति वर्णन । कामदमनका स्वर्गगमन ।

२२९ व्यासमुनिसंज्ञादे महाप्रलयवर्णनम् १३६८

कलिस्वरूपवर्णनम् । कलिगत भविष्यरुथनम् ।

व्यास जीर मुनियोंके सवाद्में महाप्रलयका वर्णन । कलि
के स्वरूप का वर्णन । कलियुग में भविष्य का वर्णन ।

तपसो ब्रह्मचर्यस्य जपादेश्च फल द्विजा ।

प्राप्नोति पुरुषस्तेन कलौ सांध्यति मापितुम् ॥

भ्यायन्तृने यजन्यज्ञैस्त्रेताया द्वापरैऽर्चयन् ।

यदाप्नोति तदाप्नोति कलौ सकीर्त्य केशवम् ॥

धर्मोत्कर्षमनोषात्र प्राप्नोति पुरुष कलौ ।

म्वत्पायासेन धर्मज्ञास्तेन तुष्टोऽभ्यह कलौ ॥

२३० व्यासमुनिसंज्ञादे द्वापरयुगान्तरुथनम् । १४०६

भविष्यरुथनम्

व्यास जीर मुनियोंके सवाद्में द्वापर युगके अन्त का
कथन । नष्ट धर्मके निमित्त कारण । भविष्य कथन ।

अशिष्टवन्तोऽर्चयन् नरा मद्यामिषप्रिया ।

मित्रमार्या भजिष्यन्ति युगान्ते पुरुषाधमा ॥

राजवृत्तिस्थिताश्चौरा राजानश्चीरशीलिन ।

भृत्या ह्यनिर्दिष्टभुजो भविष्यन्ति युगक्षये ॥

सत्रं ब्रह्म षडिष्यन्ति । द्विजा पात्रसनेयिका ।

शूद्राभा वादिनश्चैव ब्राह्मणाश्चान्त्यवासिनः ॥
 शुकुदन्ता जिताक्षाश्च मुण्डाः कापायवासिनः ।
 शूद्रा धर्मं वदिष्यन्ति शास्त्रबुद्ध्योपजीविनः ॥
 आयुस्तत्र मर्त्यानां परं त्रिशदुभविष्यति ।
 दुर्बला विषयग्लाना जराशोकैरभिप्लुताः ॥

२३१ व्यास-मुनिमंत्रादे प्राकृतप्रतिमंचरकथनम् । १४१५
 कल्पमानकथनम्

व्यासजी और मुनियों के संवाद में प्राकृतलय का कथन ।
 कल्पका मान कथन । नैमित्तिकलय का स्वरूप कथन ।

२३२ प्राकृतलयनिरूपणम् १४१६
 प्राकृतलय का स्वरूप कथन ।

२३३ आत्यन्तिकलय निरूपणम् १४२४
 आत्यन्तिकलय का निरूपण । आध्यात्मिकादि तीनों
 तीर्थोंका कथन । शिरदर्द, जुकाम खाँसी आदि आध्यात्मिक
 तापका निरूपण । काम क्रोधादि मानसिक तापका
 निरूपण । मृग पक्षि आदिकोंसे होनेवाले आधिभौतिक
 तापका वर्णन । गर्भ, जन्म, वृद्धावस्था आदिसे उत्पन्न आधि
 दैविक तापका कथन । गर्भमें स्थित प्राणीको दुःखावस्था
 का निरूपण । बाल अवस्था, वृद्धावस्था और मरणावस्था
 का वर्णन । पाप कर्मों से नरक प्राप्ति का कथन एवं मुक्ति
 और ज्ञान की महिमा का वर्णन ।

परित्यज्य निषेवेत यथावद्योगसाधनात् ।
 ध्यानमध्ययनं दानं सत्यंहीरार्जवं क्षमा ॥
 शौचमाचारतः शुद्धिरिन्द्रियाणां च संयमः ।
 एतैर्विवर्धते तेजः पाप्मानमुपहन्ति च ॥

२३८ । योगविधिनिरूपणम्

१४५८

योग विधि का निरूपण । योग और सांख्य के मत के जानने वालों की दया आदि आचरणों की समानता का कथन । विशेषता से योगी की प्रशंसा का वर्णन । योग के आधार का वर्णन ।

कणानां भक्षणे युक्तः पिण्याकस्य च भो द्विजा ।

स्नेहानां वर्जने युक्तो योगी बलमवाप्नुयात् ॥

भुज्जानो यावकं रुक्षं दीर्घकालं द्विजोत्तमाः ।

एकाहारी विशुद्धात्मा योगी बलमवाप्नुयात् ॥

कामादि सम्पूर्ण शत्रुओं के जय का वर्णन । योग के अभ्यास से नारायण पद की प्राप्ति ।

२३९ सांख्यविधिनिरूपणम्

१४६४

सांख्य विधि का निरूपण । मनुष्यादिकों के विषयज्ञान का कथन । सांख्य ज्ञान का महिमा का वर्णन । सांख्य योग से स्रष्टृजनों की उत्तम कुल में उत्पत्ति ।

२४० वशिष्ठकरालजनकसंवादे क्षराक्षर विचार-
 निरूपणम्

१४७६

क्षर (नाशवान) और अक्षर (ध्रुव) का वर्णन । मुनिर्षा

न यः समुत्सुकः कश्चिदुग्रन्थार्थं स्थूलबुद्धिमान् ।
 स फलं मन्दचिह्नानो ग्रन्थं घट्टयामि निर्णयात् ॥
 भ्रष्टाद्या ग्रन्थतत्त्वानि धादं यः कुरुते नरः ।
 लोभाद्वाऽप्यथवा दम्मात्स पापी नरकं व्रजेत् ॥
 निर्णयं चापि छिद्रात्मा न तद्वक्ष्यति सत्यतः ।
 सोऽपीहास्यार्थतत्त्वज्ञो यस्मान्नैवाऽऽत्मयानपि ॥

योगलक्षणवर्णनम् , सांख्यज्ञानकथनम् १४६१

योग के लक्षण वर्णन । सांख्य ज्ञान का कथन । क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का लक्षण ।

२४३ विद्याविद्ययोः स्वरूपकथनम् १४६५

अक्षरअक्षरयोःपुनर्विस्तरेणवर्णनम् , अभेदेन
 सांख्य योग कथनम् ।

विद्या और अविद्या का स्वरूप कथन । क्षर और अक्षर का
 विस्तार से वर्णन । अभेद से सांख्य योग का कथन ।

२४४ अज्ञस्यापि त्रिक्रियया नानाभवनम् १५००

एकत्वनानात्त्रयोर्लक्षणम् , ज्ञानविज्ञान-
 संज्ञितमोक्षवर्णनम् ।

अज्ञ परमात्मा भी विकारों से अनेक रूपों में मान होता है ।

एकत्व और नानात्व का लक्षण । ज्ञान और विज्ञान से संश्लित मोक्ष का वर्णन । इस ज्ञान को देने के लिये अधि-कारी का निर्णय ।

न देयमेतच्च यथाऽनृतात्मने
 शठाय क्लीबाय न जिह्मबुद्धये ।
 न पण्डितज्ञानपरोपतापिने,
 देय तथा शिष्यविबोधनाय ॥

जनक के प्रति वशिष्ठजीने कहा—मुझे यह महा ज्ञान ब्रह्माजी से प्राप्त हुआ है । ज्ञान प्राप्ति की परम्परा का कथन ।

३५ अस्य श्रवण पठन कर्तृणां फलप्राप्ति कथनम् १५०७
 पुराण को सुनकर प्रसन्न हुए मुनियों द्वारा व्यासजी की प्रशंसा । तदनन्तर सब मुनियों का अपने २ आश्रमों में जाना । ब्रह्मपुराण के श्रवण पठन करनेवालों को फल प्राप्ति का कथन ।

३५ धर्मप्रशंसा वर्णनम् १५११
 धर्म की प्रशंसा ।

धर्मेण राज्यं लभते मनुष्य ,
 स्वर्गं च धर्मेण नर प्रयाति ।
 आयुश्च कीर्तिश्च तपश्च धर्म,
 ध ण मोक्षं लभते मनुष्य ॥

॥ धी गणेशाय नमः ॥

ब्रह्मपुराणम् ।



प्रथमोऽध्यायः

तत्रादौ नैमियारण्य घर्णनम्

नारायणं नमस्कृत्य नरञ्चैव नरोत्तमम् ।

देवीं सरस्वतीञ्चैव ततो जयमुदीरयेत् ॥

यस्मान् सव्यमिदं प्रपञ्चरचित मायाजगज्जायते,
यस्मिंस्तिष्ठति याति चान्तसमये कपानुकल्पे पुनः ।
यं ध्यात्वा मुनयः प्रपञ्चरहितं विन्दन्ति मोक्षं धृज,
तं वन्दे पुरुषोत्तमायममलं नित्यं विभुं निश्चलम् ॥ १ ॥
यं ध्यायन्ति युवाः समाधिसमये शुद्धं विद्यतस्तन्निभं,
नित्यानन्दमयं प्रसन्नममलं सर्वेश्वर निर्गुणम् ।
व्यक्ताव्यक्तपरं प्रपञ्चरहितं ध्यानैकगम्य विभुं,
तं संसारविनाशहेतुमजरं वन्दे हरिं मुक्तिदम् ॥ २ ॥
सुपुण्ये नैमियारण्ये पवित्रे सुमनोहरे ।
नानामुनिजनाक्रान्ते नानापुण्योपशोभिने ॥ ३ ॥
सरलैः कर्णिकारैश्च पनसैरर्घ्यखादिरेः ।
आम्रजम्बूकपित्थैश्च न्यग्रोधैर्द्वेधदारुभिः ॥ ४ ॥

मुनय ऊचु ।

पुराणागमशाम्नाणि सेतिहासानि सत्तम ।

जानासि देवदैत्याना चरितं जन्म कर्म च ॥ १६ ॥

न तेऽन्यविदित किञ्चिद्वेदे शाम्ने च भारते ।

पुराणे मोक्ष शाम्ने च सर्वज्ञोऽसि महामते ॥ १७ ॥

यथापूर्वमिदं सर्वमुत्पन्नं सचराचरम् ।

ससुरामुरगन्धर्वं सयक्षोरगरक्षकम् ॥ १८ ॥

ध्रोतुमिच्छामहे सूनूहि सर्वं यथा जगत् ।

धमूर भूयश्च यथा महामाग भविष्यति ॥ १९ ॥

यतश्चैव जगन् सून यतश्चैव चराचरम् ।

लीनमासात्तथा यत्र लयमेष्यति यत्र च ॥ २० ॥

लोमहर्षण उवाच ।

अधिकाराय शुद्धाय निम्नाय परमात्मने ।

सदैकस्वरूपाय विष्णवे सत्यजिष्णवे ॥ २१ ॥

नमो हिरण्यगर्भाय हरये शङ्कराय च ।

वासुदेवाय ताराय सर्गस्थित्यन्तकर्मणे ॥ २२ ॥

एकानेकस्वरूपाय स्थूलसूक्ष्मात्मने नमः ।

अयक्तायकभूताय विष्णवे मुक्तिहेतवे ॥ २३ ॥

स्वर्गस्थितिबिनाशाय जगतो योऽजरामरः ।

मूलभूतो नमस्तस्मै विष्णवे परमात्मने ॥ २४ ॥

आधारभूत विश्वस्याप्यणीयासमर्णायसाम् ।

त्रणम्य सर्वभूतस्थमन्युत पुरुषोत्तमम् ॥ २५ ॥

ज्ञानस्वरूपमत्यन्तं निर्मलं परमार्थतः ।
 तमेवार्थस्वरूपेण भ्रान्तिदर्शनतः स्थितम् ॥ २६ ॥
 विष्णुं ब्रह्मसिष्णुं विश्वस्य स्थितौ स्वर्गे तथा प्रभुम् ।
 सत्यं जगतामीशमजमक्षयमव्ययम् ॥ २७ ॥
 आद्यं सुसूक्ष्मं विश्वेशं ब्रह्माक्षीम् प्रणिपत्य च ।
 इति ब्रह्मपुराणं वेदवेदाङ्गपारमम् ॥ २८ ॥
 सत्यं शास्त्रार्थतत्त्वज्ञं पराशरसुतं प्रभुम् ।
 गुरुं प्रणम्य वक्ष्यामि पुराणं वेदसम्मितम् ॥ २९ ॥
 कथयामि यथापूज्यं दक्षाद्यैर्मुनिसत्तमैः ।
 गृष्टं प्रोवाच भगवानजयोनिः पितामहः ॥ ३० ॥
 शृणु संप्रवक्ष्यामि कथां पापप्रणाशिनीम् ।
 कथयमानां मया विद्यां यदर्थं श्रुतिविस्तराम् ॥ ३१ ॥
 यस्त्विमं धारयेत्प्रत्यं शृणुयाद्वाप्यभीक्ष्णशः ।
 स्युस्तथाधारणं कृत्वा स्वर्गलोके महीयते ॥ ३२ ॥
 भव्यतः कारणं यत्तन्निवृत्त्यै नन्दसदात्मकम् ।
 प्रधानं पुनरनन्तस्माद्विशिष्टं विश्वमाश्रय ॥ ३३ ॥

कीर्तितं स्थिरकीर्त्तानां सर्व्वेषां पुण्यवर्द्धनम् ।
 ततः स्वयम्भूर्मगवान् मिश्रसुर्विविधाः प्रजाः ॥ ३७ ॥
 अप एव ससर्जजादौ तासु वीर्य्यमथासृजन् ।
 आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः ॥ ३८ ॥
 अयनं तस्य ताः पूर्य्यं तेन नारायणः स्मृतः ।
 हिरण्यवर्णममघत्तदन्तमुदकेऽयम् ॥ ३९ ॥
 तत्र जजे मय्यं ब्रह्मा स्वयम्भूरिति नः श्रुतम् ।
 हिरण्यवर्णो भगवानुत्तिन्वा परियत्सरम् ॥ ४० ॥
 तदन्तमकरोदुद्भूध दिवं भुवमयापि च ।
 तयोः शकलयोर्मध्य आकाशमकरोन्प्रभुः ॥ ४१ ॥
 अप्सु पारिप्लवां पृथ्वीं दिशश्च दशधा दधे ।
 तत्र कालं मनो घावं कामं क्रोधमथो रतिम् ॥ ४२ ॥
 ससर्ज सृष्टिं तद्रूपां स्रष्टुमिच्छन्प्रजापतीन् ।
 मरोचिमथ्यङ्गिरर्मां पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् ॥ ४३ ॥
 पत्तिष्ठं च महानेजाः सोऽसृजत्सप्त मानसान् ।
 सप्त ब्राह्मण इत्येते पुराणे निश्चयं गताः ॥ ४४ ॥
 नारायणात्मकानां तु सप्तानां ब्रह्मजन्मनाम् ।
 ततोऽसृजन् पुरा ब्रह्मा रूढं रोपात्मसम्भवम् ॥ ४५ ॥
 सनत्कुमारं च विभुं पूर्व्वपामपि पूर्व्वजम् ।
 सप्तस्येता वजायन्त प्रजा रुद्राश्च भो द्विजाः ॥ ४६ ॥
 स्कन्दः सनत्कुमारश्च तेजः संक्षिप्य तिष्ठतः ।
 तेषां सप्त महावंशा दिव्या देवगणान्विताः ॥ ४७ ॥

क्रियावन्त प्रजावन्तो महर्षिभिरलङ्कृता ।
 विद्युतोऽशनिमेघाश्च रोहितेन्द्रधनूपि च ॥ ४८ ॥
 वयासि च ससर्जादौ पर्जन्यश्च ससर्ज ह ।
 ऋचो यजूपि सामानि निर्गमे यज्ञसिद्धये ॥ ४९ ॥
 साध्यान्जनयहोषानित्येवमनुसञ्जगु ।
 उष्णाघवानि भूतानि गात्रेभ्यस्तस्य जज्ञिरे ॥ ५० ॥
 भापर्यस्य प्रजासर्गं सृजतो हि प्रजापते ।
 सृज्यमाना प्रजा नैव विवर्द्धन्ते यदा तदा ॥ ५१ ॥
 द्विधा हृत्वात्मनो देहमर्द्धेन पुरषोऽभवत् ।
 अर्द्धेन नारी तस्या तु सोऽसृजद्विविधा प्रजा ॥ ५२ ॥
 दिवश्च पृथिवीं चैव महिम्ना व्याप्य तिष्ठति ।
 विराजमसृजद्विष्णुः सोऽसृजत् पुरषं विराट् ॥ ५३ ॥
 पुरषं त मनुं विद्यात्तस्य मन्वन्तरं स्मृतम् ।
 द्वितीयं मानसस्यैतन्मनोरन्तरमुच्यते ॥ ५४ ॥
 स वैराज प्रजासर्गं ससर्ज पुरषं प्रभु ।
 नारायणविसर्गस्य प्रजास्तस्याप्ययोनिजा ॥ ५५ ॥
 वायुप्मान् कीर्तिमान् पूर्णप्रज्ञावाश्च भोक्तर ।
 आदिसर्गं विदित्वेव यथेन चाप्नुयाद्गतिम् ॥ ५६ ॥

इति श्रीब्रह्मा महापुराणे आदिसर्गवर्णन
 प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

द्वितीयोऽध्यायः ।

तत्रादौ स्वयम्भुव मनुवंश वर्णनम्
लोमहर्षण उवाच ।

स सृष्ट्वा तु प्रजाम्स्त्रेयमापरो वै प्रजापतिः ।

लेमे वै पुरुषः पत्नीं शतरूपामयोनिजाम् ॥ १ ॥

मापयस्य महिम्ना तु दिशमावृत्य तिष्ठतः ।

धर्मेणैव मुनिश्रेष्ठाः शतरूपा व्यजायत ॥ २ ॥

सा तु वर्गयुतं तन्त्रा तपः परमदुधरम् ।

मर्त्तारं द्रोततपसं पुरुषं ग्रन्थपद्यत ॥ ३ ॥

स वै स्वयम्भुवो विप्राः पुरुषो मनुर्वचने ।

तस्यैकसप्ततियुगं मन्वन्तरमिहोन्मते ॥ ४ ॥

यैराजाम् पुरुषार्द्धारं शतम्पा व्यजायत ।

मियग्रतोत्तानपादौ धारात् काम्या व्यजायत ॥ ५ ॥

काम्या नाम सुता श्रेष्ठा कर्द्दमस्य प्रजापतेः ।

काम्यापुत्रान्तु चत्वारः सप्राद् कुक्षिर्विराट्प्रभुः ॥ ६ ॥

उत्तानपादं जग्राह पुत्रमग्निः प्रजापतिः ।

उत्तानपादाश्चतुरः सूनृता सुपुत्रे सुतान् ॥ ७ ॥

धर्मम्य कन्या सुश्रोणी सूनृता नाम चिधृता ।

उत्पन्ना चाजिमेघेन ध्रुवस्य जननी शुभा ॥ ८ ॥

ध्रुवश्च कीर्त्तिमन्तश्च आयुष्मन्तं धमुं तथा ।

उत्तानपादोऽजनयत् सूनृतायां प्रजापतिः ॥ ९ ॥

ध्रुवो वर्षसहस्राणि त्रीणि दिव्यानि भो द्विजाः ।
 तपस्तेपे महाभागः प्रार्थयन् सुमहद्वयशः ॥ १० ॥
 तस्मै ब्रह्मा ददौ प्रीतः स्थानमात्मसमं प्रभुः ।
 अचलञ्चैव पुरतः सप्तर्षीणां प्रजापतिः ॥ ११ ॥
 तस्याभिमानमृडिञ्च मद्विमान निरोक्ष्य च ।
 देवासुराणामाचार्य्यः श्लोकं प्रागुशना जगौ ॥ १२ ॥
 अहोऽस्य तपसा धीर्य्यमहो श्रुतमहोऽद्भुतम् ।
 यमद्य पुरतः कृत्वा ध्रुवं सप्तर्षयः स्थिताः ॥ १३ ॥
 तस्माच्छिर्लष्टं च भव्यं च ध्रुवाच्छम्भुर्यजायत ।
 श्लिष्टेराधत्त सुच्छाया पञ्च पुत्रानकल्मषान् ॥ १४ ॥
 रिपुं रिपुञ्जयं धीरं वृकलं वृकतेजसम् ।
 रिपोराधत्त बृहती चक्षुष सर्वतेजसम् ॥ १५ ॥
 अजीजनत् पुष्करिण्यां वीरण्यां चाक्षुषं मनुम् ।
 प्रजापतेरात्मजाया घोरणस्य महात्मनः ॥ १६ ॥
 मनोरजायन्त दश नङ्गलाया महीजसः ।
 कन्यायां मुनिशार्दूला घैराजस्य प्रजापतेः ॥ १७ ॥
 सुत्सः पुरुः शतद्युम्नस्तपस्वी सत्यवाक्कविः ।
 अग्निष्टुदतिराश्वश्च सुद्युम्नश्चेति ते नव ॥ १८ ॥
 अमिमन्युश्च दशमो नङ्गलायां महीजसः ।
 पुरोरजनयत् पुत्रान् पडानेयी महाप्रमान् ॥ १९ ॥
 यद्गं सुमनसं व्याति क्रतुमङ्गिरसं गयम् ।
 अद्गात् मुनीद्यापत्यं घै घेनमेकं व्यजायत ॥ २० ॥

अपचारेण वेनस्य प्रकोपः सुमहानभूत् ।

प्रजार्थमृषयो यम्य ममन्युर्दक्षिणं करम् ॥ २१ ॥

वेनस्य मथिते पाणौ स बभूव महानृपः ।

तं दृष्ट्वा मुनयः प्रादुरेव वै मुदिताः प्रजाः ॥ २२ ॥

करिष्यति महानेजा यशञ्च प्राप्स्यते महत् ।

स धन्यो कचर्त्री जातो जलज्जयलनसन्निभः ॥ २३ ॥

पृथुर्धैन्यस्तथा चेमा ररक्ष क्षत्रपूर्यजः ।

राजसूयामिषिक्तानामाद्यः स वमुवाचिपः ॥ २४ ॥

तस्माच्चैव समुत्पन्नो निपुणो स्रतमागर्थो ।

तेनेयं गौर्मुनिश्चेष्टा दुग्धा शम्यानि भृशता ॥ २५ ॥

प्राचीनाग्रा* कुशास्तस्य पृथिव्यां द्विजसत्तमाः ।*

प्राचीनवर्हिर्मगवान् पृथिवीतलचारिणीः ॥ ३१ ॥

समुद्रतनयाया तु वृत्तदारोऽभवत् प्रभु ।

महत्तपस पारे सवर्णाया प्रजापतिः ॥ ३२ ॥

सवर्णाधत्त सामुद्रो दश प्राचीनवर्हिष ।

सर्वान् प्राचेतसो नाम धनुर्वेदस्य पारगान् ॥ ३३ ॥

अपृथग्धर्मचरणास्तेऽतप्यन्त महत्तप ।

दश वर्षसहस्राणि समुद्रसलिलेशया* ॥ ३४ ॥

तपश्चरत्सु पृथिवी प्रचेत सु महोरहा ।

अरुदयमाणामावत्रुर्थभूयाथ प्रजाक्षय ॥ ३५ ॥

नाशकन्मारतो पातुं धृत खमभयद्रुमै ।

दश वर्षसहस्राणि न शोनुश्चेष्टितुं प्रजा ॥ ३६ ॥

तदुप्रश्रुत्य तपसा युक्ता सन्ध प्रचेतस ।

मुपेभ्यो वायुमग्नि च ससृजुर्जातमन्यव ॥ ३७ ॥

उन्मूलानथ वृक्षास्तु कृत्वा वायुरग्नौपयत् ।

तानग्निरददघोर एवमासीद्वद्रुमक्षय ॥ ३८ ॥

क्रमक्षयमग्नौ बुद्ध्वा किञ्चिच्छिष्टेषु शाखिषु ।

उपगम्याववीदेतारतदा सोम प्रजापतीन् ॥ ३९ ॥

फोप यच्छत राजानः सर्वे प्राचीनवर्हिष ।

वृक्षशून्या कृता पृथ्वी शाम्येतामग्निमारुती ॥ ४० ॥

मुनय उचु ।

देवाना दानवानाञ्च गन्धर्वोरगरक्षसाम् ।
 सम्भवस्तु श्रुनोऽस्मामिर्दक्षस्य च महात्मन ॥ ५१ ॥
 अङ्गुष्ठाद्ब्रह्मगो जङ्गे दक्ष किल शुभव्रत ।
 घामाङ्गुष्ठात्तथा चैत्र तस्य पत्नी व्यजायत ॥ ५२ ॥
 कथं प्राचेतसत्वं स पुनर्लोमे महानपा ।
 एतं न सशशं सूनं व्याख्यातुं त्वमिहार्हसि ॥
 दौहित्रश्चैव सोमस्य कथं श्यशुरता गत ॥ ५३ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

उत्पत्तिश्च निरोधश्च नित्यं भूनेषु भोद्विजा ।
 ऋषयोऽत्र न मुह्यन्ते विद्यावन्तश्च ये जना ॥ ५४ ॥
 युगे युगे भ्रमन्त्येते पुनर्दक्षादयो नृपा ।
 पुनश्चैव निरुध्यन्ते विद्यास्तत्र न मुह्यति ॥ ५५ ॥
 ज्यैष्ठ कानिष्ठ्यमप्येषापूर्व्वनासीद्विजोत्तमा ।
 सप एव गरीयोऽभूर्प्रभावश्चैव कारणम् ॥ ५६ ॥
 इमा विदुष्विदं दक्षस्य यो विद्यात् सचराचराम् ।
 प्रजावानायुस्तार्णं स्वर्गलोके महीयते ॥ ५७ ॥

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे सृष्टिकथनं नाम

द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तृतीयोऽध्यायः ।

देवदानघोत्पत्ति वर्णनम्

मुनय उचुः ।

देवानां दानवानां च गन्धर्वोरगरक्षसाम् ।

उत्पत्तिं विस्तरेणैव लोमहर्षण कीर्तय ॥ १ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

प्रजाः सृजति व्यादिष्टः पूर्वं दक्षः स्वयम्मुवा ।

यथा ससर्ज भूतानि तथा शृणुत भो द्विजाः ॥ २ ॥

मानसान्येष भूतानि पूर्वमेवासृजत् प्रभुः ।

ऋषीन्द्रेयान्सगन्धर्वान्सुरान्यक्षराक्षसान् ॥ ३ ॥

यदास्य मानसी विप्रा न व्यवर्द्धत वै प्रजाः ।

तदा सञ्चिन्त्य धर्मात्मा प्रजाहेतोः प्रजापतिः ॥ ४ ॥

स मैथुनेन धर्मेण सिसृशुर्वधिधाः प्रजाः ।

असितोमावहत् पत्नीं वीर्यस्य प्रजापतेः ॥ ५ ॥

सुतां सुतपसा युक्तां महतीं लोकधारिणीम् ।

अथ पुत्रसहस्राणि यैरण्यां पञ्च वोढ्यवान् ॥ ६ ॥

असिकन्यां जनयामास दक्ष एव प्रजापतिः ।

तांस्तु दृष्ट्वा महाभागान्ममं विवर्द्धयिषून् प्रजाः ॥ ७ ॥

देवर्षिः प्रियसवाक्षो नारदः प्रात्रवोदिदम् ।

नाशाय घचनं तेषां शापायैवात्मनस्तथा ॥ ८ ॥

यं कश्यपः सुतवरं परमेष्ठो व्यजीजनत् ।

दक्षस्य वै दुहितरि दक्षशापमयान्मुनिः ॥ ९ ॥

पूर्वं स हि समुत्पन्नो नारदः परमेष्ठिनः ।
 असिकन्यामथ चैरण्यां भूयो देवर्षिसत्तमः ॥ १० ॥
 तं भूयो जनयामास पितेव मुनिपुङ्गवम् ।
 तेन दक्षस्य वै पुत्रा हर्यश्वा इति विश्रुताः ॥ ११ ॥
 निर्गम्य नाशिताः सर्व्ये विधिना च न सशयः ।
 तस्योद्यतस्तदा दक्षो नाशयामितचिक्रम ॥ १२ ॥
 ब्रह्मर्षीन् पुरत एत्वा याचित परमेष्ठिना ।
 ततोऽभिसन्धिभ्रक्ते वै दक्षस्य परमेष्ठिना ॥ १३ ॥
 कन्याया नारदो मह्यं तव पुत्रो भवेदिति ।
 ततो दक्ष सुता प्राप्तात् प्रिया वै परमेष्ठिने
 स तस्यां नारदो जज्ञे भूयः शापमयादृषि ॥ १४ ॥

मुनय उचुः ।

कथं प्रणाशिताः पुत्रा नारदेन महर्षिणा ।
 प्रजापते सूतवर्ष्यं श्रोतुमिच्छाम तत्त्वतः ॥ १५ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

दक्षस्य पुत्रा हर्यश्वा विषद्वयिषवः प्रजाः ।
 समागता महावीर्या नारदस्तानुवाच ह ॥ १६ ॥

नारद उवाच ।

वालिशो यत यूयं वै नास्या जानीत वै भुवः ।
 प्रमाणं स्रष्टुकामा वै प्रजाः प्राचेतसात्मजाः ॥ १७ ॥
 अन्तरुद्धर्ममघश्चैव कथं सृजथ वै प्रजाः ।
 ते तु तद्वचनं श्रुत्वा प्रयाता सर्व्वतो दिशः ॥ १८ ॥

अद्यापि न निवर्त्तन्ते समुद्रेभ्य इवापणा ।
 हर्यश्चेष्वथ नष्टेषु दक्ष प्राचेतस पुन ॥ १६ ॥
 वैरण्यामथ पुत्राणा सहस्रमसृजत्प्रभु ।
 विचर्द्धयिषवस्ते तु शबलाश्वास्तथा प्रजा ॥ २० ॥
 पूर्वोक्तं चचन ते तु नारदेन प्रचोदिता ।
 अन्योन्यमृचुस्ते सर्वे सम्यगाह महानृपि ॥ २१ ॥
 भ्रातृणा पद्रीं ज्ञातु गन्तव्यं नात्र संशय ।
 ज्ञात्वा प्रमाणं पृथ्याश्च सदम स्रक्ष्यामहे प्रजा ॥ २२ ॥
 तेऽपि तेनैव मार्गेण प्रयाता सर्वतो दिशम् ।
 अद्यापि न निवर्त्तन्ते समुद्रेभ्य इवापणा ॥ २३ ॥
 तदा प्रभृति चै भ्राता भ्रातुर्व्येपणे द्विना ।
 प्रयातो नश्यति क्षिप्रं तत्र कार्यं विपश्चिता ॥ २४ ॥
 ताश्चैव नष्टान् विज्ञाय पुत्रान् दक्ष प्रजापति ।
 पट्टिं ततोऽसृजन् कन्या वैरण्यामिति न श्रुतम् ॥ २५ ॥
 तास्तदा प्रतिजग्राह भार्ग्यार्थं कश्यप प्रभु ।
 सोमो धर्मश्च भो विप्रास्तथैवान्ये महर्षय ॥ २६ ॥
 ददौ स दश धर्माय कश्यपाय त्रयोदश ।
 सप्तविंशतिं सोमाय चतस्रोऽरिण्येभिने ॥ २७ ॥
 द्वे चैव यदुपुत्राय द्वे चैवाङ्गिरसे तथा ।
 द्वे वृत्राश्वाय विदुषे तासां नामानि मे शृणु ॥ २८ ॥
 अरुन्धती घतुर्यामी लम्बा मानुर्मरुत्त्वती ।
 सङ्कुल्पा च मुहूर्त्ता च साध्या विभ्वा च भो द्विजा ॥ २९ ॥

धर्मपत्न्यो दश त्वेतास्तास्वपत्यानि धोधत ।

विश्वेदेवास्तु विश्वाया साध्या साध्यान् व्यजायत ॥ ३० ॥

मरुत्वत्या मरुत्वन्तो घसोस्तु घसव सुता ।

भानोस्तु भानव पुत्रा मुहर्त्तास्तु मुहर्त्तजा ॥ ३१ ॥

लम्बायाश्चैव घोषोऽथ नागवाथी च यामिजा ।

पृथिवीधिपय सव्यमरुधत्या व्यजायत ॥ ३२ ॥

सङ्कल्पायास्तु विश्वात्मा जज्ञे सङ्कल्प एव हि ।

नागवीथ्याञ्च यामिन्या वृषलश्च व्यजायत ॥ ३३ ॥

परा या सोमपत्नीश्च दक्ष प्राचेतसो दक्षौ ।

सव्या नक्षत्रनाभ्यस्ता ज्योतिषे परिकीर्तिता ॥ ३४ ॥

ये त्वन्ये ख्यातिमन्तो वै देवा ज्योतिषपुरोगमा ।

पसवोऽष्टौ समाख्यातास्तेषा वक्ष्यामि विस्तरम् ॥ ३५ ॥

आपो ध्रुवश्च सोमश्च ध्रुवश्चैवानिलोऽनल ।

प्रत्यूपश्च प्रभासश्च घसयो नामभि स्मृता ॥ ३६ ॥

आपस्य पुत्रो घैतण्ड श्रम श्रान्तो मुनिस्तथा ।

ध्रुवस्य पुत्रो भगवान् कालो लोऋप्रकाशन ॥ ३७ ॥

सोमस्य भगवान् वद्या घच्चस्वी येन जायते ।

घवस्य पुत्रो द्रविणो हुतह यघहस्तथा ॥ ३८ ॥

मनोहराया शिशिर प्राणोऽथ रमणस्तस्या ।

अनिलस्य शिवा भार्या तस्या पुत्रो मनोजघ ।

अविज्ञातगतिश्चैव द्वौ पुत्रावनिलस्य च ॥ ३९ ॥

अग्निपुत्र कुमारस्तु शरस्तन्त्रेऽश्रिया वृत ।
 तस्य शाखो विशाखश्च नैगमेयश्च पृष्टज ॥ ४० ॥
 अपत्यं वृत्तिकानां तु कार्त्तिकेय इति स्मृत ।
 प्रत्यूषस्य विदुः पुत्रमृषिं नाम्नाथं देवलम् ॥ ४१ ॥
 द्वौ पुत्रौ देवलस्यापि क्षमावन्तौ मनीषिणौ ।
 बृहस्पतेस्तु भगिनी वरखी ब्रह्मवादिना ॥ ४२ ॥
 योगसिद्धा जगत् कृन्न्ममसका विचचार ह ।
 प्रभासस्य तु सा भार्गवा वसूनामश्वमस्य तु ॥ ४३ ॥
 विश्वकर्मा महाभागो यस्या जज्ञे प्रजापति ।
 कर्त्ता शिल्पसहस्राणां त्रिदशानाञ्च पार्श्वकि ॥ ४४ ॥
 भूषणानाञ्च सर्वेषां कर्त्ता शिल्पवता वर ।
 यः सर्वेषां विमानानि दैवतानां चकार ह ॥ ४५ ॥
 मानुषाश्चोपजीवन्ति यस्य शिल्पं महात्मन ।
 सुरभी कश्यपाद्रुद्रानेकादश विनिर्ममे ॥ ४६ ॥
 महादेवप्रसादेन तपसा भाविता सती ।
 अजैकपादहिर्बुध्न्यस्त्वष्टा रुद्रश्च धीर्यधान् ॥ ४७ ॥
 हरश्च बहुरूपश्च त्र्यम्बकश्चापराजित ।
 वृषाकपिश्च शम्भुश्च कपर्दी रैवतस्तथा ॥ ४८ ॥
 मृगन्याधश्च शार्ङ्गश्च कपाली च द्विजोत्तमा ।
 एकादशैते विख्याता रुद्रास्त्रिभुवनेश्वरा ॥ ४९ ॥
 शत त्वेव समाप्यात रुद्राणाममिर्ताजसाम् ।
 पुराणे मुनिशादुर्दूला यैर्व्याप्तं सचराचरम् ॥ ५० ॥

दारान् शृणुध्वं विप्रेन्द्राः कश्यपस्य प्रजापतेः ।
 अदितिर्दितिर्दनुश्चैव अरिष्टा सुरसा खसा ॥ ५१ ॥
 सुरमिर्विनता चैव ताम्रा क्रोधवशा इला ।
 कद्रुर्मुनिश्च भो विप्रास्तास्वपत्यानि धोधत ॥ ५२ ॥
 पूर्वमन्यतरे श्रेष्ठाद्वादशासन् सुरोत्तमाः ।
 तुषिता नाम तेऽन्योन्यमूचुर्वैवस्वतेऽन्तरे ॥ ५३ ॥
 उपस्थितेऽतियशसश्चाक्षुपस्यान्तरे मनोः
 हितार्थं सभ्यलोकानां समागम्य परस्परम् ॥ ५४ ॥
 आगच्छत द्रुतं देवा अदितिं सम्प्रविश्य वै ।
 मन्यन्तरे प्रसूयामस्तन्नः श्रेयो भविष्यति ॥ ५५ ॥
 एवमुक्ता तु ते सर्वे चाक्षुपस्यान्तरे मनोः
 मारीचात् कश्यपाज्जाजास्त्वदित्या दक्षकन्यया ॥ ५६ ॥
 तत्र विष्णुश्च शक्रश्च जज्ञाते पुनरैव हि ।
 अर्यमा चैव धाता च त्वष्टा पूषा तथैव च ॥ ५७ ॥
 विषस्वान् सविता चैव मित्रो वरुण एव च ।
 अंशो भगश्चातितेजा आदित्या द्वादश स्मृताः ॥ ५८ ॥
 चाक्षुपस्यान्तरे पूर्वमासंस्ते तुषिताः सुराः ।
 वैवस्वतेऽन्तरे ते घा आदित्या द्वादश स्मृताः *
 सप्तविंशति ताः प्रोक्ताः सोमपत्न्यो महाधृताः
 तासामपत्यान्यभवन् दीप्तान्यमिततेजसः ॥ ५९ ॥

अरिष्टनेमिपत्नीनामपत्यानीह षोडश ।
 बहुपुत्रस्य विदुषश्चतस्रो विद्युतः स्मृताः ॥ ६० ॥
 चाक्षुषस्यान्तरे पूर्वे ऋचो ब्रह्मर्षिसत्कृताः ।
 कृशाश्वस्य च देवर्षेदेवप्रहरणाः स्मृताः ॥ ६१ ॥
 एते युगसहस्रान्ते जायन्ते पुनरेव हि ।
 सव्ये देवगणाश्चात्र त्रयस्त्रिंशत्तु कामजाः ॥ ६२ ॥
 तेषामपि च भो विप्रा निरोधोत्पत्तिरुच्यते
 यथा सूर्यस्य गगन उदयास्तमयाधिह ॥ ६३ ॥
 एवं देवनिकायास्ते सम्भवन्ति युगे युगे ।
 दित्याः पुत्रद्वयं जतो कश्यपादिति नः श्रुतम् ॥ ६४ ॥
 हिरण्यकशिपुश्चैव हिरण्याक्षश्च धीर्यवान् ।
 सिंहिकाचाभवन् कन्या विप्रचित्तेःपरिग्रहः ॥ ६५ ॥
 सिंहिकेया इति ख्याता तस्याः पुत्रा महाबलाः ।
 हिरण्यकशिपोः पुत्राश्चत्वारः प्रथितौजसः ॥ ६६ ॥
 हादश्च अनुहादश्च प्रह्लादश्चैव धीर्यवान् ।
 सहादश्च चतुर्थोऽभूद्बुधादपुत्रो हवस्तथा ॥ ६७ ॥
 हदस्य पुत्रो ह्यो धीरो शिवः कालस्तथैव च ।
 विरोचनस्तु प्राहादिर्यलिर्जज्ञे विरोचनात् ॥ ६८ ॥
 यलेः पुत्रशतं त्वासीदुत्राणज्येष्ठं तपोधनाः ।
 धृतराष्ट्रश्च सूर्यश्चचन्द्रमाश्चन्द्रतापनः ॥ ६९ ॥
 शुम्भनामो गर्हभाक्षः कुक्षिरित्येवमादयः ।
 पाणस्तेषामतिबलो ज्येष्ठः पशुपतेः प्रियः ॥ ७० ॥

पुरा कल्पे ॥ याणेन प्रसाद्योमापति प्रभुम् ।
 पार्श्वतो विहरिष्यामि इत्येव याचितो वर ॥ ७१ ॥
 हिरण्याक्षसुताश्चैव विद्रासश्च महाबला ।
 उज्ज्वर शत्रुनिश्चैव भूतसन्तापनस्तथा ॥ ७२ ॥
 महानाभश्च विद्रास्त कालनाभस्तथैव च ।
 अभयन् दनुपुत्राश्च शत तीव्रपराक्रमा ॥ ७३ ॥
 तपस्विनो महाधीर्या प्राधान्येन ब्रवीमि तान् ।
 द्विमुर्द्धा शङ्करुर्णश्च तथा हयशिरा विभु ॥ ७४ ॥
 अयोमुख शम्बरश्च करिलो घामनस्तथा ।
 मारीचिर्मघवाश्चैव इत्यल खसुमस्तथा ॥ ७५ ॥
 विक्षोभणश्च केतुश्च केतुयोर्द्व्यशतहर्षौ ।
 इन्द्रजित्सर्वजिह्वश्चैव घमनाभस्तथैव च ॥ ७६ ॥
 एकचक्रो महाबाहुस्तारकश्च महाबल ।
 वैश्वानर पुलोमा च विद्रावणमहाशिरा ॥ ७७ ॥
 स्वर्भानुर्वृषपर्वा च विप्रचित्तिश्च धीर्यवान् ।
 सठर्ग एते दनो पुत्रा कश्यपादमिजज्ञिरे ॥ ७८ ॥
 विप्रचित्तिप्रधानास्ते दानवा सुमहाबला ।
 एतेषा पुत्रपीत्रन्तु न तच्छक्य द्विजोत्तमा ॥ ७९ ॥
 प्रसख्यातु बहुत्वाच्च पुत्रपीत्रमनन्तकम् ।
 स्वर्मानोस्तु प्रभा कन्या पुलोमस्तु शची सुता ॥ ८० ॥
 उपदानधी हयशिरा शर्मिष्ठा चार्पणर्व्वणी ।
 पुलोमा कालिका चैव वैश्वानरसुते उभे ।
 बह्वपत्ये महापत्ये मारीचेस्तु पत्निह ॥ ८१ ॥

पुरा कल्पे तु वाणेन प्रसाद्योमापतिं प्रभुम् ।
 पार्श्वतो विहरिष्यामि इत्येव याचितो वर ॥ ७१ ॥
 हिरण्याक्षसुताश्चैव विद्रासश्च महाबला ।
 उज्ज्वर शकुनिश्चैव भूतसन्तापनस्तथा ॥ ७२ ॥
 महानाभश्च चिकान्त कालनाभस्तथैव च ।
 धूम्रधनु दनुपुत्राश्च शत तीव्रपराक्रमा ॥ ७३ ॥
 तपस्विनो महापीडया प्राधान्येन त्रयीमि तान् ।
 द्विमुर्द्धा शङ्खकर्णश्च तथा हयशिरा विभु ॥ ७४ ॥
 अयोमुख शम्बरश्च करिलो घामनस्तथा ।
 मारीचिर्मघवाश्चैव इत्यल खसुमस्तथा ॥ ७५ ॥
 विक्षोभणश्च केतुश्च केतुघोर्यशतहर्दौ ।
 इन्द्रजित्सर्वजिच्चैव वज्रनाभस्तथैव च ॥ ७६ ॥
 एकचक्रो महाबाहुस्तारकश्च महाबल ।
 वैश्वानर पुलोमा च विद्राघणमहाशिरा ॥ ७७ ॥
 स्यर्भानुवृषपर्व च विप्रचित्तिश्च घोर्यवान् ।
 सर्व एते दनो पुत्रा कश्यपादमिजजिरे ॥ ७८ ॥
 विप्रचित्तिप्रधानास्ते दानवा सुमहाबला ।
 एतेषा पुत्रपौत्रन्तु न तच्छक्य द्विजोत्तमा ॥ ७९ ॥
 प्रसत्यातु बहुत्वाच्च पुत्रपौत्रमनन्तकम् ।
 स्वर्मानोस्तु प्रभा कन्या पुलोमस्तु शची सुता ॥ ८० ॥
 उपदानघो हयशिरा शर्मिष्ठा घार्पपर्व्वणी ।
 पुलोमा कालिका चैव वैश्वानरसुते उभे ।
 यद्वपत्ये महापत्ये मारीचेस्तु पत्निह ॥ ८१ ॥

तिस्रः कोट्यः सुतास्तेषांमनिघट्यां निवासिनः
 अवध्यास्तेऽपि देवानामर्जुनेन निपातिताः ।
 पद्सुताः सुमहाभागास्ताम्रायाः परिकीर्तिताः ॥ ६२ ॥
 कौञ्ची श्येनी च भासी च सुग्रीवी शुचिगृध्रिका ।
 कौञ्ची तु जनयामास उलूकप्रत्यलूककान् ॥ ६३ ॥
 श्येनी श्येनांस्तथा भासी भासान्गृध्रांश्च गृध्रपि ।
 शुचिरौदकान्पक्षिगणान्सुग्रीवी तु द्विजोत्तमाः ॥ ६४ ॥
 बभ्रवानुष्टान् गर्दभांश्च ताम्रायंशः प्रकीर्तितः ।
 चिन्तायास्तु द्वौ पुत्रौ विख्यातौ गरुडारणौ ॥ ६५ ॥
 गरुडः पततां श्रेष्ठो दारुणः स्वेन कर्मणा ।
 सुरसायाः सहस्रन्तु सर्पाणाममितौजसाम् ॥ ६६ ॥
 अनेकशिरसां चिप्राः खचराणां महात्मनाम् ।
 फाद्रपेयास्तु घलिनः सहस्रममितौजसः ॥ ६७ ॥
 सुपर्णधशगा नागा जहिरे नैकमस्तकाः ।
 येषां प्रधानाः सततं शेषवासुकितक्षकाः ॥ ६८ ॥
 ऐरावतो महापद्मः कम्यलाश्वतरायुमी ।
 पलापश्च शङ्खश्च कर्कोटकधनञ्जयो ॥ ६९ ॥
 महानीलमहाकर्णो धृतराष्ट्र्यलाहको ।
 वृद्धः पुष्पदंष्ट्रश्च दुर्मर्याः सुमुखस्तथा ॥ १०० ॥
 शङ्खश्च शङ्खपालश्च कपिलो पामनस्तथा ।
 नहुषः शङ्खरोमाच मनिरित्येषमादयः ॥ १०१ ॥

तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च शतशोऽथ सहस्रशः ।
 चतुर्दशसहस्राणि क्रूराणामनिलाशिनाम् ॥ १०२ ॥
 गणं क्रोधयशं विप्रास्तस्य सर्व्यं च दष्टिणः
 स्थलजाः पक्षिणोऽजाश्च घरायाः प्रसवाः स्मृताः ॥ १०३ ॥
 गास्तु वै जनयामास सुरमिमहिषोन्मथा ।
 इरा वृक्षलता चह्नीस्तुनजातीश्च सर्व्यशः ॥ १०४ ॥
 खसा तु यक्षरक्षासि मुनिरप्सरसस्तथा ।
 अरिष्टा तु महासिद्धा गंधर्वानमितीजसः ॥ १०५ ॥
 एते कश्यपदायादाः कीर्तिताः स्थाणुजङ्गमाः ।
 येषां पुत्राश्च पौत्राश्च शतशोऽथ सहस्रशः ॥ १०६ ॥
 एष मन्वन्तरे विप्राः सर्गः स्वरोचिषे स्मृतः ।
 वैवश्वतेऽनिमहति वारुणे वितते क्रतौ ॥ १०७ ॥
 जुह्वानस्य ब्रह्मणो वै प्रजासर्ग इहोच्यते ।
 पूर्य्य यत्र समुत्पन्नान्ब्रह्मर्षीन्सप्त मानसान् ॥ १०८ ॥
 पुत्रत्वे कल्पयामास स्वयमेव पितामहः ।
 ततो विरोधे देवानां दानवाना च भो द्विजाः ॥ १०९ ॥
 दितिर्विनष्टपुत्रा वै तोषयामास कश्यपम् ।
 कश्यपस्तु प्रसन्नात्मा सम्यगाराधितस्तथा ॥ ११० ॥
 घरेण छन्दयामास सा च वने धरं तदा ।
 पुत्रमिन्द्रवधार्थाय समर्थममितीजसम् ॥ १११ ॥
 स च तस्मै धरं प्रादात् प्रार्थितः सुमहातपाः ।
 दत्त्वा च घरमत्युग्रो मारीचः सममापत ॥ ११२ ॥

इन्द्रं पुत्रो निहन्ता ते गर्भं वै शरदां शतम् ।
 यदि धारयसे शौचतत्परा व्रतमास्थिता ॥ ११३ ॥
 तथेत्यभिहितो भर्ता तथा देव्या महातपाः ।
 धारयामास गर्भं तु शुचिः सा मुनिसत्तमाः ॥ ११४ ॥
 ततोऽभ्युपागमदित्यां गर्भमाधाय कश्यपः ।
 रोचयन् वै गणं श्रेष्ठं देवानाममितीजसम् ॥ ११५ ॥
 तेजः सहत्य दुर्धर्षमवध्यममरैरपि ।
 जगाम पर्वतायैव तपसे संश्रितव्रता ॥ ११६ ॥
 तस्याश्चैवान्तरप्रेप्सुरभवत् पाकशासनः ।
 जाते चर्षशते चास्या ददर्शान्तरमच्युतः ॥ ११७ ॥
 भ्रष्ट्या पादयोः शौचं दितिः शयनमाचिशत् ।
 निद्रां चाहारयामास तस्यां कुक्षिं प्रविश्य सः ॥ ११८ ॥
 घञ्जपाणिस्ततो गर्भं सप्तधा तं न्यहन्तयत् ।
 स पाट्यममानो गर्भोऽथ घञ्जेण प्ररुद ॥ ११९ ॥
 मा रोदीरिति तं शक्रः पुनःपुनरथाव्रवीत् ।
 सोऽभवत् सप्तधा गर्भस्तमिन्द्रो रुषितः पुनः ॥ १२० ॥
 एफैकं सप्तधा यक्रे.घञ्जे जीवारिकर्षणः ।
 मरुतो नाम ते देवा यमूषु द्विजसत्तमाः ॥ १२१ ॥
 यथोक्तं वै मघवता तथैव मरुतोऽभवन् ।
 देवाश्चैकोनपञ्चाशन्सहाया घञ्जपाणिनः ॥ १२२ ॥
 तेषामेषं प्रवृत्तानां भूतानां द्विजसत्तमाः ।
 रोचयन् वै गणश्रेष्ठान् देवानाममितीजसाम् ॥ १२३ ॥

निकायेषु निकायेषु हरि प्रादात् प्रजापतान् ।
 क्रमशस्तानि राज्यानि पृथुपूर्वाणि भो द्विजा ॥ १०४ ॥
 स हरि पुरयो धीर ऋणो जिष्णु प्रजापति
 पर्जन्यस्तपनोऽनन्तस्तस्य मर्त्रमिदं जगन् ॥ १०५ ॥
 भूतसर्गमिमं सम्यग्ज्ञानो द्विजमत्तमा ।
 नावृत्तिमयमस्तीह परलोकमथ कुत ॥ १०६ ॥
 इति श्रीमहादेव महापुराणे देवपुराणामुक्
 पत्तिकथनं नाम तृतायोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चतुर्थोऽध्यायः ।

पृथुमारभ्य सर्वदेवदानवादीनां राज्याभिषेक वर्णनम्
 लोमहर्षण उवाच ।

अमिषिच्याधिराजेन्द्र पृथुं वैत्यं पितामह ।
 ततः क्रमेण राज्यानि व्यादेष्टुमुपचक्रमे ॥ १ ॥
 द्विजानां धीरुधा चैव नक्षत्रग्रहयोस्तथा ।
 यज्ञानां तपसा चैव सोम राज्येऽभ्यपेक्षयन् ॥ २ ॥
 अपा तु धरुणराज्ये राजा चैश्रवण पतिम् ।
 वावित्यानां तथा विष्णुं घमनामथ पाचकम् ॥ ३ ॥

प्रजापतीना दक्ष तु मरुतामथ वासवम् ।
 दैत्याना दानवाना वै प्रह्लादममितौजसम् ॥ ४ ॥
 वैवस्वत पितृणाञ्च यम राज्येऽभ्यपेचयत् ।
 यक्षाणा राक्षसाणाञ्च पार्थिवाणा तथैव च ॥ ५ ॥
 सर्वभूतपिशाचाना गिरीश शूलपाणिनम् ।
 शैलाना हिमवन्तश्च नदीनामथ सागरम् ॥ ६ ॥
 गन्धर्वाणामधिपतिं चक्रे चित्ररथ प्रभुम् ।
 नागाना वासुकिं चक्रे सर्पाणामथ तक्षकम् ॥ ७ ॥
 वारणाना ॥ राजानमैरावतमथादिशत् ।
 उच्चै श्रवसमश्वाना गरुडञ्चैव पक्षिणाम् ॥ ८ ॥
 मृगाणामथ शाङ्गुर्ल गोवृषन्तु गवा पतिम् ।
 घनस्पतीना राजानं प्लक्षमेवाभ्यपेचयत् ॥ ९ ॥
 एव विभाज्य राज्यानि क्रमेणैव पितामह ।
 दिशा पालानथ तत स्थापयामास स प्रभु ॥ १० ॥
 पूर्वस्या दिशि पुत्र तु वैराजस्य प्रजापते ।
 दिश पाल सुधन्वान राजान सोऽभ्यपेचयत् ॥ ११ ॥
 दक्षिणस्या दिशि तथा कर्दमस्य प्रजापते ।
 पुत्र शङ्खपदं नाम राजान सोऽभ्यपेचयत् ॥ १२ ॥
 पश्चिमस्या दिशि तथा रजस पुत्रमच्युतम् ।
 केतुमन्त महात्मान राजान सोऽभ्यपेचयत् ॥ १३ ॥
 तथा हिरण्यरोमाण पर्जन्यस्य प्रजापते ।
 उदीच्या दिशि दुर्दयं राजान सोऽभ्यपेचयत् ॥ १४ ॥

तैरिय पृथिवी सध्वा सप्तद्वीपा सपत्तना ।
 यथाप्रदेशमद्यापि धर्मेण प्रतिपाल्यते ॥ १५ ॥
 राजसूयामिषिकस्तु पृथुरेतेनराधिपैः ।
 वेददृष्टेन विधिना राजा राज्ये नराधिपः ॥ १६ ॥
 ततो मन्वन्तरेऽतांते चाश्रुपेऽमिततेजसि ।
 धैर्यम्यताय मनवे पृथिव्यां राज्यमादिशत् ॥ १७ ॥
 तस्य विस्तरमाप्याम्ये मनोर्ध्वस्वतस्य ह ।
 भवतां चानुकृत्याय यदि श्रोतुमिहेच्छथ ।
 महदेतदधिष्ठानं पुराणे तदधिष्ठितम् ॥ १८ ॥

मुनय ऊचुः ।

विस्तरेण पृथोर्जन्म लोमहर्षण कीर्तय ।
 यथा महात्मना तेन दुग्धा घेयं घसुन्धरा ॥ १९ ॥
 यथा घापि नृभिर्दुग्धा यथा देवैर्महर्षिभिः ।
 यथा दैत्यैश्च नागैश्च यथा यक्षैर्यथा द्रुमैः ॥ २० ॥
 यथा शैलैः पिशाचैश्च गन्धर्वैश्च द्विजोत्तमैः ।
 राक्षसैश्च महासत्त्वैर्यथा दुग्धा घसुन्धरा ॥ २१ ॥
 तेषां पात्रविशेषांश्च वक्तुमर्हसि सुव्रत ।
 वत्सक्षीरविशेषांश्च दोग्धारं चानुपूर्वशः ॥ २२ ॥
 यस्माच्च कारणात् पाणिर्वनस्य मथितः पुरा ।
 क्रुद्धैर्महर्षिभिस्तात कारणं तच्च कीर्तय ॥ २३ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

शृणुष्वं कीर्त्तयिष्यामि पृथोर्वैन्यस्य विस्तरम् ।
 एकाग्राः प्रयताश्चैव पुण्यार्था वै द्विजर्पमाः ॥ २४ ॥

नाशुचेः क्षुद्रमनसो नाशिष्यस्यावतस्य च ।
 कीर्त्तयेयमिदं विप्राः कृतग्न्यायाहिनाय च ॥ २५ ॥
 स्वार्थं यशस्यमायुष्यं धन्यं वेदैश्च समितम् ।
 रहस्यमृषिभिः प्रोक्तं शृणुष्वं वै यथातथम् ॥ २६ ॥
 यश्चेमं कीर्त्तयेन्नित्यं पृथोर्वैम्यस्य विस्तरम् ।
 ब्राह्मणेभ्यो नमस्कृत्य न स शोचेत् कृताकृतम् ॥ २७ ॥
 आसीद्धर्मस्य संगोप्ता पूर्यमग्निसमः प्रभुः ।
 अग्निघशे समुत्पन्नस्तद्गो नाम प्रजापतिः ॥ २८ ॥
 तस्य पुत्रोऽभवद्भवेनो नात्यर्थं धर्मकोविदः ।
 जातो मृत्युसुताया वै सुनीथायां प्रजापतिः ॥ २९ ॥
 स मातामहदोषेण तेन कालात्मजात्मजः ।
 गवधर्मं पृष्ठत कृत्वा कामलोभेष्ववर्त्तत ॥ ३० ॥
 मर्यादा भेदयामास धर्मोपितां स पार्थिवः
 वेदधर्मानतिक्रम्य सोऽधर्मनिरतोऽभवत् ॥ ३१ ॥
 नि स्वाध्यायवपद्काराः प्रजास्तस्मिन् प्रजापतौ ।
 प्रवृत्तं न पपु सोमं हुतं यज्ञेषु देवताः ॥ ३२ ॥
 न यष्टव्यं न होतव्यमिति तस्य प्रजापतेः ।
 आसीत् प्रतिज्ञा क्रूरं विनाशे प्रत्युपस्थिते ॥ ३३ ॥
 अहमिज्यश्च यष्टा च यज्ञश्चेति भृगूद्वह ।
 मयि यज्ञो विधातव्यो मयि होतव्यमित्यपि ॥ ३४ ॥
 तमतिप्रान्तमर्यादमाददानमसाम्प्रतम् ।
 ऊचुर्महर्षयः सर्व्वे मरीचिप्रमुखास्तदा ॥ ३५ ॥

वयं दीक्षां प्रवेक्ष्याम संवत्सरगणान् बहून् ।
 अधम्मं कुरु मा वेन एष धम्मः सनातनः ॥ ३६ ॥
 निधनेऽत्रेः प्रसूतस्त्व प्रजापतिरसंशयम् ।
 प्रजाश्च पालयिष्येऽहमितीह समयः कृतः ॥ ३७ ॥
 तांस्तथा रुचतः सर्वान्महर्षीन्प्रवीक्षदा ।
 वेनः प्रहस्य दुर्बुद्धिरिममर्यमनर्थवित् ॥ ३८ ॥

वेन उवाच ।

स्रष्टा धर्मस्य कश्चान्यः श्रोतव्यं कस्य वा मया ।
 श्रुतवीर्य्यतपसत्यै मया वा कः समो भुवि ॥ ३९ ॥
 प्रभवं सर्वभूतानां धर्माणां च विशेषतः ।
 सम्मूढा न विदुर्नृनं भयन्तो मां विचेतसः ॥ ४० ॥
 इच्छन् दहेयं पृथिवी प्लावयेयं जलैस्तथा ।
 द्यां वै भुवं च रुद्धेयं नात्र कार्या विचारणा ॥ ४१ ॥
 यदा न शक्यते मोहादघलेषाच्च पार्थिवः ।
 भयनेतु तदा वेनस्ततः क्रुद्धा महर्षयः ॥ ४२ ॥
 तं निगृह्य महात्मानो विस्फुरन्तं महाबलम् ।
 ततोऽस्य सय्यमुरुं ते ममन्थु जातमन्यवः ॥ ४३ ॥
 तस्मिन्निर्मथ्यमाने घै राज उरौ तु जज्ञिवान् ।
 हस्योऽतिमात्रं पुरुषः कृष्णश्चेति बभूव ह ॥ ४४ ॥
 स भीतः प्राञ्जलिर्भूत्वा तस्थिवान् द्विजसत्तमाः ।
 तमत्रिर्विह्वलं दृष्ट्वा निपीदेत्यब्रवीत्तदा ॥ ४५ ॥

निपादवंशकर्त्तासौ यभूव घदतांवराः ।
 धीघरानसृजन्नापि वेनकल्मषसम्भवान् ॥ ४६ ॥
 ये चान्ये विद्यानिलयास्तथा पर्वतसंश्रयाः ।
 अधर्मरुचयो विप्रास्ते ते वै वेनकल्मषाः ॥ ४७ ॥
 ततः पुनर्महात्मानः पाणिं वेनस्य दक्षिणम् ।
 अरणीमिव संरन्धा ममन्युर्जातमन्यघः ॥ ४८ ॥
 पृथुस्तस्मात् समुत्पन्नः कराज्ज्वलनसन्निभः ।
 दीप्यमानः स्वयंपुषा साक्षाद्गिरिव उ्वलन् ॥ ४९ ॥
 अथ सोऽजगद्यं नाम धनुर्गृह्य महारघम् ।
 शरांश्च दिव्यान् रक्षार्थं कचचं च महाप्रभम् ॥ ५० ॥
 तस्मिन् जातेऽथ भूतानि सम्प्रहृष्टानि सर्व्वशः ।
 समापेतुर्महाभागा वेनस्तु त्रिदिश ययौ ॥ ५१ ॥
 समुत्पन्नेन भो विप्राः सत्पुत्रेण महात्मना ।
 त्रातः स पुरुषव्याघ्रः पुत्रान्नो नरकात्तदा ॥ ५२ ॥
 तं समुद्राश्च नद्यश्च रत्नान्यादाय सर्व्वशः ।
 क्षीयानि चाभिपेकार्थं सर्व्व एषोपतस्थिरे ॥ ५३ ॥
 पितामहश्च भगवान् देवैराङ्गिरसैः सह ।
 स्यावराणि च भूतानि जङ्गमानि च सर्व्वशः ॥ ५४ ॥
 समागम्य तदा वैन्यमभ्यपिञ्चनराधिपम् ।
 महता राजराजेन प्रजास्तेनानुरजिताः ॥ ५५ ॥
 सोऽमिषिक्तो महातेजा विधिवद्धर्मकोचिदैः
 आधिराज्ये तदा राज्ञां पृथुर्वैन्यः प्रतापवान् ॥ ५६ ॥ .

पित्रापरञ्जितास्तस्य प्रजास्तेनानुरञ्जिताः ।

अनुरागात्ततस्तस्य नाम राजाम्यजायत ॥ ५७ ॥

आपस्तस्तस्मिन्ने तस्य समुद्रमभियास्यतः ।

पर्य्यताञ्च ददुर्म्मागं ध्वजमङ्गञ्च नामवत् ॥ ५८ ॥

अकृष्टपद्या पृथिवी सिध्यन्त्यन्नानि चिन्तनात् ।

सर्व्वकामदुघा गावः पुटके पुटकेमधु ॥ ५९ ॥

एतस्मिन्नेव काले तु यज्ञे पैतामहे शुभे ।

सूतः सून्यां समुत्पन्नं सौत्येऽहनि महामतिः ॥ ६० ॥

तस्मिन्नेव महायज्ञे यज्ञे प्राज्ञोऽथ मागधः ।

पृथोः स्तघायं तौ तत्र समाहृतौ महर्षिमिः ॥ ६१ ॥

तायूचुर्भूयः सर्व्वे स्नूयतामेव पार्थिवः ।

कर्मैतद्वनुरपं धा पारं चायं नराधिपः ॥ ६२ ॥

तायूचनुस्तदा सर्व्वस्तानृपांश्च सूतमागधौ ।

धावां देवानृषींश्चैव शीणयाव. स्तरुग्मेभिः ॥ ६३ ॥

न चाम्य विद्रुमो वै कर्म नाम धा लक्ष्णं यशः ।

स्तोत्रं येनास्य कुर्व्याथ राजस्तेजस्विनो द्विजाः ॥ ६४ ॥

अपिभिस्तौ नियुक्तौ नु भविष्यै स्नूयतामिति

यानि कर्माणि कृतवान् पृथुः पश्चान्महाबलः ॥ ६५ ॥

ततः प्रभृति वै लोके स्तरेषु मुनिसत्तमा ।

आशीर्वादाः प्रयुज्यन्ते सप्तमागधचन्द्रिभिः ॥ ६६ ॥

तयो स्तवान्ते सुप्रीतः पृथुः प्रादात्प्रजेश्वरः

अनूपदेशं सूताय मागधं मागधाय च ॥ ६७ ॥

तं दृष्ट्वा परमप्रीताः प्रजाः प्रोचुर्मनीषिणः ।
 वृत्तीनामेष वो दाता भविष्यति नराधिपः ॥ ६८ ॥
 ततो यैन्यं महात्मानं प्रजा- समभिदुद्रुवुः ।
 त्व नो वृत्तिं विधत्स्वेति महर्षिवचनात्तदा ॥ ६९ ॥
 सोऽभिदुत प्रजामिस्तु प्रजाहितचिकीर्षया ।
 धनुर्गृह्य पृषत्काञ्च पृथिवीमाद्रथद्वली ॥ ७० ॥
 ततो यैन्यभयप्रस्ता गौर्भूत्वा प्राद्वधन्मही ।
 तां पृथुर्धनुरादाय द्रघन्तीमन्वधावत ॥ ७१ ॥
 सा लोकान् ब्रह्मलोकादीन् गत्वा यैन्यभयात्तदा
 प्रददर्शाप्रतो यैन्यं प्रगृहोतशरासनम् ॥ ७२ ॥
 ज्वलद्भुभिर्निशितैर्बाणैर्दीप्ततेजसमन्ततः ।
 महायोगं महात्मानं दुर्द्धर्पममरैरपि ॥ ७३ ॥
 अलभन्ती ॥ सा प्राणं यैन्यमेवान्धपद्यत ।
 एताञ्जलिपुटा भूत्वा पूजया लोकैस्त्रिमिस्तदा ॥ ७४ ॥
 उवाच यैन्यं नाधम्मं स्त्रीवधे परिपश्यसि ।
 कथं धारयिता चासि प्रजा राजान् विना मया ॥ ७५ ॥
 मयि लोका स्थिता राजन्मयेदं धार्य्यते जगत् ।
 मद्विनाशे पिनश्येयुः प्रजा- पार्थिव चिद्धि तत् ॥ ७६ ॥
 न मामर्हसि हन्तुं यै श्रेयश्चेत्यं चिकीर्षसि ।
 प्रजानां पृथिवीपाल ऋणु चेद् धनो मम ॥ ७७ ॥
 उपायतः समारब्धा सर्व्ये सिध्यन्त्यप्रभमाः ।
 उपायं पश्य येन त्वं धारयेथाः प्रजामिमाम् ॥ ७८ ॥

हत्वापि मा न शक्तस्त्वं प्रजाना पोषणे नृप ।
 अनुकूला मयि प्राप्तामि यच्छ कोप महामने ॥ ७६ ॥
 अवध्या च म्रिय प्राहुस्तिर्यग्योनिगनेष्वपि ।
 यद्येव पृथिवीपाल न धर्मं त्यक्तुमर्हसि ॥ ८० ॥
 एव प्रहुवित्र वाक्य श्रन्वा राजा महामना ।
 कोप निवृत्त्य धर्मात्मा वसुधामिदमवर्षीत् ॥ ८१ ॥

पृथुर्वाच ।

एकस्यार्थं तु यो हन्यादात्मनो वा परस्य वा ।
 बहन् वा प्राणिनोऽनन्त भयेत्तस्येह पातकम् ॥ ८२ ॥
 सुखमेवन्ति बहो यस्मिन्तु निहतेऽशुभे ।
 तस्मिन् हते नास्ति भद्रे पातक चोपपातकम् ॥ ८३ ॥
 सोऽह प्रजानिमित्तं त्वा हनिष्यामि वसुन्धर
 यदि मे वचनात्वाद्य करिष्यसि जगद्धितम् ॥ ८४ ॥
 त्वा निहत्यात्र पाणेन मण्डासनपराट्मुखीम् ।
 मात्मान प्रथयित्वाह प्रजा धारयिता स्वयम् ॥ ८५ ॥
 सा त्व शासनमास्थाय मम धर्मभृता धरे ।
 सञ्जीवय प्रजा सञ्जा समर्था ह्यसि धारणे ॥ ८६ ॥
 दुहितृत्वं च मे गच्छ तत् एनमह शरम् ।
 नियच्छेय त्वद्वधार्थमुद्यन्त घोरदर्शनम् ॥ ८७ ॥

वसुधोवाच ।

सर्वमेतद्दह धीर विधास्यामि न सशय ।
 घत्स तु मम सापश्य क्षरेय येन घत्सला ॥ ८८ ॥

समाञ्च कुरु सर्व्वत्र मा त्व धर्ममृता धर ।
तया विस्यन्दमान मे क्षीर सर्व्वत्र भावयेत् ॥ ८६ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

तत उत्सारयामास शैलान् शतसहस्रश ।
धनुष्कोट्या तदा वैन्यस्तेन शैला विवर्द्धिता ॥ ८७ ॥
न हि पूर्व्वविस्मर्गे वै विषमे पृथिवीतले ।
सविभाग पुराणा वा ग्रामाणा यामयत्तदा ॥ ८९ ॥
■ शस्थानि न गोरक्ष्य न वृषिर्न घणिक्पथ ।
नैव सत्यानृत चासीन्न लोमो न च मत्सर ॥ ९२ ॥
धैवस्थतेऽन्तरे तस्मिन् साम्प्रत समुपस्थिते ।
धैव्यात्प्रभृति धै विशा सर्व्वस्यैतस्य सम्मय ॥ ९३ ॥
यत्र यत्र सम त्वस्या भूमेगामीत्तदा द्विजा ।
तत्र तत्र प्रजा सर्वा विवास समरोचयन् ॥ ९४ ॥
आहार फलमूलानि प्रजानामभवत्तदा ।
वृच्छ्रेण महता युक्त इत्येवमनुपशुभ्रम् ॥ ९५ ॥
स कम्पयित्वा घटस तु मनु स्वायम्भुष प्रभुम् ।
स्वर्णो पुरययाधो दुद्रोह पृथिवीं तत ॥ ९६ ॥
शम्यजातानि सध्वानि पृथुर्ध्वन्य प्रतापवान् ।
तन्नाशेन प्रजा सध्वा पक्षन्तेऽद्यापि सध्वंश ॥ ९७ ॥
श्रयवध तदा देवा पितरोऽथ सरामृषा ।
दैत्या यक्षा पुण्यजना गन्धर्वा पथ्यता नगा ॥ ९८ ॥

एते पुरा द्विजश्रेष्ठ्य दुदुर्धरणी किल ।
 क्षीरं घत्सश्च पात्रं च तेषां दोग्धा पृथक्पृथक् ॥ ९९ ॥
 ऋषीणाममघत्सोमो घत्सो दोग्धा बृहस्पतिः ।
 क्षीरं तेषां तपो ब्रह्म पात्रं छन्दसि भो द्विजाः ॥ १०० ॥
 देवानां काञ्चन पात्रं घत्सस्तेषां शतक्रतुः ।
 क्षीरमोजम्बरं चैव दोग्धा च भगवान्रविः ॥ १०१ ॥
 पितॄणां राजत पात्रं यमो घत्सः प्रतापवान् ।
 अन्तरिक्षाभयदोग्धा क्षार तेषां सुधा स्मृता ॥ १०२ ॥
 नागानां तक्षको घत्सः पात्रं चालानुसङ्गकम् ।
 दोग्धा त्वैरावतो नागस्तेषां क्षारं चिपं स्मृतम् ॥ १०३ ॥
 अमुराणां मधुर्दोग्धा क्षीरं मायामयं स्मृतम् ।
 विरोचनस्तु घत्सोऽमृदायस पात्रमेव च ॥ १०४ ॥
 यक्षाणामामपात्रं तु घत्सो वैश्रवणः प्रभुः ।
 दोग्धा रजतनामस्तु क्षीरान्तर्धानमेव च ॥ १०५ ॥
 सुमाली राक्षसेन्द्राणां घत्सं क्षीरञ्च शोणितम् ।
 दोग्धा रजतनामस्तु कपाल पात्रमेव च ॥ १०६ ॥
 गन्धर्वानां त्रिपरयो घत्सः पात्रं च पङ्कजम् ।
 दोग्धा च सुहृदि क्षीरं तेषां गन्धः शुचिः स्मृतः ॥ १०७ ॥
 शैलं पात्रं पर्वतानां क्षीरं रत्नोष्णीहस्तथा ।
 घत्सस्तु हिमवानासोऽदुदोग्धा मेरुर्महानिरिः ॥ १०८ ॥
 प्लक्षो घत्सस्तु वृक्षाणां दोग्धा शालस्तु पुष्पितः ।
 पालाशपात्रं क्षीरञ्च छिन्नदग्धप्ररोहणम् ॥ १०९ ॥

सेयं धात्री विधात्री च पावनी च घसुन्धरा ।
 चराचरस्य सर्वस्य प्रतिष्ठा योनिरेव च ॥ ११० ॥
 सर्वकामदुग्धा दोग्ध्री सर्वशस्यप्ररोहणी ।
 आसीदियं समुद्रान्ता मेदिनी परविश्रुता ॥ १११ ॥
 मधुकैटभयोः कृत्स्ना मेदसा समभिप्लुता ।
 तेनेयं मेदिनी देवी उच्यते ब्रह्मवादिभिः ॥ ११२ ॥
 ततोऽभ्युपगमाद्राज्ञः पृथोर्वैन्यस्य भो द्विजाः ।
 दुहितृत्वमनुप्राप्ता देवी पृथ्वीति चोच्यते ॥ ११३ ॥
 पृथुता प्रविभक्ता च शोधिता च घसुन्धरा ।
 शस्याकरवती स्कीता पुरपत्तनशालिनी ॥ ११४ ॥
 पण्ड्रमाषो धैन्यः स राजासीद्राजसत्तमः ।
 नमस्यश्चैव पूज्यश्च भूतग्रामैर्न संशयः ॥ ११५ ॥
 ब्राह्मणैश्च महाभागैर्वैश्वेदाङ्गपारणैः ।
 पृथुरैव नमस्काट्यो ब्रह्मयोनिः सनातनः ॥ ११६ ॥
 पार्थिवैश्च महाभागैः पार्थिवत्वमिहेच्छुभिः ।
 आदिराजो नमस्काट्यः पृथुर्वैन्यः प्रतापवान् ॥ ११७ ॥
 यो धैरवि न विक्रान्तेः प्राप्तुकामैर्जयं शुधि ।
 आदिराजो नमस्काट्यो योधानां प्रथमो नृपः ॥ ११८ ॥
 यो हि योद्धा रणं याति कीर्त्तयित्वा वृष्टुं नृपम् ।
 स घोररूपात्संग्रामात्क्षेमी भवति कीर्त्तिमान् ॥ ११९ ॥
 येश्वरैरपि च पिताद्वैर्वैश्यवृत्तिविधायिभिः ।
 पृथुरैव नमस्काट्यो वृत्तिदाता महायशः ॥ १२० ॥

तथैव शूद्रैः शुचिमिस्त्रिवर्णपरिचारिमिः ।
 पृथुरेव नमस्कार्यः श्रेयः परमिहेप्सुमिः ॥ १२१ ॥
 पते घत्सविरोषाश्च दोग्धारः क्षीरमेव च ।
 पात्राणि च मयोक्तानि किं भूयो वर्णयामि घः ॥ १२२ ॥
 इति श्रोत्राहो महापुराणे पृथोर्जन्ममाहात्म्यकथनं
 नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पञ्चमोऽध्यायः

मन्यन्तर वर्णनम्

अथय ऊचुः ।

मन्यन्तराणि सर्व्याणि विस्तरेण महामने ।
 तेषां पूर्वघिसृष्टिं च लोमहर्षण कीर्तय ॥ १ ॥
 याचन्तो मनघधैव याचन्तं कालमेव च ।
 मन्यन्तराणि भो सून श्रोतुमिच्छाम तत्पतः ॥ २ ॥
 लोमहर्षण उवाच ।
 न शक्यो विस्तरो विप्रा घक्तुं वर्णशतैरपि ।
 मन्यन्तराणां सर्व्येषां संक्षेपाच्छृणुत द्विजाः ॥ ३ ॥
 स्थायम्भुवो मनुः पूर्व्यं मनुः म्वारोचिपस्तथा ।
 उत्तमस्तामसश्चैव रैवतश्चाक्षुपस्तथा ॥ ४ ॥

धेवस्वतश्च मो विप्रः साम्प्रत मनुकथ्यते ।
 सावार्णिश्च मनुस्तद्वद्रेभ्यो रौच्यस्तथैव च ॥ ५ ॥
 तथैव मेरुसावर्ण्यश्चत्वारो मनवः स्मृताः ।
 भर्ताता घर्त्तमानाश्च तथैवानागता द्विजाः ॥ ६ ॥
 कीर्त्तिता मनवस्तुभ्य मयैवैते यथाश्रुताः ।
 ऋषींस्त्वेषां प्रवक्ष्यामि पुत्रान्देवगणास्तथा ॥ ७ ॥
 मरीचिरत्रिमंगवानङ्गिरा पुलहः प्रभुः ।
 पुलस्त्यश्च वशिष्ठश्च सप्तैते ब्रह्मणः सुताः ॥ ८ ॥
 उत्तरस्या दिशि तथा द्विजाः सप्तर्षयस्तथा ।
 आग्निधन्वाग्निवाहुश्च मेभ्यो मेधातिथिर्वसु ॥ ९ ॥
 ज्योतिष्मान्द्युतिमान्हव्यः सवलः पुत्रसङ्गकः ।
 मनोः स्वायम्भुवस्यैते दश पुत्रा महोजसः ॥ १० ॥
 एतच्छ्रेष्ठं प्रथमं विप्रः मन्यन्तरमुदाहृतम् ।
 उष्यो वसिष्ठपुत्रश्च नः स्तभ्यः कश्यप एव च ॥ ११ ॥
 प्राणो वृद्धम्पतिश्चैव दत्तोऽग्निश्च्यवनस्तथा ।
 एते महर्षयो विप्रः वायुप्रोक्ता महाव्रताः ॥ १२ ॥
 देवाश्च तु पिता मामः स्मृताः स्यारोचिषेऽन्तरे ।
 दधिष्णुः सुवृत्तिर्गोतिरापोमूर्तिरपि स्मृतः ॥ १३ ॥
 प्रतीतश्च नमस्यश्च नमः उज्जैनतथैव च ।
 स्यारोचिषस्य पुत्रास्ते भनाविप्रः महारमनः ॥ १४ ॥
 कीर्त्तिता वृषिर्षोपाया महार्षीर्ष्यपराव्रताः ।
 द्वितीयोऽङ्गकश्चिन् विप्रः मन्यन्तर मया ॥ १५ ॥

धैर्यस्य तश्च भो विशा साम्प्रत मनुव्यते ।
 सावर्णिश्च मनुस्तद्वदेभ्यो रौच्यस्तथैव च ॥ ५ ॥
 तथैष मेरुसावर्ण्यश्च त्वारो मनव स्मृता ।
 धर्ताता धर्तमानाश्च तथैवानागता द्विजा ॥ ६ ॥
 कीर्तिता मनवस्तुभ्य मयेयैते यथाश्रुता ।
 ऋषींस्त्येषा श्रवयामि पुत्रान्देवगणास्तथा ॥ ७ ॥
 मरीचिरत्रिमंगयानङ्गिरा पुत्रह मनु ।
 पुत्रस्यश्च वशिष्ठस्य सप्तैते ब्रह्मण सुता ॥ ८ ॥
 उत्तरस्या दिशि तथा द्विजा सप्तपयस्तथा ।
 धानिधन्याग्निधातुश्च मेभ्यो मेधातिथिर्यसु ॥ ९ ॥
 उद्योतिष्मान्पुतिमानस्य सयत् पुत्रमङ्गक ।
 मतो न्यायशुषार्यैरे दश पुत्रा मदौजस ॥ १० ॥

इदं तृतीयं वक्ष्यामि तद्वयं ध्येयं द्विजोत्तमाः ।
 वसिष्ठपुत्राः सप्तासन् वासिष्ठा इति विश्रुताः ॥ १६ ॥
 हिरण्यगर्भस्य सुता ऊर्जा जाताः सुनेजसः ।
 अप्योऽत्र मया प्रोक्ता कील्यमानान्निबोधत ॥ १७ ॥
 उत्तमेयान्मुनिश्रेष्ठा दश पुत्रान्मनोरिमान् ।
 इष ऊर्जस्तनूर्जस्तु मधुर्माधव एव च ॥ १८ ॥
 शुचिः शुक्रः सहश्चैव नमस्यो नम एव च ।
 मानवस्तत्र देवाश्च मन्वन्तरमुद्राहृतम् ॥ १९ ॥
 मन्वन्तरं चतुर्थं यः कथयिष्यामि साम्प्रतम् ।
 काव्यः पृथुस्तथैवाग्निर्जह्नुर्धार्ता द्विजोत्तमाः ॥ २० ॥
 कपीचानकपीचांश्च तत्र सप्तर्षयो द्विजाः ।
 पुराणे कीर्त्तिताविप्रा पुत्रा पीत्राश्चमोद्विजाः ॥ २१ ॥
 तथा देवगणाश्चैव तामसस्यान्तरे मनोः ।
 धुतिस्तपस्यः सुतपास्तपोभूतः सनातनः ॥ २२ ॥
 तपोरतिरकल्माषस्तन्यी घन्वी परन्तपः ।
 तामसस्य मनोरेते दश पुत्राः प्रकीर्त्तिताः ॥ २३ ॥
 धायुप्रोक्ता मुनिश्रेष्ठाश्चतुर्थं चैतदन्तरम् ।
 देवबाहुर्दुधश्च मुनिर्वेदशिरास्तथा ॥ २४ ॥
 हिरण्यरोमा पर्जन्य ऊर्ध्वबाहुश्च सोमजः ।
 सत्यनेनस्तथात्रेय एने सप्तर्षयोऽपरे ॥ २५ ॥
 देवाश्चाभूतरजसस्तथा प्रकृतयः स्मृताः ।
 वारिष्णवश्च रैम्यश्च मनोरन्तरमुच्यते ॥ २६ ॥

अथ पुत्रानिमास्तस्य बुभुध्वं गदतो मम ।
 धृतिमानज्ययो युक्तस्तत्त्वदर्शो निरुत्सुक ॥ २७ ॥
 आरण्यश्च प्रकाशश्च निम्माह सत्यवाक्कृती ।
 रैघतस्य मनो पुत्रा पञ्चम चैतदन्तरम् ॥ २८ ॥
 पठ तु सम्प्रवक्ष्यामि तद्बुभुध च द्विजोत्तमा ।
 भृगुर्नभो विषखाश्च सुधामा विरजास्तथा ॥ २९ ॥
 अतिनामा सहिष्णुश्च सप्तैने च महर्षय ।
 चाश्रुपस्यान्तरे विप्रा मनोर्देवास्त्विमे स्मृता ॥ ३० ॥
 अप्रसूताश्च ऋषयः * पृथक्कृतेन दिवीकृत ।
 ऐलाश्च नामतो विप्रा पञ्च देवगणा स्मृता ॥ ३१ ॥
 ऋषेरङ्गिरस पुत्रा महात्मानो महौजस ।
 नाडचलेषा मुनिश्रेष्ठा दश पुत्रास्तु विश्रुता ॥ ३२ ॥
 रुद्रप्रभृतयो विप्राश्चाश्रुपस्यान्तरे मनो ।
 पठ मन्वन्तर प्रोक्त सप्तम तु निबोधत ॥ ३३ ॥
 अग्निर्घसिष्ठो भगवान् कश्यपश्च महानृपि ।
 गौतमोऽथ भरद्वाजो विश्वामित्रस्तथैव च ॥ ३४ ॥
 तथैव पुत्रो भगवानृचीकस्य महात्मन ।
 सप्तमो जमदग्निश्च ऋषयः साम्प्रत दिवि ॥ ३५ ॥
 साध्या रुद्राश्च विश्वे च घस्यो मरुतस्तथा ।
 आदित्याश्चाग्निर्नो चापि देवो वैवस्वतोऽम्भृतो ॥ ३६ ॥

* “आयात प्रयिता स्ते घै” कचिदेव पाठ ।

मनोर्व्यवस्यतस्यैते वर्तन्ते साम्प्रतेऽन्तरे ।
 इन्द्राहुप्रमुखाश्चैव दश पुत्रा महान्मन ॥ ३७ ॥
 एतेषा कीर्तितानान्तु मर्षोणा मर्हजसाम् ।
 तेषापुत्राश्च पौत्राश्च दिक्षु सत्र्यासु भो द्विजा ॥ ३८ ॥
 मन्वन्तरेषु सर्वेषु प्रागासन् सप्त सप्तका ।
 लोके धर्मव्यवसायं लोकनरक्षणाय च ॥ ३९ ॥
 मन्वन्तरे यतिक्रान्ते चत्वारः सप्तका गणा ।
 कृत्वा कर्म दिव्र यान्ति ब्रह्मलोकमनामयम् ॥ ४० ॥
 तमोऽन्ये सपसा युक्ता म्यान तन्पूरयन्त्युत ।
 अतीता वर्त्तमानाश्च क्रमेणैतेन भो द्विजा ॥ ४१ ॥
 अनागताश्च सप्तैते स्मृता दिवि महर्षय ।
 मनोरन्तरमासात्र सावर्णम्येह भो द्विजा ॥ ४२ ॥
 रामो व्यासस्तथात्रेयो दीप्तिमन्तो गुरुधुता ।
 भारद्वाजस्तथा द्रौणिष्ठवयामा महानुति ॥ ४३ ॥
 गौतमश्चाजण्वैः शरद्धान्नाम गौतमः ।
 कौशिको गालवश्चैव श्रीर्ष्य काश्यप एव च ॥ ४४ ॥
 एते सप्त महात्मानो भविष्या मुनिसत्तमा ।
 चेरो चैवात्यरीवांश्च शमनो धृतिमान् वसु ॥ ४५ ॥
 भारिष्ठ्याप्यधृष्ट्या च वाजी सुमतिरेव च ।
 सावर्णस्य मनो पुत्रा भविष्या मुनिसत्तमाः ॥ ४६ ॥
 एतेषा कत्यमुत्थाय कीर्तनान् सुखमेधने ।
 यशश्चाप्नोति सुमहदायुष्माश्च भवेन्नरः ॥ ४७ ॥

एतान्युक्तानि भो विप्राः सप्तसप्त च तत्त्वतः ।
 मन्यन्तराणि संक्षेपाच्छृणुनानागतान्यपि ॥ ४८ ॥
 सावर्णा मनवो विप्राः पञ्च तांश्च निबोधत ।
 एको वैषखतस्तेषां चत्वारस्तु प्रजापतेः ॥ ४९ ॥
 परमेष्ठितुता विप्रा मेरुसावर्ण्यतां गताः ।
 दक्षस्यैते हि दौहित्राः प्रियायास्तनया नृपाः ॥ ५० ॥
 महता तपसा युक्त्वा मेरुपृष्ठे महौजसः ।
 रुचेः प्रजापतेः पुत्रो रौच्यो नाम मनुः स्मृतः ॥ ५१ ॥
 भूत्यां चोत्पादितो देव्यां मौल्यो नाम रुचेः सुतः ।
 अनागताश्च सप्तैते कल्पेऽस्मिन्मनवः स्मृताः ॥ ५२ ॥
 तैरियं पृथिवी सर्वा सप्तद्वीपा सप्ततना ।
 पूर्णं युगसहस्रन्तु परिपाल्या द्विजोत्तमाः ॥ ५३ ॥
 प्रजापति (ते) एव तपसा संहारं तेषु नित्यशः ।
 युगानि सप्ततिस्तानि साग्राणि कथितानि च ॥ ५४ ॥
 एतन्नेतादियुक्तानि मनोरन्तरमुच्यते ।
 चतुर्दशैते मनवः कथिताः कीर्त्तिवर्द्धनाः ॥ ५५ ॥
 धेदेषु सपुराणेषु सर्वेषु प्रभविष्णवः ।
 प्रजानां पतयो विप्रा धन्यमेषां प्रकीर्त्तनम् ॥ ५६ ॥
 मन्यन्तरेषु संहाराः संहारान्तेषु सम्भवाः ।
 न शक्यतेऽन्तस्तेषां धे वक्तुं वर्णशतैरपि ॥ ५७ ॥
 विसर्गस्य प्रजानां धे संहारस्य च भो द्विजाः ।
 मन्यन्तरेषु संहाराः श्रूयन्ते द्विजसत्तमाः ॥ ५८ ॥

सरोयामन्त्र तिष्ठन्ति देवाः सप्तर्षिभिः सह ।
 तपसा ब्रह्मचर्य्येण ध्रुवेन च समन्विताः ॥ ५६ ॥
 पूर्णे युगसहस्रे तु कल्पो निःशेष उच्यते ।
 तत्र भूतानि सर्वाणि द्वाधान्यादित्यगर्भिमिः ॥ ६० ॥
 ब्रह्माणमग्रतः कृत्वा सहादित्यगणैर्द्विजाः ।
 प्रविशन्ति सुगन्धेष्टं हरितारायणं प्रभुम् ॥ ६१ ॥
 स्रष्टारं सर्वभूतानां कात्यालं पुन पुनः ।
 अग्र्यक्तं शाश्वतो देवस्तस्य सर्वमिदं जगम् ॥
 यत्र यः कीर्त्तयिष्यामि मनोर्ध्वमन्यतम्य वै ।
 विसर्गं मुनिगार्दूलाः साम्प्रतन्तु महाद्युतेः ॥ ६३ ॥
 यत्र वंशं प्रमदने कथ्यमानं पुरातनम् ।
 यत्रोत्पन्नो महान्मा स हतिर्धृष्णिकुले प्रभुः ॥ ६४ ॥
 इति श्रीब्राह्मे महापुराणे मन्थन्तरकीर्त्तनं नाम
 पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

पष्ठोऽध्यायः ।

आदित्योत्पत्ति कथनम्

लोमहर्षण उवाच ।

विद्यस्थानं कश्यपाज्जज्ञे दाक्षायण्या द्विजोत्तमा ।
तस्य भार्याभवत्सज्ञा त्वाप्त्री देवी विद्यस्वत ॥ १ ॥
सुरेणुरिति विख्याता त्रिषु लोकेषु भाविनी ।
सावै भार्या भगवतो मार्त्तण्डस्य महात्मन ॥ २ ॥
भर्तृरूपेण नातुष्यद्रूपयौघनशालिनी ।
सज्ञा नाम सुतपसा सुदीप्तेन समन्विता ॥ ३ ॥
आदित्यस्य हि तद्रूप मण्डलस्य सुनेजसा ।
गात्रेषु परिदग्धं चै नातिकान्तमिषाभवत् ॥ ४ ॥
न खल्वयं मृतोऽण्डस्य इति स्नेहादभाषत ।
अजानन् कश्यपस्तस्मान्मार्त्तण्ड इति लोच्यते ॥ ५ ॥
तेजस्यभ्यधिकं तस्य नित्यमेव विद्यश्रुत ।
येनातितापयामास श्रीं लोकान् कश्यपात्मज ॥ ६ ॥
श्रीण्यपत्यानि भो विप्रा सज्ञायात्तपसा धर
आदित्यो जनयामास कन्या द्वौ च प्रजापतौ ॥ ७ ॥
मनुर्वैवस्यत पूर्यं धाददेव प्रजापति ।
यमश्च यमुना चैव यमर्जो सम्यभूयतु ॥ ८ ॥

ज्यामघर्णन्तु तद्रूप संज्ञा दृष्ट्या विवर्धन ।
 असहन्ती तु स्या छाया सवर्णा निर्म्ममे तन ॥ ९ ॥
 मायामयी तु सा सज्ञा तस्या छायासमुन्धिताम् ।
 प्राञ्जलिं प्रणता भूया छाया सज्ञा द्विजोत्तमा ॥ १० ॥
 उवाच पि मया काव्यं कथयाम्य शुचिन्मिने ।
 स्थितामिह तव निर्देशे शाधि मा वरवर्णिनि ॥ ११ ॥

सज्जोषाच ।

अहं याम्यामि मद्र ने म्यमेव मयन पितु ।
 त्ययैव मयने महा घस्तन्य निर्दिशद्भुया ॥ १२ ॥
 स्मरं न चाल्स्मरं महा कल्प्यं चैव सुप्रगण्य ।
 सम्भाज्याम्ने न चाप्येयमिदं भगवते क्वचित् ॥ १३ ॥

सवर्णो वाच ।

आ कचप्रहणाद्देवि आ शापान्नेव कर्हिन्विन् ।
 आत्पयान्यामि नमस्तुभ्य गच्छ देवि यथासुप्रम् ॥ १४ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

समादिश्य सवर्णान्तान्तयेत्युक्ता तथा च सा ।
 न्धादृ समीपमगमद्ग्रीडितेव तपस्विनी ॥ १५ ॥
 पितु समीपगा सा तु पित्रा निर्मत्सिस्ता शुभा ।
 भक्तु समीपं गच्छेति नियुक्ता च पुनःपुन ॥ १६ ॥
 आगच्छद्गुह्यदवा भूयाच्छाद्यरूपमनिन्दिता ।
 कुरुनथोत्तरान् गत्वा तृणान्यथ चचार ह ॥ १७ ॥

द्वितीयायान्तु सद्भाया सङ्क्षेयमिति चिन्तयन् ।

आदित्यो जनयामास पुत्रमात्मसम तदा ॥ १८ ॥

पूर्वजस्य मनोविप्रा सदृशोऽयमिति प्रभु ।

मनुरेवामवन्नाम्ना सावर्णं इति चोच्यते ॥ १९ ॥

द्वितीयो य सुतस्तस्या स विज्ञेय शनैश्चरः ।

सज्ञा तु पृथिवी विप्रा म्यस्य पुत्रस्य वै तदा ॥ २० ॥

चकाराम्यधिष स्नेह न तथा पूर्वजेषु वै ।

मनुस्तम्या अक्षम यमस्तस्या न चक्षमे ॥ २१ ॥

स वै रोषाश्च गान्धाश्च भाषिनोऽर्थम्य धानघ ।

पद्म सन्तज्जयामास सज्ञा धैर्यस्यतो यम ॥ २२ ॥

त शशाप तन क्रोधान् मापर्णजननी तदा ।

गरण पततामेव तर्पेति भृशदु पिता ॥ २३ ॥

विषस्वानुवाच

असंशयं पुत्र महद्भविष्यत्यत्र कारणम् ।
येन त्वामाविशेन् क्रोधो धर्मज्ञं सत्यवादिनम् ॥ २८ ॥
न शक्यमेतन्मिथ्या तु कर्तुं मातृवचस्तव ।
कृमयो मांसमादाय यास्यन्त्यद्यनिमेव च ॥ २९ ॥
कृतमेवं वचस्तथ्यं मातुस्तव भविष्यति ।
शापस्य परिहारेण त्वं च ब्राह्मो भविष्यसि ॥ ३० ॥
आदित्यश्चाग्रवीत् संज्ञां किमर्थं तनयेषु वै ।
तुल्येऽप्यभ्यधिकः स्नेह एकस्मिन् क्रियते त्वया ॥ ३१ ॥
सा तन् परिहरन्ती तु नावचक्षे विषस्वते ।
स चात्मानं समाधाय योगात्तथ्यमपश्यत् ॥ ३२ ॥
तां शप्तुकामो भगवान्नाशपन्मुनिसत्तमाः ।
मूर्खजेषु निजग्राह स तु तां मुनिसत्तमाः ॥ ३३ ॥
ततः सर्वं यथावृत्तमावचक्षे विषस्वते ।
विषस्वानथ तच्छ्रुत्वा क्रुद्धस्त्वष्टारमभ्यगात् ॥ ३४ ॥
दृष्ट्वा तु तं यथान्यायमर्चयित्वा विभावसुम् ।
निर्दग्धुकामं रोपेण सान्त्वयामास वै तदा ॥ ३५ ॥

त्वष्टोवाच ।

तवातितेजसाविष्टमिदं रूपं न शोमते ।
असहन्ती च संज्ञा सा वने चरति शङ्खले ॥ ३६ ॥
द्रष्टा हि तां मवानद्य स्वां मार्यां शुभचारिणीम् ।
श्लाघ्यां योगयलोपेतां योगमास्थाय गोपते ॥ ३७ ॥

अनुकूलं तु ते देव यदि स्यान्मम सम्मतम् ।
 रूपं निर्वर्त्तयाम्यद्य तव कान्तमरिन्दम ॥ ३८ ॥
 ततोऽभ्युपागमत्त्वष्टा मार्त्तण्डस्य विवस्वतः ।
 भ्रमिमारोप्य तत्तेजः सान्त्वयामास भो द्विजाः ॥ ३९ ॥
 ततो निर्भासितं रूपं तेजसा संहतेन वै ।
 कान्तात् कान्ततरं द्रष्टुमधिकं शुशुभे तदा ॥ ४० ॥
 ददर्श योगमास्थाय स्यां भार्यां चङ्गवां ततः ।
 अधृष्यां सर्वभूतानां तेजसा नियमेन च ॥ ४१ ॥
 यङ्गवायपुषा विप्राश्चरन्तीमकुतोभयाम् ।
 सोऽश्वरूपेण भगवांस्तां मुखे समभाषयत् ॥ ४२ ॥
 मैथुनाय विचेष्टन्तीं परपुंसोऽवशङ्कया ।
 सा तन्निरयमञ्छुक मासिकाभ्यां विवस्वतः ॥ ४३ ॥
 देवी तस्यामजायेतामभिनौ मिपजां परी ।
 नासत्यधीष दस्रश्च स्मृती द्वायभिनयिते ॥ ४४ ॥
 मार्त्तण्डस्यात्मजावेतावष्टमस्य प्रजापतेः ।
 तां तु रूपेण कान्तेन दर्शयामास भास्करः ॥ ४५ ॥
 सा तु द्रष्टव्यैष भर्तारं तुतोप मुनिसत्तमाः ।
 यमस्तु कर्मणा तेन भृशं पीडितमानसः ॥ ४६ ॥
 धर्मेण रञ्जयामास धर्मराज इमाः प्रजाः ।
 स लेभे कर्मणा तेन शुमेन परमद्युतिः ॥ ४७ ॥
 पितृणामधिपत्यं च लोकपालत्यमेव च ।
 मनुः प्रजापतिस्त्पार्सीत्सावर्णिः च तपोधनाः ॥ ४८ ॥

मायः समागते तस्मिन्मनुः सावर्णिकेऽन्तरे ।

मेरुपृष्ठे तपो त्रियमद्यापि स चरत्युत ॥ ४६ ॥

प्राता शनैश्चरस्तस्य ग्रहत्वं स तु लब्धवान् ।

त्वष्टा तु तेजसा तेन विष्णोश्चक्रमकल्पयत् ॥ ४७ ॥

तदप्रतिहतं युद्धे दानयान्तश्चिकीर्षया ।

यधीयसो नु साप्यासीदुयामी कन्या यशस्विनी ॥ ४८ ॥

अमवच्च सरिच्छ्रेष्ठा यमुना लोकपावनी ।

मनुरित्युच्यते लोके सावर्ण इति चोच्यते ॥ ४९ ॥

द्वितीयो यः सुतस्तस्य मनोभ्राता शनैश्चरः ।

ग्रहत्वं स च लेभे ये सव्यलोकामिपूजितः ॥ ५० ॥

य इदं जग्म देवानां शृणुयात्सत्तमः ।

आपदं प्राप्य मुच्येत प्राप्नुयाच्च महद्यशः ॥ ५१ ॥

इति श्रीब्राह्म महापुराणे आदित्योत्पत्तिकथनं नाम

षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सप्तमोऽध्यायः ।

सूर्यवंश वर्णनम् ।

लोमहर्षण उवाच ।

मनोवैचस्वतस्पासन् पुत्रा वै नव तत्समाः ।

इत्वाकुश्चैव नामांगौ धृष्टः शर्यातिरेव च ॥ १ ॥

नरिष्यन्तश्च पृथो वै प्रांशु रिष्टश्च सप्तमः ।
 करुपश्च पृथधश्च नदैते मुनिसत्तमाः ॥ २ ॥
 अकरोत् पुत्रकामस्तु मनु रिष्टि प्रजापतिः ।
 मित्रावरुणयोर्विप्राः पूर्वमेव महामतिः ॥ ३ ॥
 अनुत्पन्नेषु बहुषु पुत्रेष्वेतेषु भो द्विजाः ।
 तस्यो च वर्त्तमानायामिष्ट्यां च द्विजसत्तमाः ॥ ४ ॥
 मित्रावरुणयोरंशे अनुराहुतिमावहत् ।
 तत्र दिव्याम्यरधरा दिव्याभरणभूषिता ॥ ५ ॥
 दिव्यसहनना चैव इला जह इति श्रुतिः ।
 तामिलेत्येव होवाच मनुर्दण्डधरस्तदा ॥ ६ ॥
 अनुगच्छस्व मां भद्रे तमिला प्रत्युवाच ह ।
 धर्मयुक्तमिदं वाक्यं पुत्रकामं प्रजापतिम् ॥ ७ ॥
 इलोवाच ।

मित्रावरुणयोरंशे जातास्मि यदतां धर ।
 तयोः सकाश यास्यामि न मां धर्मेहतां कुरु ॥ ८ ॥
 सेवमुत्था मनुं देयं मित्रावरुणयोरिला ।
 गत्यान्तिकं वरारोहः प्राञ्जलिर्याक्यमब्रवीत् ॥ ९ ॥
 इलोवाच ।

भद्रेऽस्मि युषयोजाता देवो किं करवाणि वाम् ।
 मनुना चाहमुक्ता वा अनुगच्छन्त्य मामिति ॥ १० ॥
 सां तथापादिनीं साध्वीमिलां धर्मपरायणाम् ।
 मित्रद्वय वरुणश्चोमाधूचतुस्तां द्विजोत्तमाः ॥ ११ ॥

मित्रावरुणावूचतु ।

अनेन तव धर्मेण प्रश्रयेण दमेन च ।

सत्येन चैव सुश्रोणि प्रीतो स्वो वरुचर्णिनि ॥ १२ ॥

आचयोस्त्वं महाभागे ध्याति कन्येति यास्यसि ।

मनोवृंशकर पुत्रस्त्वमेव च भविष्यसि ॥ १३ ॥

सुद्युम्न इति विख्यातस्त्रिप् लोकेषु शोमने ।

जगत्प्रियो धर्मशीलो मनोवृंशचिचर्द्धन ॥ १४ ॥

निवृत्ता सा तु तच्छ्रुत्वा गच्छन्ती पितुरन्तिकात् ॥ १५ ॥

बुधेनान्तरमासाद्य मैथुनायोपमन्त्रिता ।

सोमपुत्राद्बुधाद्विप्रास्तस्या जहो पुरुरवा ॥ १६ ॥

जनयित्वा तत सा तमिला सुद्युम्नता गता ।

सुद्युम्नस्य तु दायादास्त्रय परमभार्मिका ॥ १७ ॥

उत्कलश्च गयश्चैव चिन्ताश्वश्च भो द्विजा ।

उत्कलस्योत्कला विप्रा चिन्ताश्वस्य पश्चिमा ॥ १८ ॥

दिप् पूर्वा मुनिशाद्दूला गयस्य तु गया स्मृता ।

प्रविष्टेषु तु मनो विप्रा दिवाकरमरिन्दमम् ॥ १९ ॥

वशधा तत्पुन क्षत्रमकरोत् पृथिवीमिमाम् ।

इक्ष्वाकुर्ज्येष्ठदायादो मध्यदेशमवाप्तवान् ॥ २० ॥

कन्याभावात्तु सुद्युम्नो नैतद्राज्यमवाप्तवान् ।

बलिष्ठवचनात्त्वासीत् प्रतिष्ठाने महात्मन ॥ २१ ॥

प्रतिष्ठा धर्मराजस्य सुद्युम्नस्य द्विजोत्तमा ।

तत्पुरुरवसे प्रादाद्राज्यं प्राप्य महायशा ॥ २२ ॥

मानयेयो मुनिश्रेष्ठा स्त्रीपुंसोलक्षणैर्युत ।
 धृतवास्तामित्येव सुयुग्मेति च विश्रुत ॥ २३ ॥
 नरिष्यन्ता शका पुत्रा नामागस्य तु भो द्विजा ।
 अम्यरीषोऽभवत् पुत्र पार्थिवर्वभसत्तम ॥ २४ ॥
 धृष्टस्य धार्ष्टिक क्षत्र रणदृष्ट यभूव ॥
 करूपस्य च कारूपा क्षत्रिया युद्धदुर्मदा ॥ २५ ॥
 नाभागधृष्टपुत्राश्च क्षत्रिया वैश्यता गता ।
 प्राशोरेकोऽभवत् पुत्र प्रजापतिरिति स्मृत ॥ २६ ॥
 नरिष्यन्तस्य द यादो राजा हन्तधरो यम ।
 शर्यातेर्मिथुन त्यासादानर्त्तो नाम विश्रुत ॥ २७ ॥
 पुत्र कन्या सुक या च या पत्नी ज्यवनस्य ह ।
 आनर्त्तस्य तु दायादो रैघो नाम महान्युति ॥ २८ ॥
 आनर्त्तविषयश्चैष पुरी चास्य कुशस्थली ।
 रैघस्य रैघत पुत्र कर्तुमी नाम धार्मिक ॥ २९ ॥
 ज्येष्ठ पुत्र स तस्यासाद्राऽथ प्राप्य कुशस्थलीम् ।
 स कन्यासहित ध्रुत्वा गान्धर्वं ब्रह्मणोऽन्तिके ॥ ३० ॥
 मुहूर्त्तभूत देवस्य तस्थौ ऋदुयुग द्विजा ।
 आजगाम न चैवाय स्वा पुरा यादवैर्वृताम् ॥ ३१ ॥
 कृता द्वारवाती नाम घटुहारा मनोरमाम् ।
 भोजनदृष्ट्या च वैर्गुप्ता वसुदेवपुरोगमे ॥ ३२ ॥
 तत्रैव रैघतो धात्या यथातत्र द्विजोत्तमा ।
 कन्या सा यन्देवाय मुमडा नाम रवतीम् ॥ ३३ ॥

दत्त्वा जगाम शिखर मेरोन्तपसि सम्यित ।
रेमे रामोऽपि धर्मात्मा रेवत्या सहित सुखी ॥ ३३ ॥

मुनय ऊचु ।

कथ ग्रहयुगे काले समताते महामने ।
न जारा रेवती प्राप्ता रेवन च ककुदुमिनम् ॥ ३४ ॥
मेरु गतस्य वा तस्य शयाते सन्तति कथम् ।
स्थिता पृथिव्यामग्रापि श्रोतुमिच्छाम तन्वत ॥ ३५ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

न जारा श्रुत्पिपासा वा न मृत्युर्मुनिसत्तमा ।
भ्रतुचक्र प्रमवति प्रहलोके सदानगा ।
ककुदुमिन स्वर्लोक तु रेवनस्य गतस्य ह ॥ ३७ ॥
हता पुण्यजनैर्जिघ्रा राक्षसै सा कुशस्थली ।
तस्य भ्रातृशत त्वासाद्गार्मिकस्य महात्मन ॥ ३८ ॥
तद्वधन्मान रक्षोभिर्दिश प्रात्रामदच्युता ।
विद्रुतस्य च विप्रेन्द्रास्तस्य भ्रातृशतस्य वै ॥ ३९ ॥
अन्ववायस्तु सुमहास्तत्र तत्र द्विजोत्तमा ।
तेषा ह्येते मुनिश्रेष्ठा शर्याता इति विश्रुता ॥ ४० ॥
क्षत्रिया गुणसम्पन्ना दिशु सर्वासु विश्रुता ।
सर्व्यश सर्व्यगहन प्रविष्टास्ते महीजस ॥ ४१ ॥
नामागरिष्ठपुत्री ह्यौ वैश्या ब्राह्मणता गता ।
करुपस्य तु कारुषा क्षत्रिया युद्धदुर्मदा ॥ ४२ ॥

पृथगो हिंसयित्वा तु गुरोर्गां द्विजसत्तमाः ।
 शापाच्छूदत्वमापन्नो नवैते परिकीर्त्तिताः ॥ ४३ ॥
 वैवस्वतस्य तनया मुनेर्व्यं मुनिसत्तमाः ।
 क्षुधतस्तु मनोर्विप्रा इक्ष्वाकुरभयत् सुतः ॥ ४४ ॥
 तस्य पुत्रशतं त्वासीदिक्ष्वाकोर्मूरिदक्षिणम् ।
 तेषां विकुक्षिर्ग्येष्ठस्तु विकुक्षित्वादयोधताम् ॥ ४५ ॥
 प्राप्तः परमधर्मज्ञः सोऽयोध्याधिपतिः प्रभुः ।
 शकुनिप्रमुखास्तस्य पुत्राः पञ्चशतं स्मृताः ॥ ४६ ॥
 उत्तरापथदेशस्य रक्षितारो महाबलाः ।
 चत्वारिंशदशाष्टौ च दक्षिणस्यां तथा दिशि ॥ ४७ ॥
 यशातिप्रमुखाध्वान्ये रक्षितारो द्विजोत्तमाः ।
 इक्ष्वाकुस्तु विकुक्षि पा भट्टकायामथादिशत् ॥ ४८ ॥
 मांसमानय धाद्वार्धं मृगान् हत्वा महाबलः ।
 श्राद्धकर्मणि घोर्दिष्टे भरुने श्राद्धकर्मणि ॥ ४९ ॥
 भक्षयित्वा शरां विप्रा शशादो मृगयां गतः ।
 इक्ष्वाकुणा परित्यक्तो घसिष्ठरचनात् प्रभुः ॥ ५० ॥
 इक्ष्वाको संस्थिते विप्राः शशादस्तु नृपोऽभवत् ।
 शशादस्य तु दायादः ककुत्स्थो नाम पीर्यघान् ॥ ५१ ॥
 मनेनास्तु ककुत्स्थस्य पृथुध्वानेनसः स्मृतः ।
 पिष्टरावः पृथोः पुत्रस्तस्मादार्द्रस्त्यजायत ॥ ५२ ॥
 भार्द्रस्य सुपनाभस्तु धायस्तस्तत्सुतो द्विजाः ।
 जडे धायस्तको राजा धायप्सी येन निर्मिता ॥ ५३ ॥

श्रावस्तस्य तु दायादो बृहदश्वो महीपति ।

कुचलाश्व सुतस्तस्य राजा परमधार्मिक ॥ ५४ ॥

य स धुन्धुवधाद्राजा धुन्धुमारत्यमागत ॥ ५५ ॥

मुनय ऊचुः ।

धुन्धोर्वध महाप्राज्ञ श्रोतुमिच्छाम तत्त्वत ।

यद्वधाकुचलाश्वोऽसौ धुन्धुमारत्यमागत ॥ ५६ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

कुचलाश्वस्य पुत्राणां शतमुत्तमग्रन्विताम् ।

सर्वे विद्यासु निष्णाता चलन्तो दुरासदा ॥ ५७ ॥

धर्मधार्मिका सर्वे यज्वानो भूरिदक्षिणा ।

कुचलाश्व पिता राज्ये बृहदश्वो न्ययोजयन् ॥ ५८ ॥

पुनस्तक्रामितश्रीन्तु धन राजा विदेश ह ।

तमुत्तङ्कोऽथ विप्रर्षिं प्रयान्तं ग्रन्थवारयत् ॥ ५९ ॥

उत्तङ्क उवाच ।

मयता रक्षणं कार्यं तच्च कर्तुं त्वमईसि ।

निरद्विग्रस्तपश्चतुं न हि शक्नोमि पार्थिव ॥ ६० ॥

ममाश्रमसर्मापे वै समेषु मरुधन्वसु ।

समुद्रो बालुकापूर्ण उद्दालक इति स्मृत ॥ ६१ ॥

देवतानामग्र्यश्च महाकायो महाबल ।

अन्तर्मूमिगतस्तत्र बालुकान्तर्हितो महान् ॥ ६२ ॥

राक्षसस्य मधो पुत्रो धुन्धुर्नाम महासुर ।

शेते लोकविनाशाय तप आस्थाय दारुणम् ॥ ६३ ॥

सचत्सरस्य पर्यन्ते स निश्वास विमुष्णति ।

यदा तदा मही तत्र चलति स नराधिप ॥ ६४ ॥

तस्य निश्वासघातेन रज उद्भयते महत् ।

आदित्यपथमावृत्य सप्ताह भूमिकम्पनम् ॥ ६५ ॥

सविस्फुलिङ्ग साङ्गार मधुममतिदारुणम् ।

तेन तात न शक्नोमि तस्मिन् स्थातु स्व आश्रमे ॥ ६६ ॥

त भारय महाकाय लोकाना हितकाम्यया ।

लोका स्वस्था भवत्यद्य तस्मिन् विनिहते त्वया ॥ ६७ ॥

एव हि तस्य पथायैक समर्थ पृथिवीपते ।

विष्णुना च धरो दत्तो महा पूर्वयुगे नृप ॥ ६८ ॥

यस्त महासुर रौद्र हनिष्यति महाबलम् ।

तस्य त्व घटदानेन तेजश्चाख्यापयिष्यसि ॥ ६९ ॥

न हि धुन्धुर्महातेजास्तेजसात्पेन शक्यते ।

निर्दग्धु पृथिवीपाल निर युगशतैरपि ॥ ७० ॥

पार्ष्णश्च सुमहत्तस्य देवैरपि दुरासदम् ।

स पषमुक्तो राजर्षिस्तडकेन महात्मना ।

कुचलाश्व सुत प्रादात्तस्मै धुन्धुनिवर्हणे ॥ ७१ ॥

यूहदश्व उवाच ।

भगवन्न्यस्तशस्त्रोऽहमय तु तनयो मम ।

भविष्यति द्विजश्रेष्ठ धुन्धुमारो न सशय ॥ ७२ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

स त व्यादिश्य तनय राजर्षिर्धुन्धुमारणे ।

जगाम पर्यतायैव नृपति सशितयत ॥ ७३ ॥

कुचलायस्मिन् पुत्राणां शतेन सह भो द्विजा ।
 प्रायादुत्तङ्कमहितो धुन्वोस्मभ्य निर्गणे ॥ ७३ ॥
 तमाचिरात्तदा विष्णुस्नेजसा मगवान् प्रभु ।
 उत्तङ्कस्य त्रियोगाहं लोकानां हितकाम्यया ॥ ७५ ॥
 तस्मिन् प्रयाते दुर्द्धरे दिवि शब्दो महानभूत् ।
 एव श्रीमानरयोऽयं धुन्धुमार्गे मचिप्यति ॥ ७६ ॥
 दिव्यैर्गन्धैश्च मान्यैश्च त देवा समचारिणः ।
 देवदुन्दुमयश्चैव प्रणेदुर्द्धिजसत्तमा ॥ ७७ ॥
 स गन्वा जयता श्रेष्ठस्तनये सह परीर्यवान् ।
 समुद्रं गानयामास बालुकान्तरमग्रयम् ॥ ७८ ॥
 तस्य पुत्रे घनद्विधं बालुकान्तर्हितस्तथा ।
 धुन्धुरासादितो विधा दिशमावृत्य पश्चिमाम् ॥ ७९ ॥
 सुपजेनाग्निना क्रोधाह्लोकानुद्वर्तयन्निव ।
 धारि मुन्नाय घेगेन महोदधिरियोदये ॥ ८० ॥
 सोमस्य मुनिशादूर्ध्वला घरोर्मिकलिलो महान् ।
 तस्य पुत्रशतं दग्धं त्रिमिरुनन्तु रक्षसा ॥ ८१ ॥
 ततः स राजा धुतिमान् राक्षसं तं महाबलम् ।
 धामसाद् महातेजा धुन्धुं धुन्धुविनाशनः ॥ ८२ ॥
 तस्य धारिमयं घेगमापीय स नराधिप ।
 योगो योगेन बह्विञ्च शमयामास धारिणा ॥ ८३ ॥
 निहत्य तं महाकायं बलेनोदकराक्षसम् ।
 उत्तङ्कं दर्शयामास कृतकर्मा नराधिप ॥ ८४ ॥

उत्तङ्कस्य धरं प्रादात्तस्मै राज्ञे महात्मने ।
 ददौ तस्याक्षयं वित्तं शत्रुमिश्रापराजितम् ॥ ८५ ॥
 धर्मं रतिञ्च सततं स्वर्गे चासं तथाक्षयम् ।
 पुत्राणां चाक्षयलोकान् स्वर्गे ये रक्षसा हताः ॥ ८६ ॥
 तस्य पुत्रास्त्रयः शिष्टा दृढाश्चो ज्येष्ठ उच्यते ।
 चन्द्राश्वकपिलाश्वौ तु कनीयांसीं कुमारकीं ॥ ८७ ॥
 धौन्धुमारैर्दृढाश्वस्य हृदयश्वश्चात्मजः स्मृतः ।
 हृदयश्वस्य निकुम्भोऽभून् क्षत्रधर्मरतः सदा ॥ ८८ ॥
 संहताश्वो निकुम्भस्य सुनो रणविशारदः ।
 अट्टाश्ववृशाश्वौ तु संहताश्वसुनौ द्विजाः ॥ ८९ ॥
 तस्य हैमवतो कन्या स तां मत्या दृपद्वती ।
 पिषयाता त्रिषु लोकेषु पुत्रभास्याः प्रसेनजित् ॥ ९० ॥
 लेभे प्रसेनजिद्वाप्यां गौरीं नाम पतिप्रताम् ।
 अमिशस्ता तु सा भर्त्रा नदी धौ बाहुदामवत् ॥ ९१ ॥
 तस्य पुत्रो महानासीद्युवनाश्वो नराधिपः ।
 मान्धाता युवनाश्वस्य त्रिलोकविजयी सुतः ॥ ९२ ॥
 तस्य चैत्ररथी भाप्या शरापिन्दोः सुताभवत् ।
 साध्यो विन्दुमती नाम रूपेणासदृशी भुवि ॥ ९३ ॥
 पतिप्रता च ज्येष्ठा च धामृणामयुतान्य धौ ।
 तरपामुत्पादयामास मान्धाता ह्यौ सुतौ द्विजाः ॥ ९४ ॥
 पुण्ड्रनृपश्च धर्मर्तं मुचुबुदश्च वार्षिणम् ।
 पुण्ड्रनृपमुन्यासीत्प्रसदम्युर्मंदोपतिः ॥ ९५ ॥

नर्मदायामथोत्पन्नः सम्भृतस्तस्य चात्मजः ।
 सम्भृतस्य तु दायादस्त्रिधन्या रिपुमर्दनः ॥ ६६ ॥
 रात्रिस्त्रिधन्यनस्त्वार्साद्विद्धांस्त्रय्यारुणः प्रभुः ।
 तस्य सत्यव्रतो नाम कुमारोऽमूमहायलः ॥ ६७ ॥
 परिग्रहणमन्त्राणां विन्नं चक्रे सुदुर्मतिः ।
 येन भार्या कृतोद्वाहा हता चैव परस्य ॥ ६८ ॥
 बाल्यात् कामाच्च मोहाच्च साहसाच्चापलेन च ।
 जहार कन्यां कामार्त्तः कस्यचित् पुर्यासिनः ॥ ६९ ॥
 अघर्मशङ्कुना तेन तं स त्रय्यारुणोऽत्यजन् ।
 अपर्ध्वसेति बहुशो घटन् क्रोधसमन्वितः ॥ १०० ॥
 सोऽप्रवीन् पितरं त्यक्तं क गच्छामीति वै मुहुः ।
 पिता च तमथोवाच श्वपार्श्वः सह घर्त्तये ॥ १०१ ॥
 नाहं पुत्रेण पुत्रार्थो त्वयाद्य कुलपांसन ।
 इत्युक्तः स निराक्रामन्नगराद्वचनात् पितुः ॥ १०२ ॥
 न च तं धारयामास घसिष्ठो भगवानृषिः ।
 स तु सत्यव्रतो विप्राः श्वपाकावसथान्तिके ॥ १०३ ॥
 पित्रा त्यक्तोऽघसद्दीरः पिताप्यस्य धनं ययौ ।
 ततस्तस्मिंस्तु विषये नाघर्षत् पाकशासनः ॥ १०४ ॥
 समा द्वादश भो विप्रास्तेनाघर्मणेन वै तदा ।
 दारास्तु तस्य विषये विश्वामित्रो महातपाः ॥ १०५ ॥
 संन्यम्य सागरास्ते तु चकार विपुलं तपः ।
 तस्य पत्नी गले बद्ध्वा मध्यमं पुमगौरसम् ॥ १०६ ॥

शेषस्य भरणार्थाय व्यक्रीणाद्गुणशतेन वै ।
 तं च बद्धं गले दृष्ट्वा चिक्रयार्थं नृपात्मजः ॥ १०७ ॥
 महर्षिपुत्रं धर्मात्मा मोक्षयामास भो द्विजाः ।
 सत्यव्रतो महाबाहुर्मरणं तस्य चाकरोत् ॥ १०८ ॥
 विश्वामित्रस्य तुष्ट्यर्थमनुकम्पार्थमेव च ।
 सोऽभवद्गालवो नाम गले बन्धान्महातपाः ॥ १०९ ॥
 महर्षिः कौशिको धीमांस्तेन वीरेण मोक्षितः ।
 इति श्रीब्राह्मे महापुराणे सूर्यवंशनिरुपणं नाम
 सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

— —

अष्टमोऽध्यायः ।

सूर्यवंश वर्णनम् ।

लोमहर्षण उवाच ।

सत्यव्रतस्तु भक्त्या च कृपया च प्रतिज्ञया ।
 विश्वामित्रकलत्रं तु यभार विनये स्थितः ॥ १ ॥
 हृत्वा मृगान् पराहांश्च महिषांश्च घनेचरान् ।
 विश्वामित्राश्रमाभ्यासे मांसं पृक्षे घन्य च ॥ २ ॥
 उपांशुप्रतमास्थाय दीक्षां द्वादशवार्षिकीम् ।
 पितुर्निषोणादयसस्तस्मिन् घनगते नृपे ॥ ३ ॥

अयोध्या चैव राज्यं च तथैवान्त पुरं मुनिः
 याज्योपाध्यायमंयोगादुचसिष्ठं पर्यरक्षत ॥ ४ ॥
 सत्यव्रतस्तु याल्याश्च भाविनोऽर्थस्य वै चलात् ।
 षसिष्ठेऽभ्यग्निकं मन्युं धारयायास नित्यशः ॥ ५ ॥
 पित्रा हि त तदा राष्ट्रास्यज्यमानं प्रिय सुतम् ।
 निवारयामास मुनिर्यहुना कारणेन च ॥ ६ ॥
 पाणिप्रहणमन्त्राणां निष्ठा म्यात् सप्तमे पदे ॥ ७ ॥
 न च सत्यव्रतस्तस्माद्धतवान् सप्तमे पदे ॥
 जानन् धर्मं षसिष्ठस्तु न मां व्रतीति मो द्विजाः ।
 सत्यव्रतस्तदा रोषं षसिष्ठे मनसाकरोत् ॥ ८ ॥
 गुणबुद्ध्या तु भगवान् षसिष्ठः कृतवांस्तथा ।
 न च सत्यव्रतस्तस्य तमुपाशुमबुध्यत ॥ ९ ॥
 तस्मिन्नपरितोषश्च पितुरार्सन्महात्मन ।
 तेन द्वादश वर्षाणि नाचरत् पाकशासनः ॥ १० ॥
 तेन त्विदानीं विहितां दीक्षां तां दुर्वहां भुवि ।
 कुलस्थ निष्कृतिर्विप्राः कृत्वा सा वै भवेदिति ११ ॥
 न तं षसिष्ठो भगवान् पित्रा त्यक्तं न्यधारयत् ।
 भमिपेक्ष्याम्यहं पुत्रमभ्येत्येवंमतिर्मुनिः ॥ १२ ॥
 स तु द्वादश वर्षाणि तां दीक्षामचहद्व्यली ।
 अचिद्यमाने मांसे तु षसिष्ठस्य महात्मनः ॥ १३ ॥
 सर्व्वकामदुघां दोग्ध्रौ स ददर्श नृपात्मजः ।
 तां वै क्रोधाच्च मोहाच्च श्रमाथैव श्रुथान्वितः ॥ १४ ॥

देशधर्मगतो राजा जघान मुनिसत्तमा ।

तन्मास स स्वयं चैव विश्वामित्रस्य चात्मजान् ॥ १५ ॥

भोजयामास तच्छ्रुत्वा वसिष्ठोऽप्यस्य चुक्रुधे ॥ १६ ॥

वसिष्ठ उवाच ।

पातयेयमहं क्रूरं तव शङ्कुमसशयम् ।

यदि ते द्वाविमौ शङ्कु न स्यातां वै कृतौ पुनः ॥ १७ ॥

पितुश्चापरितोषेण गुरुदोग्ध्रीवधेन च ।

आप्रोक्षितोपयोगाश्च त्रिविधस्ते व्यतिक्रमः ॥ १८ ॥

एव त्रीण्यस्य शङ्कुनि तानि हृष्ट्वा महातपा ।

त्रिशङ्कुरिति होषाच त्रिशङ्कुस्तेन स स्मृतः ॥ १९ ॥

विश्वामित्रस्य दाराणामनेन मरणं कृतम् ।

तेन तस्मै धरं प्रादान्मुनिः प्रीतस्त्रिशङ्कुवे ॥ २० ॥

छन्द्यमानो परेणाथ धरं धत्ते नृपात्मजः ।

सशरीरो व्रजे स्वर्गमिन्येव यान्वितो धरः ॥ २१ ॥

भनायुष्टिमये तस्मिन् गते द्वादशवार्षिके ।

पित्र्ये राज्येऽभिषिच्याथ याजयामास पार्ष्णिपम् ॥ २२ ॥

मित्रतां देवतानां च वसिष्ठस्य च कीर्तिकम् ।

दिपमारोपयामास सशरीरं महातपा ॥ २३ ॥

तस्य सत्यरथा नाम पदा वैदेयवराजा ।

धुमारं जनयामास हृत्विन्द्रमवल्मयम् ॥ २४ ॥

स वै राजा हृत्विन्द्रस्यैशङ्कु इति स्मृतः ।

आहर्ता राजसूयस्य सघ्रादिति ॥ विधुतः ॥ २५ ॥

हरिश्चन्द्रस्य पुत्रोऽमूद्रोदितो नाम पार्थिव ।
 हरितो रोहितस्याथ चतुर्हारित उच्यते ॥ २६ ॥
 विजयश्च मुनिश्रेष्ठाश्चक्षुपुत्रो बभूव ह ।
 जेता स सर्व्यपृथिवीं विजयस्तेन स स्मृत ॥ २७ ॥
 रुक्कस्तनयस्तस्य राजा धर्मार्थकोविद ।
 रुक्कस्य वृक पुत्रो वृकाद्वाहुस्तु जज्ञिवान् ॥ २८ ॥
 दैहयास्तालजङ्घाश्च निरस्यन्ति स्म त नपम् ।
 तत्पत्नी गर्भमादाय ऊर्ध्वस्याश्रममाचिशत् ॥ २९ ॥
 नात्यर्थं धार्मिकश्चैव स हि धर्मयुगेऽभवत् ।
 सगरस्तु सुतो बाहोर्यत्रे सह गरेण वै ॥ ३० ॥
 ऊर्ध्वस्याश्रममासाद्य भार्गवेणामिरक्षित ।
 आग्नेयमस्त्रं च भार्गवात् सगरो नप ॥ ३१ ॥
 जिगाय पृथिवीं हत्वा तालजङ्घान् सहैहयान् ।
 शक्रानां पइलानां च धर्मं निरसदच्युत ।
 क्षत्रियाणां मुनिश्रेष्ठां पारदानां च धर्मवित् ॥ ३२ ॥

मुनय ऊचुः ।

कथं स सगरो जाता गरेणैव सहाच्युत ।
 किमर्थं च शक्रादीनां क्षत्रियाणां महोजसाम् ॥ ३३ ॥
 धर्मान्कलोन्वितान् राजा क्रुद्धो निरसदच्युत ।
 एतन्न सर्व्यमाचदय विन्तरेण महामने ॥ ३४ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

बाहोर्व्यसनिन पूज्यं हत राज्यममून् किठ ।
 दैहयेस्तालजङ्घैश्च शक्रे सादं द्विजोत्तमा ॥ ३५ ॥

यचनाः पारदाश्चैव काम्बोजाः पद्मवास्तथा ।
 एते ह्यपि गणा पञ्च हैहयार्थं पराक्रमम् ॥ ३६ ॥
 हतराज्यस्तदा राजा स वै बाहुर्वनं ययौ ।
 पत्न्या चानुगतो दुःखी तत्र प्राणानयासृजत् ॥ ३७ ॥
 पत्नी तु यादवी तस्य सगर्भा पृष्ठतोऽन्वगात् ।
 सपत्न्या च गरस्तस्यै दत्तं पूर्वं किलानघाः ॥ ३८ ॥
 सा तु भर्तुंश्चिता कृत्वा घने तामभ्यरोहत ।
 ऊर्ध्वस्तां भार्गवो विप्राः कारुण्यात् समचारयत् ॥ ३९ ॥
 तस्याश्रमे च गर्भं स गरीणैव सहाच्युतः ।
 व्यजायत महाबाहुः सगरो नाम पार्थिवः ॥ ४० ॥
 ऊर्ध्वस्तु जातकर्मादींस्तस्य कृत्वा महात्मनः ।
 अध्यप्य चेदशास्त्राणि ततोऽस्त्रं प्रत्यपादयत् ॥ ४१ ॥
 धाम्नेयं तु महाभागो भमरैरपि दुःसहम् ।
 स तेनास्त्रचलेनाजौ धलेन च समन्वितः ॥ ४२ ॥
 हैहयान् विजघानाशु क्रुद्धो रथः पशूनिव ।
 आजहार च लोकेषु कीर्त्तिं कीर्त्तिमतां धरः ॥ ४३ ॥
 ततः शकांश्च यवनान् काम्बोजान् पारदांस्तथा ।
 पद्मपांश्चैव निःशेषान् कर्त्तुं व्यघसितो नृप ॥ ४४ ॥
 ते यध्यमाना घीरेण सगरेण महात्मना ।
 घसिष्ठं शरणं गत्वा प्रणिपेतुर्मनीषिणम् ॥ ४५ ॥
 घसिष्ठस्त्ययतान् दृष्ट्वा समयेन महाद्युतिः ।
 सगरं पाप्यामास तेषां दत्वाभयं तदा ॥ ४६ ॥

सगरः स्वां प्रतिज्ञां तु गुरोर्वाक्यं निशम्य च ।
 धर्मं जघान तेषां धै वेशानन्यांश्चकार ह ॥ ४७ ॥
 अर्द्धं शकानां शिरसो मुण्डयित्वा व्यसर्जयत् ।
 यवनानां शिरः सर्व्वं काम्योजानां तथैव च ॥ ४८ ॥
 पारदा मुक्तकेशाश्च पह्नवाः श्मश्रुधारिणः ।
 निःस्वाध्यायघण्टकाराः कृतास्तेन महात्मना ॥ ४९ ॥
 शका यवनकाम्योजाः पारदाश्च द्विजोत्तमाः ।
 कोणिसर्पा माहिषका द्रव्याश्चोलाः सकेरलाः ॥ ५० ॥
 सर्व्वे ते क्षत्रिया विप्रा धर्मस्तेषा निराकृतः
 षसिष्ठयचनाद्राक्षा सगरेण महात्मना ॥ ५१ ॥
 स धर्मविजयी राजा विजित्येमां वसुन्धराम् ।
 अश्वं प्रचारयामास वाजिमेधाय दीक्षितः ॥ ५२ ॥
 तस्य चारयतः सोऽश्वः समुद्रे पूर्व्वदक्षिणे ।
 वेलासमीपेऽपहतो भूमिं चैव प्रवेशितः ॥ ५३ ॥
 स त देशं तदा पुनैः खानयामास पार्थिवः ।
 आसेदुस्तु तदा तत्र खन्यमाने महार्णवे ॥ ५४ ॥
 तमाद्रिपुङ्गवं देव हरिं कृष्णं प्रजापतिम् ।
 विष्णुं कपिलरूपेण स्वपन्त पुरुषं तदा ॥ ५५ ॥
 तस्य चक्षुःसमुन्धेन तेजसा प्रतिबुध्यतः ।
 दग्धाः सर्व्वे मुनिग्रेष्ठाश्चत्वारस्त्यचशेषिताः ॥ ५६ ॥
 यद्विकेतुः सुकेतुश्च तथा धर्मरथो नृपः ।
 शूरः पञ्चनदश्चैव तस्य वंशकरा नृपाः ॥ ५७ ॥

प्रादाच्च तस्मै भगवान् हरिर्नारायणो वरम् ।
 अक्षय वशमिक्ष्वाको कीर्त्ति चाप्यनिवर्त्तिनोम् ॥ ५८ ॥
 पुनः समुद्रं च विभु स्वर्गे वासः तथाक्षयम् ।
 समुद्रश्चार्य्यमादाय घवन्दे तं महोपतिम् ॥ ५९ ॥
 सागरत्वं च लेभे स कर्मणा तेन तस्य ह ।
 त्वञ्चाश्वमेधिकं सोऽश्वः समुद्रादुपलब्धवान् ॥ ६० ॥
 आजहोराश्वमेधानां शतं स सुमहातपा ।
 पुत्राणां च सहस्राणि पण्डितस्तस्येति न श्रुतम् ॥ ६१ ॥

मुनय ऊचुः ।

सगरास्यात्मजा धीरा कथं जाता महाबला ।
 विक्रान्ता पण्डितसाहस्रा विधिना केन सत्तम ॥ ६२ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

द्वे भार्य्ये सगरस्यास्ता तपसा दग्धकिहियवे ।
 अष्टौ चिदर्मुदुहिता केशिनी नाम नामतः ॥ ६३ ॥
 कनीयसी तु महती पत्नी परमधर्मिणी ।
 अरिप्रेमिदुहिता रूपेणाप्रतिमा भुवि ॥ ६४ ॥
 ऊर्ध्वस्नाभ्यां वरः प्रादात्तदुभयञ्च द्विजोत्तमा ।
 पण्डितपुत्रसहस्राणि गृह्णात्वेका नितमिनी ॥ ६५ ॥
 एकं वशधरं त्वेका यथेष्टं प्रयत्नवति ।
 तत्रैका जगृहे पुत्रान् पण्डितसाहस्रसम्मितान् ॥ ६६ ॥
 एकं वशधरं त्वेका तथेत्याह ततो मुनिः ।
 राजा पञ्चजनो नाम चमूय स महायुतिः ॥ ६७ ॥

इतरा सुपुत्रे तुभ्यो चीजपूर्णमिति श्रुतिः ।
 तत्र पष्टिसहस्राणि गर्माग्ने तिलमग्निनाः ॥ ६८ ॥
 घृतपूर्णेषु कुम्भेषु तान् गर्माग्निद्वये ततः ॥ ६९ ॥
 घात्रीश्वैकैरुश प्रादात्तावती पोषणे नृपः ।
 ततो दशसु मासेषु समुत्तम्युर्ययाक्रमम् ॥ ७० ॥
 कुमारान्ने यथाकाल सगरप्रीतिवर्द्धनाः ।
 पष्टिपुत्रसहस्राणि तस्यैवममवन् द्विजाः ॥ ७१ ॥
 गर्मादलानुमयाडै जातानि पृथिवीपते ।
 तेषां नागायणं तेज प्रविष्टाना महात्मनाम् ॥ ७२ ॥
 एकः पञ्चजनो नाम पुत्रो राजा बभूव ह ।
 शूरः पञ्चजनस्यार्सादंशुमाश्राम चीर्यवान् ॥ ७३ ॥
 दिलीपस्तस्य तनय सद्वाह इति विश्रुतः ।
 येन स्वर्गादिद्वागव्य मुहूर्त्तं प्राप्य जीवितम् ॥ ७४ ॥
 त्रयोऽभिमन्विता लोका युद्धया सन्येन चानराः ।
 दिलीपस्य तु दायादो महापुत्रो भगव्यः ॥ ७५ ॥
 यः स गङ्गां सरिच्छ्रेष्ठामवातारयत प्रभु ।
 समुद्रमानयश्चैना दुहितृभ्येऽप्यकथयन् ॥ ७६ ॥
 तस्माद्वागीर्या गङ्गा कथ्यते वराचिन्तकैः ।
 भगीरथसुतो राजा श्रुत इत्यमिचिभूत ॥ ७७ ॥
 नामागन्तु ध्रुवमश्वत्थान् पुत्रः पद्मशर्ङ्गिणः ।
 अम्यतीयन्तु नामागिः सिन्धुद्वारं हिमालयम् ॥ ७८ ॥

अयुताजित्तु दायाद सिन्धुद्रोपस्य वीर्यवान् ।
 अयुताजित्सुतस्त्वासीद्वतुपर्णो महायशा ॥ ७६ ॥
 दिव्याक्षहृदयज्ञो वै राजा नलसरो वली ।
 ऋतुपर्णसुतस्त्वासीदार्त्तपर्णिर्महायशा ॥ ८० ॥
 सुदासस्तस्य तनयो राजा इन्द्रसखोऽभवत् ।
 सुदासस्य सुत प्रोक सौगासो नाम पार्थिव ॥ ८१ ॥
 एयात कल्माषपादो वै राजा मित्रसहोऽभवत् ।
 कल्माषपादस्य सुत सम्यकर्म्मति विश्रुत ॥ ८२ ॥
 अनरण्यस्तु पुत्रोऽभूद्विश्रुत सर्वकर्मण ।
 अनरण्यसुतो निष्णो निष्णोतो ह्यी यभूयतु ॥ ८३ ॥

क्षेमधन्यसुतसखासीद्देवानीकः प्रतापवान् ।
 आसीदहीनगुर्नाम देवानीकात्मजः प्रभुः ॥ ६० ॥
 अहीनगोस्तु दायादः सुधन्वा नाम पार्थिवः ।
 सुधन्वनः सुनश्वापि ततो जज्ञे शलो नृपः ॥ ६१ ॥
 उष्यो नाम स धर्मात्मा शलपुत्रो यभूव ॥
 यज्ञनाभः सुतस्तस्य नलस्तस्य महात्मनः ॥ ६२ ॥
 नलो ह्येष विख्यातो पुराणे मुनिसत्तमाः ।
 वीरसेनात्मजश्चैव यश्चेक्ष्याकुङ्कुलोद्बहः ॥ ६३ ॥
 इक्ष्वाकुवशप्रमचा प्राधान्येन प्रकीर्तिताः ।
 एते विचन्वतो वशे राजानो भूरितेजसः ॥ ६४ ॥
 पठन् सग्यगिमां खुष्टिमादित्यस्य विचस्वतः ।
 श्राद्धदेवस्य देवस्य प्रजानां पुष्टिदस्य च ।
 प्रजायानेति सायुज्यमादित्यस्य विचस्वतः ॥ ६५ ॥
 इति श्रीब्राह्म महापुराणे आदित्यवशानुकीर्तनं
 नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

स याच्यमानो देवैश्च तथा देवर्षिभिर्मुहुः ।
 नैव व्यसर्ज्यत्तारां तस्मा आङ्गिरसे तदा ॥ २० ॥
 उशना तस्य जग्राह पार्णिमाङ्गिरसस्तथा ।
 रुद्रश्च पार्णिं जग्राह गृहीत्वाजगत्वं धनुः ॥ २१ ॥
 तेन ब्रह्मशिरो नाम परमास्त्रं महात्मना ।
 उद्दिश्य देवानुत्सृष्टं येनैषां नाशित यशः ॥ २२ ॥
 तत्र तद्बुद्धमभघत् प्रख्यात तारकामघम् ।
 देवानां दानयानाञ्च लोकक्षयकर महत् ॥ २३ ॥
 तत्र शिष्टाश्च ये देवास्तुपेताश्चैव ये द्विजाः ।
 ब्रह्माणं शरणं जग्मुरादिदेवं सनातनम् ॥ २४ ॥
 तदा निवार्योशनसं त वै रुद्रञ्च शङ्करम् ।
 ददावाङ्गिरसे तारां स्वयमेव पितामहः ॥ २५ ॥
 तामन्तःप्रसथां हृष्ट्वा क्रुद्धः प्राह बृहस्पतिः ।
 मदीयायां न ते योनीं गर्भो धार्यः कथञ्चन ॥ २६ ॥
 इषीकास्तम्यमासाद्य गर्भे सा चोत्ससर्ज्ज ॥ ।
 जातमात्रः स भगवान् देवानामाक्षिपद्वपुः ॥ २७ ॥
 ततः संशयमापन्नास्तारामूचुः सुरोत्तमाः ।
 सत्पं ब्रूहि सुतः कस्य सोमस्याथ बृहस्पतेः ॥ २८ ॥
 पृच्छ्यमाना यदा देवैर्नाह सा विबुधान् किल ।
 तदा तां शप्नुमारब्ध कुमारी दम्युहन्तमः ॥ २९ ॥
 तं निवार्य ततो ब्रह्मा तारां पप्रच्छ संशयम् ।
 यदत्र तर्ह्य तदुग्र हि तारे कस्य सुतस्त्ययम् ॥ ३० ॥

उवाच प्राञ्जलि सा तसोमस्येति पितामहम् ।
 तदा ज्ञ मूर्ध्निचाघ्राय सोमो राजा सुतप्रति ॥ ३१ ॥
 बुध इत्यकरोन्नाम तस्य बालस्य धीमत ।
 प्रतिकूलञ्च गगने समभ्युत्तिष्ठने बुध ॥ ३२ ॥
 उत्पादयामास तदा पुत्र वै राजपुत्रिकाम् ।
 तस्यापत्य महातेजा उभूतैल पुरुषा ॥ ३३ ॥
 उर्वरश्या जज्ञिरे यस्य पुत्रा सप्त महात्मन
 एतत् सोमस्य धो जन्म कोत्तित कीर्त्तिवर्द्धनम् ॥ ३४ ॥
 वशमस्य मुनिश्रेष्ठा कीर्त्यमान निबोधत ।
 धन्यमायुष्यमारोग्य पुण्य सङ्कटपसाधनम् ॥ ३५ ॥
 सोमस्य जन्म श्रुत्वैव पापेभ्यो विप्रमुच्यते ॥
 इति श्रीमहा महापुराणे सोमोत्पत्तिकथन नाम
 त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ ६ ॥

दशमोऽध्यायः

तत्रादौ सोमवशवर्णनम्

लोमहर्षण उवाच ।

बुधस्य तु मुनिश्रेष्ठा विद्वान् पुत्र पुरुषा ।
 तेजस्यो दानशीलश्च यज्ञा विपुलदक्षिण ॥ १ ॥
 ग्रहवादी पराक्रान्त शत्रुमिर्युधि दुर्दम ।
 आहर्त्ता चाग्निहोत्रस्य यज्ञानाञ्च महीपति ॥ २ ॥

सत्यवादी पुण्यमतिः सम्यक् सश्रुतमैधुनः ।
 अतीव त्रिषु लोकेषु यशसाप्रतिमः सदा ॥ ३ ॥
 तं ब्रह्मवादिनं शान्तं धर्मज्ञं सत्यवादिनम् ।
 उर्व्यशी धरयामास हित्वा मानं यशस्विनी ॥ ४ ॥
 तथा सहायसद्राजा दश धर्मपि पञ्च च ।
 पद्मपञ्च सप्त चाष्टौ च दश चाष्टौ च भो द्विजाः ॥ ५ ॥
 धने चैत्ररथे रथे तथा मन्दाकिनीतटे ।
 थलकायां पिशालायां नन्दने च वनोत्तमे ॥ ६ ॥
 उत्तरान् न पुरुन् प्राप्य मनोरमफलद्रुमान् ।
 गन्धमादनपादेषु मेघशृङ्गे तपोक्षरे ॥ ७ ॥
 पत्नेषु धनमुष्येषु सुरेराचरितेषु च ।
 उर्व्यक्षया सहितो राजा मेघे परतया मुदा ॥ ८ ॥
 देवो पुण्यतमे धौ मर्हिभिर्मिष्टुते ।
 राज्यं न कारयामास प्रयागे पृथिवीपतिः ॥ ९ ॥
 एषग्रभायां राजासीद्विलम्बतु नरसत्तमः ॥ १० ॥ *

लोमहर्षेण उवाच

प्लेगपुत्रा यभृयुक्ते सप्त देवसुतोत्तमाः ।
 गन्धर्व्यलोके विदिता आगृहीतानमावसुः ॥ ११ ॥
 विश्वायुश्चैव धर्मात्मा धृतायुश्च तथापरः ।
 दृढायुश्च वनायुश्च ब्रह्मायुश्चोर्व्यमोयुताः ॥ १२ ॥

* इति वरं "उक्ते जातर्षी तौ प्रतिपत्तौ महायशः"
 इति पञ्चाधं ब्रह्मविधिर्निरूपितः ।

अमायसोस्तु दायादो भीमो राजाथ राजराट् ।
 श्रीमान् भीमस्य दायादो राजासीत्काञ्चनप्रमः ॥ १३ ॥
 विट्वांस्तु काञ्चनस्यापि सुहोत्रोऽभून्महाबलः ।
 सुहोत्रस्याभवज्जहनुः केशिन्या गर्भसम्भवः ॥ १४ ॥
 आजहे यो महन् सर्त्रं सर्गमेध महामयम् ।
 पतिलोभेन य गङ्गा पतिन्येन नसा ह ॥ १५ ॥
 नेच्छतः प्लाययामास तस्य गङ्गा तदा सद ।
 स तथा प्लावितं दृष्ट्वा यजयाटं समन्ततः ॥ १६ ॥
 सौहोत्रिरशपद्गङ्गा क्रुद्धो राजा द्विजोत्तमा ।
 पप तं विफल यत्नं पिश्रुभ्यः करोम्यहम् ॥ १७ ॥
 अस्य गङ्गेऽवल्लेपस्य सद्यः फलमवाप्नुहि ।
 जह्नुराजर्षिणा पीतां गङ्गां दृष्ट्वा महर्षयः ॥ १८ ॥
 उपनिन्युर्महामागां दुहितृन्येन जाह्नवीम् ।
 युयनाश्वस्य पुत्रीं तु कावेरीं जह्नुरावहत् ॥ १९ ॥
 युयनाश्वस्य शापेन गङ्गार्द्धेन विनिर्गता ।
 कावेरी सरितां धेष्ट्वां जहोर्भार्यामनिन्दिताम् ॥ २० ॥
 जह्नुस्तु दयित पुत्रं सुनय नाम धार्मिकम् ।
 कावेर्यां जनयामास अजकस्तस्य चात्मजः ॥ २१ ॥
 अजकस्य तु दायादो बलाकाण्डो महीपतिः ।
 बभूव मृगयाशीलः कुशस्तम्यान्मजोऽभवत् ॥ २२ ॥
 कुशपुत्रा बभूवुर्हि चत्वारो देववर्चसः ।
 कुशिरुः कुशनामश्च कुशाम्बो मूर्त्तिमांस्तथा ॥ २३ ॥

चहुरै सह सवृद्धो राजा वनचर सदा ।
 कुशिकस्तु तपस्तेपे पुत्रमिन्द्रसम प्रभु ॥ २४ ॥
 लभेयमिति त शत्रुस्त्रासादभ्येत्य जज्ञिवान् ।
 पूर्णे वर्षसहस्रे वै तत शक्रो ह्यपश्यत ॥ २५ ॥
 अत्युग्रतपस हृष्ट्या सहस्राक्ष पुरन्धर ।
 समर्थ पुत्रजनने स्वयमेवास्य शाश्वत ॥ २६ ॥
 पुत्रार्थं कल्पयामास देवेन्द्र सुरसत्तम ।
 स गाधिरभयद्राजा मयवान् कौशिक स्वयम् ॥ २७ ॥
 पौरकुत्सामघद्वाप्या गाधिस्तस्यामजापत ।
 गाधे कन्या महाभागा नाम्ना सत्यवती शुभा ॥ २८ ॥
 ता गाधि काश्यपुत्राय ऋचीकाय ददौ प्रभु ।
 तस्या प्रोत स वै भर्ता भार्गवो भृगुनन्दन ॥ २९ ॥
 पुत्रार्थं साधयामास चरु गाधेस्तथैव च ।
 उषाचाह्वय ता भार्यामृचाको भार्गवस्तदा ॥ ३० ॥
 उपयोऽयम्वरय त्वया मात्रा मय्य शुभे ।
 तस्या जतिष्यते पुत्रो दीप्तिमानक्षत्रियश्रम ॥ ३१ ॥
 मनेय क्षत्रियैर्लोके क्षत्रियर्षमसृद्धन ।
 तथापि पुत्र कन्याणि भूतिमन्तं तपोधनम् ॥ ३२ ॥
 शमादमर्षं द्विजध्रेष्ट्यग्ररेव विधाम्यति ।
 एवमुक्त्वा तु तां भार्यामृचाका भृगुनन्दा ॥ ३३ ॥
 तपस्यमिग्नो नित्यमरण्यं प्रविषेत्तदा ।
 गाधि वदामस्तु तदा ऋचाकाधममव्ययान् ॥ ३४ ॥

तीर्थयात्राप्रसङ्गेन सुतां द्रष्टुं नरेवहः ।
 चरद्वयं गृहीत्वा सा ऋषेः सत्यवती तदा ॥ ३५ ॥
 चरमादाय यत्नेन सा तु मात्रे न्यवेदयत् ।
 माता तु तस्या देवेन दुहित्रे स्वं चरुं ददौ ॥ ३६ ॥
 तस्याश्चरमयाज्ञानादात्मसंस्थं चकार ह ।
 अथ सत्यवती सव्यं क्षत्रियान्तकरं तदा ॥ ३७ ॥
 धारयामास दीप्तेन वपुषा घोरदर्शना ।
 तामृचीकस्तनो दृष्ट्वा योगेनाभ्युपसृत्य च ॥ ३८ ॥
 ततोऽग्रवीदृष्टिजध्रेष्ठ स्वां भार्यां वरवर्णिनीम् ।
 मात्रासि वञ्चिता भद्रे चरव्यत्यासहेतुना ॥ ३९ ॥
 जनिष्यति हि पुत्रस्ते क्रूरकर्मातिदारुणः ।
 भ्राता जनिष्यते चापि ब्रह्मभूतस्तपोधनः ॥ ४० ॥
 विश्वं हि ब्रह्म तपसा मया तस्मिन् समर्पितम् ।
 एवमुक्ता मदाभागा भर्ता सत्यवती तदा ॥ ४१ ॥
 प्रसादयामास पतिं पुत्रो मे नेदृशो भवेत् ।
 ब्राह्मणापसदस्त्वत्त इत्युक्तो मुनिरग्रवीत् ॥ ४२ ॥

ऋचीक उवाच ।

नैव सङ्कटितः कामो मया भद्रे तथास्त्विति ।
 उग्रकर्मा भवेत् पुत्रः पितुर्मातुश्च कारणात् ॥ ४३ ॥
 पुनः सत्यवती वाक्यमेवमुक्त्वाग्रवीदिदम् ।
 इच्छँल्लोकानपि मुने सृजेथा. किं पुनः सुतम् ॥ ४४ ॥

शमात्मकमृजु तत्र मे पुत्र दातुमिहार्हसि ।
 काममेवविध पौत्रो मम स्यात्तत्र च प्रभो ॥ ४५ ॥
 यद्यन्यथा न शक्य वै कर्तुमेतद्वृद्धिजोत्तम ।
 ततः प्रसादमकरोत् स तस्यास्तपसो बलात् ॥ ४६ ॥
 पुत्रे नास्ति विशेषो मे पौत्रे वा वरधर्णिनि ।
 त्वया यथोक्तं वचनं तथा भद्रे भविष्यति ॥ ४७ ॥
 ततः सत्यवती पुत्रं जनयामास भार्गवम् ।
 तपस्यभिरत दान्तं जमदग्निं शमात्मकम् ॥ ४८ ॥
 भृगोर्जगत्या वदोऽस्मिञ्जमदग्निरजायत ।
 सा हि सत्यवती पुण्या सत्यधर्मपरायणा ॥ ४९ ॥
 कौशिकीति समाख्याता प्रवृत्तेय महानदी ।
 इदं वायुचक्रप्रभवो रेणुर्नाम नराधिप ॥ ५० ॥
 तस्य कन्या महाभागा कामली नाम रेणुका ।
 रेणुकाया तु कामत्या तपोविद्यासमन्वित ॥ ५१ ॥
 भार्योको जनयामास जामदग्न्य सुदारुणम् ।
 सत्यविद्यान्तर्ग धेष्टं धनुर्वेदस्य पारगम् ॥ ५२ ॥
 राम क्षत्रियहन्तारं प्रदीप्तमिष पावकम् ।
 भार्यस्यैवमृचीकस्य सत्यवत्या महायशा ॥ ५३ ॥
 जमदग्निस्तपोवीर्याञ्जने ब्रह्मचिदाचर ।
 मध्यमश्च शुनं शेषं शुनं पुच्छं फणिष्ठक ॥ ५४ ॥
 विभ्यामित्रं तु दायाद् गाधिं कुशिकनन्दन ।
 जनयामास पुत्रं तु तपोविद्याशमात्मकम् ॥ ५५ ॥

प्राप्य ब्रह्मर्षिसमता योऽयं ब्रह्मर्षिता गत ।
 विश्वामित्रस्तु धर्मात्मा नाम्ना विश्वरथ स्मृत ॥ ५६ ॥
 जज्ञे भृगुप्रसादेन कौशिकाद्वशवर्द्धन ।
 विश्वामित्रस्य च सुता देवरातादयः स्मृता ॥ ५७ ॥
 प्रप्यातास्त्रिषु लोकेषु तेषां नामान्यतः परम् ।
 देवरातः कतिञ्चैव यस्मान् कात्यायना स्मृता ॥ ५८ ॥
 शाक्यवत्या हिरण्याक्षो रणुर्जज्ञेऽथ ग्रेणुक ॥ ५९ ॥
 ससृतिर्गात्र्यश्चैव मुद्गगत्र्यश्चैव विश्रुतः ॥
 मधुच्छन्दो जयश्चैव देवलश्च तथाष्टमः ।
 कण्डूपो हारितश्चैव विश्वामित्रस्य ते सुता ॥ ६० ॥
 तेषां दयातानि गोत्राणि कौशिराणां महात्मनाम् ।
 पाणिनो यन्नयश्चैव ध्याननप्यास्तयेव च ॥ ६१ ॥
 पार्थिवो देवराताश्च शालट्कायनप्राक्कनः ।
 लोहिता यमदृताश्च तथा काम्यका स्मृता ॥ ६२ ॥
 पौरघ्न्य मुनित्रेष्टा ब्रह्मर्षे कौशिकस्य च ।
 सगन्धोऽप्यस्य यशोऽस्मिन् ब्रह्मक्षत्रस्य विश्रुतः ॥ ६३ ॥
 विश्वामित्रात्मजानां ॥ शुनः शेषोऽग्रतः स्मृतः ।
 भार्गवः कौशिकश्च हि प्राप्तः स मुनिसत्तमः ॥ ६४ ॥
 विश्वामित्रस्य पुत्रस्तु शुनः शेषोऽभवत् किल ।
 हरिदश्वस्य यज्ञे तु पशु-त्रे विनियोजितः ॥ ६५ ॥
 देवैर्दत्तः शुनः शेषो विश्वामित्राय वै पुनः ।
 देवैर्दत्तः स वै यस्माद्देवरातस्ततोऽभवत् ॥ ६६ ॥

देवरातादयः सप्त विश्वामित्रस्य वै सुता ।
 द्रुपद्वतीसुतश्चापि वैश्वामित्रास्तथाष्टक ॥ ६७ ॥
 अष्टकस्य सुतो लौहिः प्रोक्तो जह्नुगणोमया ।
 अत उद्धं प्रवक्ष्यामि वशमायोर्महात्मन ॥ ६८ ॥
 इति श्रीब्राह्म महापुराणे सोमवशे ऽमावसुवशानुकीर्तनं
 नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

एकादशोऽध्यायः ।

सोमनशर्षणनआयुरंशर्षणनम्

लोमहर्षण उवाच ।

आयो पुत्राश्च ते पञ्च सर्वे धीरा महारथा ।
 स्यर्मानुतनयाया च प्रभाया जज्ञिरे नृपा ॥ १ ॥
 नहुषः प्रथमः जज्ञे धृष्टशर्मा ततः परम् ।
 रम्भो रज्जिरनेनाश्च त्रिषु लोकेषु विधुता ॥ २ ॥
 रजिः पुत्रशतानाह जनयामास पञ्च ये ।
 राजेयमिति विख्यातं क्षत्रमिन्द्रभयाघदम् ॥ ३ ॥
 यत्र देवासुरे युद्धे समुत्पन्ने सुदारणे ।
 देवाश्चैवासुराश्चैव पितामहमथाग्रु ॥ ४ ॥

देवासुरा ऊचुः ।

आवयोमंगवन् युद्धे को विजेता भविष्यति ।

मूहि न सर्वभूतेश धातुमिन्द्रास तच्चत ॥ ५ ॥

ग्रहोवाच ।

येषामर्थाय सप्ताने रनिरात्तायुध प्रभु ।

योत्स्यते ते विनेष्यन्ति श्रीलाकाग्रात्र सशय ॥ ६ ॥

यतो रजिर्धृतिस्तत्र श्रीश्च तत्र यतो धृतिः ।

यतो धृतिश्च श्राग्रेन धर्मस्तत्र जयस्तथा ॥ ७ ॥

ते देवा दानया प्राता देवेनोक्ता रजितदा ।

अभ्ययुर्नयमिच्छतो वृण्वानास्व नरर्षभम् ॥ ८ ॥

स हि स्वर्मानुदोहि न प्रभाया समपद्यत ।

राजा परमनेजस्वा सोमयज्ञधियद्धन ॥ ९ ॥

ते हृण्मनस सर्वे रजिं ये देवदानया ।

ऊचुरस्मज्जयाय तत्र गृहाण धरकाम्मुकम् ॥ १० ॥

अथोषाच रजिस्तत्र तथोर्देवदेत्ययो ।

अर्षभ स्वार्थमुद्दिष्य यश स्व च प्रकाशयन् ॥ ११ ॥

रनिरुवाच ।

यदि दैत्यगणान् सर्वान् जित्वा दीप्येण वासव ।

इन्द्रो भवामि धर्मेण ततो योत्स्यामि सयुगे ॥ १२ ॥

देवा प्रथमतो विप्रा प्रतीयुर्दृष्टमानसा ।

एव यथेष्टं नृपते काम सम्पद्यतां तव ॥ १३ ॥

श्रुत्वा सुरगणानान्तु घाक्यं राज्ञा रजिस्तदा ।
 पप्रच्छासुःसुहृदांस्तु यथा देवानपृच्छन ॥ १४ ॥
 दानवा दर्पसम्पूर्णाः स्वार्थमेवावगम्य ह ।
 प्रत्यूचुस्तं नृपवरं सामिमानमिदं वचः ॥ १५ ॥

दानवा ऊचुः ।

अस्माकमिन्द्रः प्रहादो यस्यार्थं विजयामहे ।
 अस्मिस्तु समरे राजश्लिष्टं त्वं राजसत्तम ॥ १६ ॥
 स तथेति घृणन्नेव देवैरप्यतिचोदितः ।
 भविष्यसोन्द्रो जित्यैनं देवैरुक्तस्तु पार्थिवः ॥ १७ ॥
 जघान दानवान् सर्वान् घेऽवध्या वस्रपाणिनः ।
 स विप्रनष्टा देवाना परमश्रोः श्रियं वशी ॥ १८ ॥
 निहत्य दानवान् सर्वानाजहार रजिः प्रभुः ।
 ततो रजिं महावीर्यं देवैः सह शतक्रतु ॥ १९ ॥
 रजिपुत्रोऽहमिन्त्युक्ता पुनरेवात्रबोद्धन् ।
 इन्द्रोऽसि तात देवानां सर्वेषां नाथ सशयः ॥ २० ॥
 यस्याहमिन्द्रः पुत्रस्ते मयातिं यास्यामि कर्मभिः ।
 स तु शत्रुघ्नश्च श्रुत्वा घञ्जितरत्नेन मायया ॥ २१ ॥
 तथैवेत्यग्रबोद्राजा प्रीयमाणः शनक्रतुम् ।
 तस्मिंस्तु देवैः सहस्रो दिव्यं प्राप्ते महीपते ॥ २२ ॥
 दायादमिन्द्रादाजह गच्छं तत्तनया रजेः ।
 पश्य पुत्रशतान्याग्य तद्वै स्थानं शतक्रतोः ॥ २३ ॥

समाक्रामन्त बहुधा म्वर्गलोकं त्रिविष्टपम् ।

ते यदा तु स्वसम्मूढा रागोन्मत्ता विधर्मिणः ॥ २४ ॥

ब्रह्मद्विषश्च संवृत्ता हतवोर्य्यपराक्रमाः ।

ततो लेभे स्वमैश्वर्य्यमिन्द्रः स्थानं तथोत्तमम् ॥ २५ ॥

हत्वा रजिसुतान् सर्गान् कामक्रोधपरायणान् ।

य इदं व्याचनं स्थानात्प्रतिष्ठानं शतक्रतोः

शृणुयाद्धारयेद्वापि न स दौर्गत्यमाप्नुयात् ॥ २६ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

रम्भोऽनपत्यस्त्वासीच्च यशं वक्ष्याम्यनेनसः ।

अनेनसः सुतो राजा प्रतिक्षत्रो महायशः ॥ २७ ॥

प्रतिक्षत्रसुतश्चासीन् सञ्जयो नाम विश्रुतः ।

सञ्जयस्य जयः पुत्रो विजयस्तस्य चात्मजः ॥ २८ ॥

विजयस्य रुतिः पुत्रस्तस्य हर्षत्यतः सुतः ।

हर्षत्यतसुतो राजा सहदेवः प्रतापवान् ॥ २९ ॥

सहदेवस्य धर्मात्मा नदीन इति विश्रुतः ।

नदीनस्य जयत्सेनो जयत्सेनस्य सङ्गरुतिः ॥ ३० ॥

सङ्गरुतेरपि धर्मात्मा क्षत्रवृद्धो महायशः ।

अनेनसः समाख्याताः क्षत्रवृद्धस्य चापरः ॥ ३१ ॥

क्षत्रवृद्धान्महास्तत्र सुनहोत्रो महायशः ।

सुनहोत्रस्य दायादास्त्रयः परवार्मिकाः ॥ ३२ ॥

काशः शलश्च द्वितीयौ तथा गृत्समदः प्रभुः ।

पुत्रो गृत्समदस्यापि शुनको यस्य शौनकः ॥ ३३ ॥

ब्राह्मणाः क्षत्रियाश्चैव घैश्याः शूद्रास्तथैव च ।
 शलात्मजं व्याघ्रिंसेनस्तनयस्तन्म्य काश्यपः ॥ ३४ ॥
 काशस्य काशिपो राजा पुत्रो दार्घतपान्तथा ।
 धनुस्तु दार्घतपसो विद्वान् धन्यन्तरिस्ततः ॥ ३५ ॥
 तपसोऽन्ते सुमहतो जातो बृद्धस्य धीमतः ।
 पुनर्धन्यन्तरिर्द्विषो मानुषेऽप्यहं जन्मनि ॥ ३६ ॥
 तस्य गेहे समुत्पन्नो देवो धन्यन्तरिस्तदा ।
 काशिराजो महाराजः सर्वरोगप्रणाशनः ॥ ३७ ॥
 आयुर्वैदं भरद्वाजात् प्राप्येह स भिषक्क्रियः ।
 तमष्टधा पुनर्ऋष्यस्य शिष्येभ्यः प्रत्यपादयत् ॥ ३८ ॥
 धन्यन्तरेस्तु तनयः केतुमानिति विश्रुतः ।
 भयं केतुमतः पुत्रो धारो भीमरथः स्मृतः ॥ ३९ ॥
 पुत्रो भीमरथस्यापि दिवोदासः प्रजेश्वरः ।
 दिवोदासस्तु धर्मात्मा धाराणस्यधिरोऽभवत् ॥ ४० ॥
 एतस्मिन्नेव काले तु पुरी धाराणसी द्विजाः ।
 शून्या निवेशयामास क्षेमको नाम राक्षसः ॥ ४१ ॥
 शप्ता हि सा मतिमता निकुम्भेन महात्मना ।
 शून्या वर्षसहस्रं वै भवित्री तु न संशयः ॥ ४२ ॥
 तस्यां हि शप्तमात्रायां दिवोदासः प्रजेश्वरः ।
 विषयान्ते पुरी रम्यां गोमत्यां संन्यवेशयत् ॥ ४३ ॥
 भद्रश्रेण्यस्य पूर्वं तु पुरी धाराणसी ह्यभूत् ।
 भद्रश्रेण्यस्य पुत्राणां शतमुत्तमधन्विनाम् ॥ ४४ ॥

हन्वा निवेशयामास दिवोदासो नराधिपः ।

मद्रथ्रेण्यस्य सद्राज्यं हतं येन बलीयसा ॥ ४५ ॥

मद्रथ्रेण्यस्य पुत्रस्तु दुर्दमो नाम विश्रुतः ।

दिवोदासेन बालेति घृणया स विसर्जितः ॥ ४६ ॥

हैहयस्य तु दायाद्यं हनयान् वै महीपतिः ।

आजहे पितृदायाद्यं दिवोदासहर्तं यलान् ॥ ४७ ॥

मद्रथ्रेण्यस्य पुत्रेण दुर्दमेन महात्मना ।

चैरस्यान्तो महामागाः कृतश्चात्मीयतेजसा ॥ ४८ ॥

दिवोदासाद्दृष्टपद्भ्यां धीरो जज्ञे प्रतर्दनः ।

तेन बालेन पुत्रेण प्रहृतं तु पुनर्बलम् ॥ ४९ ॥

प्रतर्दनस्य पुत्रो ह्यौ चत्समर्गो सुविश्रुतो ।

पत्सपुत्रो ह्यलर्कस्तु सन्नतिस्तस्य चात्मजः ॥ ५० ॥

अलर्कस्तस्य पुत्रस्तु ब्रह्मण्यः सत्यसङ्करः ।

अलर्कं प्रति राजर्षि श्लोको गीतः पुरातनैः ॥ ५१ ॥

षष्टिवर्षसहस्राणि षष्टिवर्षशतानि च ।

युवा रूपेण सम्पन्नः प्रागासीच्च कुलोद्बहः ॥ ५२ ॥

लोपामुद्राप्रसादेन परमायुरधाप्तवान् ।

तस्यासौत् सुमहद्राज्यं रूपयौवनशालिनः ॥ ५३ ॥

शापस्यान्ते महाबाहुर्हत्वा क्षेमकराक्षसम् ।

रम्यां निवेशयामास पुर्णं धाराणसौ पुनः ॥ ५४ ॥

सन्नैरपि दायादः सुनीयो नाम धार्मिकः ।

सुनीयस्य तु दायादः क्षेमो नाम महायशः ॥ ५५ ॥

क्षेमस्य केतुमान् पुत्र सुकेतुस्तस्य चात्मज ।
 सुरेतोस्तनयश्चापि धर्मवेनुरिति स्मृत ॥ ५६ ॥
 धर्मकेतोस्तु दायाद सत्यकेतुमदारथ ।
 सत्यकेतुस्तथापि विभुर्नाम प्रजेभ्यर ॥ ५७ ॥
 आनर्त्तस्तु विभो पुत्र सुकुमारश्च तत्सुन ।
 सुकुमारस्य पुत्रस्तु धृष्टकेतु सुधार्मिक ॥ ५८ ॥
 धृष्टकेतोस्तु दायादो घेणुहोत्र प्रजेभ्यर ।
 घेणुहोत्रसुनश्चापि भार्गो नाम प्रजेभ्यर ॥ ५९ ॥
 यत्सस्य वत्सभूमिस्तु भार्गभूमिस्तु भार्गज ।
 एते त्वङ्गिरस पुत्रा जाता वशेऽथ भार्गव ॥ ६० ॥
 ब्राह्मणा क्षत्रिया वैश्यास्त्रय पुत्रा सहस्रश ।
 इत्येते काश्यपा प्रोक्ता नहुषस्य नियोधत ॥ ६१ ॥

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे सोमप्रवेशवृक्षक्षत्रप्रसूतिनिरूपण
 नामैकादशोऽध्याय ॥ ११ ॥

द्वादशोऽध्यायः ।

सोमवंश वर्णने ययातिचरित्रवर्णनम्
 लोमहर्षण उवाच ।

उत्पन्ना पितृकन्याया विरजाया महौजस ।
 नहुषस्य तु दायादा यडिन्द्रोपमतेजस ॥ १ ॥

यतिर्ययातिः संयातिरयातिर्यातिरेव च ।

मुयातिः पृष्ठस्नेपां चै ययातिः पार्थिवोऽभवत् ॥ २ ॥

ककुत्स्थकन्यां गां नाम लेभे परमधार्मिकः ।

यनिस्तु मोक्षमास्थाय ब्रह्मभूतोऽभवन्मुनिः ॥ ३ ॥

तेषां ययातिः पञ्चानां विजिन्य चमुचामिमाम् ।

देययानामुशनसः सुतां मादयामवाप सः ॥ ४ ॥

शर्मिष्ठामासुरीं चैव ततया शृपपर्वणः ।

यदुञ्च तुर्व्यसुञ्चैव देवयानी व्यजायत ॥ ५ ॥

द्रुह्यं चानुं च पूरुं च शर्मिष्ठा पार्थपर्वणी ।

तन्मै शक्तो ददौ प्रीतो रथ परममाप्सरम् ॥ ६ ॥

अङ्गदं काञ्चनं दिव्यं दिव्यैः परमराजिभिः ।

युक्तं मनोजयैः शुभ्रेयैर्न काव्यं समुदहन् ॥ ७ ॥

स तेन रथमुख्येन यद्वाग्नेनाजयन्महीम् ।

ययातिर्युधि दुर्दग्धस्तथा देवान् सदातवान् ॥ ८ ॥

स रथः कौरवाणां तु सर्व्वेयामभवत्तदा ।

संपत्तयमुनामस्तु कौरवाञ्जनमेजयात् ॥ ९ ॥

कुरोः पुत्रस्य राजेन्द्रराजः पारिश्रितस्य ह ।

जगाम स रथो नाशं शापाद्गर्गस्य धीमनः ॥ १० ॥

गर्गस्य हि सुतं बालं स राजा जनमेजयः ।

कालेन हिसयामास ब्रह्महत्यामवाप सः ॥ ११ ॥

स लोदगन्धो राजर्षिः पत्न्यावधृतस्ततः ।

पौरजानपदैस्त्यक्तो न लेभे शर्म कर्दिचिन् ॥ १२ ॥

ततः स दुःखसन्तप्तो नालमत्संविदं क्वचित् ।
 विप्रेन्द्रं शौनकं राजा शरणं प्रत्यपद्यत ॥ १३ ॥
 याजयामास च क्षानी शौनको जनमेजयम् ।
 अश्रमेधेन राजानं पावनार्थं द्विजोत्तमाः ॥ १४ ॥
 स लोहगन्धो व्यनशत्तस्याघभृथमेत्य ह ।
 स च दिव्यरथो राज्ञो घशब्धेदिपनेस्तदा ॥ १५ ॥
 दत्तः शक्रेण तुष्टेन लेभे तस्माद्विबुहदथः ।
 बृहद्रथात्क्रमेणैव गतो चार्हद्वयं नृपम् ॥ १६ ॥
 ततो हत्वा जरासन्धं भीमस्तं रथमुत्तमम् ।
 प्रददौ चासुदेवाय प्रीत्या कौरवमन्दनः ॥ १७ ॥
 सप्तद्वीपां ययातिस्तु जित्वा पृथ्वीं सप्तागराम् ।
 विभज्य पञ्चधा राज्यं पुत्राणां नाहुपस्तदा ॥ १८ ॥
 ययातिर्दिशि पूर्वस्यां यदु ज्येष्ठं न्ययोजयत् ।
 मध्ये पूरुं च राजानमभ्यपिञ्चत् स नाहुपः ॥ १९ ॥
 दिशि दक्षिणपूर्वस्यां तुर्वसुं मतिमान्नृपः ।
 तैरियं पृथिवी सर्वा सप्तद्वीपा सपत्न्या ॥ २० ॥
 यथाप्रदेशमद्यापि धर्मेण प्रतिपाल्यते ।
 प्रजास्नेहां पुस्त्यात् वक्ष्यामि मुनिसत्तमा ॥ २१ ॥
 धनुर्व्यस्य पृथ्कांश्च पञ्चभिः पुरुषैर्महैः ।
 जरावानमवद्राजा भारमावेश्य बन्धुषु ॥ २२ ॥
 निक्षिप्तशस्त्रः पृथिवीं चचार पृथिवीपतिः ।
 प्रीतिमानमवद्राजा ययातिरपराजितः ॥ २३ ॥

एवं विमज्ज्य पृथिवीं ययातिर्यदुमग्रवीत् ।

जरां मे प्रतिगृह्णीष्व पुत्र कृत्यान्तरेण वै ॥ २४ ॥

तरुणस्त्वच रूपेण चरेय पृथिवीमिमाम् ।

जरां त्वयि समाधाय तं यदुः प्रत्युवाच ह ॥ २५ ॥

यदुस्वाच ।

अनिर्दिष्टा मया मिश्रा ब्राह्मणस्य प्रतिश्रुता ।

अनपाकृत्य ता राजन् ग्रहीष्यामि ते जराम् ॥ २६ ॥

जरायां बहवो दोषा पानमोजनकारिताः ।

तस्माज्जरां न तेन राजन् ग्रहीतुमहमुन्सहे ॥ २७ ॥

सन्ति ते बहव पुत्रा मत्त प्रियतरा नृप ।

प्रतिग्रहीतुं धर्मज्ञ पुत्रमन्यं वृणीष्व वै ॥ २८ ॥

स एवमुक्तो यदुना राजा कोपसमन्वितः ।

उवाच घदता श्रेष्ठो ययातिर्गर्हयन् सुतम् ॥ २९ ॥

ययातिरुवाच ।

फ आश्रमस्तवान्योऽस्ति को वा धर्मो विधीयते ।

मामनाकृत्य दुर्बुद्धे यदहं तत्र देशिक ॥ ३० ॥

एवमुक्तो यदुः विप्राः शशापेन स मन्युमान् ।

अराज्या ते प्रजा मूढ भवित्रीति न संशयः ॥ ३१ ॥

दुह्युं च तुर्यसुं चैवाप्यनुं च द्विजसत्तमाः ।

एवमेवात्रचोद्राजा प्रत्याख्यातश्च तैरपि ॥ ३२ ॥

शशाप तानतिवृद्धो ययातिरपराजित ।

यथायन् कथितं सज्जं मयाम्य द्विजसत्तमाः ॥ ३३ ॥

एव शप्त्वा सुनान् सर्वान्श्चतुरः पूरुपूर्वजान् ।
 तदेव घचनं राजा पूजयन्प्राह मो द्विजाः ॥ ३४ ॥
 तरुणस्तव रूपेण चरेय पृथिवीमिमाम् ।
 जरां त्वयि समाधाय त्वं पूरो यदि मन्यसे ॥ ३५ ॥
 स जरां प्रतिजग्राह पितुः पूरुः प्रतापवान् ।
 ययातिरपि रूपेण पूरोः पर्य्यचरन् महीम् ॥ ३६ ॥
 स मार्गमाणः कामानामन्तं नृपतिसत्तमः ।
 पिश्याच्या सहितो रेमे वने चैत्ररथे प्रभुः ॥ ३७ ॥
 यदा स तुप्तः कामेषु भोगेषु च नराधिपः ।
 तदा पूरोः सकाशाद्वै स्यां जरा प्रत्यपद्यत ॥ ३८ ॥
 यत्र गाथा मुनिश्रेष्ठा गोताः किल ययातिना ।
 याभिः प्रत्याहरेत् कामान् सर्व्यं ह्यङ्गानि कूर्मघत् ॥ ३९ ॥
 न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ।
 हविषा कृष्णवर्त्म्यं भूय एवाभिवर्द्धते ॥ ४० ॥
 यत्पृथिव्यां ग्रीहियवं हिरण्यं पशवः स्त्रियः ।
 नालमेकस्य तत्सर्व्यमिति कृत्वा न मुह्यति ॥ ४१ ॥
 यदा भावं न कुर्वते सर्व्यभूतेषु पापकम् ।
 कर्मणा मनसा वाचा ब्रह्म सम्पद्यते तदा ॥ ४२ ॥
 यदा तेभ्यो न विमेति यदा चास्मात् विभ्यति ।
 यदा नेच्छति न द्वेष्टि ब्रह्म सम्पद्यते तदा ॥ ४३ ॥
 या दुस्त्यजा दुर्मतिमिर्या न जीर्य्यति जीर्य्यतः ।
 योऽसौ प्राणान्तिकी रोगस्तां तृष्णां त्यजतः सुखम् ॥ ४४ ॥

जीर्यन्ति जीर्यत केशा दन्ता जीर्यन्ति जीर्यत ।
 धनाशा जाविताशा च जीर्यतोऽपि न जाय्यति ॥ ४५ ॥
 यच्च कामसुखं लोके यच्च दिव्य महत्सुखम् ।
 तृष्णाक्षयसुखस्यैते नार्हन्ति योऽर्शा कलाम् ॥ ४६ ॥
 पयमुक्त्या स राजर्षिः सदारः प्राचिशठनम् ।
 कालेन महता चायं चचार विपुलं तपः ॥ ४७ ॥
 भृगुतुङ्गे गतिं प्राप तपसोऽन्ते महायशाः ।
 अतश्नन् देहमुत्सृज्य सदारः स्वर्गमाप्तवान् ॥ ४८ ॥
 तस्य वंशे मुनिश्रेष्ठाः पञ्च राजर्षिसत्तमाः ।
 यैर्व्याप्ता पृथिवी सवर्गा सूर्यस्यैव गमस्तिमिः ॥ ४९ ॥
 यदोस्तु घंशं वक्ष्यामि शृणुष्व राजसदृशम् ।
 यत्र नारायणो जज्ञे हरिवृष्णिजुलोद्बहः ॥ ५० ॥
 सुस्थः प्रजाधानायुमान् कीर्त्तिमांश्च भवेन्नरः ।
 ययातिचरितं नित्यमिदं शृण्वन् द्विजोत्तमाः ॥ ५१ ॥

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे सोमवंशे ययातिचरितनिरूपणं
 नाम द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

त्रयोदशोऽध्यायः ।

पूरुषशर्पणम्

ग्राहणा ऊचुः ।

पूरोर्वश षय सूत श्रोतुमिच्छाम तत्त्वत
बुद्धस्यानोर्यदोश्चैव तुवसोश्च पृथक् पृथक् ॥ १ ॥
लोमहर्षण उवाच ।

शृणुष्व मुनिशार्दूला पूरोर्वश महात्मन ।
विस्तरैणानुपूर्या च प्रथमं वदतो मम ॥ २ ॥
पूरो पुत्र सुवीरोऽभून्मनस्युस्तस्य चात्मज ।
राजा चाभयदो नाम मनस्योरभयत् सुत ॥ ३ ॥
तथैषामयदस्यासीत् सुधन्वा नाम पार्थिव ।
सुधन्वन सुबाहुश्च रौद्राश्वस्तस्य चात्मज ॥ ४ ॥
रौद्राश्वस्य दशार्णेषु वृकण्युस्तथैव च ।
कक्षेयुस्थण्डिलेयुश्च सत्रनेयुस्तथैव च ॥ ५ ॥
श्रुचेयुश्च जलेयुश्च स्थलेयुश्च महाबल ।
धनेयुश्च धनेयुश्च पुत्रकाश्च दश स्त्रिय ॥ ६ ॥
भद्रा शूद्रा च भद्राच शलदामलदा तथा ।
शलदा च ततो विप्रा नलदा सुरसापि च ॥ ७ ॥
तथा गोचपला च खारत्नकृदा च ता दश ।
अपिर्जातोऽत्रिवशे च तासां भर्ता प्रमाकर ॥ ८ ॥

उशीनरश्च धर्मज्ञ तितिभुञ्ज महायन्म् ।
 उशीनरस्य पत्न्यस्तु पञ्च राजर्गिविशजा ॥ २० ॥
 नृगा कृमिर्नवा दर्वा पञ्चमा च दृष्यती ।
 उशीनरस्य पुत्रास्तु पञ्च तासु कुलोद्भवा ॥ २१ ॥
 तपसा चैव महता जाता बृद्धस्य चात्मजा ।
 नृगायास्तु नृग पुत्र इम्या कृमिरजायत ॥ २२ ॥
 नवायास्तु नव पुत्रो दर्वाया सुत्रनोऽभवत् ।
 दृष्यत्यास्तु सञ्ज्ञे शिविरीशीनरो नृप ॥ २३ ॥
 शिरेस्तु शिवगो विप्रो यौघेयास्तु नृगस्य ह ।
 नवस्य नवराष्ट्रन्तु दृमेस्तु इमिल्ला पुरी ॥ २४ ॥
 सुत्रस्तस्य नयाम्बुडा शिविपुत्राभियोधत ।
 शिरेस्तु शिवय पुत्राश्चत्वारो लोकविश्रुता ॥ २५ ॥
 वृषदर्भ सुवीरश्च केकयो मद्रकस्तथा ।
 तेषा जनपदा स्फाता केकया मद्रकास्तथा ॥ २६ ॥
 वृषदर्भा सुग्रीराश्च तितिश्चोस्तु प्रजास्त्विमा ।
 तितिभुरभवद्राजा पूर्वस्या दिशि भो द्विजा ॥ २७ ॥
 उपद्रपो महावीर्य्य फेनस्तस्य सुतोऽभवत् ।
 फेनस्य सुतपा जज्ञे तत सुतपसो बलि ॥ २८ ॥
 जातो मानुषयोनी तु स राजा काञ्चनेषुधि ।
 महायोगी स तु बलिर्मूव नृपति पुरा ॥ २९ ॥
 पुत्रानुत्पादयामास पञ्च वशकरान् भुवि ।
 अङ्ग प्रथमतो जज्ञे बङ्ग सुहस्तथैव च ॥ ३० ॥

पुण्ड्रः कलिङ्गश्च तथा बाल्येय क्षत्रमुच्यते ।
 बाल्येय ब्राह्मणाश्चैव नस्य वंशकृता भुवि ॥ ३१ ॥
 बाल्येय ब्राह्मणा दत्तो वरः प्रीतेन भो द्विजाः ।
 महायोगित्वमायुश्च कल्पस्य परिमाणतः ॥ ३२ ॥
 वने चाप्रतिमत्वं चै धर्मतत्त्वार्थदर्शनम् ।
 संप्राप्ते चाप्यजेयत्वं धर्मं चैव प्रधानताम् ॥ ३३ ॥
 त्रैलोक्यदर्शनञ्चापि प्राधान्यं प्रसवे तथा ।
 चतुरो नियतान् वर्णास्त्यज्य स्थापयितेति च ॥ ३४ ॥
 इत्युक्तो विभुना राजा बलि शान्तिं परां ययौ ।
 कालेन महता विप्राः स्वञ्च स्थानमुपागमत् ॥ ३५ ॥
 तेषां जनपदा पञ्च भङ्गा यद्वा ससुहृदाः ।
 कालिङ्गाः पुण्ड्रकाश्चैव प्रजास्त्यज्य साम्प्रतम् ॥ ३६ ॥
 भङ्गपुत्रो महानासीद्राजेन्द्रो दधिवाहनः ।
 दधिवाहनपुत्रस्तु राजा दिविरथोऽभवत् ॥ ३७ ॥
 पुत्रो दिविरथस्यासीच्छक्रतुल्यपराक्रमः ।
 विद्वान् धर्मरथो नाम तस्य चित्ररथः सुतः ॥ ३८ ॥
 तेन धर्मरथेनाथ तदा कालञ्जरे गिरौ ।
 यज्ञना सह शक्रेण सोम पीतो महात्मना ॥ ३९ ॥
 अथ चित्ररथस्यापि पुत्रो दशरथोऽभवत् ।
 लोमपाद् इति न्यातो यस्य शान्ता मुनाभवत् ॥ ४० ॥
 तस्य दाशरथिर्वीरश्चतुरङ्गो महायशः ।
 ऋष्यशृङ्गप्रसादेन जज्ञे वंशविचर्दन ॥ ४१ ॥

चतुरङ्गस्य पुत्रस्तु पृथुलाक्ष इति स्मृतः ।
 पृथुलाक्षस्तु नो राजा चम्पो नाम महायशः ॥ ४२ ॥
 चम्पस्य तु पुरी चम्पा या मालिन्यभवत् पुरा ।
 पूर्णभद्रप्रसादेन हव्यङ्गोऽस्य सुतोऽभवत् ॥ ४३ ॥
 ततो वैभाण्डकिस्तस्य धारणं शक्रधारणम् ।
 अवतारयामास महीं मन्त्रैर्वाहनमुत्तमम् ॥ ४४ ॥
 हव्यङ्गस्य सुतस्तत्र राजा भद्ररथः स्मृतः ।
 पुत्रो भद्ररथस्यासीदुवृहत्कर्मा प्रजेश्वरः ॥ ४५ ॥
 वृहद्दर्भः सुतस्तत्र यस्माज्जज्ञं बृहन्मनाः ।
 बृहन्मनास्तु राजेन्द्रो जनयामास वै सुतम् ॥ ४६ ॥
 नाम्ना जयद्रथं नाम यस्मादुवृहदरथो नृपः ।
 भासीदुवृहदरथस्यापि विश्वजिज्जनमेजयी ॥ ४७ ॥
 दायादस्तस्य द्वैकर्णो विकर्णस्तस्य चात्मजः ।
 तस्य पुत्रशर्म त्वासीदङ्गानां कुलवर्द्धनम् ॥ ४८ ॥
 एतेऽङ्गवंशजाः सर्वे राजानः कीर्तिता मया ।
 सत्यग्रता महात्मानः प्रजावन्तो महारथाः ॥ ४९ ॥
 श्रुचेयोस्तु मुनिश्रेष्ठा रौद्राश्वतनयस्य वै ।
 शृणुध्वं सम्प्रवक्ष्यामि वंशं राजस्तु भो द्विजाः ॥ ५० ॥
 श्रुचेयोस्तनयो राजा मतिनारो महीपतिः ।
 मतिनारसुतास्त्वासंस्त्रयः परमधार्मिकाः ॥ ५१ ॥
 धनुरोधः प्रतिरथः सुयादुश्चैव धार्मिकः ।
 सर्व्यं वेदविदश्चैव ब्रह्मण्याः सत्यघादिनः ॥ ५२ ॥

इला नाम तु यस्यासीन् कन्या वै मुनिसत्तमाः ।
 ब्रह्मवादिन्यधिष्ठा सा तंसुस्तामभ्यगच्छत ॥ ५३ ॥
 तंसोः सुतोऽथ राजर्षिर्धर्मन्त्रः प्रतापवान् ।
 ब्रह्मवादो पराक्रान्तस्तस्य भार्योपदानधी ॥ ५४ ॥
 उपदानधी ततः पुत्राश्चतुरोऽजनयन्छुभान् ।
 दुष्यन्तमथ सुध्मन्तं प्रवीरमनघ तथा ॥ ५५ ॥
 दुष्यन्तस्य तु दायादो भरुो नाम धीर्यवान् ।
 स सर्व्वदमनो नाम नागायुनयलो महान् ॥ ५६ ॥
 चक्रयत्तो सुतो जज्ञे दुष्यन्तस्य महात्मनः ।
 शकुन्तलायां भरुो यस्य नाम्ना तु भारताः ॥ ५७ ॥
 भरतस्य धिनष्ट्रेषु तनयेषु महीपते ।
 मनुषां तु प्रकोपेण मया तत्कथितं पुरा ॥ ५८ ॥
 पृथस्पतेरङ्गिरसः पुत्रो यिप्रो महामुनिः ।
 अयाजगृह्णद्वाजो महद्भिः कर्तुर्भियंभुः ॥ ५९ ॥
 पूर्यं तु पितथे तस्य कृते वै पुत्रजग्मनि ।
 ततोऽथ पितथी नाम भरद्वाजारसुतोऽभवत् ॥ ६० ॥
 ततोऽथ पितथे जाने भरतस्तु शिष्यं ययौ ।
 पितथं नामिषिष्याथ भरद्वाजो ययौ ययौ ॥ ६१ ॥
 स चापि पितथः पुत्रान् जनयामास पञ्च ये ।
 सुहोत्रश्च सुहोतारं गयं गगं तथेष ॥ ६२ ॥
 कपिलश्च महात्मानं सुहोत्रस्य सुतद्वयम् ।
 काशिकश्च महासत्यं तथा गृत्समर्ति नृपन् ॥ ६३ ॥

तथा गृत्समनेः पुत्रा ब्राह्मणाः क्षत्रिया विशाः ।
 काशिकस्य तु काशेशः पुत्रो दीर्घतपास्तथा ॥ ६४ ॥
 बभूव दीर्घतपसो विद्वान् धन्वन्तरिः सुतः ।
 धन्वन्तरेस्तु तनयः केतुमानिति विद्भुतः ॥ ६५ ॥
 तथा वेतुमतः पुत्रो विद्वान् भीमरथः स्मृतः ।
 पुत्रो भीमरथस्यापि वाराणस्यधिपोऽभवत् ॥ ६६ ॥
 दिवोदास इति ख्यातः सर्व्यशत्रुप्रणाशनः ।
 दिवोदासस्य पुत्रस्तु घोरो राजा प्रतर्दनः ॥ ६७ ॥
 प्रतर्दनस्य पुत्रौ हौ चत्सो भार्गव एव च ।
 भलर्को राजपुत्रस्तु राजा सम्प्रतिमान् भुवि ॥ ६८ ॥
 हृदयस्य तु दायार्घ्यं हृतवान् वै महीपतिः ।
 आजहे पितृदायार्घ्यं दिवोदासहृतं यत्नात् ॥ ६९ ॥
 भक्ष्येण्यस्य पुत्रेण दुर्दमेन महात्मना ।
 दिवोदासेन घालेति घृणयासी विसर्जितः ॥ ७० ॥
 अष्टारथो नाम नृपः सुतो भीमरथस्य वै ।
 तेन पुत्रेण घाल्य प्रहृतं तस्य भो द्विजाः ॥ ७१ ॥
 घैरस्यान्नं मुनिश्रेष्ठाः क्षत्रियेण विधित्सता ।
 अलर्कः काशिराजस्तु ब्रह्मण्यः सत्यसङ्गरः ॥ ७२ ॥
 यष्टि यपंसदम्नाणि यष्टिवर्षशतानि च ।
 मुषा रूपेण सम्पन्नं भासोत्काशितं ॥ ७३ ॥
 लोपामुद्राग्रसादेन परमायुष्यं
 पयसोऽन्ते मुनिश्रेष्ठा हत्वा

रम्यां निवेशयामास पुरीं धाराणसीं नृपः ।
 अलकस्य तु दायादः क्षेमको नाम पार्यिवः ॥ ७५ ॥
 क्षेमकस्य तु पुत्रो वै धर्मकेतुस्ततोऽभवत् ।
 धर्मकेतोश्च दायादो विभुर्नाम प्रजेश्वरः ॥ ७६ ॥
 मानर्त्तस्तु विमोः पुनः सुकुमारस्ततोऽभवत् ।
 सुकुमारस्य पुत्रस्तु सत्यकेतुर्महारथः ॥ ७७ ॥
 सुतोऽभवन्महातेजा राजा परमधार्मिकः ।
 घटस्य घटभूमिस्तु मर्गभूमिस्तु मार्गवात् ॥ ७८ ॥
 एते त्वङ्गिरसः पुत्रा जाता घंशेऽथ भार्गवे ।
 ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्च मुनिसत्तमाः ॥ ७९ ॥
 आजमीढोऽपरो घंशः श्रूयतां द्विजसत्तमा ।
 सुशोभस्य बृहन्पुत्रो बृहत्स्तनयास्त्रयः ॥ ८० ॥
 अजमीढो द्विमीढश्च पुरुमीढश्च धीर्ष्ववान् ।
 अजमीढस्य परन्त्यस्तु तिम्रो वै यशमान्विताः ॥ ८१ ॥
 नीलो च केशिनी चैव धूमिनी च घराङ्गनाः ।
 अजमीढस्य केशिन्यां जङ्गे जङ्गः प्रतापवान् ॥ ८२ ॥
 आजङ्गे यो महासत्रं सत्र्यमेधमपं विभुम् ।
 पतिशोभेन यं गङ्गा विनीनेव ससार ह ॥ ८३ ॥
 नेच्छतः प्लावयामास तस्य गङ्गा च तन्सदः ।
 तत्तया प्लावितं दृष्ट्वा यत्रवार्त्तं ममन्ततः ॥ ८४ ॥
 जङ्गुत्प्यत्रमीढङ्गा ऋद्धो विप्राम्भदा नृपः ।
 एते त्रिषु लोकेषु संक्षिप्यापः पिराम्यहम् ॥ ८५ ॥

अस्य गङ्गाऽचलेषस्य सद्यः फलमवाप्नुहि ।

ततः पीतां महात्मानो हृष्ट्वा गङ्गां महर्षयः ॥ ८६ ॥

उपनिन्युर्महामागा दुहितृ-वेन ज ह गीम् ।

युवताभ्यस्य पुत्रीं तु कावेरीं ऊह्यचहन ॥ ८७ ॥

गङ्गांशापेन देहाख्यं यस्याः पञ्चाक्षरीकृतम् ॥

जहोस्तु दयित पुत्रो भजको नाम धीर्यवान् ।

भजकस्य तु दायादो बलाकाश्यो महीपतिः ॥ ८८ ॥

यभूय मृगयाशोलः कुशिकस्तस्य चारमजः ।

यदूनैः सह संवृद्धो राजा यनचरैः सह ॥ ८९ ॥

कुशिकस्तु नपन्नेरे पुत्र मेन्द्रसमं विभुम् ।

लभेयमिति तं शक्रश्चासादभ्येत्य जज्ञिवान् ॥ ९० ॥

स गाधिरभवद्वाजा मघवा कौशिक स्वयम् ।

विश्वामित्रस्तु गाध्रेगो विश्वामित्रान्तथापृकः ॥ ९१ ॥

अष्टकस्य सुतो लौहि प्रोक्तोज्जदनुगणो मया ।

आजमीढोऽयगे वंश श्रुतां मुनिसत्तमाः ॥ ९२ ॥

अजमीढान्तु नीदगा वै सुशान्तिरदपद्यत ।

पुरुजातिः सुशान्तेश्च घाह्याभ्य परजातितः ॥ ९३ ॥

घाह्याश्रयतनया पञ्च स्फीता जनपदावृताः ।

मुदुगलः सृजयश्चैव राजा बृहदिपुस्तथा ॥ ९४ ॥

यवीनश्च विक्रान्तः कृमिलाभ्यश्च पञ्चमः ।

पञ्चैते रक्षणायालं देशानामिति विश्रुताः ॥ ९५ ॥

पञ्चानां ते तु पञ्चान्याः स्फीता जनपदावृताः ।
 अलं संरक्षणे तेषां पञ्चाला इति विद्मताः ॥ ६६ ॥
 मुदुगलस्य तु दायादो मीदुगल्यः सुमहायशाः ।
 इन्द्रसेना यतो गर्भं व्रध्मन्त्रं प्रत्यपद्यत ॥ ६७ ॥
 दासीन् पञ्चजनः पुत्रः सुव्रतस्य महात्मनः ।
 सुतः पञ्चजनस्यापि सोमदत्तो महीपतिः ॥ ६८ ॥
 सोमदत्तस्य दायादः सहदेवो महायशाः ।
 सहदेवसुतश्चापि सोमको नाम विद्मतः ॥ ६९ ॥
 धजमीदुसुतो जातः क्षीणे घशे तु सोमकः ।
 सोमकस्य सुतो जन्तुर्यम्य पुत्रशान यमो ॥ १०० ॥
 तेषां ययीयान् वृषतो द्रुपदस्य पिता प्रभुः ।
 आजमीढाः स्मृताश्चैनं महात्मानन्तु सोमकाः ॥ १०१ ॥
 महिषी त्वजमीदुस्य धूमिना पुत्रमृद्धिनी ।
 पतिव्रता महामागा कुलजा मुनिसत्तमाः ॥ १०२ ॥
 सा च पुत्रार्थिनी देवा प्रतचर्य्यसमन्विता ।
 ततो वर्षायुतं तप्त्वा तपः परमदुश्चरम् ॥ १०३ ॥
 हृत्याग्निं विधिवन् सा तु पवित्रा मितमोजना ।
 अग्निहोत्रकुशेष्वेव मुप्याप मुनिसत्तमाः ॥ १०४ ॥
 धूमिन्या स तथा देव्या त्वजमीदुः समीपिवान् ।
 शृशं संजनयामास धूम्रवर्णं सुदर्शनम् ॥ १०५ ॥
 शृशान् सम्बरणो जज्ञे कुरुः सम्बरणात्तथा ।
 यः प्रयागादतिक्रम्य कुरुक्षेत्रं चकार ह ॥ १०६ ॥

पुण्यं च रमणीयं च पुण्यकृद्भिर्निषेचितम् ।

तस्यान्ववायः सुमहान् यस्य नाम्नाथ कौरवाः ॥ १०७ ॥

कुरोश्च पुत्राश्चत्वारः सुधन्वा सुधनुस्तथा ।

परीक्षित्व महाबाहुः प्रवरश्चारिमेजयः ॥ १०८ ॥

परोक्षितस्तु दायादो धार्मिको जनमेजयः ।

श्रुतसेनोऽप्रसेनश्च भीमसेनश्च नामतः ॥ १०९ ॥

एते सर्वे महाभागा विक्रान्ता बलशालिनः ।

जनमेजयस्य पुत्रस्तु सुर्यो मतिमांस्तथा ॥ ११० ॥

सुर्यस्य तु विक्रान्तः पुत्रो जहो विदूरथः ।

विदूरथस्य दायाद ऋक्ष एव महारथः ॥ १११ ॥

द्वितीयस्तु मरुदाज्ञाधाम्ना तेनेव विश्रुतः ।

द्राघृक्षो सोमपंशोऽस्मिन् द्राघेव च परीक्षितौ ॥ ११२ ॥

भीमसेनाख्यो पित्रा द्वौ चापि जनमेजयौ ।

ऋक्षस्य तु द्वितीयस्य भीमसेनोऽभवत्सुतः ॥ ११३ ॥

प्रपीपो भीमसेनात् प्रतोपस्य तु शान्तनुः ।

देवाविर्पाहिकश्चैव त्रय एव महारथाः ॥ ११४ ॥

शान्तनोस्त्यमपद्मोऽप्यस्तस्मिन् पंशो द्विजोत्तमाः ।

वाहिकस्य तु राजपथ्यं शं शृणुत भो द्विजाः ॥ ११५ ॥

पाहिकस्य सुतश्चैव सोमश्चो महायशः ।

जज्ञिरे सोमदत्तात्तु मूर्तिमूर्तिप्रदाः शलः ॥ ११६ ॥

• मतः परं कचिदधिकाः श्लोका इत्यन्ते न ते यदुपुस्त

सम्भता इति मोदताः ।

उपाध्यायस्तु देवानां देवापिरभवन्मुनिः ।

अयधनपुत्रः कृतक इष्ट आसीन्महात्मनः ॥ ११७ ॥

शान्तनुस्त्वभवद्राजा कौरवाणा धुन्धरः ।

शान्तनोः सम्प्रवक्ष्यामि वशं त्रैलोक्यविश्रुतम् ॥ ११८ ॥

गाङ्गां देववतं नाम पुत्रं सोऽजनयत् प्रभुः ।

स तु भीष्म इति उयातः पाण्डवाना पितामहः ॥ ११९ ॥

काली विचित्रवीर्यं तु जनयामास भो द्विजाः ।

शान्तनोर्दयित पुत्र धर्मात्मानमकल्मषम् ॥ १२० ॥

कृष्णद्वैपायनाकृचैव क्षेत्रे वैचित्रवीर्यके ।

धृतराष्ट्रं च पाण्डुं च विदुर चाप्यजीजनत् ॥ १२१ ॥

धृतराष्ट्रस्तु गान्धार्यां पुत्रानुत्पादयच्छतम् ।

तेषां दुष्योधन श्रेष्ठ सर्वेषामपि स प्रभुः ॥ १२२ ॥

पाण्डोर्धनञ्जयः पुत्रः सोमद्रस्तस्य चात्मजः ।

अभिमन्यो परीक्षितु पिता पारीक्षितस्य ॥ १२३ ॥

पारिक्षितस्य काश्याया द्वौ पुत्रौ सम्यभूवतुः ।

चन्द्रापीडस्तु नृपति सूर्यापीडश्च मोक्षपितृ ॥ १२४ ॥

चन्द्रापीडस्य पुत्राणां शतमुत्तमधन्विनाम् ।

जानमेजयमित्येवं क्षात्रं भुवि परिश्रुतम् ॥ १२५ ॥

तेषां ज्येष्ठस्तु तत्रासीत् पुरे धारणसाह्वये ।

सत्यकर्णो महाबाहुर्यज्वा विपुलदक्षिणः ॥ १२६ ॥

सत्यकर्णस्य दायादः श्वेतकर्णः प्रतापवान् ।

अपुत्रः स तु धर्मात्मा प्रविशेश तपोधनम् ॥ १२७ ॥

तस्माद्वनगता गर्भं यादृशो प्रत्यपद्यत ।

सुचारोर्दुहिता सुश्र्मालिनी ब्राह्मालिनी ॥ १२८ ॥

सम्भूते स च गर्भे च श्वेतकर्णः प्रजेश्वरः ।

अन्यगच्छन् कृतं पूर्वं महाप्रस्थानमच्युतम् ॥ १२९ ॥

सा तु दृष्ट्वा प्रियं तं च मालिनीं पृच्छतोऽन्यगात् ।

सुचारोर्दुहिता साध्वी वने राजीवलीचना ॥ १३० ॥

पथि सा सुपुत्रे बाला सुकुमारं कुमारकम् ।

तमपास्याथ तत्रैव राजानं सान्धगच्छत ॥ १३१ ॥

पतिव्रता महामागा द्रौपदीऽप्युप सती ।

कुमारं सुकुमारोऽसौ गिरिवृष्टे करोद्दद ॥ १३२ ॥

दयार्थं तस्य मेघास्तु प्रादुगसम्महात्मनः ।

धविष्ठायास्तु पुत्रौ द्वौ पैप्पलाक्षश्च कीशिकः ॥ १३३ ॥

दृष्ट्वा कृपां न्वितौ गृध्रौ तौ प्राक्षालयतां जले ।

निधृष्टौ तस्य पार्श्वौ तु शिलायां रुधिरप्लुतौ ॥ १३४ ॥

अजश्याम स पार्श्व्या धृष्टाभ्या सुसमाहितः ।

अजश्यामौ तु ततः शीर्षे देवेन सम्बभूवतु ॥ १३५ ॥

अथात्रपार्श्व इति वै चक्राते नाम तस्य तौ ।

स तु रैमकरालाया द्वित्राभ्यामिवर्द्धितः ॥ १३६ ॥

रैमकस्य तु भार्या तमुद्रहन् पुत्रकारणात् ।

रैमत्या स तु पुत्रोऽमृताज्ञगौसचिरीतु तौ ॥ १३७ ॥

तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च युगपत्तुल्यजीविनः ।

स एव पौरवो वंशः पाण्डवानां महात्मनाम् ॥ १३८ ॥

श्लोकोऽपि चात्र गीतोऽयं नाहुषेन ययानिना ।
 जरासंक्रमणे पूर्वं तदा प्राप्तेन धीमता ॥ १३६ ॥
 अचन्द्रार्कप्रहा भूमिर्मयेदियमसशयम् ।
 यपौरवा मही नैव भविष्यति कदान्न ॥ १४० ॥
 एष घ पौरवो घशो विख्यात कथितो मया ।
 तुर्व्यं सोऽस्तु प्रघक्ष्यामि द्रुशोश्चानोर्दोम्भया ॥ १४१ ॥
 तुर्व्यं सोऽस्तु सुतो वहि गोमानुस्तस्य चात्मज ।
 गोमानोस्तु सुतो राजा नैशानुरपराजिन ॥ १४२ ॥
 करण्यमस्तु त्रेशानेर्मरुतस्तस्य चात्मज ।
 अन्यस्त्वाचिक्षितो राजा मरुत कथितो मया ॥ १४३ ॥
 अनपन्योऽमघद्राजा यज्घा विपुन्दक्षिण ।
 दुहिता सभ्रता नाम तस्यासौ पृथिव्यापने ॥ १४४ ॥
 दक्षिणायं तु सा दत्ता सघर्ताय महात्मने ।
 दुप्यन्तं पौरव चापि त्रेमे पुत्रमकटमयम् ॥ १४५ ॥
 एषं ययानिशापेन जरात्मक्रमणे तदा ।
 पौरवं तुर्व्यं सोऽयं प्रविशेति द्विजोत्तमा ॥ १४६ ॥
 दुप्यन्तस्य तु दाय्याद् कुरुते प्रजेश्वरः ।
 कुरुते मादयार्हदश्चत्वारस्तस्य चात्मजा ॥ १४७ ॥
 पाण्ड्यश्च केरलश्चैव कोलश्चोलश्च पार्थिव ।
 द्रुहोश्च तनयो राजन घ्नसेतुश्च पार्थिव ॥ १४८ ॥
 यद्गारसेतुस्तन्पुत्रो मरुता पतिरुच्यते ।
 यौवनाश्रयेन समरे कच्छेण निहनो यली ॥ १४९ ॥

युद्धं सुमहदप्यासीन्मासान् परि चतुर्दश ।

अङ्गारसेतोर्दायादो गान्धारो नाम पार्थिव ॥ १५० ॥

दयायने यस्य नाम्ना वै गान्धारविषयो महान् ।

गान्धारदेशजाश्चैव तुरगा घाजिना घरा ॥ १५१ ॥

अनोस्तु पुत्रो धर्मोऽभूद्युतस्तस्यात्मजोऽभवत् ।

घुतादनदुहो जज्ञे प्रचेतास्तस्य चात्मज ॥ १५२ ॥

प्रचेतस सुचेतास्तु कीर्तितास्त्वनयो मया ।

यभूवुस्ते यदो पुत्रा पञ्च देवसुतोपमा ॥ १५३ ॥

सहस्राद् पयोदध्मन्मोष्टा नीलोऽञ्जिकस्तथा ।

सहस्रादस्य दायदाह्रय परमधार्मिका ॥ १५४ ॥

हैहयश्च हयश्चैव राजा येणुहयस्तथा ।

हैहयस्याभवत् पुत्रो धर्मनेत्र इति श्रुत ॥ १५५ ॥

धर्मनेत्रस्य कार्तस्तु साहजस्तस्य चात्मज ।

साहजनी नाम पुरी तेन राज्ञा निवेशिता ॥ १५६ ॥

आसीन्महिष्मत पुत्रो भद्रश्रेण्य प्रतापवान् ।

भद्रश्रेण्यस्म दायदो दुर्दमो नाम विश्रुत ॥ १५७ ॥

दुर्दमस्य सुतो धीमान् कनको नाम नामत ।

कनकस्य तु दायदाश्चत्वारो लोकविश्रुता १५८ ॥

कृतवीर्य कृतौजाश्च कृतधन्वा तथैव च ।

कृताग्निस्तु चतुर्योऽभून् कृतवीर्यादथाज्जुन ॥ १५९ ॥

योऽसौ बाहुसहस्रज सप्तद्वीपेश्वरोऽभवत् ।

जिगाय पृथिवीमेको रयेनादित्यवर्चसा ॥ १६० ॥

स हि वर्णायुतं तप्त्वा तप परमदुश्चरम् ।
 दत्तमाराधयामास कार्त्तवीर्योऽत्रिसम्मवम् ॥ १६१ ॥
 तस्मै दत्तो वरान् प्रादाच्चतुरो भूरुतेजसः ।
 पूरुवं यादुसहस्रं तु प्रार्थितं सुमहद्वरम् ॥ १६२ ॥
 अधर्मेऽधीयमानस्य सद्भिस्तत्र निवारणम् ।
 उग्रेण पृथिवीं जिन्वा धर्मेणैवानुरञ्जनम् ॥ १६३ ॥
 संप्रामान् सुयद्गन् जिन्वा हृत्वा चारीन् सहस्रशः ।
 संप्रामे वर्त्तमानस्य यद्य चाभ्यधिकाद्रणे ॥ १६४ ॥
 तस्य यादुसहस्रं तु युध्यत किल भो द्विजाः ।
 योगादुयोगीश्वरस्येव प्रादुर्मवति मायया ॥ १६५ ॥
 तेनेयं पृथिवीं सर्व्यां सप्तद्वीपा सपत्तना ।
 ससामुद्रा सनगरा उग्रेण विधिना जिता ॥ १६६ ॥
 तेन सप्तसु द्वीपेषु सप्त यज्ञशतानि वै ।
 प्राप्तानि विधिना राज्ञा श्रूयन्ते मुनिसत्तमाः ॥ १६७ ॥
 सर्व्यं यज्ञा मुनिश्रेष्ठाः सहस्रशतदक्षिणाः ।
 सर्व्यं काञ्चनयूपाश्च सर्व्यं काञ्चनपेदयः ॥ १६८ ॥
 सर्व्यं देवैर्भुं निश्रेष्ठा विमानस्यैरलङ्कृतैः ।
 गन्धर्वैरपसरोमिश्च नित्यमेवोपशोमिताः ॥ १६९ ॥
 यस्य यज्ञे जगो गाथां गन्धर्व्यो नारदस्तथा ।
 यरीदासात्मजो विद्वान्महिम्ना तस्य विस्मितः ॥ १७० ॥

नारद उवाच ।

॥ नूतं कीर्त्तवीर्यस्य गतिं यास्यन्ति पार्थिवाः ।
 यन्नैर्दानैस्तपोमिश्च विक्रमेण ध्रुतेन च ॥ १७१ ॥

स हि सप्तसु द्वीपेषु घर्मो खड्गी शरासनी ।
 रथी द्वापाननुचरन् योगी संदृश्यते नृभिः ॥ १७२ ॥
 अनष्टद्रव्यता चैव न शोको न च विभ्रमः ।
 प्रभायेण मया राज्ञ प्रजा धर्मेण रक्षतः ॥ १७३ ॥
 स सव्यरत्नमाक् सप्ताट चक्रधर्तो यभूय ह ।
 स एव पशुपालोऽभून् क्षेत्रपाल स एव च ॥ १७४ ॥
 स एव वृद्ध्या पञ्चन्यो योगित्यादर्जुनोऽभवत् ।
 स वै बाहुसहस्रेण ज्याघातकठिनत्वचा ॥ १७५ ॥
 भाति रश्मिसहस्रज शरदीय च भास्करः ।
 स हि नागान्मनुष्येषु माहिष्मत्यां महाद्युति ॥ १७६ ॥
 कर्कोटकपुतान् जित्वा पुण्यां तस्या न्यवेशयत् ।
 स वै वैगं समुद्रस्य प्रावृत्कालेऽभ्युज्जेष्य ॥ १७७ ॥
 क्रीडन्निव भुजोद्विभ्रं प्रतिस्त्रोतध्वकार ह ।
 लुण्ठिता क्रीडता तेन नदी तनुग्राममालिनो ॥ १७८ ॥
 चलदूर्भिसहस्रेण शङ्किताभ्येति नर्मदा ।
 तस्य बाहुसहस्रेण क्षिप्यमाणे महोदधौ ॥ १७९ ॥
 मयान्निर्लिना निश्चेष्टा पातालस्था महासुरा ।
 चूर्णीकृतमहावीचि चलन्मीनमहातिमिम् ॥ १८० ॥
 मासताविद्धफेनौघमावर्त्तशोभसङ्कुलम् ।
 प्रावर्त्तयत्तदा राजा सहस्रेण च बाहुना ॥ १८१ ॥
 देवालुरसमाक्षिप्त क्षीरोदमिव मन्दरः ।
 मन्दरक्षोभचकिता अमृतोत्पादशङ्किताः ॥ १८२ ॥

सहस्रोत्पतिना भाता भाम दृष्ट्वा नृपोत्तमम् ।
 नता निश्चलमूर्धानो बभूवुस्ते महोरगा ॥ १८३ ॥
 सायाहे कदलाखण्डा कम्पिता इव वायुना ।
 स वै यदु-वा धनुर्ज्यामिरुत्सिक्त पञ्चमि शरै ॥ १८४ ॥
 लङ्केश मोहयित्वा तु सगल रावण वलात् ।
 निजित्य घशमानीय माहिमत्या वच-न्ध तम् ॥ १८५ ॥
 श्रुत्वा तु यद्द पौलस्त्य रावण त्व-र्जुनेन च ।
 ततो गत्वा पुनस्त्यस्तमज्जुन ददृशे स्वयम् ॥ १८६ ॥
 मुमोच रक्ष पौलस्त्य पुनस्त्येनामियाचित ।
 यस्य बाहुसहस्रस्य बभूव ज्यातलसन ॥ १८७ ॥
 युगान्ते तोयदस्येव स्फुटतो ह्यशनेरिध ।
 अहो घत मुने घाट्य भार्गवस्य यदच्छिनत् ॥ १८८ ॥
 राज्ञो बाहुसहस्रस्य ह्रीम तालघन यथा ।
 तृपितैन कदानित् स मिक्षितग्नित्रभानुना ॥ १८९ ॥
 स मिश्रामददाहोर सप्त द्वापान् विमासो ।
 पुराणि ग्रामघोषाञ्च विपयाश्चैव सर्वश ॥ १९० ॥
 जञ्जाल तस्य सर्व्याणि चित्रभानुर्द्विदृशया ।
 तस्य पुरुषेन्द्रस्य प्रभावेण महात्मन ॥ १९१ ॥
 ददाह कात्तवोर्यन्तु शैलाश्चैव घनानि च ।
 सशून्यमाश्रम रम्य वरुणस्यात्मजस्य वै ॥ १९२ ॥
 ददाह चलवद्भीतश्चित्रमानु सहैहय ।
 य लेभे वरुण पुत्र पुरा भास्वन्तमुत्तमम् ॥ १९३ ॥

वशिष्ठं नाम स मुनिः ख्यात आपव इत्युत ।
 तत्रापवस्तु तं क्रोधाच्छप्तवानर्जुन विभुः ॥ १९४ ॥
 यस्मान्न वर्जितमिदं धनं ते मम हैदय । --
 तस्मात्ते दुष्करं कर्म कृतमन्यो हनिष्याति ॥ १९५ ॥
 रामो नाम महाबाहुर्जामदग्न्यः प्रतापवान् ।
 छित्त्वा बाहुसहस्रान्तेप्रमध्य तरसा बली ॥ १९६ ॥
 तपस्वी ब्राह्मणस्त्वां हनिष्यति स भार्गवः ।
 अनष्टद्रव्यता यस्य बभूवामिन्नकर्षिणः ॥ १९७ ॥
 प्रतापेन नरेन्द्रस्य प्रजा धर्मेण रक्षतः ।
 प्राप्तस्ततोऽस्य मृत्युर्यं तस्य शापान्महामुनेः ॥ १९८ ॥
 धरस्तथैव भो विप्राः स्वयमेव धृतः पुरा ।
 तस्य पुत्रशतं त्वासीत् पञ्च शेषा महात्मनः ॥ १९९ ॥
 कृताब्जा बलिनः शूरा धर्मात्मानो यशस्विनः ।
 शूरसेनश्च शूरश्च वृषणो मधुपध्यजः ॥ २०० ॥
 जयध्यजश्च नाम्नासीदावन्त्यो नृपतिर्महान् ।
 कार्तवीर्यस्य तनया धीर्यवन्तो महाबलाः ॥ २०१ ॥
 जयध्यजस्य पुत्रस्तु तालजङ्घो महाबलः ।
 तस्य पुत्रशतं ख्यातास्तालजङ्घा इति स्मृताः ॥ २०२ ॥
 तेषां कुले मुनिश्रेष्ठा हैदयाना महात्मनाम् ।
 धीतिहोत्रा सुमताश्चमोजाश्चावन्तयः स्मृताः ॥ २०३ ॥
 तीण्डिकेयाश्च विख्यातास्तालजङ्घास्तथैव च ।
 भरताश्च यदुर् ॥ २०४ ॥

वृषप्रभृतयो विप्रा यादवाः पुण्यकर्मिणः ।
 वृषो वंशधरस्तत्र तस्य पुत्रोऽभवन्मधुः ॥ २०५ ॥
 मधोः पुत्रशतं त्वासोद्वृषणस्तस्य वंशहृन् ।
 वृषणाद्वृष्णयः सर्वे मधोस्तु माधवाः स्मृताः ॥ २०६ ॥
 यादवा यदुनाम्ना ते निरुच्यन्ते च हैहयाः ।
 न तस्य वित्तनाशः स्यान्नष्टं प्रतिलमेद्य सः ॥ २०७ ॥
 कार्तवीर्यस्य यो जन्म कथयेद्दिह नित्यशः ।
 एते ययातिपुत्राणां पञ्च वंशा द्विजोत्तमाः ॥ २०८ ॥
 कीर्तिता लोकवीराणां ये लोकान् धारयन्ति ये ।
 भूतानीव मुनिश्रेष्ठाः पञ्च स्याधरजङ्गमान् ॥ २०९ ॥
 श्रुत्या पञ्च विसर्गास्तु राजा घर्म्मार्थकोविदः ।
 वशी भवति पञ्चानामात्मजानां तथेश्वरः ॥ २१० ॥
 लमेत् पञ्च वराश्चैव दुर्लभानिह लौकिकान् ।
 आयुः कीर्तिं तथा पुत्रानेश्वर्यं भूमिमेव च ॥ २११ ॥
 धारणाच्छ्रयणाच्चैव पञ्चवर्गस्य भो द्विजाः ।
 क्रोष्टोर्व्यंशं मुनिश्रेष्ठाः शृणुष्वं गदती मम ॥ २१२ ॥
 यदोर्व्यंशधरस्याथ यज्जिनः पुण्यकर्मिणः ।
 भोष्टोर्व्यंशं हि श्रुत्वैव सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ २१३ ॥
 यस्यान्धवायजो विष्णुर्द्विर्वृष्णिबुलोद्वहः ।
 * इति श्रीब्राह्मे महापुराणे ययतिवंशानुकीर्तनं नाम
 त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

वशिष्ठं नाम स मुनिः ख्यात आपव इत्युत ।
 तत्रापवस्तु तं क्रोधाच्छतवानर्जुनं विभुः ॥ १९४ ॥
 यस्मान्न वर्जितमिदं धनं ते मम हैहय । -
 तस्मात्ते दुष्करं कर्म कृतमन्यो हनिष्याति ॥ १९५ ॥
 रामो नाम महाबाहुर्जामदग्न्यः प्रतापवान् ।
 छिन्वा बाहुसहस्रान्तेप्रमध्य तरसा बली ॥ १९६ ॥
 तपस्वी ब्राह्मणस्त्वां तु हनिष्यति स भार्गवः ।
 धनष्टद्रूपता यस्य बभूवामित्रकर्षिणः ॥ १९७ ॥
 प्रतापेन नरेन्द्रस्य प्रजा धर्मेण रक्षतः ।
 प्राप्तस्ततोऽस्य मृत्युर्वै तस्य शापान्महामुनेः ॥ १९८ ॥
 धरस्तथैव भो विप्राः स्वयमेव धृतः पुरा ।
 तस्य पुत्रशतं त्वासीत् पञ्च शेषा महात्मनः ॥ १९९ ॥
 कृतास्त्रा बलिनः शूरा धर्मात्मानो यशस्विनः ।
 शूरसेनश्च शूरश्च धृषणो मधुपध्वजः ॥ २०० ॥
 जयध्वजश्च नाम्नासीदावन्त्यो नृपतिर्महान् ।
 कार्तवीर्यस्य तनया धीर्यवन्तो महाबलाः ॥ २०१ ॥
 जयध्वजस्य पुत्रस्तु तालजङ्घो महाबलः ।
 तस्य पुत्रशतं ख्यातास्तालजङ्घा इति स्मृताः ॥ २०२ ॥
 तेषां कुले मुनिश्रेष्ठा हैहयाना महात्मनाम् ।
 धीतिहोत्रा सुप्रताश्चभोजाश्चावन्तय स्मृताः ॥ २०३ ॥
 तीण्डिकेयाश्च विख्यातास्तालजङ्घास्तथैव च ।
 भरताश्च सुजाताश्च बहुत्वान्नानुकीर्तिताः ॥ २०४ ॥

वृषप्रभृतयो विप्रा यादवाः पुण्यकर्मिणः ।
 वृषो वंशधरस्तत्र तस्य पुत्रोऽभवन्मधुः ॥ २०५ ॥
 मधोः पुत्रशतं त्वासीद्वृषणस्तस्य वंशकृत् ।
 वृषणाद्वृष्णयः सर्वे मधोस्तु माधवाः स्मृताः ॥ २०६ ॥
 यादवा यदुनाम्ना ते निरुच्यन्ते च हैहयाः ।
 न तस्य विसनाशः स्यान्नष्टं प्रतिलभेद्य सः ॥ २०७ ॥
 कार्त्तवीर्यस्य यो जन्म कथयेदिह नित्यशः ।
 एते ययातिपुत्राणां पञ्च वंशा द्विजोत्तमाः ॥ २०८ ॥
 कीर्तिता लोकचोराणां ये लोकान् धारयन्ति वै ।
 भूतानीव मुनिश्रेष्ठाः पञ्च स्थावरजङ्गमान् ॥ २०९ ॥
 श्रुत्वा पञ्च विसर्गास्तु राजा धर्म्मार्थकोविदः ।
 परी भवति पञ्चानामात्मजानां तथेश्वरः ॥ २१० ॥
 लभेत् पञ्च परांश्चैव दुर्लभानिह लौकिकान् ।
 मायुः कीर्तिं तथा पुत्रानैश्वर्यं भूमिमेव च ॥ २११ ॥
 धारणाच्छ्रवणाच्चैव पञ्चार्गस्य भो द्विजाः ।
 क्रोष्टोर्व्यंशं मुनिश्रेष्ठाः शृणुध्वं गदतो मम ॥ २१२ ॥
 यदोर्व्यंशधरस्याथ यज्विनः पुण्यकर्मिणः ।
 क्रोष्टोर्व्यंशं हि श्रुत्वैव सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ २१३ ॥
 यस्यान्धवायजो विष्णुर्ह्रिर्वृष्णिबुलोद्बहः ।

* इति श्रीब्रह्मे महापुराणे ययतिवंशानुकीर्तनं नाम
 त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

चतुर्दशोऽध्यायः ।

‘ तत्रादौ यदुपुत्र क्रोष्टुवंशवर्णनम् ।

लोमहर्षण उवाच ।

गान्धारी चेय माद्री च कोष्टोर्भार्य्ये यभूवतुः ।
गान्धारी जन्मामास अनमित्रं महाबलम् ॥ १ ॥
माद्री युवाजिनं पुत्रं ततोऽन्यं देवमीदृशम् ।
तेषां वशास्त्रिणा भूनां वृष्णोनां कुलवर्द्धनः ॥ २ ॥
माद्रेया पुत्रौ तु तत्रानि श्रुतौवृष्णयन्त्रकाद्युमे ।
जहाते तनयौ वृष्णे श्वफल्कश्चित्रकस्तथा ॥ ३ ॥
श्वफल्कस्तु मुनिश्रुता धर्मात्मा यत्र वर्तते ।
नास्ति आधमय तत्र नावर्णस्तापमेव च ॥ ४ ॥
कदाचिन् काशिराजस्य विषये मुनिसत्तमाः ।
श्रीणि वर्णाणि पूर्णानि नावयन् पाकशासनः ॥ ५ ॥
स तत्र चानगमास श्वफल्कं परमार्थितम् ।
श्वफल्कपरिवर्त्तेन धवर्णं हरिवाहनः ॥ ६ ॥
श्वफल्कं काशिराजस्य सुता माद्रेयामचिन्दत ।
गान्दिनी नाम गां सा च ददौ विप्राय नित्यशः ॥ ७ ॥
दाता यज्वा च वारध श्रुतवानतिथिप्रियः ।
अक्रूरः सुपुत्रे तस्माच्छृणु लकादुमूर्खक्षणः ॥ ८ ॥

उपमद्गु स्तथा मदगुमदुरश्चारिमेजय ।
 आविक्षितस्तथाक्षेप शत्रुन्नश्चारिर्मर्दन ॥ ६ ॥
 धर्मधृग् यतिधर्मा च धर्मोक्षान्धकरस्तथा ।
 आवाहप्रतिवाही च सुन्दरी च घराङ्गना ॥ १० ॥
 अकूरेणोप्रसेनाया सुगाय्या द्विजसत्तमा ।
 प्रसेनश्चोपदेवश्च जज्ञाते देववर्धसौ ॥ ११ ॥
 चित्रकस्याभयन पुत्रा पृथुर्विपृथुरेष च ।
 अश्वप्रोयोऽश्वराहुश्च स्वपार्श्वकगवेषणी ॥ १२ ॥
 अरिष्टनेमिरण्वश्च सुधर्मा धर्मभृत्तथा ।
 सुग्राहूर्जहुवाहुश्च श्रविष्ठाश्रवणे स्त्रियौ ॥ १३ ॥
 असिकन्या जनयामास शूर वै देवमीदुपम् ।
 महिष्या जज्ञिरे शूरा भोज्याया पुरुषा दश ॥ १४ ॥
 वसुदेवो महाबाहु पूर्वमानकदुन्दुभि ।
 जज्ञे यस्य प्रसूतस्य दुन्दुभ्या प्राणदन् द्विवि ॥ १५ ॥
 आनकाना च सहाद सुमहानभवद्विवि ।
 पपात पुप्यर्घश्च शरस्य जनने महान् ॥ १६ ॥
 मनुष्यलोके कृत्स्नेऽपि रूपे नास्ति समो भुवि ।
 यस्यासोत्पुरुषाग्रस्य कान्तिश्चन्द्रमसो यथा ॥ १७ ॥
 देवमागस्ततो जज्ञे तथा देवश्रवा पुन ।
 अनाधृष्टि कनकको वत्सवानथ गृज्जम ॥ १८ ॥
 श्याम शमाको गण्डूय पञ्च चास्य घराङ्गना ।
 पृथुकीर्त्ति पृथा चैव श्रुतदेवा श्रुतश्रवा ॥ १९ ॥

राजाधिदेवी च तथा पञ्चैता धीरमातरः ।

श्रुतश्रवाया चैयस्तु शिशुगालोऽमघन्नृपः ॥ २० ॥

हिरण्यकशिपुर्वोऽसौ दैत्यराजोऽमवत्पुरा ।

पृथुकीर्यां तु सञ्जग्ने तनयो वृद्धशर्मणः ॥ २१ ॥

करुपाधिपतिर्वीरो दन्तवधो महाबलः ।

पृथा दुहितर वध्रे कुन्तिस्तां पाण्डुरायहत् ॥ २२ ॥

यस्या स धर्मपिद्राजा धर्मो जग्ने युधिष्ठिरः ।

भामसेनस्तथा पातादिन्द्राब्धेय धनञ्जयः ॥ २३ ॥

लोकेऽप्रतिरथो धीरः शत्रुतुल्यपराक्रमः ।

मनमित्राब्धिरुनिर्जग्ने कनिष्ठाशुगृष्णिनन्दात् ॥ २४ ॥

शौनेय सन्यवस्तम्माशुयुयुधानश्च सात्यकिः ।

वृद्धपो देवमागम्य मदमाग सुतोऽमघत् ॥ २५ ॥

असग्रामेण यो धीरो नावर्त्तत कदाचन ।
 रौक्मिणेयो महाबाहु कनीयान् द्विजसत्तमा ॥ ३० ॥
 धायसाना सहस्राणि य यान्तु पृष्ठतोऽन्वयु ।
 चारुनद्योपमोक्ष्यामश्वास्त्रेष्णहतानिति ॥ ३१ ॥
 तन्निजस्तन्निपालश्च सुतो कनकस्य तो ।
 धीरुश्चाश्वहनुश्चैव धीरो तावथ गृज्जिर्मौ ॥ ३२ ॥
 श्यामपुत्र शर्मीरुस्तु शर्मीको राज्यमावहत् ।
 जुगुप्समानो भोजत्पाद्वाजसूयमवाप स ॥ ३३ ॥
 भजातशत्रु शत्रूणां जहौ तस्य विनाशन ।
 घसुदेवसुतान् धीरान् कीर्त्तयिष्याम्यस परम् ॥ ३४ ॥
 वृष्णेस्त्रिधिधमेचन्तु बहुशाप महीजसम् ।
 धारयन् विपुल वश नानर्थैरिह थुयते ॥ ३५ ॥
 या पत्न्यो घसुदेवस्य चतुर्दश वराङ्गना ।
 पौरवी रौहिणी नाम मतिरादिस्तथापरा ॥ ३६ ॥
 वैशाखी च तथा भद्रा सुनाम्नी चैव पञ्चमी ।
 सहदेवा शान्तिदेवा श्रीदेवी देवरक्षिता ॥ ३७ ॥
 वृकदेव्युपदेवी च देवकी चैव सप्तमी ।
 सुतनुर्वडवा चैव द्वे षते परिवारिके ॥ ३८ ॥
 पौरवी रौहिणी नाम बाहिरुस्यात्मजामवत् ।
 ज्येष्ठा पत्नी मुनिश्रेष्ठा दयितानकदुन्दुमे ॥ ३९ ॥
 लेभे ज्येष्ठ सुत राम शरण्य शठमेव च ।
 दुर्दम दमन शुभ्र पिण्डारकमुशीनरम् ॥ ४० ॥

चित्रा नाम कुमारी च रोहिणीतनया नव ।

चित्रा सुभद्रेति पुनर्विख्याता मुनिसत्तमा ॥ ४१ ॥

वसुदेवाश्च देवक्या जज्ञे शौरिर्महायशा ।

रामाश्च निशठो जज्ञे रेवत्या दयित सुत ॥ ४२ ॥

सुभद्राया रथी पार्थादिमिमन्युरजायत ।

अक्रूरात्काशिकन्याया सत्यकेनुरजायत ॥ ४३ ॥

वसुदेवस्य भाव्यासु महाभागासु सप्तसु ।

ये पुत्रा जज्ञिरे शूरा समस्तास्तान्निबोधत ॥ ४४ ॥

भोजश्च विजयश्चैव शान्तिदेवासुतावुभौ ।

वृकदेव सुनामाया गदश्चास्ता सुतावुभौ ॥ ४५ ॥

अगावह महात्मान वृकदेवा व्यजायत ।

कन्या त्रिगत्तराजस्य भाव्या ये शिशिरायणे ॥ ४६ ॥

जिहासा पीरये चक्रे न चस्कन्दे च पौरुषम् ।

वृष्णायससमप्रख्या वर्षे द्वादशमे तथा ॥ ४७ ॥

मिथ्यामिशस्तो गार्ग्यस्तु मन्थुनातिसमीरित ।

घोषकन्यामुषादाय मैथुनायोपवक्रमे ॥ ४८ ॥

गोपाली चाप्सरास्तस्य गोपस्त्रीपेशधारिणा ।

धारयामास गार्ग्यस्य गर्भं दुर्द्धरमच्युतम् ॥ ४९ ॥

मानुष्या गर्भभाव्याया नियोगाच्छूलपाजित ।

स कालशयनो नाम यज्ञो राजा महाबल ॥ ५० ॥

वृत्तपूर्वार्द्धकायस्तु सिंहसदननो युवा ।

अपुत्रस्य स राजस्तु ववृधेऽन्त पुरे शिशु ॥ ५१ ॥

यवनस्य मुनिश्रेष्ठाः स कालयवनोऽभवत् ।

आयुध्यमानो नृपतिः पर्य्यपृच्छद्विजोत्तम् ॥ ५२ ॥

वृष्ण्यन्धककुलं तस्य नारदोऽकथयद्विभुः ।

अक्षोहिण्या तु सैन्यस्य मथुरामभ्ययात्तदा ॥ ५३ ॥

दूतं सम्प्रेषयामास वृष्ण्यन्धकनिवेशनम् ।

ततो वृष्ण्यन्धकाः कृष्णं पुरम्हृत्य महामतिम् ॥ ५४ ॥

समेता मन्त्रयामामुर्यवनस्य मयात्तदा ।

कृत्वा विनिश्चर्य सन्धे पलायनमरोचयन् ॥ ५५ ॥

विहाय मथुरां रम्यां मानयन्तः पिनाकिनम् ।

कुशस्थलीं द्वारवतीं निवेशयितुर्माप्सवः ॥ ५६ ॥

इति कृष्णस्य जन्मेष्टं यः शुचिर्नियनेन्द्रियः ।

पर्य्यसु श्रापयेद्विद्वाननृणः स सुखी भवेत् ॥ ५७ ॥

इति श्रीब्राह्म मदापुराणे कृष्णजन्मानुकीर्तनं

नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

पञ्चदशोऽध्यायः ।

वृष्णिवंशवर्णनम् ।

लोमहर्षण उवाच ।

क्रोशारयामवन् पुत्रो वृजिनीवान्महायशः ।

षार्जिनीवतमिच्छन्ति स्वार्हि स्वादाहृता वरम् ॥ १ ॥

स्वाहिपुत्रोऽभवद्राजा उपद्रुगुर्वदतां वरः ।
 महाक्रतुमिरीजे यो चिविधैर्मूर्दिक्षिणैः ॥ २ ॥
 ततः प्रसूतिमिच्छन् वै उपद्रुगुःसोऽग्न्यमात्मजम् ।
 जज्ञे चित्ररथस्तस्य पुत्रः कर्मभिरन्वितः ॥ ३ ॥
 आसीच्चैत्ररथिर्वीरो यज्वा विपुलक्षिणः ।
 शशचिन्दुः परं वृत्तं राजर्षीणामनुष्ठितः ॥ ४ ॥
 पृथुश्रवाः पृथुयशा राजासीच्छशचिन्दवः ।
 शंसन्ति च पुराणज्ञाः पार्यश्रयसमन्तरम् ॥ ५ ॥
 अन्तरस्य सुयज्ञस्तु सुयज्ञतनयोऽभवत् ।
 उपतो यज्ञमखिलं स्वधर्मं च कृतादरः ॥ ६ ॥
 शिनेयुरभवत् पुत्र उपतः शत्रुतापनः ।
 मरुतस्तस्य तनयो राजर्षिरभवननृपः ॥ ७ ॥
 मरुतोऽलमत ज्येष्ठं सुतं कम्बलवर्हिषम् ।
 चचार विपुलं धर्मममर्षात् प्रेत्यभागपि ॥ ८ ॥
 स सत् प्रसूतिमिच्छन् यै सुतं कम्बलवर्हिषः ।
 यभूय स्यमकषचः शतप्रसवतः सुतः ॥ ९ ॥
 निहत्य स्यमकषचः शतं कचचिनां रणे ।
 घन्धिनां निशितैर्याणैरघाप त्रियमुत्तमाम् ॥ १० ॥
 जज्ञे च स्यमकषचात् पराजित्परोरुहा ।
 जज्ञिरे पञ्च पुत्रास्तु महावीर्याः पराजिताः ॥ ११ ॥
 स्यमेपुः पृथुस्यमश्च उदामयः पालितो हरिः ।
 पालितं च हरिं चैव विदेहेभ्यः पिता ददौ ॥ १२ ॥

रुक्मेपुरमद्राजा पृथुरुक्मस्य संग्रयान् ।
 ताम्प्रां प्रराजितो राजा ज्यामघोऽवमदाश्रमे ॥ १३ ॥
 प्रशान्तरुच तदा राजा ब्राह्मणैर्वैररोधितः ।
 जगाम घनुरादाय देशमन्यं ध्वजी गथा ॥ १४ ॥
 नर्मदाकुन्तमेकाकोमेखला मृत्तिकावतीम् ।
 अक्षवन्त गिरिं जित्वा शुक्तिमभ्यामुवाच सः ॥ १५ ॥
 ज्यामघस्त्वामब्रूवन् शैश्या यलग्नो सती ।
 अपुत्रोऽपि स राजा धै नान्या भार्यामधिन्दत ॥ १६ ॥
 तस्यासीद्विजयो युद्धे तत्र कन्यामवाप सः ।
 भार्यामुवाच सन्नस्तः स्तुपेति स जनेश्वरः ॥ १७ ॥
 एतच्छ्रुत्वात्रयीदेवी कस्य देव स्तुपेति धै ।
 अत्रर्षीत्तदुपश्रुत्य ज्यामघो राजसत्तमः ॥ १८ ॥

राजोवाच ।

यस्मै जनिष्यते पुत्रस्तस्य भार्यापपादिता ॥ १९ ॥

लोमहर्षेण उवाच ।

उग्रेण तपसा तस्याः कन्याया सा व्यजायत ।
 पुत्रं चिदमं सुमगा शैश्या परिणता सती ॥ २० ॥
 राजापुत्र्यांतुविद्वासी स्तुपायां क्रयकैशिका ।
 पश्चाद्विदर्मोऽजनयच्छूरो रणविशारदो ॥ २१ ॥
 मीमो विदर्मस्य सुतः कुन्तिस्तस्यात्मजोऽभवत् ।
 कुन्तेधृष्टः सुतो जह्ने रणधृष्टः प्रतापवान् ॥ २२ ॥

धृष्टस्य जज्ञिरे शूरास्त्रय परमधार्मिकाः ।

आचन्तश्च दशार्हश्च बली विषहरश्च सः ॥ २३ ॥

दशार्हस्य सुतो व्योमा व्योम्नो जीमूत उच्यते ।

जीमूतपुत्रो विहृतिस्तस्य भीमरथः स्मृतः ॥ २४ ॥

अथ भीमरथस्यासीत् पुत्रो नवरथस्तथा ।

तस्य चासौदशरथः शकुनिस्तस्य चात्मजः ॥ २५ ॥

तस्मात्करम्मः कारम्मिर्देघरातोऽभवन्नृपः ।

देघक्षत्रोऽभवत्तस्य वृद्धक्षत्रो महावशाः ॥ २६ ॥

देघगर्भसमो जज्ञे देघक्षत्रस्य तन्मनः ।

मधूनां घंशङ्गद्राजा मधुमंधुरबागपि ॥ २७ ॥

मधोजंघेऽथ वैदव्यां पुण्ड्रान्गुरुपोत्तमः ।

पेक्षवाक्ती चामशङ्गाव्या मयोऽहं तां व्यजायन ॥ २८ ॥

सत्त्वान् सव्यगुणोपेतः सात्वतां कीर्त्तिवर्द्धनः ।

इमां विसृष्टिं विज्ञाय ज्यामघस्य महात्मनः ॥

युज्यते परमप्रोत्था प्रजायांश्च भवेन् सदा ॥ २९ ॥

लौमहर्षेण उवाच ।

सत्यतः सत्यसम्पन्नान् कौशल्या सुपुत्रे सुतान् ।

भागिनं भजमानं च दिव्यं देवावृष्टं नृपम् ॥ ३० ॥

अन्धकं च महाबाहुं घृष्णिं च यद्वनन्दनम् ।

तेषां पिसर्गाश्चत्वारो पिस्तरेणेह कीर्त्तिताः ॥ ३१ ॥

भजमानस्य सृज्यो घातकागोपयावका ।

आस्तां भार्गव ॥ गोस्तस्माज्जैरैवहयःसुताः ॥ ३२ ॥

क्रिमिश्च क्रमगञ्चेन धृष्टः शूरः पुरुषयः ।
 एते घातकसूत्रय्या मज्जमानाद्विजशिरे ॥ ३३ ॥
 अयुताजिन् सहस्राजिच्छ्रुता जित्वथ दासकः ।
 उपवाहकसूत्रय्या मनमानाद्विनजिरे ॥ ३४ ॥
 यज्वा देवावृधो राजा चत्वार विपुल तपः ।
 पुनः सत्त्वगुणोपेतो मम म्यादिति निश्चितम् ॥ ३५ ॥
 संयुज्यमानस्तपसा पर्णाशया जलं स्पृशन् ।
 सदीपम्पृगतस्तस्य चकार त्रियमापगा ॥ ३६ ॥
 चिन्तयामिपरीता सा न जगामैव निश्चयम् ।
 कल्याणत्यागरपनेस्तम्या सा निम्नगोत्तमा ॥ ३७ ॥
 नाध्यगच्छन्नुता नारी यस्यामेव विधुः सुतः ।
 भवेत्तस्मान् स्वयं गत्वा भयाम्यस्य सहानुगा ॥ ३८ ॥
 अथ भूत्वा कुमारी सा तिम्रती परमं धनुः ।
 धरयामास नयति तामियेय च स प्रभुः ॥ ३९ ॥
 तस्यामाद्यत्त गर्भं स तेजस्विनमुदारधीः ।
 अथ सा दशमे मासि सुपुत्रे सरिता धरा ॥ ४० ॥
 पुत्रं सत्त्वगुणोपेतं धर्मं देवावृधं द्विजाः ।
 अत्र वंशे पुराणज्ञा गायन्तीति पश्चिन्नमः ॥ ४१ ॥
 गुणान् देवावृधस्यापि कीर्तयन्तो महान्मनः ।
 यथैवाग्रे तथा दूरात्पश्यामस्तावदन्तिकान् ॥ ४२ ॥
 वसुधैव कुटुम्बकम् मनुष्याणां देवैर्देवावृधः समः ।
 पृथिव्यश्च पट्टं च पुरुषा सहस्राणि च सप्त च ॥ ४३ ॥

पतेऽमृतत्वं प्राप्ता वै घम्रोदवावृधादपि ।

यज्वा दानपतिर्धोमान् ब्रह्मण्यः सुदृढायुधः ॥ ४४ ॥

तस्यान्यवायः सुमहान्भोजा ये मार्त्तिकावताः ।

अन्धकात्काश्यदुहिता चतुरोऽलमतात्मजान् ॥ ४५ ॥

कुकुरं भजमानं च ससकं बलबाह्विपम् ।

कुकुरस्य सुतो वृष्टिर्बृष्टेस्तु तनयस्तथा ॥ ४६ ॥

कपोतरोमा तस्याथ तिलिरिस्तनयोऽभवत् ।

जज्ञे पुनर्बसुस्तस्मादमिजिञ्च पुनर्बसोः ॥ ४७ ॥

तथा वै पुत्रमिथुनं घभुवामिजितः किल ।

आहुकः आहुकश्चैव स्यात्तौ स्यातिमतां वरौ ॥ ४८ ॥

इमां सोदाहरन्त्यत्र गाथां प्रति समाहुकम् ।

श्वेतेन परिवारेण किशोरप्रतिमोमहान् ॥ ४९ ॥

अशीतिवर्मणा युक्त आहुकः प्रथमं व्रजेत् ।

नापुत्रघाताशतदो नासहस्रशतायुषः ॥ ५० ॥

नाशुद्धकर्मा नायज्या यो भोजममितो व्रजेत् ।

पूर्वस्यां दिशि नागानां भोजस्य प्रययुः किल ॥ ५१ ॥

सोमात्सङ्गानुकर्षाणां ध्वजिनां सयकृद्यिनाम् ।

स्थानां मेघघोषाणां सहस्राणि दशैव तु ॥ ५२ ॥

रौप्यकाञ्चनकक्षाणां सहस्राण्येकविंशतिः ।

तावत्येव सहस्राणि उत्तरस्यां तथा दिशि ॥ ५३ ॥

आभूमिपाला भोजास्तु सन्ति ज्याकिङ्किणीकिनः ।

आहुः किं चाप्यचन्तिभ्यः स्वसारं ददुरन्धकाः ॥ ५४ ॥

आहुकस्य तु काश्यायां द्वा पुत्रौ सम्यभूवतुः ।
 देवकस्यामवन् पुत्राश्चत्वारस्त्रिदशोपमाः ॥ ५५ ॥
 देववानुपदेवश्च सदेवो देवरक्षितः ॥ ५६ ॥
 कुमार्यः सप्त चास्याय वसुदेवाय ता ददौ ।
 देवकी शान्तिदेवा च सुदेवा देवरक्षिता ॥ ५७ ॥
 धृक्देव्युपदेवी च सुनार्मा चैव सप्तमी ।
 नयोप्रसेनस्य सुतास्तेषां कसस्तु पूर्वजः ॥ ५८ ॥
 न्यप्रोधश्च सुनामा च तथा कङ्क सुभूषणः ।
 राष्ट्रपालोऽथ सुतनुरनावृष्टिस्तु पुष्टिमान् ॥ ५९ ॥
 तेषां सप्तारः पञ्चासन् कम्पा कसयती तथा ।
 सुतनू राष्ट्रपाली च कङ्का चैव वराङ्गना ॥ ६० ॥
 उप्रसेन सहापत्यो व्याप्यातः कुकुरोद्भवः ।
 कुकुराणामिमं वंशं धारयन्नमितीजसाम् ॥ ६१ ॥
 आत्मनो विपुलं वंशं प्रजावानाप्युपाधरः ॥ ६२ ॥

इति श्रीमहा महापुराणे वृष्णिवंशनिरूपणं नाम
 पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

पोडशोऽध्यायः ।

तत्रादौ सत्राजिदुपास्यानर्णनम् ।

लोमहर्षण उवाच ।

भजमानस्य पुत्रोऽथ रथमुख्यो विदूरथ ।
राजाधिदेव शूरस्तु विदूरथसुनोऽभवत् ॥ १ ॥
राजाधिदेवस्य सुता जह्निरे धीर्यवत्तरा ।
दत्तातिदत्तौ घलिनौ शोणाश्च श्वेतवाहन ॥ २ ॥
शमी च दण्डशर्मा च दन्तरात्रुश्च शत्रुजित् ।
श्रवणा च श्रविष्ठा च स्वसारी सम्यभूवतु ॥ ३ ॥
शमिपुत्र प्रतिक्षत्र प्रतिक्षत्रस्य चात्मज ।
स्वयम्भोज स्वयम्भोजाबुहदिक सम्यभूव ह ॥ ४ ॥
तस्य पुत्रा बभूवुर्हि सर्वे भीमपराक्रमा ।
कृतचर्माप्रजस्तेषां शतधन्वा तु मध्यम ॥ ५ ॥
देवान्तश्च नरान्तश्च मिथग्वैतरणश्च य ।
सुदान्तश्चातिदान्तश्च निकाश्य कामदम्भक ॥ ६ ॥
देवस्तस्याभवत् पुत्रो विद्वान् कम्पलवर्हिष ।
असमौजा सुनस्तस्य नासमौजाश्च तावुभौ ॥ ७ ॥
अजातपुत्राय सुतान् प्रददावसमौजसे ।
सुदप्त्रश्च सुचायश्च रुष्ण इत्यन्धका स्मृता ॥ ८ ॥
गान्धारी चैव माद्री च कोण्टुमार्ये बभूवतु ।
गान्धारी जनयामास अनमित्र महाबलम् ॥ ९ ॥

माद्री युधाजित पुत्र ततो वै देवमीदृशम् ।
 अनमित्रममित्राणा जेतारमपराजितम् ॥ १० ॥
 अनमित्रमुतो निन्नो निन्नतो द्वौ चमूगतु ।
 प्रसेनज्वाय सत्राजिच्छत्रुसेनाजितावुर्मा ॥ ११ ॥
 प्रसेनो द्वारवत्या तु निवसन् ये महामणिम् ।
 दिव्य स्यमन्तक नाम स सूर्यादुपलब्धवान् ॥ १२ ॥
 तस्य सत्रानित सूर्यं यथा प्राणसमोऽभवत् ।
 स कदाचिन्निशापाये रथेन रथिना वरः ॥ १३ ॥
 तोयकृन्मप प्रष्टुमुपस्थातु ययौ रथिम् ।
 तस्योपतिष्ठत् सूर्यं विषम्बानग्रत् स्थित ॥ १४ ॥
 विस्पष्टमूर्त्तिमगवान्नेजोमण्डलवान् विभु ।
 अथ राजा विवस्यन्तमुवाच स्थितमग्रत् ॥ १५ ॥
 यथैव व्योम्नि पश्यामि सदा त्वा व्योमिषा पते ।
 नेजोमण्डलिन देव तथैव पुरतः स्थितम् ॥ १६ ॥
 को विशेषोऽस्ति मे त्यक्त सद्योनोपगतस्य वै ।
 एतच्छ्रद्धा तु भगवान्मणिरत्न स्यमन्तकम् ॥ १७ ॥
 म्यकण्ठादवमुच्यथ एकान्ते न्यस्तवान् विभु ।
 ततो विप्रह्वन्त त ददर्श नपतिमन्त्रा ॥ १८ ॥
 प्रीतिमानथ त दृष्ट्वा मुहूर्त्तं कृतवान् कथाम् ।
 तमभिप्रस्थित भूयो विवस्वन्त स सत्रजित् ॥ १९ ॥
 लोकान् मासयसे सर्वान् येन त्व सतत प्रभो ।
 तदेतन्मणिरत्न मे भगवन् दातुमर्हसि ॥ २० ॥

ततः स्यमन्तकमणिं दत्तवान् भास्करस्तदा ।

स तमावध्य नगरीं प्रविशेश महीपतिः ॥ २१ ॥

तं जनाः पथ्यधावन्तः सूर्योऽयं गच्छतीति ह ।

स्थां पुरीं स चिसिष्माय राजा त्वन्तःपुरं तथा ॥ २२ ॥

तं प्रसेनजितं दिव्यं मणिरत्नं स्यमन्तकम् ।

वदौ भ्रात्रे नरपतिः प्रेम्णा सत्राजिदुसम् ॥ २३ ॥

स मणिं स्थन्दते रुक्मं धृष्ण्यन्धकनिवेशने ।

कालघर्षो च पर्जन्यो न च व्याधिभयं ह्यभूत् ॥ २४ ॥

लिप्सां चक्रे प्रसेनस्य मणिरत्ने स्यमन्तके ।

गोविन्दो न च तं लेभे भक्तोऽपि न जहार सः ॥ २५ ॥

कदाचिन्मृगयां यातः प्रसेनस्तेन भूषितः ।

स्यमन्तकहृते सिंहाद्वर्धं प्राप धनेचरात् ॥ २६ ॥

अथ सिंहं प्रधावन्तमृक्षराजो महाबलः ।

निहत्य मणिरत्नं तदादाय प्राविशद्वगुहाम् ॥ २७ ॥

ततो धृष्ण्यन्धकाः कृष्णं प्रसेनधधकारणात् ।

प्रार्थनां तां मणेर्युद्धया सर्वं एव शशङ्किरे ॥ २८ ॥

स शङ्क्यमानो धर्मात्मा भकारी तस्य कर्मणः ।

आहरिष्ये मणिमिति प्रतिज्ञाय धनं ययी ॥ २९ ॥

यत्र प्रसेनो मृगयां व्याचरत्तत्र चाप्यथ ।

प्रसेनस्य पदं गृह्य पुरुषैराप्तकारिभिः ॥ ३० ॥

ऋक्षवन्तं गिरिधरं विन्ध्यं च गिरिमुत्तम् ।

अन्वेपयन् परिभ्रान्तः स वदर्श महामनाः ॥ ३१ ॥

साग्र्यं हतं प्रसेनं तु नाचिन्दत च तन्मणिम् ।
 यय सिंहः प्रमेनस्य शरीरस्याचिदूरतः ॥ ३२ ॥
 ऋक्षेण निहतो दृष्टः पदैर्ऋक्षस्तु मूर्ध्नितः ।
 पदैस्तैरन्विथायाथ गुहामृक्षस्य माघवः ॥ ३३ ॥
 स हि ऋक्षविले धाणीं शुभ्राथ प्रमदेरिताम् ।
 धात्र्या कुमारमादाय सुनं जाम्बवतो द्विजाः ॥ ३४ ॥
 क्रीडपत्न्या च मणिना मा रोदीरित्यधेरिताम् ।

धात्र्युवान् ।

निहः प्रसेनमवधीन् निहो जाम्बवता हतः ।
 सुकुमारक मा रोदीस्तत्र ह्येव स्यमन्तकः ॥ ३५ ॥
 व्यक्तितम्नस्य शन्दस्य तूर्णमेव विलं ययौ ।
 प्रविश्य तत्र भगधांस्तदृक्षविलमञ्जसा ॥ ३६ ॥
 म्यापयित्वा विलङ्कारे यदृष्ट्वाङ्गलिता सह ।
 शार्ङ्गधन्या विलस्थं तु जाम्बवन्तं ददर्श सः ॥ ३७ ॥
 युयुधे धामुदेवन्तु विले जाम्बवता सह ।
 पादुभ्यामेव गोविन्दो दिवसानेकविंशतिम् ॥ ३८ ॥
 प्रविष्टेऽथ विले कृष्णे घलदेवपुरःसराः ।
 पुरीं द्वारवतामेन्य हतं कृष्णं न्यवेदयन् ॥ ३९ ॥
 धामुदेवोऽपि निजित्य जाम्बवन्तं महाबलम् ।
 लेभे जाम्बवतीं कन्यामृक्षरात्रस्य सम्मताम् ॥ ४० ॥
 मणिं स्यमन्तकं चैव जप्राहात्मघिशुद्धये ।
 अनुनीपशरार्त्रं तु निर्ययौ च ततो विलात् ॥ ४१ ॥

उपायादुद्धारकां कृष्णः सविनीतैः पुरःसरैः ।

एवं स मणिराहृत्य विशोध्यात्मानमच्युतः ॥ ४२ ॥

ददौ सत्राजिते तं चै सन्वसारघतसंसदि ।

एवं मिथ्याभिशास्तेन कृष्णेनामित्रघातिना ॥ ४३ ॥

आत्मा विशोधितः पापाद्विनिर्जित्य स्यमन्तकम् ।

सत्राजितो दश त्वासन् माय्यास्तासां शत सुताः ॥ ४४ ॥

ख्यातिमन्तरुत्रयस्तेषामङ्गकारस्तु पूर्वजः ।

धीरो घातपतिश्चैव घसुमेधस्तथैव च ॥ ४५ ॥

कुमाय्यश्वापि तिलो चै दिक्षु ख्याता द्विजोत्तमाः ।

सत्यभामोत्तमा तासां मतिनी च दृढयता ॥ ४६ ॥

तथा प्रस्वापिनी चैव माय्याः कृष्णाय ता ददौ ।

समाय्यो भङ्गकारिस्तु नावेयश्च नरोत्तमौ ॥ ४७ ॥

जहाते गुणसम्पन्नीं विश्रुतीं रूपसम्पदा ।

माद्र्याः पुत्रोऽथ जज्ञेऽथ घृष्णिपुत्रो युधाजितः ॥ ४८ ॥

जहाते तनयीं घृष्णेः श्वफल्कश्चित्रकस्तथा ।

श्वफल्कः काशिराजस्य सुतां माय्यामविन्दन ॥ ४९ ॥

गान्दिनीं नाम तस्याश्च गाः सदा प्रददौ पिता ।

तस्यां जज्ञे महाबाहुः श्रुनवानतिथिप्रियः ॥ ५० ॥

अकूरोऽथ मढामागो जज्ञे विपुलदक्षिणः ।

उपमदुगुस्तथा मदुगुर्मदरश्चारिमर्दन ॥ ५१ ॥

मारिक्षेपस्तयोपेक्ष शत्रुहा चारिमेजयः ।

धर्मभृद्वापि धर्मा च शृध्रमोजान्धकस्तथा ॥ ५२ ॥

आवाहप्रतिवाहौ च सुन्दरी च वराङ्गना ॥ ५३ ॥
 विश्रुताश्वस्य महिषी कन्या चास्य वसुन्धरा ॥ ५४ ॥
 रूपयौवनसम्पन्ना सर्व्वसत्त्वमनोहरा ।
 अमूरैणोप्रसेनायां सुता वै कुलनन्दनी ॥ ५५ ॥
 वसुदेवश्चोपदेवश्च जज्ञाने देववर्चसा ।
 चित्रकस्यामघन् पुत्राः पृथुर्विपृथुरेव च ॥ ५६ ॥
 अश्वप्रोचोऽश्वबाहुश्च सुपाश्वकगघेयर्जा ।
 अरिष्टनेमिश्च सुता धर्मो धर्मभृदेव च ॥ ५७ ॥
 सुबाहुर्बहुबाहुश्च श्रविष्ठाश्रवणे स्त्रिया ।
 इमां मिथ्यामिशस्तिं यः कृष्णम्य समुदाहृतम् ॥ ५८ ॥
 घेद मिथ्यामिशापान्तं न स्पृशन्ति वदाचन ॥ ५९ ॥

इति स्यमन्तकप्रन्यायननिष्पण नाम

षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

सप्तदशोऽध्यायः ।

स्यमन्तकोपाख्यानवर्णनम्

॥ १७ ॥ लोमहर्षण उवाच ।

यत्तु सत्राजिते कृष्णो मणिरत्नं स्यमन्तकम् ।

ददायद्वायुदुवमुर्मोजेन शतघन्तना ॥ १ ॥

सदा हि प्रार्थयामास सत्यमामामनिन्दिताम् ।
 अक्रूरोऽन्तरमन्विष्यन्मणिं चैव स्यमन्तकम् ॥ २ ॥
 सप्राजितं ततो हत्वा शतधन्वा महाबलः ।
 रात्रौ त मणिमादाय तनोऽक्रूराय दत्तवान् ॥ ३ ॥
 अक्रूरस्तु तदा विप्रा रत्नमादाय चोत्तमम् ।
 समयं कारयाञ्चक्रे नायेद्योऽहं त्वयेत्युत ॥ ४ ॥
 धयमभ्युन्म्रपन्स्रगामः कृष्णेन त्वां प्रधर्षितम् ।
 भमाय द्वारका सग्न्या घसे तिष्ठत्यसंशयम् ॥ ५ ॥
 हते पितरि दुःखार्त्ता सत्यमामा मनस्विनी ।
 प्रययौ रथमारुह्य नगरं धारणाद्यतम् ॥ ६ ॥
 सत्यमामा तु तदुवृत्त भोजस्य शतधन्वनः ।
 भर्तुर्निषेध दुष्टार्त्ता पार्श्वस्थाभूष्यवर्त्तयत् ॥ ७ ॥
 पाण्डवानां च दग्धानां हरिः कृत्योदकक्रियाम् ।
 कुल्यार्थं व्यापि पाण्डूनां न्ययोजयत् सारथकिम् ॥ ८ ॥
 ततस्तद्वरितमागम्य द्वारकां मभ्युसूतनः ।
 पूर्वज्ञं दलिनं धीमानिदं धवनमव्रपीत् ॥ ९ ॥

धीरुष्ण उवाच ।

दूतः प्रमेनः मिहेन सप्राजिच्छतधन्वना ।
 स्यमन्तकस्तु मदुगामो तस्य प्रभुरह विभो ॥ १० ॥
 तदारोह रथं शीघ्रं मोक्षं हतया महारथम् ।
 स्यमन्तको महाबाहो भस्मार्कः स भविष्यति ॥ ११ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

तत प्रवृत्ते युद्ध तुमुल भोजगुणयो ।

शतधन्या ततोऽनूर सर्जतोदिशमैक्षत ॥ १० ॥

सरद्धो तापुर्भौ तत्र दृष्ट्वा भोजजनार्त्तना ।

शक्तोऽपि शापाद्भार्दिक्यमनूरो नान्वपद्यत ॥ ११ ॥

अपयाने ततो बुद्धि भोजश्चक्रे भयार्जित ।

योजनाना शत साप्र हृदया प्रत्यपद्यत ॥ १२ ॥

विप्रायाता हृदया नाम शतयोजनगामिनी ।

भोजस्य घडवा विप्रा ययौ कृष्णमयांधयत् ॥ १५ ॥

क्षीणा जरेण हृदयामयन शतयोनने ।

दृष्ट्वा रथस्य स्वा बुद्धि शतधन्यानमर्दयन् ॥ १६ ॥

ततस्तस्या हतायाम्नु ध्रमात् गेडाश्च भो द्विजा ।

समुत्पेतुरथ प्राणा कृष्णो राममथाप्रवीत् ॥ १७ ॥

तिष्ठेह तत्र महाग्राहो दृष्ट्वाऽपि हता मया ।

पद्म्या गन्वा हरिष्यामि मणिरत्न स्यमन्तरूपम् ॥ १८ ॥

पद्म्यामेव ततो गन्वा शतधन्यानमच्युत ।

मिथिलाममितो विप्रा उघान परमात्रविन् ॥ १९ ॥

स्यमन्तरू च नापश्यद्वत्वा भोज महायत्नम् ।

निवृत्त चाप्रवीन् कृष्ण मणि देहीति लाङ्गली ॥ २० ॥

नास्तोति कृष्णज्योताश्च ततो रामो रुयान्वित ।

धिक्शब्दपूर्वमसदृन् प्रन्युधाच जनार्दनम् ॥ २१ ॥

बलराम उवाच ।

भ्रातृत्वान्मर्षयाम्येष स्वस्ति तेऽस्तु ब्रजाम्यहम् ।
 कृत्यं मे द्वारकाया न त्वया न च वृष्णिभिः ॥ २२ ॥
 प्रचिवेश ततो रामो मिथिलामरिर्हृदः ।
 सर्वकामैरुपहृतैर्मिथिलेनाभिपूजितः ॥ २३ ॥
 एतस्मिन्नेव काले तु घमूर्धमतिमतां वरः ।
 नानारूपान् कृत्स्नं सर्वानाजहार निर्गलान् ॥ २४ ॥
 दीक्षामयं ॥ कथंचं रक्षार्थं प्रचिवेश ॥ ।
 स्वमन्तककृते प्राज्ञो गान्दीपुत्रो महायशः ॥ २५ ॥
 अथ रत्नानि चान्यानि धनानि विविधानि च ।
 पट्टिं पर्षाणि धर्मात्मा यज्ञोऽप्येव न्ययोजयत् ॥ २६ ॥
 अमूरयज्ञा इति ते श्रुतास्तस्य महात्मनः ।
 पद्मप्रदक्षिणाः सर्वे सर्वकामप्रदायिनः ॥ २७ ॥
 अथ दुष्योधनो राजा गत्वा स मिथिलां प्रभुः ।
 गदाशिक्षां ततो दिव्यां यत्नद्वेषादवाप्तवान् ॥ २८ ॥
 समप्रसाद्य ततो रामो घृण्यन्धकमहाशयैः ।
 भार्मीतो द्वारकामेव कृष्णेन च महात्मना ॥ २९ ॥
 अमूरध्वजैः सार्द्धमायातः पुदगर्धमः ।
 हस्ता सत्राजिनं सुप्तं सदपन्धुं महायत्नः ॥ ३० ॥
 प्रातिभेदमयात्कृष्णस्तमुपेक्षितवांस्तदा ।
 धपवाने तदादूरे नापश्यत्पापशामनः ॥ ३१ ॥

अष्टादशोऽध्यायः ।

तत्रादौ भुवनकोशद्वीपवर्णनम्

मुनय ऊचुः ।

महो सुमहदाख्यानं भवता परिकीर्तितम् ।
भारतानां च सर्वेषां पार्थिवानां तथैव च ॥ १ ॥
देवानां दानवानां च गन्धर्वोरगरक्षसाम् ।
दैत्यानामथ सिद्धानां गुह्यकानां तथैव च ॥ २ ॥
भत्यद्विभुतानि कर्माणि विक्रमा धर्मनिश्चयाः ।
विधिधात्र कथा दिव्या जन्म चाग्र्यमनुत्तमम् ॥ ३ ॥
सृष्टिः प्रजापतेः सम्यक्स्वया प्रोक्ता महामते ।
प्रजापतीनां सर्वेषां गुह्यकाप्सरसार्तथा ॥ ४ ॥
स्थायरं जङ्गमं सर्वमुत्पन्नं विविधं जगत् ।
त्वया प्रोक्तं महाभाग श्रुत्वा चैतन्मनोहरम् ॥ ५ ॥
कथितं पुण्यफलदं पुराणं श्लक्ष्णया गिरा ।
मनःकर्णसुखं सम्यक् प्रीणात्यमृतसम्मितम् ॥ ६ ॥
इदानीं श्रोतुमिच्छामः सकलं मण्डलं भुवः ।
पकुमर्हसि सर्वज्ञ परं कीर्तुहलं हि नः ॥ ७ ॥
यापन्तः सागरा द्वीपास्तथा घर्षाणि एव्यताः ।
वनानि सरितः पुण्यदेवादीनां महामते ॥ ८ ॥
यत्प्रमाणमिदं सर्वं यदाधारं यदात्मकम् ।
संस्थानमस्य जगतो यथावद्वकुमर्हसि ॥ ९ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

मुनयः श्रूयतामेतत् संश्लेषाद्वदनो मम ।
 नाम्न्य धर्षशनेनापि वक्तुं शम्याऽतिविस्तरः ॥ १० ॥
 जम्बूद्वीपाहर्षो द्वीपो शाकमलञ्चापरो द्विजाः ।
 कुन्दाः कौञ्चस्तथा शाक पुष्करञ्चैव सततम् ॥ ११ ॥
 एते द्वीपाः समुद्रेस्तु सततमभिरावृताः ।
 लवणेक्षुमुत्तमसर्पिर्दधिदुग्धजलैः समम् ॥ १२ ॥
 जम्बूद्वीपः समस्तानामेतेषा मथ्यसंस्थितः ।
 तस्यापि मध्ये विप्रेन्द्रा मेरु कनकपर्वतः ॥ १३ ॥
 चतुष्प्रीतिसाहस्रैर्योजनैस्तम्य चाञ्छ्रय ।
 प्रविष्टः षोडशाधस्ताद्द्वारिशांश्चर्मि विस्तृत ॥ १४ ॥
 मृदे षोडशासाहस्रैर्विस्तारस्तम्य सत्यंतः ।
 भूप्रम्यास्य शैलोऽसौ कर्णिकाकारसंस्थितः ॥ १५ ॥
 हिमवान् हेमकूटश्च निगधस्तम्य दक्षिणे ।
 नीलः प्रेतश्च शृङ्गा च उत्तरे धर्षवर्त्यता ॥ १६ ॥
 लक्षप्रमाणो द्वी मध्ये दशार्हनास्तथापरे ।
 सहस्रद्वितयोच्छायास्तावद्विस्तारिणश्च ते ॥ १७ ॥
 मारुतं प्रथमं धर्षं ततः किंपुरुषं स्मृतम् ।
 हरिषं तथैवान्यम्मेरोर्दक्षिणतो द्विजाः ॥ १८ ॥
 रम्यकं चोत्तरं धर्षं तस्यैव तु हिरण्यम् ।
 उत्तराः कुर्यञ्चैव यथा वै मारुत तथा ॥ १९ ॥

नवसाहस्रमेकैकमेतेषा द्विजसत्तमा ।
 इलावृत च तन्ध्ये सौवर्णो मेरुच्छिद्रत ॥ २० ॥
 मेरोश्चतुर्दिश तत्र नवसाहस्रविस्तृतम् ।
 इलावृत महाभागाश्चत्वारश्चात्र पर्वता ॥ २१ ॥
 विष्कम्भा चितता मेरोर्योजनायुतविस्तृता ।
 पूर्व्येण मन्दरो नाम दक्षिणे गन्धमादन ॥ २२ ॥
 विपुल पश्चिमे पार्श्वे सुपार्श्वश्चोत्तरे स्थित ।
 कदम्बस्तैषु जम्बूश्च पिप्पलो षट एव च ॥ २३ ॥
 एकादशशतायामा पादपा गिरिकेतव ।
 जम्बूद्वीपस्य सा जम्बूर्नामहेतुर्द्विजोत्तमा ॥ २४ ॥
 महागजप्रमाणानि जम्ब्यास्तस्या फलानि वै ।
 पतन्ति भूभृत पृष्ठे शीर्यमाणानि सर्व्वत ॥ २५ ॥
 रसेन तेषा विख्याता तत्र जम्बूनदीति वै ।
 न खेदो न च दौर्गन्ध्य न जरा नेन्द्रियक्षय ॥ २६ ॥
 तत्पानस्वस्थमनसा जनाना तत्र जायते ॥ २७ ॥
 तीरमृत्तद्रस प्राप्य मुखषायुचिशोपिता ।
 जाम्बूनदाख्य भवति सुवर्णं सिद्धभूषणम् ॥ २८ ॥
 भद्राश्च पूर्व्वतो मेरो केतुमालञ्च पश्चिमे ।
 धर्पे द्वे तु मुनिश्रेष्ठास्तयोर्मध्ये त्विलावृतम् ॥ २९ ॥
 यन चैत्ररथ पूर्व्वे दक्षिणे गन्धमादनम् ।
 चैभ्राज पश्चिमे तद्गदुत्तरे नन्दन स्मृतम् ॥ ३० ॥
 अरुणोद महामद्रमसितोदं समानसम् ।
 सरास्येतानि चत्वारि देवमोग्यानि सर्व्वदा ॥ ३१ ॥

शान्तयाञ्चक्रुः कुररी माल्यवास्तथा ।
 त्रैकडकप्रमुखा मेरो पूर्वेत केसराचला ॥ ३२ ॥
 त्रिकूटः शिशिरञ्चैत्र पतद्गो रुचक्रस्तथा ।
 निपधादयो दक्षिणतस्तस्य केमरपर्यता ॥ ३३ ॥
 गिरिचास सर्वैर्दूर्य कपिलो गन्धमादन ।
 जाराधिप्रमुखास्तद्वत् पश्चिमे केमराचला ॥ ३४ ॥
 मेरोरनन्तरास्ते च जटगटिष्वधम्विता ।
 शङ्खकूटीऽथ ऋषभो हसो नागमस्तथापरा ॥ ३५ ॥
 कालज्वराद्याश्च तथा उत्तरे केसराचला ।
 चतुर्दश सहस्राणि योजनाना महापुरी ॥ ३६ ॥
 मेरोरपरि विप्रेन्द्रा ग्रहण कथिता दिवि ।
 तस्या समन्ततश्चाष्टी दिशामु विदिशामु च ॥ ३७ ॥
 इन्द्रादिलोरुपालानां प्रयाता प्रवरा पुर ।
 विष्णुपादविनिष्क्रान्ता प्लावयन्तीन्दुमण्डलम् ॥ ३८ ॥
 समन्ताद्ग्रहण पुण्यां गङ्गा पतति त्रै दिवि ।
 सा तत्र पतिना दिशु चतुर्धा प्रम्यपद्यत ॥ ३९ ॥
 सीता चालकनन्दा च चतुर्मन्त्रा च धै प्रमान् ।
 पूर्व्येण सीता शैलाश्च शैव यान्त्यन्तरिक्षगा ॥ ४० ॥
 ततश्च पूर्व्यवर्षेण भद्राश्वेनेति सार्णयम् ।
 तथैवालकनन्दा च दक्षिणेनैत्य भारतम् ॥ ४१ ॥
 पयाति सागर भूत्या मप्तमेदा द्विजोत्तमा ।
 चतुश्च पश्चिमगिरीनतीत्य सकलाम्बत ॥ ४२ ॥

पश्चिमं केतुमालाख्यं धर्ममन्वेति सार्णवम् ।
 भद्रा तथोत्तरगिरीनुत्तरांश्च तथा कुरून् ॥ ४३ ॥
 अनीत्योत्तरमग्मोधिं समम्येति द्विजोत्तमाः ।
 आनीलनिपधायामौ माल्यघट्टगन्धमादनी ॥ ४४ ॥
 तयोर्मध्यगतो मेरुः कर्णिकाकारसस्थितः ।
 भारताः केतुमालाश्च मद्राश्च कुरुवस्तथा ॥ ४५ ॥
 पत्राणि लोकशैलाख्य मर्यादाशैलधाहृतः ।
 जठरो देवटकूश्च मर्यादापर्व्वतायुमी ॥ ४६ ॥
 तौ दक्षिणोत्तरायामावानीलनिपधायतौ ।
 गन्धमादनकैलासौ पूर्व्वपश्चात्तु तायुमी ॥ ४७ ॥
 अशीतिपोजनायामापर्णचान्तर्व्यवस्थितौ ।
 निपधः पारियात्रश्च मर्यादापर्व्वतायुमी ॥ ४८ ॥
 तौ दक्षिणोत्तरारामावानीलनिपधायतौ ।
 मेरोः पश्चिमदिग्भागो यथापूङ्गोतथा स्थितौ ॥ ४९ ॥
 त्रिशृङ्गो जारुधिर्येव उत्तरी धर्मपर्व्वतौ ।
 पूर्व्वपश्चायतावेतावर्णचान्तर्व्यवस्थितौ ॥ ५० ॥
 इत्येते हि मया प्रोक्ता मर्यादापर्व्वताद्विजाः ।
 जठरावस्थिता मेरोव्यपा द्वौ द्वौ चतुर्दिशम् ॥ ५१ ॥
 मेरोश्चतुर्दिशं ये तु प्रोक्ताः केसरपर्व्वताः ।
 सीतान्ताद्या द्विजास्तेषामतीव हि मनोहराः ॥ ५२ ॥
 शैलानामन्तरद्रोण्यः सिद्धचारणसेविताः ।
 सुरग्याणि तथा तासु काननानि पुराणि च ॥ ५३ ॥

लक्ष्मीविष्णवशिसूर्य्येन्द्रदेवानां मुनिसत्तमाः ।
 तास्वायतनवर्षाणि जुष्टानि नरकिन्नरैः ॥ ५४ ॥
 गन्धर्व्वयक्षरक्षांसि तथा दैतेयदानवा ।
 क्रीडन्ति तासु रम्यासु शैलश्रेणीष्वहर्निशम् ॥ ५५ ॥
 भौमा ह्येते स्मृता सर्गा धर्मिणामालया द्विजाः ।
 नेतेषु पापकर्तारो यान्ति जन्मशतैरपि ॥ ५६ ॥
 भद्राश्चे भगवान् विष्णुरास्ते हयशिरा द्विजाः ।
 पाराहः केतुमाले तु भारते कूर्मरूपधृक् ॥ ५७ ॥
 मत्स्यरूपश्च गोविन्दः कुरुष्वास्ते सनातनः ।
 विश्वरूपेण सर्व्वत्र सद्यः सर्व्वेश्वरो हरिः ॥ ५८ ॥
 सर्व्वस्याधारभूतोऽसौ द्विजावास्तेऽतिलात्मकः ।
 यानि किम्पुरुषाद्यानि वर्षाण्यष्टौ द्विजोत्तमाः ॥ ५९ ॥
 न तेषु शोकातायासो नोद्वेग शुद्धयादिकम् ।
 सुस्थाः प्रजा निरातङ्का सर्व्वदुःखविचर्जिता ॥ ६० ॥
 दशद्वादशवर्षाणां सहस्राणि स्थिरायुषः ।
 नैतेषु भौमान्यग्यानि श्रुतिपासादिनि द्विजाः ॥ ६१ ॥
 एतन्नेतादिका नैव तेषु स्थानेषु कल्पता ।
 सर्व्वेष्वेतेषु वर्षेषु सप्त सप्त कुलाचलाः ॥ ६२ ॥
 नद्यश्च शतशस्तेभ्यः प्रसृता या द्विजोत्तमाः ॥
 इति श्रीब्राह्मे महापुराणे भुवनकोशद्वीपवर्णनं
 नामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

एकोनविंशोऽध्यायः ।

जम्बूद्वीपवर्णनम्

लोमहर्षण उवाच ।

उत्तरेण समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणे ।
 घर्षं तद्वारत नाम भारती यत्र सन्तति ॥ १ ॥
 नवयोजनसाहस्रो विस्तारश्च द्विजात्तमा ।
 कर्मभूमिरिय स्वर्गमपवर्गञ्च इच्छताम् ॥ २ ॥
 महेन्द्रो मलय सह्य शुक्तिमानृक्षपर्जत ।
 विन्ध्यश्च पारियात्रश्च सप्तात्र कुलपर्जता ॥
 अतः सप्तपारतेऽगारो मुक्तिरस्मात् प्रयाति नैः ।
 तिर्य्यक्कृत्स्व नरक चापि यान्त्यत पुर्या द्विजा ॥ ३ ॥
 इतः स्वर्गश्च मोक्षश्च मध्य चान्ते च गच्छति ।
 त खल्वन्यत्र मर्यानां कर्मभूमौ विधीयते ॥ ४ ॥
 भारतस्यास्य घर्षस्य नव भेदाग्निशामय ।
 इन्द्रद्वीप कसेरुमास्तान्नपणो गभस्तिमान् ॥ ५ ॥
 नागद्वीपस्तथा सीम्यो गन्धर्वस्त्वथ वारण ।
 अथ तु नवमस्ते ॥ ६ ॥
 योजनाना सह ॥ ७ ॥
 पूर्वं किराताः

शतद्रुच द्रभागाद्या हिमवत्पादनि सूता ।
 वेदस्मृतिमुप्राञ्चान्या पारियात्रोद्भवा मुने ॥ १० ॥
 नर्मदासुरसाद्याश्च नद्यो विन्ध्यविनि सूता ।
 तापापयोष्णीनिर्त्रिन्ध्याकावेराग्रमुखा नदी ॥ ११ ॥
 ऋक्षपादोद्भवा ह्येता श्रुता पाप हरन्ति या ।
 गोदावरामीमरुर्ध्वारुष्णात्रेण्यादिकास्तथा ॥ १२ ॥
 सह्यपादोद्भवा नद्य स्मृता पापमयापहा ।
 हनमालाताम्रपर्णीप्रमुखा मलयोद्भवा ॥ १३ ॥
 त्रिसन्ध्यऋषिकुट्याद्या महेन्द्रप्रमवा स्मृता ।
 ऋषिकुट्यानुमाराद्या शुक्तिमत्पादसम्भवा ॥ १४ ॥
 व्यासा नद्युपनद्यश्च सन्त्यन्यास्तु सहस्रश ।
 तास्मिमे कुटपञ्चालमध्यदेशादयो जना ॥ १५ ॥
 पूर्वदेशादिकाश्चैव कामरूपनिवासिन ।
 प्रोक्ता कलिङ्गा मगधा दाक्षिणात्याश्च स वंश ॥ १६ ॥
 तयापरान्त्या सीराप्त्रा शूद्राभीरास्तथाऽन्बुदा ।
 मादका मालयाश्चैव पारियात्रनिवासिन ॥ १७ ॥
 सौवारा सैन्धवापत्रा शात्वा शाकलयासिन ।
 मद्रारामास्तथाम्बष्टा पारसीकादयस्तथा ॥ १८ ॥
 व्यासा पिबन्ति सलिल वसन्ति सरिता सदा ।
 समोपेता महाभागा हृष्टपुण्ड्रनाकुला ॥ १९ ॥
 वसन्ति भारते वर्षे युगान्यत्र महामुने ।
 हन त्रेता द्वापर च कलिश्चाप्यत्र न क्वचित् ॥ २० ॥

एकोनविंशोऽध्यायः ।

जम्बूद्वीपवर्णनम्

लोमहर्षण उवाच ।

उत्तरेण समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणे ।
वर्षं तद्वारत्तं नाम भारती यत्र सन्ततिः ॥ १ ॥
नवयोजनसाहस्रो विस्तारश्च द्विजात्तमाः ।
कर्मभूमिरियं स्वर्गमपवर्गञ्च इच्छताम् ॥ २ ॥
महेन्द्रो मलयः सह्यः शुक्तिमानृक्षपर्वतः ।
धिन्ध्यश्च पारियात्रश्च सप्तात्र कुलपर्वताः ॥ ३ ॥
अतः सम्प्राप्यते स्वर्गो मुक्तिमस्मात् प्रयति वै ।
तिर्य्यक्कृत्यं नरकं चापि यान्त्यतः पुरुषा द्विजाः ॥ ४ ॥
इतः स्वर्गश्च मोक्षश्च मध्यं चान्ते च गच्छति ।
न खल्वन्यत्र मर्त्यानां कर्मभूमौ विधीयते ॥ ५ ॥
भारतस्यास्य वर्णस्य नव भेदाग्निशामय ।
इन्द्रद्वीपः कसेरुमांस्ताम्रपणो गभस्तिमान् ॥ ६ ॥
नागद्वीपस्तथा सौम्यो गन्धर्व्वस्तथ चारुणः ।
अयं ॥ नवमस्तेषां द्वीपः सागरसंवृतः ॥ ७ ॥
योजनानां सहस्रं च द्वीपोऽयंदक्षिणोत्तरात् ।
पूर्व्वे किरातास्तिष्ठन्ति पश्चिमे यवनाः स्थिताः ॥ ८ ॥
ग्राहणाः क्षत्रिया वैश्या मध्ये शूद्राश्च भागशः ।
इज्यायुद्धयजिज्यायवृत्तिमन्तो व्यवस्थिताः ॥ ९ ॥

गनद्रुचन्द्रमागाद्या हिमवत्पादनि सूताः ।
 वेदस्मृतिमुखाश्चान्याः पारियात्रोद्भवा मुने ॥ १० ॥
 नर्मदासुरसाद्याश्च नद्यो विन्ध्यविनिःसृताः ।
 तार्पीपयोष्णीनिध्विन्ध्याकावेरीप्रमुखा नदीः ॥ ११ ॥
 ऋक्षपादोद्भवा होताः ध्रुताः पापं हरन्ति याः ।
 गोदावरीभीमरथीरूष्णाविण्यादिकास्तथा ॥ १२ ॥
 सह्यपादोद्भवा नद्यः स्मृताः पापमयापहाः ।
 रुमालाताम्रपर्णीप्रमुखा मलयोद्भवाः ॥ १३ ॥
 त्रिसन्ध्यऋषिकुल्याद्याः महेन्द्रप्रमवाः स्मृताः ।
 ऋषिकुल्याकुमाराद्याः शुक्तिमत्पादसम्भवाः ॥ १४ ॥
 आसां नद्युपनद्यश्च सन्त्यन्यास्तु सहस्रशः ।
 ताम्बिमे कुरपञ्चालमध्यदेशादयो जनाः ॥ १५ ॥
 पूर्व्यदेशादिकाश्चैव कामरूपनिवासिनः ।
 प्रोक्ताः कलिङ्गा मगधा दक्षिणात्याश्च सर्व्वशः ॥ १६ ॥
 तथापरान्त्याः सौराष्ट्राः शूद्राभीरास्तथाऽर्घुन्दाः ।
 मादका मालवाश्चैव पारियात्रनिवासिनः ॥ १७ ॥
 सौवीराः सैन्धवापन्नाः शाल्वाः शाकलवासिनः ।
 मद्रारामाम्तयाम्बुष्टाः पारसीकादयस्तथा ॥ १८ ॥
 आसां पियन्ति सलिलं वमन्ति सरितां सदा ।
 समोपेता महाभागा हृष्टपुष्टजनाकुलाः ॥ १९ ॥
 पसन्ति भारते वर्षे युगान्यत्र महामुने ।
 कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चाप्यत्र न क्वचित् ॥ २० ॥

तपस्तप्यन्ति यतयो जुहुते चात्र यज्जिनः ।

दानानि चात्र दीयन्ते परलोकार्यमादरात् ॥ २१ ॥

पूरुषैर्यज्ञपुरुषो जम्बूद्वीपे सदेज्यते ।

यज्ञैर्यज्ञमयो विष्णुरन्यद्द्वीपेषु चान्यथा ॥ २२ ॥

अत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बूद्वीपे महामुने ।

यतो हि कर्मभूरेषा यतोऽन्या भोगभूमयः ॥ २३ ॥

अत्र जन्मसहस्राणां सहस्रैरपि सत्तम ।

कदाचिल्लभते जन्तुर्मानुष्यं पुण्यसंक्षयात् ॥ २४ ॥

गायन्ति देवाः किल गीतकानि,

धन्यास्तु ये भारतभूमिभागे ।

स्यर्गापघर्गास्पदहेतुभूने,

भवन्ति भूयः पुर्या मनुष्याः ॥ २५ ॥

कर्मार्ण्यसंकल्पिततत्फलानि,

सन्यस्य विष्णो परमात्मरूपे ।

अपाप्य तां कर्ममहीमनन्ते,

तस्मिँल्लयं ये दधमग्नाः प्रयान्ति ॥ २६ ॥

जानीम नो तत्तद्यं पिलीने,

स्यर्गप्रदे कर्मणि देदयन्धम् ।

प्राप्स्यन्ति धन्याः पालु ते मनुष्या,

ये भारतेनेन्द्रियविप्रदीनाः ॥ २७ ॥

नपपपञ्च भो पित्रा जम्बूद्वीपमिदं मया ।

सदायोजनविस्तारं संशेषात् कथितं त्रिजाः ॥ २८ ॥

जम्बूद्वीप समावृत्य लक्षयोजनविस्तर ।

मो द्विजा चलयाकार स्थित क्षारोदधिर्गहि ॥ १६ ॥

इति श्रीब्राह्म महापुराणे जम्बूद्वीपनिरूपण

नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

विंशोऽध्यायः ।

जम्बूद्वीपवर्णनम्

लोमहर्षण उवाच ।

क्षारोदेन यथा द्वीपो जम्बूतन्त्रोऽभिरेणित ।

सत्रेष्ट्य क्षारमुदधि प्लक्षद्वापस्तथा स्थित ॥ १ ॥

जम्बूद्वीपस्य विस्तारः शतसाहस्रसंमितः ।

स एव द्विगुणो विप्रा प्लक्षद्वापेऽप्युदाहृतः ॥ २ ॥

सप्त मेघातिथेः पुत्रा प्लक्षद्वापेश्वरस्य वै ।

श्रेष्ठ शान्तमयो नाम शिशिरस्तदनन्तरम् ॥ ३ ॥

सुषोदयस्तथानन्द शिख श्लेष्मक एव च ।

ध्रुवश्च सप्तमस्तेषां प्लक्षद्वापेऽग्रा हि ते ॥ ४ ॥

पूर्व्यं शान्तमयं चर्पं शिशिरं सुखदं तथा ।

आनन्दश्च शिखञ्चैव श्लेष्मकं ध्रुवमेव च ॥ ५ ॥

मर्ष्यादाकारकास्तेषां तथान्ये चर्पपर्वताः ।

सप्तैव तेषां नामानि ऋणुः मुनिसत्तमा ॥ ६ ॥

गोमेदश्चैव चन्द्रश्च नारदो दुन्दुमिस्तथा ।
 सोमकः सुमनाः शैलो वैभ्राजश्चैव सप्तमः ॥ ७ ॥
 घर्पाचलेषु रम्येषु घर्षेष्चेतेषु चानघाः ।
 घसन्ति देवगन्धर्वसहिताः सहितं प्रजाः ॥ ८ ॥
 तेषु पुण्या जनपदा वीरा न म्रियते जनः ।
 नाधयो व्याधयो वापि सर्वकालसुखं हि तत् ॥ ९ ॥
 तेषां नद्यश्च सप्तैव घर्षाणान्तु समुद्रगाः ।
 नामतस्ताः प्रवक्ष्यामि श्रुताः पापं हरन्ति याः ॥ १० ॥
 अनुतप्ता शिखा चैव विप्राशा त्रिदिवा क्रमुः ।
 अमृता सुकृता चैव सप्तैतास्तत्र निम्नगाः ॥ ११ ॥
 एते शैलास्तथा नद्यः प्रधानाः कथिता द्विजाः ।
 क्षुद्रनद्यस्तथा शैलास्तत्र सन्ति सहस्रशः ॥ १२ ॥
 ताः पिबन्ति सदा हृष्टा नदीर्जनपदास्तु ते ।
 अषत्पिणी नदी तेषां न चैषोत्सर्पिणी द्विजाः ॥ १३ ॥
 न तेऽप्यस्ति युगावस्था तेषु स्थानेषु सप्तपु ।
 त्रेतायुगसमः कालः सर्वदैव द्विजोत्तमाः ॥ १४ ॥
 प्लक्षद्वीपादिके विप्राः शाकद्वीपान्तिकेषु वै ।
 पञ्चवर्षसहस्राणि जना जीवन्त्यनामयाः ॥ १५ ॥
 धर्मश्चतुर्विधस्तेषु वर्णाश्रमविभागजः ।
 घर्णाश्च तत्र चत्वारस्तान् घृधाः प्रवक्ष्यामि यः ॥ १६ ॥
 आर्यकाः पुरघश्चैव विविधा माघिनश्च ये ।
 विप्रक्षत्रियपैश्यास्ते शूद्राश्च मुनिसत्तमाः ॥ १७ ॥

जम्बूद्वीपप्रमाणन्तु तन्मये सुमहातरुः ।

प्लक्षस्तन्नामसंज्ञोऽयं प्लक्षद्वीपो द्विजोत्तमाः ॥ १८ ॥

इज्यते तत्र भगवास्तैर्वर्णैराय्यकादिभिः ।

सौमरूपी जगत्पृष्ठा सर्व्व, सर्व्वेश्वरो हरिः ॥ १९ ॥

प्लक्षद्वीपप्रमाणेन प्लक्षद्वीपः समावृतः ।

तथैवेश्वरसोदेन परिवेषानुकारिणा ॥ २० ॥

इत्येतद् द्वीपो मुनिश्रेष्ठाः प्लक्षद्वीप उदाहृतः ।

संक्षेपेण मया भूयः शाल्मलं तं नियोधत ॥ २१ ॥

शाल्मलस्येश्वरो धीरो घण्ट्यास्तत्सुना द्विजाः ।

तेषान्तु नाम सन्नानि सप्त वर्षाणि तानि वै ॥ २२ ॥

श्वेतोऽथ हरितश्चैव जीमृतो गेहितस्तथा ।

वैद्युतो मानसश्चैव सुप्रभश्च द्विजोत्तमाः ॥ २३ ॥

शाल्मलश्च समुद्रोऽसौ द्वीपेनेश्वरसोदकः ।

विस्ताराद्द्विगुणनाथ सर्व्वतः सवृतः स्थितः ॥ २४ ॥

तत्रापि पर्व्वताः सप्त विज्ञेया रत्नयोनयः ।

वर्षामियञ्जकास्ते तु तथा सप्तैव निम्नगाः ॥ २५ ॥

कुमुदश्चोन्नतश्चैव तृतीयस्तु बलाहकः ।

द्रोणो यत्र मर्द्दापध्यः स चतुर्थो महोधरः ॥ २६ ॥

कङ्कस्तु पञ्चमः पष्ठो महिषः सप्तमस्तथा ।

करुदुमान् पर्व्वतवरः सरिन्नामान्यतो द्विजाः ॥ २७ ॥

श्रोणी तोया चितृष्णा च चन्द्रा शुभ्रा विमोचनी ।

निवृत्तिः सप्तमी तासां स्मृतास्ताः पापशान्तिदाः ॥ २८ ॥

श्वेतञ्च लोहितञ्चैव जीमूतं हरितं तथा ।

वैद्युतं मानसञ्चैव सुप्रभं नाम सप्तमम् ॥ २६ ॥

सप्तैतानि तु घर्षाणि चातुर्व्वर्ण्ययुतानि च ।

घर्षाश्च शाल्मले ये च घसन्त्येषु द्विजोत्तमाः ॥ २७ ॥

कपिलाश्चारुणाः पीताः कृष्णाश्चैव पृथक् पृथक् ।

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्चैव यजन्ति तम् ॥ २८ ॥

भगवन्तं समस्तस्य विष्णुमात्मानमव्ययम् ।

घायुभूतं मन्त्रश्रेष्ठैर्यज्वानो यज्ञसंस्थितम् ॥ २९ ॥

देवानामत्र साक्षिभ्यमतीव सुमनोहरैः ।

शाल्मलिश्च महावृक्षो नामनिवृत्तिकारकः ॥ ३० ॥

एष द्वीपः समुद्रेण सुरोदेन समावृतः ।

विस्ताराच्छाल्मलेश्चैव समेन तु समन्ततः ॥ ३१ ॥

सुरोदणः परिवृतः कुशद्वीपेण सध्वजः ।

शाल्मलस्य तु विस्तारादुद्विगुणेन समन्ततः ॥ ३२ ॥

ज्योतिष्मतः कुशद्वीपे ऋणुर्ध्वं तस्य पुत्रकान् ।

उद्विदो येणुमांश्चैव स्वैरथो रग्धनो धृतिः ॥ ३३ ॥

प्रभाफरोऽथ कपिलस्तन्नाम्ना धर्षयदतिः ।

तस्यां घसन्ति मनुजैः सद देतेयदानयाः ॥ ३४ ॥

तथैव देवगन्धर्षा यक्षकिम्पुण्यादयः ।

घर्षास्तत्रापि चत्वारो निजानुष्ठानतत्पराः ॥ ३५ ॥

दमिनः शुष्मिणः वनेहा मान्यदायश्च द्विजोत्तमाः ।

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्चानुक्रमोदिताः ॥ ३६ ॥

यथोक्तकर्मकर्तृत्वात् स्वाधिकारक्षयाय ते ।
 तत्र ते तु कुशाद्वीपे ब्रह्मरूपं जनार्दनम् ॥ ४० ॥
 यजन्तः क्षपयन्त्यग्रमधिकारफलप्रदम् ।
 विद्रुमो हेमशैलश्च द्युतिमान् पुष्टिमांस्तथा ॥ ४१ ॥
 कुशेशयो हरिश्चैव सप्तमो मन्दराचलः ।
 वर्षाचलाम्बु सप्तैते द्वीपे तत्र द्विजोत्तमाः ॥ ४२ ॥
 नद्यश्च सप्त तासां तु वक्ष्ये नामान्यनुक्रमात् ।
 धृतपापा शिवा चैव पवित्रा सम्प्रतिस्तथा ॥ ४३ ॥
 विद्युदम्भो मही चान्या सर्व्वपापहरास्त्विमाः ।
 वन्याः सहस्रशस्तत्र क्षुद्रनद्यस्तथाचलाः ॥ ४४ ॥
 कुशाद्वीपे कुशस्तम्यः संज्ञया तस्य तत्समृतम् ।
 तत्प्रमाणेन स द्वीपो घृतोद्रेन समावृतः ॥ ४५ ॥
 घृतोदश्च समुद्रो वै कौञ्चद्वीपेन सवृतः ।
 कौञ्चद्वीपो मुनिश्रेष्ठाः ध्रूयता चापरो महान् ॥ ४६ ॥
 कुशाद्रोपस्य विस्ताराद्द्विगुणो यस्य विस्तरः ।
 कौञ्चद्वीपे द्युतिमतः पुराः सप्त महात्मनः ॥ ४७ ॥
 तत्रामानि च वर्षाणि तेषां चक्रे महामनाः ।
 कुशागो मन्दगण्डोष्णः पीवरोऽध्वान्धकारकः ॥ ४८ ॥
 मुनिश्च दुन्दुमिश्चैव सप्तैते तत्सुता द्विजाः ।
 तत्रापि देवगन्धर्व्वसेविताः सुमनोरमाः ॥ ४९ ॥
 वर्षाचला मुनिश्रेष्ठास्तेषां नामानि मो द्विजाः ।
 कौञ्चश्च चामनश्चैव तृतीयश्चान्धकारकः ॥ ५० ॥

देवव्रतो धमश्चैव तथान्य पुण्डरीकवान् ।
 दुन्दुभिश्च महाशैला द्विगुणास्ते परस्परम् ॥ ५१ ॥
 द्वापाद्द्वोपेषु ये शैलान्तथा द्वीपानि ते तथा ।
 घर्षेप्येतेषु रम्येषु वर्णशैलघरेषु च ॥ ५२ ॥
 नियसन्ति निरातङ्का सह देशगणैः प्रजा ।
 पुष्कला पुष्करा धन्यास्ते रयाताश्च द्विजोत्तमा ॥ ५३ ॥
 ब्राह्मणा क्षत्रिया वैश्या शूद्राश्चानुक्रमोदिता ।
 तत्र नद्यो मुनिश्चेष्टा या पिर्यन्ति तु ते सदा ॥ ५४ ॥
 सप्त प्रधाना शतशतशान्या क्षुद्रनिम्नगा ।
 गौरी कुमुदती चैव सन्ध्या रात्रिर्मनोजया ॥ ५५ ॥
 रयातिश्च पुण्डरीका न सप्तैता घर्षनिम्नगा ।
 तत्रापि घर्षैर्मगवान् पुष्कराघैर्जैर्नार्दन ॥ ५६ ॥
 ध्यानयोगै रद्रूप इत्यने यज्ञसन्निधौ ।
 वीशद्वार समुद्रेण दाधमण्डोदयेन तु ॥ ५७ ॥
 भावृत मर्त्येन वीशद्वारपनु येन मानत ।

तत्रापि पर्वताः सप्त वर्षविच्छेदकारकाः ।
 पूर्वस्तत्रोदयगिरिर्जलधारस्तथापरः ॥ ६२ ॥
 तथा रैवतक्रः श्यामस्तथैवाम्मोगिरिद्विजाः ।
 आस्तिकेयस्तथा रम्यः केसरी पर्वतोत्तमः ॥ ६३ ॥
 शाकध्वज महावृक्षः सिद्धगन्धर्वसेवितः ।
 यत्पत्रचातसम्पर्शाद्वाहादो जायते परः ॥ ६४ ॥
 तत्र पुण्या जनपदाश्चातुर्यर्ण्यसमन्विताः ।
 निषसन्ति महात्मानो निरातङ्गा निरामयाः ॥ ६५ ॥
 नद्यश्चात्र महापुण्याः सर्वपापमयापहाः ।
 सुकुमारी कुमारी च नलिनी रेणुका च या ॥ ६६ ॥
 इक्षुध्व धेनुका चैव गमस्ती सप्तमी तथा ।
 बन्पास्त्ययुतशस्तत्र क्षुद्रनद्यो द्विजोत्तमाः ॥ ६७ ॥
 महीधरास्तथा सन्ति शतशोऽथ सहस्रशः ।
 ताः पिबन्ति मुदा युक्ता जलदादिषु ये स्थिताः ॥ ५८ ॥
 वर्षेषु ये जनपदाश्चातुर्यार्ण्यसमन्विताः ।
 नद्यश्चात्र महापुण्याः स्वर्गादभ्येत्य मेदिनीम् ॥ ६९ ॥
 धर्महानिर्न तेष्वस्ति न संहर्षो न शुक् तथा ।
 मर्ष्यादाव्युत्क्रमश्चापि तेषु देशेषु सप्तसु ॥ ७० ॥
 मगाश्च मागधाश्चैव मानसा मन्दगास्तथा ।
 मगा ब्राह्मणभूयिष्ठा मागधाः क्षत्रियाम्नु ते ॥ ७१ ॥
 वैष्णवास्त मानसास्तेषां शूद्रा ज्ञेयास्तु मन्दगाः ।
 शाकद्वीपे स्थितैर्विष्णुः सूर्यरूपधरो हरिः ॥ ७२ ॥

यथोक्तैरिज्यते सम्यक्कर्ममिर्नियतात्मभिः ।

शाकद्वीपस्ततो विप्राः क्षीरोदेन समन्ततः ॥ ७३ ॥

शाकद्वीपप्रमाणेन बलयेनेव वेष्टितः ।

क्षीराब्धिः सर्वतो विप्राः पुष्कराख्येन वेष्टितः ॥ ७४ ॥

द्वीपेन शाकद्वीपात्तु द्विगुणेन समन्ततः ।

पुष्करे सचतस्यापि महावीतोऽभवत् सुतः ॥ ७५ ॥

धातकिञ्च तयोस्तद्वद्वे चर्पे नामसंज्ञिते ।

महावीतं तथैवान्यद्धातकीखण्डसंज्ञितम् ॥ ७६ ॥

एकश्चात्र महामागाः प्रख्यातो चर्णपर्वतः ।

मानसोत्तरसंहो वै मध्यतो बलपाकृतिः ॥ ७७ ॥

योजनानां सहस्राणि ऊर्ध्वं पञ्चाशदुच्छ्रितः ।

तावदेव च विस्तीर्णः सर्वतः परिमण्डलः ॥ ७८ ॥

पुष्करद्वीपबलयं मध्येन विभजन्निय ।

स्थितोऽसौ तेन विच्छिन्नंजातं चर्णद्वयं हि तत् ॥ ७९ ॥

बलयाकारमेकैकं तयोर्मध्ये महागिरिः ।

दशचर्पसहस्राणि तत्र जीवन्ति मानवाः ॥ ८० ॥

निरामया विशोकाश्च रागद्वेषविवर्जिताः ।

अधमोत्तमो न तेष्वास्तां न वध्यवधकौ द्विजाः ॥ ८१ ॥

नेर्ष्यासूया मयं रोषोदोषोलोमादिकं न च ।

महावीतं घहिर्वर्णं धातकीखण्डमन्ततः ॥ ८२ ॥

मानसोत्तरशीलस्य देवदैत्यादिसेवितम् ।

सत्यानृते न तत्रास्तां द्वीपे पुष्करसंज्ञिते ॥ ८३ ॥

न तत्र नद्यः शैला वा द्वीपे वर्षद्वयान्विते ।
 तुल्यवेयास्तु मनुजा देवान्त्रैकरूपिणः ॥ ८४ ॥
 घर्णाग्रमाचारहीनं घर्माहरणवर्जितम् ।
 त्रयीपार्त्तादण्डनीतिशुश्रूषारहितं च तन् ॥ ८५ ॥
 वर्षद्वयं ततो विप्रा भीमस्वर्गोऽयमुत्तमः ।
 सर्वस्य सुखदः कालो जरारोगविचञ्जितः ॥ ८६ ॥
 पुष्करे धातकीरण्डे महाघाने च वै द्विजाः ।
 न्यग्रोधः पुष्करद्वीपे ब्रह्मण स्थानमुत्तमम् ॥ ८७ ॥
 तस्मिन्निरसति ब्रह्मा पूज्यमानः सुरासुरैः ।
 स्याद्दूदकेनोदधिना पुष्करः परिवेष्टितः ॥ ८८ ॥
 समेन पुष्करस्यैव विस्तारान्मण्डलात्तथा ।
 एवं द्वीपाः समुद्रेस्तु सप्त सप्तभिरावृताः ॥ ८९ ॥
 द्वीपश्चैव समुद्रश्च समानी द्विगुणौ परौ ।
 पर्यासि सर्वदा सर्वसमुद्रेषु समानि धै ॥ ९० ॥
 न्यूनातिरिक्ता तेषां कदाचिन्नैव जायते ।
 स्यालीस्थमग्निसंयोगादुद्रेकि सलिलं यथा ॥ ९१ ॥
 तपेन्दुवृद्धौ सलिलमग्मौघौ मुनिसत्तमाः ।
 अन्यूनानतिरिक्ताश्च घर्दन्त्यापो हसन्ति च ॥ ९२ ॥
 उदयास्तमणेः त्रिन्दोः पक्षयोः शुल्ककृष्णयोः ।
 दशोत्तराणि पञ्चैव अङ्गुलानां शतानि च ॥ ९३ ॥
 अपां वृद्धिक्षयी दृष्टी सामुद्रीणां द्विजोत्तमाः ।
 भोजनं पुष्करद्वीपे तत्र स्वयमुपस्थितम् ॥ ९४ ॥

भुञ्जन्ति पद्मसं विप्राः प्रजाः सर्वाः सदैव हि ।
 स्वाद्दूदकस्य परितो दृश्यते लोकसंस्थितिः ॥ ६५ ॥
 द्विगुणा काञ्चनी भूमिः सर्वजन्तुविवर्जिता ।
 लोकालोकस्ततः शैलो योजनायुतविस्तृतः ॥ ६६ ॥
 उच्छ्रयेणापि तावन्ति सहस्राण्यबलोहि सः ।
 ततस्तमः समावृत्य तं शैलं सर्वतः स्थितम् ॥ ६७ ॥
 तमध्वाण्डकटाहेन समन्तात् परिवेष्टितम् ।
 पञ्चाशत्कोटिविस्तारा सेयमुर्व्यो द्विजोत्तमाः ॥ ६८ ॥
 सहैषाण्डकटाहेन सद्दीपा समहीधरा ।
 सेयं धात्री विधात्री च सर्वभूतगुणाधिका ।
 आधारभूना जगतां सर्वेषां सा द्विजोत्तमाः ॥ ६९ ॥
 इति श्रोत्राह्णे महापुराणे समुद्रदीपपरिमाणवर्णनं
 नाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

एकविंशोऽध्यायः ।

तत्रादौपातालप्रमाणवर्णनम्

लोमहर्षण उवाच ।

विस्तारः एष कथितः पृथिव्या मुनिसत्तमाः ।
 सप्ततिस्तु सहस्राणि तदुच्छ्रायोऽपि कथ्यते ॥ १ ॥
 दशसाहस्रमेकैकं पातालं मुनिसत्तमाः ।
 अतलं पितलञ्चैव नितलं सुतलं तथा ॥ २ ॥

तलातलं रसातलं पातालञ्चापि सप्तमम् ।
 कृष्णा शुष्कारुणा पीता शर्करा शैलकान्वनी ॥ ३ ॥
 भूमयो यत्र विप्रेन्द्रा वर्यासादशोमिताः ।
 तेषु दानवदैतेय-जातयः शतशः स्थिताः ॥ ४ ॥
 नागानाञ्च महाङ्गानां जातयश्च द्विजोत्तमा ।
 स्यल्लोकादपि रम्याणि पातालानीति नारदः ॥ ५ ॥
 प्राह स्यर्गसदोमध्ये पानालेभ्यो गतो दिवम् ।
 आहादकारिणः शुभ्रा मणयो यत्र सुप्रभाः ॥ ६ ॥
 नागामरणभूशञ्च पाताल केन तत्सप्तमम् ।
 दैत्यदानवरुण्यामिरितश्चेतश्च शोभिने ॥ ७ ॥
 पाताले कस्य न प्रीतिर्विमृक्तम्यापि जायते ।
 दिवार्कः सप्तमो यत्र प्रभास्त्वन्वन्ति नातपम् ॥ ८ ॥
 शशिनश्च न शोताय निशि चोताय केवलम् ।
 भद्रयमोज्यमहापानमदमत्तैश्च भोगिभिः ॥ ९ ॥
 यत्र न जायते कालो गतोऽपि दनुजादिभिः ।
 धनानि नद्यो रम्याणि सरासि कमलाकराः ॥ १० ॥
 पुष्कोकिलादिलापाश्च मनोज्ञान्यम्बराणि च ।
 भूषणान्यतिरम्याणि गन्धाद्यञ्चानुलेपनम् ॥ ११ ॥
 चोणाघेषुमृदङ्गानां नि खनाश्च सप्त द्विजाः ।
 एतान्यन्यानि रम्याणि भाग्यमोग्यानि दानवैः ॥ १२ ॥
 दैत्यारगैश्च भुज्यन्ते पातालान्तरगोचरैः ।
 पातालानामधश्चास्ते विष्णोर्यां तामसी तनुः ॥ १३ ॥

शेषाख्या यदुगुणान् घर्तुं न शक्ता दैत्यदानवाः ।
 योऽनन्तः पठ्यते सिद्धैर्देवदेवर्षिपूजितः ॥ १४ ॥
 सहस्रशिरसा व्यक्तं स्वस्तिकामलभूषणः ।
 फणामणिसहस्रेण यः स विद्योत्तयन् दिशः ॥ १५ ॥
 सर्वान् करोति निर्घोष्यान् हितायजगतोऽसुरान् ।
 मदाघूर्णितनेत्रोऽसौ यः सदैयैककुण्डलः ॥ १६ ॥
 किरीटो रत्नधरो भाति साग्निरश्वेत इवाचलः ।
 नीलधासा मक्षोत्सिकः श्वेतहारोपशोभितः ॥ १७ ॥
 साम्रगङ्गाप्रपातोऽसौ कैलासाद्रिरिधोत्तमः ।
 लांगलासक्तहस्ताग्रो विभ्रन्मुपलमुत्तमम् ॥ १८ ॥
 उपास्यते स्वयं कान्ता यो वारुण्या च मूर्त्तया ।
 कल्पान्ते यस्य वक्त्रेभ्यो विपातलशिखोज्ज्वलः ॥ १९ ॥
 संकर्षणात्मको रुद्रो निष्कम्पात्ति जगत्त्रयम् ।
 स विभ्रच्छिखरीभूतमशेषं क्षितिमण्डलम् ॥ २० ॥
 आस्ते पातालमूलस्थः शेषोऽशेषसुरार्चितः ।
 तस्य धीर्दयं प्रभाषश्च स्वरूपं रूपमेव च ॥ २१ ॥
 न हि वर्णयितुं शक्यं ज्ञातुं वा त्रिदशैरपि ।
 यस्यैषा सकला पृथ्वी फणामणिशिखारुणा ॥ २२ ॥
 आस्ते कुसुममालेव कस्तूरीयं वदिष्यति ।
 यदा विजृम्भतेऽनन्तो मदाघूर्णितलोचनः ॥ २३ ॥
 तदा चलति भूरेषा साद्रितोयाधिकानना ।
 गन्धर्व्वाप्सरसः सिद्धाः किन्नरोरगधारणाः ॥ २४ ॥

नान्तं गुणानां गच्छन्ति ततोऽनन्तोऽयमव्ययः ।
 यस्य नागवधूहस्तैर्लापितं हरिचन्दनम् ॥ २५ ॥
 मुहुः भ्वासानिलायस्तं याति दिक्पट्टचासताम् ।
 यमाराध्य पुराणर्षिर्गर्भो ज्योतीर्षि तत्त्वतः ॥ २६ ॥
 ज्ञातवान् सकलं चैव निमित्तपठितं फलम् ।
 तेनेयं नागवर्ष्येण शिरसा विधृता मही ।
 विमर्त्ति सकलाल्लोकान् स देवासुरमानुषान् ॥ २७ ॥

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे पातालप्रमाण-
 कीर्त्तनं नामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

द्वाविंशोऽध्यायः ।

तत्रादौ नरकवर्णनम्

लोमहर्षेण उवाच ।

ततश्चानन्तरं विप्रा नरका रौरवादयः ।
 पापिनो येषु पात्यन्ते ताञ्छृणुध्वं द्विजोत्तमाः ॥ १ ॥
 रौरवः शौकरो रोघस्तालो विशसनस्तथा ।
 महाज्वालस्तप्तकुड्यो महालोमो विमोहनः ॥ २ ॥
 रुधिरान्धो वसातप्तः कृमीशः कृमिमोजनः ।
 असिपत्रधनं कृष्णो लालामक्षश्च दारुणः ॥ ३ ॥

तथा पूयवहः पापो घट्टिज्वालो ह्यधःशिराः ।
 सन्दंशः कृष्णसूत्रश्च तमश्चावीचिरेव च ॥ ४ ॥
 श्वभोजनोऽथाप्रतिष्ठोमावीचिश्च तथापरः ।
 इत्येवमादयश्चान्ये नरका भृशदारुणाः ॥ ५ ॥
 यमस्य चिपये घोराः शस्त्राग्निविषदर्शिनं ।
 पतन्ति येषु पुरुषाः पापकर्मरताश्च ये ॥ ६ ॥
 कूटसाक्षी तथा सम्यक् पक्षपातेन यो वदेत् ।
 यश्चान्यदनृतं वक्ति स नरो याति रौरवम् ॥ ७ ॥
 भ्रूणहा पुरहन्ता च गोघ्नश्च मुनिसत्तमाः ।
 यान्ति ते रौरवं घोरं यक्षोच्छ्वासनिरोधकः ॥ ८ ॥
 सुरापो ब्रह्महा हर्ता सुवर्णस्य च शूकरे ।
 प्रयाति नरके यश्च तैः संसर्गमुपैति वै ॥ ९ ॥
 राजन्यवैश्यहा चैव तथैव गुरुतल्पगः ।
 तप्तकुम्भे स्वसृगामी हन्ति राजभटश्च यः ॥ १० ॥
 माध्योधिक्रयवृद्धध्यपालः केसरविक्रयी ।
 तप्तलोहे पतन्त्येते यश्च भक्तं परित्यजेत् ॥ ११ ॥
 सुतां स्नुषाञ्चापि गत्वा महाज्वाले निपात्यते ।
 अपमन्ता गुरुणां यो यश्चाप्रीष्टा नराधमः ॥ १२ ॥
 वेददूषयिता यश्च वेदविक्रयकश्च यः ।
 अगम्यगामी यश्च स्यात् ते यान्ति शयलं द्विजाः ॥ १३ ॥
 रौरो पिमोहे पतति मर्त्यादादूषकस्तथा ।
 देवद्विजपितृद्वेष्टा रसदूषयिता च यः ॥ १४ ॥

स याति कृमिमक्ष्ये वै कृमीशे ॥ दुरिष्टिहृत् ।
 पितृदेवातिथीन् यस्तु पथ्यं ज्ञाति नराधम ॥ १५ ॥
 लालामक्षे स यात्युग्रे शरकर्त्ता च वेधने ।
 करोति कर्णिनो यश्च यश्च खड्गादिज्वर ॥ १६ ॥
 प्रयान्त्येते विशसने नरके भृशदारुणे ।
 असत्प्रतिप्रहाता च नरके यात्यधोमुपे ॥ १७ ॥
 अयाज्ययाजकस्तत्र तथा नक्षत्रसूचक ।
 कृमिपूये नरक्षैको याति मिष्टानभुक् सदा ॥ १८ ॥
 लाक्षामासरसानाञ्च तिलाना लघणस्य च ।
 धिक्नेता ग्राह्यणो याति तमेव नरक द्विजा ॥ १९ ॥
 माज्जार्जुक्कुट्टन्डागश्वयराहविहङ्गमान् ।
 पोषयन्नरक याति तमेव द्विजसत्तमा ॥ २० ॥
 रङ्गोपजावी धैवर्त्त कुण्टाशा गरदरतथा ।
 सूची माहिपिकश्चैव प र्णगामी च यो द्विज ॥ २१ ॥
 अगारदाही मित्रञ्च शत्रुनिग्रामयाजक ।
 रुधिरान्धे पतन्त्येते सोम विनीणते च ये ॥ २२ ॥
 मधुहा ग्रामहन्ता च याति वैतरणीं नर ।
 रेत पानादिकर्त्तारो मर्यादाभेदिनश्च ये ॥ २३ ॥
 ते कृच्छ्रे यान्त्यशीचाश्च कुहकाजीविनश्च ये ।
 असिपत्रवन याति घनच्छेदी वृथैव य ॥ २४ ॥
 उरग्निका मृगन्याघ्रा वह्निज्वाले पतन्ति वै ।
 यान्ति तत्रैव ते विप्रा यश्चापाक्षेप वह्निद ॥ २५ ॥

व्रतोपलोपको यश्च स्वाश्रमाद्विच्युतश्च य ।
 सन्दशयातनामध्ये पततस्तावुभावपि ॥ २६ ॥
 दिद्या स्वप्नेषु स्यन्दन्ते ये नरा ब्रह्मचारिण ।
 पुत्रैरध्यापिता ये तु ते पतन्ति श्वमोजने ॥ २७ ॥
 एते चान्ये च नरका शतशोऽथ सहस्रश ।
 येषु दुष्कृतकर्माण पच्यन्ते यातनागता ॥ २८ ॥
 तथैव पापान्येतानि तथान्यानि सहस्रश ।
 भुज्यन्ते जातिपुह्यैर्नरकान्तरगोचरै ॥ २९ ॥
 घर्णाश्रमधिरुद्धञ्च कर्म कुर्वन्ति ये नरा ।
 कर्मणा मनसा वाचा निरयेषु पतन्ति ते । ३० ॥
 अथ शिरोभिर्दृश्यन्ते नारकैर्दिशि देवता ।
 देवाश्चाधोमुखान् सर्वानथ पश्यन्ति नारकान् ॥ ३१ ॥
 स्थावरा ह्रमयोऽजाश्च पक्षिण पशवो नरा ।
 धार्मिकास्त्रिदशास्तद्वन्मोक्षिणश्च यथाक्रमम् ॥ ३२ ॥
 सहस्रभाग प्रथमादुद्धितायोऽनुक्रमात्तथा ।
 सर्वे ह्येते महाभागा यावन्मुक्तिसमाश्रया ॥ ३३ ॥
 यावन्तो जन्तुः स्वर्गे तावन्तो नरकौकस ।
 पापट्टयाति नरक प्रायश्चित्तपराडमुख ॥ ३४ ॥
 पापानामनुरूपाणि प्रायश्चित्तानि यदुपया ।
 तथा तथैव सस्मृत्य प्रोक्तानि परमर्षिभि ॥ ३५ ॥
 पापे गुरुणि गुरुणि स्वत्पान्यत्पे च तद्विद् ।
 प्रायश्चित्तानि विप्रेन्द्रा जगु स्यायम्मुवादय ॥ ३६ ॥

प्रायश्चित्तान्यशेषाणि तप कर्मात्मकानि वै ।
 यानि तेषामशेषाणां कृष्णानुस्मरणं परम् ॥ ३७ ॥
 कृते पापेऽनुतापो वै यस्य पुंसः प्रजायते ।
 प्रायश्चित्तन्तु तस्यैकं हरिसंस्मरणं परम् ॥ ३८ ॥
 प्रातर्निशि तथा सन्ध्यामध्याह्नादिषु संस्मरन् ।
 नारायणमवाप्नोति सद्यः पापक्षयात्ररः ॥ ३९ ॥
 विष्णुसंस्मरणात् क्षीणसमस्तकलेशसञ्चयः ।
 मुक्तिं प्रयाति भो विप्रा विष्णोस्तस्यानुकीर्तनात् ॥ ४० ॥
 घासुदेवे मनो यस्य जपहोमार्चनादिषु ।
 तस्यान्तरायो विघ्नेन्द्रा देवेन्द्रत्वादिकं फलम् ॥ ४१ ॥
 क नाकपृष्ठगमनं पुनरावृत्तिलक्षणम् ।
 क जपो घासुदेवेति मुक्तिर्जीवमनुत्तमम् ॥ ४२ ॥
 तस्मादहर्निशं विष्णुं संस्मरन् पुण्यो द्विजः ।
 न याति नरकं शुद्धः संक्षीणाखिलपातक ॥ ४३ ॥
 मनःप्रोतिकरः स्वर्गो नरकस्तद्विपर्ययः ।
 नरकस्वर्गसङ्गो वै पापपुण्ये द्विजोत्तमा ॥ ४४ ॥
 घस्त्येकमेव दुःखाय सुखायेष्योदयाय च ।
 कोपाय च यतस्तस्माद्वस्तु दुःखात्मकं कुतः ॥ ४५ ॥
 तदेव प्रीतये मूत्वा पुनर्दुःखाय जायते ।
 तदेव कोपाय यतः प्रसादाय च जायते ॥ ४६ ॥
 तस्माद्दुःखात्मकं नास्ति न च किञ्चित्सुखात्मकम् ।
 मनसः परिणामोऽयं सुखदुःखादिलक्षणः ॥ ४७ ॥

ज्ञानमेव परं ब्रह्माज्ञानं बन्धाय चेप्यते ।

ज्ञानात्मकमिदं विश्वं न ज्ञानाद्विद्यते परम् ॥ ४८ ॥

विद्याविद्ये हि भो विप्रा ज्ञानमेवावधार्यताम् ।

एवमेतन्मयाख्यातं भवतां मण्डलं भुवः ॥ ४९ ॥

पातालानि च सर्वाणि तथैव नरका द्विजाः ।

समुद्राः पर्वताश्चैव द्वीपा वर्षाणि निम्नगाः ॥ ५० ॥

संक्षेपात् सर्वमाख्यातं किं भूय श्रोतुमिच्छथ ।

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे पातालनरककीर्त्तनं नाम
द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

त्रयोविंशोऽध्यायः ।

तत्रादौ भूर्भुवःस्वरादिलोकवर्णनम्

मुनय ऊचुः ।

कथितं भवता सर्वमस्माकं सकलं तथा ।

भुवर्ल्लोकादिकाल्लोकान् श्रोतुमिच्छामहे धयम् ॥ १ ॥

तथैव ब्रह्मसंस्थानं प्रमाणानि यथा तथा ।

समाचक्ष्व महाभाग यथाब्रह्मोमहर्षण ॥ २ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

रविचन्द्रमसोर्षावन्मयूषैरवभास्यते ।

ससमुद्रसरिच्छैला तावती पृथिवी स्मृता ॥ ३ ॥

यावत्प्रमाणा पृथिवी विस्तारपरिमण्डला ।
 नमस्तावत्प्रमाणं हि विस्तारपरिमण्डलम् ॥ ४ ॥
 भूमेर्योजनलक्षे तु सौरं विप्रास्तु मण्डलम् ।
 लक्षे दिवाकराद्यापि मण्डल शशिनः स्थितम् ॥ ५ ॥
 पूर्व्वे शतसहस्रे तु योजनानां निशाकरात् ।
 नक्षत्रमण्डलं कृत्स्नमुपरिष्ठात् प्रकाशते ॥ ६ ॥
 द्विलक्षे चोत्तरे विप्रा बुधो नक्षत्रमण्डलात् ।
 तावत् प्रमाणभागे तु धुधस्याप्युशना स्थितः ॥ ७ ॥
 बङ्गारकोऽपि शुक्रस्य तत्प्रमाणे व्यवस्थितः ।
 लक्षद्वयेन भोमस्य स्थितो देवपुरोहितः ॥ ८ ॥
 सौरिर्वृहस्पतेरुद्ध्वं द्विलक्षे समवस्थितः ।
 सप्तर्षिमण्डलं तस्माल्लक्षमेकं द्विजोत्तमाः ॥ ९ ॥
 ऋषिभ्यस्तु सहस्राणां शतादूद्ध्वं व्यवस्थितः ।
 मेढीभूतः समस्तस्य ज्योतिश्चक्रस्य वै भ्रुवः ॥ १० ॥
 त्रैलोक्यमेतत् कथितं संक्षेपेण द्विजोत्तमाः ।
 इज्याफलस्य भूरेपा इज्या चात्र प्रतिष्ठिता ॥ ११ ॥
 ध्रुवादूद्ध्वं महर्लोको यत्र ते कल्पवासिनः ।
 एकयोजनकोटी तु महर्लोको विधीयते ॥ १२ ॥
 द्वे कोट्यौ तु जनो लोको यत्र ते ब्रह्मणः सुताः ।
 सनन्दनाद्याः कथिता विप्राश्चामलचेतसः ॥ १३ ॥
 चतुर्गुणोत्तरं चोद्ध्वं जनलोकात्तपः स्मृतम् ।
 वैराजा यत्र ते देवाः स्थिता देहविर्जिताः ॥ १४ ॥

यद्गुणेन तपोलोकात् सत्यलोको विराजते ।
 अपुनर्मार्कं यत्र सिद्धादिमुनिसेवितम् ॥ १५ ॥
 पादगम्यं तु यत् किञ्चिद्वस्त्वस्ति पृथिवीमयम् ।
 स भूर्लोकः समाध्यातो विस्तारोऽस्य मयोदितः ॥ १६ ॥
 भूमिसूर्यान्तरं यत्तु सिद्धादिमुनिसेवितम् ।
 भुवर्लोकस्तु सोऽप्युको द्वितीयो मुनिसत्तमाः ॥ १७ ॥
 ध्रुवसूर्यान्तरं यत्तु नियुतानि चतुर्दश ।
 स्वर्लोकः सोऽपि कथितो लोकसंस्थानचिन्तकैः ॥ १८ ॥
 त्रैलोक्यमेतत् कृतक विप्रैश्च परिपठ्यते ।
 जनस्तपस्तथा सत्यमिति चाकृतकं त्रयम् ॥ १९ ॥
 कृतकाकृतको मध्ये महर्लोक इति स्मृतः ।
 शून्यो भवति फल्पान्ते योऽन्तं न च चिन्तयति ॥ २० ॥
 एते सप्त महालोका मया धः कथिता द्विजाः ।
 पातालानि च सप्तैव ब्रह्माण्डस्यैव विस्तरः ॥ २१ ॥
 एतद्वण्डकटाहेन तिर्य्यगूदुर्ध्वमधस्तथा ।
 कपित्थस्य यथा बीजं सर्व्वतो धै समावृतम् ॥ २२ ॥
 दशोत्तरेण पयसा द्विजाश्चाण्डश्च तद्वृतम् ।
 त्र्याम्बुपरिवारोऽसौ षड्विना षेष्टितो षट्तिः ॥ २३ ॥
 षट्तिस्तु पायुना पायुर्विप्रास्तु नमसावृतः ।
 शाकाशोऽपि मुनिध्रेष्टा महता परिवेष्टितः ॥ २४ ॥
 दशोत्तराण्यशेषाणि विप्राश्चैतानि सप्त ये ।
 महान्तश्च समावृत्य प्रधानं समपरिच्यतम् ॥ २५ ॥

अनन्तस्य न तस्यान्त सरयानं चापि विद्यते ।
 तदनन्तप्रसरयात प्रमाणेनापि वै यत् ॥ २६ ॥
 हेतुभूतमशेषस्य प्रवृत्ति सा परा द्विजा ।
 अन्तानान्तु सहस्राणां सहस्राण्ययुतानि च ॥ २७ ॥
 ईदृशानां तथा तत्र कोटिकोटिशतानि च ।
 दादप्यग्निर्यथा तैल तिले तद्वत् पुमानिह ॥ २८ ॥
 प्रधानेऽवस्थितो व्यापी चेतनात्मनिवेदन ।
 प्रधानञ्च पुमाञ्चैव सर्वभूतानुभूतया ॥ २९ ॥
 विष्णुशक्त्या द्विजश्रेष्ठा धृतौ सश्रयधर्मिणौ ।
 तयो सैव पृथग्भावे कारण सश्रयस्य च ॥ ३० ॥
 क्षोमकारणभूता च सर्गकाले द्विजोत्तमा ।
 यथा शैत्यं जले घातो विमर्त्ति कणिकागतम् ॥ ३१ ॥
 जगच्छक्तिस्तथा विष्णो प्रधानपुरुषात्मकम् ।
 यथा च पादपो मूलस्कन्धशाखादिसयुत ॥ ३२ ॥
 बाधबीजात् प्रभवति बीजान्यन्यानि चै तत ।
 प्रभवन्ति ततस्तेभ्यो भवन्त्यन्ये परे द्रुमा ॥ ३३ ॥
 तेऽपि तल्लक्षणद्वयकारणानुगता द्विजा ।
 एवमव्यावृतात् पूर्वं जायन्ते महदादय ॥ ३४ ॥
 विदोयान्तास्ततस्तेभ्य सम्भवन्ति सुगदय ।
 तेभ्यश्च पुत्रास्तेषां तु पुत्राणां परमे सुता ॥ ३५ ॥
 बीजाद्द्रवृक्षप्ररोहेण यथा नापचयस्तरो ।
 भूतानां भूतसर्गेण नैवास्त्यपचयस्तथा ॥ ३६ ॥

सन्निधानादुयथाकाशकालाद्याः कारणं तरोः ।
 तथैवापरिणामेन विश्वस्य भगवान् हरिः ॥ ३७ ॥
 ग्रीहिघीजे यथा मूलं नाल पत्राङ्कुरौ तथा ।
 काण्डकोपास्तथा पुष्पं क्षीरं तद्वच्च तण्डुलः ॥ ३८ ॥
 तुषाः कणाश्च सन्तो वै यान्त्याचिर्भावमात्मनः ।
 प्ररोहहेतुसामान्यमासाद्य मुनिसत्तमाः ॥ ३९ ॥
 तथा कर्मस्वनेकेषु देवाद्यास्तनवः स्थिताः ।
 विष्णुशक्तिं समासाद्य प्ररोहमुपयान्ति वै ॥ ४० ॥
 स च विष्णुः परं ब्रह्म यतः सर्व्वमिदं जगत् ।
 जगच्च यो यत्र चेदं यस्मिन्विलयमेष्यति ॥ ४१ ॥
 तद्ब्रह्म परम धाम सदसत् परमं पदम् ।
 यस्य सर्व्वमभेदेन जगदेतच्चराचरम् ॥ ४२ ॥
 स एव मूलप्रकृतिर्व्यक्तरूपी जगच्च सः ।
 तस्मिन्नेव लयं सर्व्वं याति तत्र च तिष्ठति ॥ ४३ ॥
 कर्त्ता क्रियाणां स च इज्यते क्रतुः,
 स एव तत् कर्मफलञ्च यस्य यत् ।
 युगादि यस्माच्च भवेदशेषतो-
 हरेर्न किञ्चिदुच्यतिरिक्तमस्ति तत् ॥ ४४ ॥

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे भूर्मुघ स्वरादिकीर्त्तनं नाम

त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

चतुर्विंशोऽध्यायः ।

ध्रुवमस्थिति निरूपणम् ।

लोमहर्षण उवाच ।

तारामय भगवत शिशुमारावृति प्रभो ॥ १ ॥
दिवि रूप हरेर्यन्तु तस्य पुच्छे स्थितो ध्रुव ।
तैष भ्रमन् भ्रामयति चन्द्रानित्यादिकान् ग्रहान् ।
भ्रमन्तमनु त यान्ति नक्षत्राणि च चक्रचत् ॥ २ ॥
सूर्याचन्द्रमसौ तारा नक्षत्राणि ग्रहे सह ।
घातानोकमयैर्वन्धैर्ध्रुवे घटानि तानि वै ॥ ३ ॥
शिशुमारावृति प्रोक्त यद्रूप ज्योतिषा दिवि ।
नारायण पर धाम तस्याधार स्वय इदि ॥ ४ ॥
उत्तानपादतनयस्तमाराभ्य प्रजापतिम् ।
ख ताराशिशुमारम्य ध्रुव पुच्छे व्यवस्थित ॥ ५ ॥
आधार शिशुमारम्य सचाभ्यक्षो जनार्दन ।
ध्रुवस्य शिशुमारश्च ध्रुवे भानुर्यवस्थित ॥ ६ ॥
तदाधार जगच्चेद सदेवासुरमानुषम् ।
येन विप्रा विधानेन तन्मे ऋणुत साम्प्रतम् ॥ ७ ॥
विवस्वानष्टमिर्मासैर्ग्रसत्यापो रसात्मिका ।
वर्षत्येषु ततश्चान्नमन्नादमखिल जगत् ॥ ८ ॥
विवस्वानशुमिस्तादणैरादाय जगतो जलम् ।
सोम पुष्यत्यथेन्दुश्च घायुनाडीमयेदिवि ॥ ९ ॥

जलैर्विक्षिप्यतेऽग्नेषु धूमाग्न्यनिलमूर्त्तिषु ।
 न भ्रस्यन्ति यतस्तेभ्यो जलान्यभ्राणि तान् यतः ॥ १० ॥
 अत्रस्थाः प्रपतन्त्यापो घायुना समुदीरिताः ।
 संस्कारं कालजनितं विप्राश्चासाद्य निर्मलाः ॥ ११ ॥
 सरित्समुद्रा भौमास्तु यथापः प्राणिसम्भवाः ।
 चतुष्प्रकारा भगवानादत्ते सविता द्विजाः ॥ १२ ॥
 आकाशगङ्गासलिलं तथाहृत्य गमस्तिमान् ।
 अनभ्रगतमेवोच्छ्र्या सद्यः क्षिपति रश्मिभिः ॥ १३ ॥
 तस्य संस्पर्शनिर्धूतपापपङ्को द्विजोत्तमा ।
 न याति नरक मर्त्यो दिव्यं स्नानं हि तत्स्मृतम् ॥ १४ ॥
 दृष्टसूर्यं हि तद्वारि पतत्यभ्रैर्विना दिवः ।
 आकाशगङ्गासलिलंतदुगोभिः क्षिप्यते रवेः ॥ १५ ॥
 कृत्तिकादिषु ऋक्षेषु विषमेष्वग्न्यु यदिवः ।
 दृष्ट्यार्कं पतितं ज्ञेयं तदुगाङ्गं दिग्गजोद्धृतम् ॥ १६ ॥
 युग्मर्क्षेषु तु यत्तोयं पतत्यर्कोद्धृतं दिवः ।
 तत्सूर्यरश्मिभिः सद्यः समादाय निरस्यते ॥ १७ ॥
 उभयं पुण्यमत्यर्थं नृणां पापहरं द्विजाः ।
 आकाशगङ्गासलिलं दिव्यं स्नानं द्विजोत्तमाः ॥ १८ ॥
 यत्तु मेघैः समुत्सृष्ट वारि तत् प्राणिनां द्विजाः ।
 पुष्पात्योपधयः सर्व्या जीवनायामृतं हि तत् ॥ १९ ॥
 तेन वृद्धिं परां नीतः सकलश्चोपधीगणः ।
 साधकः फलपाकान्तः प्रजानान्तु प्रजायते ॥ २० ॥

तेन यज्ञान् यथाप्रोक्तान्मानवाः शास्त्रचक्षुषः ।
 कुर्वन्तेऽहरहश्चैव देवानाप्याययन्ति नै ॥ २१ ॥
 एषं यज्ञाञ्च वेदाञ्च घर्णाञ्च द्विजपूर्वकाः ।
 सर्व्यदैवनिकायाञ्च पशुभूतगणाञ्च ये ॥ २२ ॥
 वृष्ट्या धृतमिदं सर्व्यं जगत्स्थावरजङ्गमम् ।
 सापि निष्पाद्यते वृष्टिः सवित्रा मुनिसत्तमाः ॥ २३ ॥
 आधारभूतः सवितुर्ध्रुवो मुनिवरोत्तमाः ।
 ध्रुवस्य शिशुमारोऽसौ सोऽपि नारायणाश्रयः ॥ २४ ॥
 हृदि नारायणस्तम्य शिशुमारस्य संस्थितः ।
 विमर्त्ता सर्वभूतानामादिभूतः सनातनः ॥ २५ ॥
 एषं मया मुनिश्रेष्ठा ब्रह्माण्डं समुदाहृतम् ।
 भूतमुद्रादिभिर्युक्तं किमन्यच्छ्रोतुमिच्छथ ॥ २६ ॥

इति श्रीब्राह्म महापुराणे ध्रुवसंस्थितिनिर्गणनं नाम
 चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

पञ्चविंशोऽध्यायः ।

तत्रादौ सर्वतीर्थमाहात्म्यवर्णनम् ।

मुनय ऊचः ।

पृथिव्यां यानि तीर्थानि पुण्यान्यायतनानि च ।
 वक्तुमर्हसि धर्मज्ञ श्रोतुं नो घर्तते मनः ॥ १ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

यस्य हस्तौ च पादौ च मनश्चैव सुसंयतम् ।

विद्या तपश्च कीर्त्तिश्च स तीर्थफलमश्नुते ॥ २ ॥

मनो विशुद्धं पुरुषस्य तीर्थं,

घाचां तथा चेन्द्रियनिग्रहश्च ।

एतानि तीर्थानि शरीरज्ञानि,

स्वर्गस्य मार्गं प्रतियोधयन्ति ॥ ३ ॥

चित्तमन्तर्गतं दुष्टं तीर्थस्नानैर्न शुध्यति ।

शतशोऽपि जलैर्घातं सुरामाण्डमिवाशुचि ॥ ४ ॥

न तीर्थानि न दानानि न द्रव्यतानि न चाश्रमाः ।

दृष्टाशयं दण्डरुचिं पुनन्ति द्युत्थितेन्द्रियम् ॥ ५ ॥

इन्द्रियाणि वशे कृत्वा यत्र यत्र वसेन्नरः ।

तत्र तत्र कुरुक्षेत्रं प्रयागं पुष्करं तथा ॥ ६ ॥

तस्माच्छृणुध्वं वक्ष्यामि तीर्थान्यायतनानि च ।

संक्षेपेण मुनिश्रेष्ठाः पृथिव्यां यानि कानि वै ॥ ७ ॥

विस्तरैण न शक्यन्ते वक्तुं धर्षशतैरपि ।

प्रथमं पुष्करं तीर्थः नैमिषारण्यमेव च ॥ ८ ॥

प्रयागश्च वक्ष्यामि घर्ममारण्यं द्विजोत्तमाः ।

धेनुकं चम्पकारण्यं सैन्धवारण्यमेव च ॥ ९ ॥

पुण्यञ्च मगधारण्यं दण्डकारण्यमेव च ।

गया प्रभासं त्रीतीयं दिव्यं कनकलं तथा ॥ १० ॥

भृगुतुङ्गं हिरण्याक्षं मीमारण्यं कुशस्थलीम् ।
 लोहाकुलं सकेदारं मन्दरारण्यमेव च ॥ ११ ॥
 महाबलं कोटितीर्थं सर्वपापहरं तथा ।
 रुपतीर्थं शूकर्यं चक्रतीर्थं महाफलम् ॥ १२ ॥
 योगतीर्थं सोमतीर्थं तीर्थं साहोदकं तथा ।
 तीर्थं फोकामुखं पुण्यं यदरीशैलमेव च ॥ १३ ॥
 सोमतीर्थं तुङ्गकूटं तीर्थं म्बन्दाधम तथा ।
 फोटितीर्थञ्चाग्निपटं तीर्थं पञ्चशिखं तथा ॥ १४ ॥
 धर्मोद्भूतं कोटितीर्थं तीर्थं याघप्रमोचनम् ।
 गङ्गाद्वारं पञ्चकूटं मध्यकेसरमेव च ॥ १५ ॥
 चक्रप्रभं मतङ्गञ्च क्रुशदसञ्च विश्रुतम् ।
 दंष्ट्राकुण्डं विष्णुतीर्थं सार्वकामिकमेव च ॥ १६ ॥
 तीर्थं मत्स्यतिलञ्चैव घदरी सुप्रभ तथा ।
 ग्रहकुण्डं घट्टि कुण्डं तीर्थं सत्यपदं तथा ॥ १७ ॥
 चतुःश्रोतश्चतुःशृङ्गं शैलं द्वादशधारकम् ।
 मानसं स्थूलशृङ्गञ्च स्थूलदण्डं तथोर्व्यशी ॥ १८ ॥
 लोकपालं मनुवर सोमाहंशैलमेव च ।
 सदाप्रभं मेरुकुण्डं तीर्थं सोमामिषेवनम् ॥ १९ ॥
 महाश्रोतं कोटरकं पञ्चधारं त्रिधारकम् ।
 सप्तधारैकधारञ्च तीर्थं चामरकण्टकम् ॥ २० ॥
 शालग्रामं चक्रतीर्थं कोटिद्रुममनुत्तमम् ।
 विल्वप्रभं देवहदं तीर्थं विष्णुहदं तथा ॥ २१ ॥

शङ्खप्रभं देवकुण्डं तीर्थं यज्ञायुधं तथा ।
 भग्निप्रभञ्च पुष्पागं देवप्रममनुत्तमम् ॥ २२ ॥
 विद्याधरं सगान्धर्व्यं श्रीतीर्थं ब्रह्मणो हृदम् ।
 सातीर्थं लोकपालाख्यं मणिपूरगिरिं तथा ॥ २३ ॥
 तीर्थं पञ्चहृदञ्चैव पुण्यं पिण्डारकं तथा ।
 मलयं गोप्रभाचञ्च गोधरं घटमूलकम् ॥ २४ ॥
 स्नानदण्डं प्रयागञ्च गुह्यं चिष्णुपदं तथा ।
 कन्याधर्मं वायुकुण्डं जम्बूमागं तथोत्तमम् ॥ २५ ॥
 गभस्तितीर्थञ्च तथा ययातिपतनं शुचि ।
 कोटितीर्थं भद्रवटं महाकालघनं तथा ॥ २६ ॥
 नर्मदातीर्थमपर तीर्थं ब्रजं तथार्युदम् ।
 पिङ्गुतीर्थं सवासिष्ठं तीर्थञ्च पृथुसङ्गमम् ॥ २७ ॥
 तीर्थं दौर्घ्यासिकं नाम तथा पिञ्जरकं शुभम् ।
 ऋषितीर्थं ब्रह्मतुङ्गं घसुतीर्थं कुमारिकम् ॥ २८ ॥
 शत्रुतीर्थं पञ्चनदं रेणुकातीर्थमेव च ।
 पैतामहञ्च विमलं रुद्रपादं तथोत्तमम् ॥ २९ ॥
 मणिमत्तञ्च कामाख्यं कृष्णतीर्थं कुशाचिलम् ।
 यजनं याजनञ्चैव तथैव ब्रह्मवालुकम् ॥ ३० ॥
 पुष्पन्यासं पुण्डरीकं मणिपूरं तथोत्तरम् ।
 दीर्घसत्रं हयपदं तीर्थं चानशनं तथा ॥ ३१ ॥
 गङ्गोद्भेदं शिवोद्भेदं नर्मदोद्भेदमेव च ।
 घस्त्रापदं दाख्यल छायारोहणमेव च ॥ ३२ ॥

सिद्धेश्वर मित्रबल कालिकाश्रममेव च ।
 घटाघट भद्रघट कौशाम्यी च दिवाकरम् ॥ ३३ ॥
 द्वीप सारस्यतञ्जैव विजय कामट तथा ।
 छटकोटि सुमनस तीर्थं सट्टाचनामितम् ॥ ३४ ॥
 स्यमन्तपञ्चक तार्थं ग्रहातार्थं सुदर्शनम् ।
 सतत पृथिवीसर्जं पारिप्लवपृथूदको ॥ ३५ ॥
 दशाश्वमेधिक तीर्थं सर्पिज विषयान्तिकम् ।
 कोटितीर्थं पञ्चनद घाराह यक्षिणीहठम् ॥ ३६ ॥
 पुण्डराक सोमतीर्थं मुखघाट तथोत्तमम् ।
 वदरीचनमासीन रत्नमलकमेव च ॥ ३७ ॥
 लोकद्वार पञ्चतीर्थं कपिलातीर्थमेव च ।
 सूर्यतीर्थं शङ्खिनी च गवा भवनमेव च ॥ ३८ ॥
 तीर्थञ्च यक्षराजस्य ग्रहावर्त्तं सुतीर्थकम् ।
 कामेश्वर मातृतीर्थं तीर्थं शीतवन तथा ॥ ३९ ॥
 स्नानलोमापहञ्चैव मासससरक तथा ।
 दशाश्वमेध केदार ग्रहोदुम्बरमेव च ॥ ४० ॥
 सप्तर्षिकुण्डञ्च तथा तीर्थं देव्या सुजम्बुकम् ।
 ईहास्पद कोटिकूट किन्दान किञ्चप तथा ॥ ४१ ॥
 कारण्डञ्च चाग्नेध्यञ्च त्रिविष्टपमथापरम् ।
 पाणिखात मिश्रकञ्च मधुघटमनोजयो ॥ ४२ ॥
 कौशिकी देवतीर्थञ्च तीर्थञ्च ऋणमोचनम् ।
 दिग्यञ्च नृगधूमाख्य तार्थं विष्णुपद तथा ॥ ४३ ॥

अमराणां हृदं पुण्यं कोटितोयं तथापरम् ।
 श्रीकुञ्जं शालितीर्थञ्च नैमिशीयञ्च विश्रुतम् ॥ ४४ ॥
 ब्रह्मस्थानं सोमतीर्थं कन्यातीर्थं तथैव च ।
 ब्रह्मतीर्थं मनस्तीर्थं तीर्थं चै काश्यावनम् ॥ ४५ ॥
 सौगन्धिकषणञ्चैव मणितीर्थं सरस्वती ।
 ईशानतीर्थं प्रवरं पावनं पाञ्चदशिकम् ॥ ४६ ॥
 त्रिशूलधारं माहेन्द्र देवस्थानं कृतालयम् ।
 शाकम्भरी देवतीर्थं सुवर्णाक्षं कलिं ह्रदम् ॥ ४७ ॥
 क्षीरस्त्रयं विरूपाक्षं भृगुतीर्थं कुशोद्वयम् ।
 ब्रह्मतीर्थं ब्रह्मयोनिं नीलपर्ज्यतमेव च ॥ ४८ ॥
 कुजाम्रकं भद्रवटं घसिष्ठपदमेव च ।
 स्वर्गद्वारं प्रजाद्वारं कालिकाश्रममेव च ॥ ४९ ॥
 रुद्रायत्तं सुगन्धाश्रयं कपिलावनमेव च ।
 भद्रकर्णहृदञ्चैव शङ्कुकर्णहृदं तथा ॥ ५० ॥
 सप्तसारस्वतञ्चैव तीर्थमोशनसं तथा ।
 कपालमोचनञ्चैव अवकीर्णञ्च काश्यपम् ॥ ५१ ॥
 चतुःसामुद्रिकञ्चैव शक्तिकञ्च सहस्रिकम् ।
 रेणुकं पञ्चघटकं विमोचनमथौजसम् ॥ ५२ ॥
 स्थाणुतीर्थं कुरोस्तीर्थं स्वर्गद्वारं कुशध्वजम् ।
 विश्वेश्वरं माणवकं कूपं नारायणाश्रयम् ॥ ५३ ॥
 गङ्गाहृदं घटञ्चैव घदरीपाटनं तथा ।
 इन्द्रमार्गमेकरात्रं क्षीरकावासमेव च ॥ ५४ ॥

सोमतीर्थं दधीचञ्च श्रुततीर्थञ्च मो द्विजा ।
 कोटितीर्थस्थलीञ्चैव भद्रकालाह्वयं तथा ॥ ५५ ॥
 अरुन्धतीवनञ्चैव ब्रह्मावर्त्तं तथोत्तमम् ।
 अश्वमेधा कुन्जावन यमुनाप्रमथ तथा ॥ ५६ ॥
 घोरं प्रमोक्ष सिन्धूत्थमृषिकुल्या सङ्गत्तिकम् ।
 उर्व्याम्नमणञ्चैव मायाविद्योद्भव तथा ॥ ५७ ॥
 महाधमो वैतसिकाम्य सुन्दरिकाधमम् ।
 यादुतोयं चारुनदीं विमलागोकमेव च ॥ ५८ ॥
 तीर्थ पञ्चनदञ्चैव मार्कण्डेयस्य धीमतः ।
 सोमतीर्थं सितोदञ्च तार्थं मत्स्योदरी तथा ॥ ५९ ॥
 सूर्यप्रम सूर्यतीर्थमशोकवनमेव च ।
 अरण्यम्पद कामदञ्च शुभतीर्थं सवालुरुम् ॥ ६० ॥
 पिशाचमोचनञ्चैव सुभद्राह्वयमेव च ।
 कुण्ड विमलदण्डस्य तीर्थं चण्डेश्वरस्य च ॥ ६१ ॥
 ज्येष्ठस्यानहदञ्चैव पुण्यं ब्रह्मसर तथा ।
 जैगापयगुहा चैव हरिकेशवन तथा ॥ ६२ ॥
 अजामुलसरञ्चैव घण्टाकर्णहृद् तथा ।
 पुण्डरीकहृदञ्चैव वार्षा कर्कोटकस्य च ॥ ६३ ॥
 सुवर्णास्योदपानञ्च ज्येष्ठतीर्थहृद् तथा ।
 कुण्ड चरिकायाश्च श्यामाकूपञ्च चन्द्रिका ॥ ६४ ॥
 श्मशानस्तम्भकूपञ्च विनायकहृद् तथा ।
 कूप सिन्धूद्वयञ्चैव पुण्यं ब्रह्मसर तथा ॥ ६५ ॥

रुद्रावासं तथा तीर्थं नागतीर्थं पुलोमकम् ।

भक्तहृदं क्षीरसरः प्रेताधारं कुमारकम् ॥ ६६ ॥

ब्रह्मावतं कुशावतं दधिकर्णोदपानकम् ।

शृङ्गतीर्थं महातीर्थं तीर्थश्रेष्ठा महानदी ॥ ६७ ॥

दिव्यं ब्रह्मसरं पुण्यं गयाशीर्षाक्षयं घटम् ।

दक्षिणं चोत्तरञ्चैव गोमयं रूपशीतिकम् ॥ ६८ ॥

कपिलाह्वं गृध्रघटं सावित्रीहृदमेव च ।

प्रभासन सीतवनं योनिदारञ्च धेनुकम् ॥ ६९ ॥

धन्यकं फोफिलाख्यञ्च मतङ्गहृदमेव च ।

पतङ्गपं रुद्रतीर्थं शक्ततीर्थं सुमालिनम् ॥ ७० ॥

ब्रह्मस्थानं सप्तकुण्डं मणिरत्नहृदं तथा ।

कौशिक्यं भरतञ्चैव तीर्थं ज्येष्ठालिका तथा ॥ ७१ ॥

घट्येभ्यरं कल्पसरः कन्यासंवेद्यमेव च ।

निधीयाप्रमवधौघ घसिष्ठाश्रममेव च ॥ ७२ ॥

देवकूटञ्च कृपञ्च घसिष्ठाश्रममेव च ।

घोराश्रमं ब्रह्मसरो ब्रह्मवीरावकापिली ॥ ७३ ॥

कुमारधारा श्रीधारा गौरीशिररमेव च ।

शुनः कुण्डोऽथ तीर्थञ्च नन्दितोर्थं सथैव च ॥ ७४ ॥

कुमारपासं धोपासमीर्वीरतीर्थमेव च ।

कुन्मकर्णहृदञ्चैव कौशिकीहृदमेव च ॥ ७५ ॥

धर्मतीर्थं कामतीर्थं तीर्थमुद्दालकं तथा ।

सन्ध्यातीर्थं फारतोयं कपिलं लोहितार्णवम् ॥ ७६ ॥

शोणोद्भवं चंशगुल्ममृषमं कलतीर्थकम् ।

पुण्यावतीहृदं तीर्थं तीर्थं वदरिकाश्रमम् ॥ ७७ ॥

रामतीर्थं पितृघनं विरजातीर्थमेव च ।

मार्कण्डेयवनञ्चैव कृष्णतीर्थं तथा वटम् ॥ ७८ ॥

रोहिणीकूपप्रचरमिन्द्रगुप्तसरञ्च यत् ।

सानुगच्छं समाहेन्द्र धीतीर्थं धीनदं तथा ॥ ७९ ॥

शुतीर्थं धार्यमञ्च कावेरीहृदमेव च ।

कन्यातीर्थञ्च गोकर्णं गायत्रीम्यानमेव च ॥ ८० ॥

यदरीहृदमन्यच्च मध्यम्यानं विकर्णरुम् ।

जातोहृदं देवरूपं कुशप्रचणमेव च ॥ ८१ ॥

सर्वदेवप्रतञ्चैव कन्याश्रमहृदं तथा ।

तथान्यद्व्यालखिल्यानां सपूर्वाणां तथापरम् ॥ ८२ ॥

तथान्यच्च महर्षीणामखण्डितहृदं तथा ।

तीर्थेष्वेतेषु विधिवन् सम्यक् श्रद्धासमन्वितः ॥ ८३ ॥

स्नानं करोति यो मर्त्यः सोपयासी जिनेन्द्रियः ।

देवानृषीन्मनुष्याञ्च पितॄन् सन्तर्न्य च क्रमात् ॥ ८४ ॥

अम्यच्छर्च्य देवतास्तत्र स्थित्वा च रजनीत्रयम् ।

पृथक् पृथक् फलं तेषु प्रतितीर्थेषु मां द्विजाः ॥ ८५ ॥

प्राप्नोति ह्यमेधस्य नरो नान्त्यत्र संशयः ।

यस्त्विदं शृणुयान्नित्यं तीर्थमाहात्म्यमुत्तमम् ॥

पठेश्वाचयेद्व्यापि सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ८६ ॥

इति श्रीब्राह्म 'महापुराणे तीर्थमाहात्म्यवर्णनं नाम

पञ्चविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

पङ्क्तिशोऽध्यायः ।

तत्रादी स्वयम्भूत्रहृषिसंवादवर्णनम्

मुनय ऊचुः ।

पृथिव्यामुत्तमां भूमिं धर्मकामार्थमोक्षदाम् ।
तीर्थानामुत्तमं तीर्थं ब्रूहि नो वदतावर ॥ १ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

इमं प्रश्नं मम गुरुं पप्रच्छुर्मुनयः पुरा ।
तमहं सम्प्रक्षयामि यत्पृच्छद्भ्यं द्विजोत्तमाः ॥ २ ॥
स्वाश्रमे सुमहापुण्ये नानापुष्पोपशोभिते ।
नानाद्रुमलताकीर्णे नानामृगगणैर्युते ॥ ३ ॥
पुष्पागैः फणिफारैश्च सरलैर्देवदारुभिः ।
शालैस्तालैस्तमालैश्च पनसैर्यथादिदैः ॥ ४ ॥
पाटलाशोकपशुलैः करधारैः सचम्पकैः ।
अन्यैश्च विविधैर्वृक्षैर्नानापुष्पोपशोभितैः ॥ ५ ॥
गुरुक्षेत्रे समासीनं ध्यासं मतिमतां परम् ।
महामारुतफक्तां सर्वशास्त्रविशारदम् ॥ ६ ॥
अध्यात्मनिष्ठं सर्वज्ञं सर्वभूतहिते रतम् ।
पुराणागमपटारं वेदवेदाङ्गपारंगम् ॥ ७ ॥
पराशरसुतं शान्तं पद्मपत्रायतेक्षणम् ।
ब्रह्ममभ्यासयुः श्रौत्या मुनयः संशितग्रताः ॥ ८ ॥

कश्यपो जमदग्निश्च भरद्वाजोऽथ गौतमः ।
 वसिष्ठो जैमिनिर्घोम्यो मार्कण्डेयोऽथ घात्मिकः ॥ ६ ॥
 विश्वामित्रः शतानन्दो घात्स्यो गार्ग्योऽथ आसुरिः ।
 सुमन्तुर्मार्गधो नाम कण्वो मेघातिथिर्गुरुः ॥ १० ॥
 माण्डव्यश्च्यवनो धूम्रो ह्यसितो देवलस्तथा ।
 मौद्गल्यस्तृणयज्ञश्च पिप्पलादोऽकृतमणः ॥ ११ ॥
 सम्यर्त्तः कौशिको रैभ्यो मैत्रेयो हरितस्तथा ।
 शाण्डिल्यश्च विभाण्डश्च दुर्वासा लोमशस्तथा ॥ १२ ॥
 नारदः पर्वतश्चैध वैशम्पायनगालवौ ।
 भास्करिः पूरणः सूतः पुलस्त्यः कपिलस्तथा ॥ १३ ॥
 उलूकः पुलहो घायुर्देवस्थानश्चतुर्भुजः ।
 सनत्कुमारः पैलश्च कृष्णः कृष्णानुमौतिकः ॥ १४ ॥
 एतैर्मुनिचरैश्चान्यैर्वृतः सत्यवतीसुतः ।
 'रराज स मुनिः श्रीमान् नक्षत्रैरिध चन्द्रमाः ॥ १५ ॥
 तानागतान्मुनीन् सर्वान् पूजयामास वेदवित् ।
 तेऽपि तं प्रतिपूज्यैव कथां चक्रुः परस्परम् ॥ १६ ॥
 कथान्ते ते मुनिश्रेष्ठाः कृष्णं सत्यवतीसुतम् ।
 पप्रच्छुः सशर्यं सर्व्वं तपोवननिवासिनः ॥ १७ ॥

मुनय ऊचुः ।

मुने वेदांश्च शास्त्राणि पुराणागममारतम् ।
 भूतं भव्यं भविष्यञ्च सर्व्वं जानासि घाङ्मयम् ॥ १८ ॥

कष्टेऽस्मिन् दुःखबहुले निःसारे भवसागरे ।
 रागप्रादाकुले रौद्रे विषयोदकसंप्लवे ॥ १९ ॥
 इन्द्रियावर्त्तकलिले दृष्टोर्मिशतसङ्कुले ।
 मोहपङ्काविले दुर्गे लोभगम्भीरदुस्तरे ॥ २० ॥
 निमज्जज्जगदालोक्य निरालम्बमचेतनम् ।
 पृच्छामस्त्वां महाभागं ब्रूहि नो मुनिसत्तम ? ॥ २१ ॥
 श्रेयः किमत्र संसारे भैरवे लोमहर्षणे ।
 उपदेशप्रदानेन लोकानुद्धर्तुमर्हसि ॥ २२ ॥
 दुर्लभं परमं क्षेत्रं कर्तुमर्हसि मोक्षदम् ।
 पृथिव्यां कर्ममूमिञ्च धोतुमिच्छामहे वयम् ॥ २३ ॥
 कृत्वा किल नरः सम्यक् कर्म भूमौ यथोदितम् ।
 प्राप्नोति परमां सिद्धिं नरकञ्च विकर्मतः ॥ २४ ॥
 मोक्षक्षेत्रे तथा मोक्षं प्राप्नोति पुरुषः सुधीः ।
 तस्माद् ब्रूहि महाप्राज्ञं यत्पृष्टोऽसि द्विजोत्तम ? ॥ २५ ॥
 ध्रुत्वा तु पचनं तेषां मुनोनां भावितात्मनाम् ।
 व्यासः प्रोवाच भगवान्भूतमव्यमविष्यचित् ॥ २६ ॥

व्यास उवाच ।

शृणुष्वं मुनयः सर्व्वे वक्ष्यामि यदि पृच्छथ ।
 यः सवादोऽभवत् पूर्व्वमृषीणां ब्रह्मणा सह ॥ २७ ॥
 मेरुपृष्ठे तु विस्तीर्णे नानारत्नविभूषिते ।
 नानाद्रुमलताकीर्णे नानापुष्पोपशोभिते ॥ २८ ॥

नानापक्षिष्ठे रम्ये नानाप्रसचनाकुले ।
 नानासत्यसमाकीर्णे नानाश्रव्यसमन्विते ॥ २६ ॥
 नानावर्णशिलाकीर्णे नानाधातुविभूषिते ।
 नानामुनिजनाकीर्णे नानाश्रमसमन्विते ॥ २७ ॥
 तत्रासीनं जगन्नाथं जगद्वयोर्नि चतुर्मुखम् ।
 जगत्पतिं जगद्वन्द्यं जगदाधारमीश्वरम् ॥ २८ ॥
 देवदानवगन्धर्वैर्यक्षचित्राद्यरोरुभिः ।
 मुनिसिद्धाप्सरोभिश्च धृतमन्यैर्दिवालयैः ॥ २९ ॥
 केचित् स्तुयन्ति तं देवं केचिद्वायन्ति चाग्रतः ।
 केचिद्वाद्यानि धाद्यन्ते केचिन्नृत्यन्ति चापरे ॥ ३० ॥
 एवं प्रमुदिते काले सर्वभूतसमागमे ।
 नानासुगन्धाद्यैः दक्षिणानिलसेविते ॥ ३१ ॥
 भृङ्गाद्यास्तं तदा देवं प्रणिपत्य पितामहम् ।
 इममर्थमृषिचरा पप्रच्छु पितरं द्विजाः ॥ ३२ ॥

ऋषय ऊचुः ।

भगवन्प्रोतुमिच्छामः कर्मभूमिं महीतले ।
 पशुमर्हसि देवेश मोक्षक्षेत्रञ्च दुर्लभम् ॥ ३३ ॥

यास उवाच ।

तेषां वचनमाकर्ण्य ग्राह ग्रह्या सुरेश्वर ।
 पप्रच्छुस्ते यथा प्रज्ञ तत्सर्वं मुनिसत्तमा ॥ ३४ ॥

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे स्वयम्भूत्रह्यर्पिसवादे
 प्रज्ञनिरूपण नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

सप्तविंशोऽध्यायः ।

तत्रादौ भारतपर्ववर्णनम् ।

ब्रह्मोवाच ।

शृणुध्व मुनय सर्व्वे यद्वो वक्ष्यामि साम्प्रतम् ।
पुराण वेदसम्पद्व भुक्तिमुक्तिप्रद शुभम् ॥ १ ॥
पृथिव्या भारत घर्षे कर्मभूमिरदाहता ।
कर्मण कलभूमिश्च स्वर्गञ्च नरक तथा ॥ २ ॥
तस्मिन् घर्षे नर पाप कृत्वा धर्मञ्च भो द्विजा ।
अवश्य फलमाप्नोते अशुभस्य शुभस्य च ॥ ३ ॥
ब्राह्मणाद्या स्वक कर्म कृत्वा सप्तकुसुमयता ।
प्राप्नुवन्ति परा सिद्धि तस्मिन्घर्षे न सशय ॥ ४ ॥
धर्मञ्चार्थञ्च कामञ्च मोक्षञ्च द्विजसत्तमा ।
प्राप्नोति पुरुष सर्व्वं तस्मिन् घर्षे सुसयत ॥ ५ ॥
इन्द्राद्याश्च सुरा सर्व्वे तस्मिन् घर्षे द्विजोत्तमा ।
कृत्वा सुशोभन कर्म देवत्व प्रतिपेदिरे ॥ ६ ॥
अन्येऽपि लेमिरे मोक्षपुरुषा सयतेन्द्रिया ।
तस्मिन् घर्षे बुधा शान्ता धीतरागा विमत्सरा ॥ ७ ॥
ये चापि स्वर्गे तिष्ठन्ति विमानेन गतञ्चरा ।
तेऽपि कृत्वा शत कर्म तस्मिन् घर्षे दिव्य गता ॥ ८ ॥
निपास भारते घर्षे आकाङ्क्षन्ति सदा सुरा ।
स्वर्गापवर्गफलदे तत्पश्याम कदा वयम् ॥ ९ ॥

मुनय ऊचुः ।

यदेतद्भवता प्रोक्तं कर्म नान्यत्र पुण्यदम् ।

पापाय वा सुरध्रेष्ठ वज्जयित्वा च भारतम् ॥ १० ॥

ततः स्वर्गश्च मोक्षश्च मध्यमे तच्च गम्यते ।

न खल्वन्यत्र मर्यानां भूमौ कर्म विधीयते ॥ ११ ॥

तस्माद्विस्तरतो ब्रह्मज्ञानमाकं भारतं वद ।

यदि तेऽस्ति दयाम्मासु यथावस्थितिरेव च ॥ १२ ॥

तस्माद्वर्षमिदं नाथ ये वाम्मिन् वर्षपर्यन्ताः ।

भेदाच्च तस्य वर्षस्य ब्रूहि सध्वानशीयतः ॥ १३ ॥

ब्रह्मोवाच ।

शृणुर्ध्वं भारतं वर्षं नवमेदेन भो द्विजाः ।

समुद्रान्तरिता ज्ञेयास्ते समाश्च परम्परम् ॥ १४ ॥

इन्द्रद्वीपः कशेरुश्च ताम्रपर्णो गमस्तिमान् ।

नागद्वीपस्तथा सौम्या गान्धर्व्या वायव्यस्तथा ॥ १५ ॥

अयन्तु नवमस्तेषां द्वीप सागरसंवृतः ।

योजनानां सहस्रं वै द्वीपोऽयं क्षत्रिणोत्तरः १६ ॥

पूर्व्ये किराता यस्यासन् पश्चिमे यवनास्तथा ।

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्चान्ते स्थिता द्विजा ॥ १७ ॥

इज्यायुद्धवणिज्याद्यैः कर्मभिः कृतपावनाः ।

तेषां संयवद्वारश्च त्रिमिः कर्मभिरिष्यते ॥ १८ ॥

स्वर्गापवर्गाहेतोश्च पुण्यं पापञ्च वै तथा ।

चिन्धयश्च पारियात्रश्च सप्तैषात्र कुलाचलाः ।

तेषां सदस्रशश्चान्ये भूधरा ये समीपगाः ॥ २० ॥

विस्तारोच्छ्रयिणो रम्या विपुलाश्चित्रसानवः ।

कोलाहलः स वैभ्राजो मन्दरो ददुर्दुराचलः ॥ २१ ॥

यातन्धयो वैद्युतश्च मैनाकः सुरसस्तथा ।

तुङ्गप्रस्थो नागगिरिर्गोधनः पाण्डराचलः ॥ २२ ॥

पुष्पगिरिर्वैजयन्ती रैवतोऽव्युद एव च ।

शृङ्गमूकः स गोमन्थः कृतशैलः कृताचलः ॥ २३ ॥

श्रीपार्व्यतश्चकोरश्च शतशोऽन्ये च पर्व्वताः ।

तैर्विमिश्रा जनपदा म्लेच्छाद्याश्चैव भागशः ॥ २४ ॥

तैः पीयन्ते सरिच्छ्रेष्ठास्ता बुध्यध्वं द्विजोत्तमाः ।

गङ्गा सरस्वती सिन्धुश्चन्द्रभागा तथापरा ॥ २५ ॥

यमुना शतद्रुचिपाशा वितस्तीरावती कूहुः ।

गोमती धूतपाषा च बाहुदा च दृषद्वती ॥ २६ ॥

विपाशा देविका चञ्चुर्निष्ठीवा गण्टकी तथा ।

कौशिकी चापगा चैव हिमघत्पादनिःसृताः ॥ २७ ॥

देवस्मृतिर्देववती घातग्नी सिन्धुरेव च ।

वेण्या तु चन्दना चैव सदानीरा मही तथा ॥ २८ ॥

चर्मण्यती वृषी चैव विदिशा वेदवत्यपि ।

सिप्रा ह्यवन्ती च तथा पारियात्रानुगाः स्मृताः ॥ २९ ॥

शोणा महानदी चैव नर्मदा सुरसा क्रिया ।

मन्दाकिनी दशार्णा च चित्रकूटा तथापरा ॥ ३० ॥

चित्रोत्पला वेत्रघषी करमोदा पिशाचिका ।

तथान्यातिलघुश्रोणी विपाषा शैवला नदी ॥ ३१ ॥

सधेयजा शुक्तिमती शकुनी त्रिदिवा क्रमुः ।

ऋक्षपादप्रसूता चै तथान्या घेगवाहिनी ॥ ३२ ॥

सिप्रा पयोप्णी निर्व्विन्ध्या तापी चैव सरिद्धरा ।

वेणा चैतरणी चैव सिनीवाली कुट्टुर्त्ता ॥ ३३ ॥

तोया चैव महागौरी दुर्गा चान्तःशिला तथा ।

विन्ध्यपादप्रसूतास्ता नद्यः पुण्यजलाः शुभा ॥ ३४ ॥

गोदावरी भीमरथी कृष्णाघेणा तथापगा ।

तुङ्गभद्रा सुप्रयोगा तथान्या पापनाशिनी ॥ ३५ ॥

सह्यपादविनिष्क्रान्ता इत्येताः सरितां घराः ।

कृतमाला ताम्रपर्णी पुण्यजा प्रत्यलाघती ॥ ३६ ॥

मलयान्निसमुद्भूताः पुण्याः शीतजलास्त्विमाः ।

पितृसोमर्विदुत्या च घञ्जुला त्रिदिवा च या ॥ ३७ ॥

लाङ्गुलिनी चंशकरा महेन्द्रप्रभवाः स्मृताः ।

सुविकाला कुमारी च मनुगा मन्दगामिनी ॥ ३८ ॥

क्षयापलासिनी चैव शुक्तिमत्प्रभवाः स्मृताः ।

सर्वाः पुण्याः सरस्वत्यः सर्वा गङ्गा समुद्रगा ॥ ३९ ॥

विश्वस्य मातरः सर्वाः सर्वाः पापहरा स्मृताः ।

अन्याः सहस्रशः प्रोक्ताः क्षुद्रनद्यो द्विजोत्तमाः ॥ ४० ॥

प्रातृकालवहाः सन्ति सदाकालवहाश्च याः ।

मत्स्या मुकुटकुल्याश्च कुन्तला काशिकोरलाः ॥ ४१ ॥

अन्धकाश्च कलिङ्गाश्च शमकाश्च वृकैः सह ।
 मध्यदेशा जनपदाः प्रायशोऽमी प्रकीर्तिताः ॥ ४२ ॥
 सहस्य चोत्तरे यस्तु यत्र गोदावरी नदी ।
 पृथिव्यामपि कृत्स्नायां स प्रदेशो मनोरमः ॥ ४३ ॥
 गोवर्द्धनपुरं रम्यं भार्गवस्य महात्मनः ।
 घाहीका घाटधानाश्च सुतीराः कालतोयदाः ॥ ४४ ॥
 अपरास्ताश्च शशाश्च वाहिकाश्च सकेरलाः ।
 गान्धारा यचनाश्च य सिन्धुसौवीरमद्रकाः ॥ ४५ ॥
 शतद्रुहाः कलिङ्गाश्च पारदा हारमूषिकाः ।
 माठराश्चैव कनकाः कैवेया दम्भमालिकाः ॥ ४६ ॥
 क्षत्रियोपमदेशाश्च वैश्यशूद्रकुलानि च ।
 काम्बोजाश्चैव विप्रेन्द्रा वर्वराश्च सर्लौकिकाः ॥ ४७ ॥
 घीराश्चैव तुपाराश्च पङ्कवाधायता नराः ।
 आत्रेयाश्च भरद्वाजाः पुष्कलाश्च दशेरकाः ॥ ४८ ॥
 लम्पकाः शुनःशोकाश्च कुलिका जाङ्गलैः सह ।
 औपध्यश्चलचन्द्रा च किरातानाञ्च जातयः ॥ ४९ ॥
 तोमरा हंसमार्गाश्च काश्मीराः करुणास्तथा ।
 शूलिकाः कुहकाश्चैव मागधाश्च तथैव च ॥ ५० ॥
 एते देशा उदीच्यास्तु प्राच्यान् देशास्त्रिविधतः ।
 अन्धा घामङ्कुराश्च बह्वर्षाश्च रुक्मागन्धकाः ॥ ५१ ॥
 तथापरेऽङ्गा बङ्गाश्च मरुदा मालवर्तिकाः ।
 भद्रतुङ्गाः प्रतिजया भार्याङ्गाश्चापमर्द्दकाः ॥ ५२ ॥

प्राग्ज्योतिषाश्च मद्राश्च विदेहास्ताम्रलिप्तकाः ।

मल्ल मगधका नन्दाः प्राच्या जनपदास्तथा ॥ ५३ ॥

तथापरे जनपदा दक्षिणापथवासिनः ।

पूर्णाश्च केरलाश्चैव गोलाङ्गूलास्तथैव च ॥ ५४ ॥

ऋषिका मुषिकाश्चैव कुमारा रामडाः शकाः ।

महाराष्ट्रा माहिरका कलिङ्गाश्चैव सत्त्वशः ॥ ५५ ॥

धार्मीराः सह वैशिक्या भटव्या सरथाश्च ये ।

पुलिन्दाश्चैव मौलेया वैदर्भा दन्तर्जैः सह ॥ ५६ ॥

पौलिका मौलिकाश्चैव अश्मका भोजवर्द्धनाः ।

कौलिकाः कुन्तलाश्चैव दम्भका नीलकालकाः ॥ ५७ ॥

दक्षिणात्याम्बुमो देशा अपरान्ताग्निबोधत ।

शूर्पारकाः कालिङ्गा लोलाम्तालकट्टै सह ॥ ५८ ॥

इत्येते ह्यपरान्ताश्च शृणुष्व विन्ध्यवासिनः ।

मलजाः कर्षशाश्चैव मेलकाश्चोलवैः सह ॥ ५९ ॥

उत्तमार्गा दशार्णाश्च भोजाः किष्किन्धकैः सह ।

तोपलाः कोशलाश्चैव त्रैपुरा वैदिशाम्नथा ॥ ६० ॥

तुम्युराम्नु चराश्चैव यवनाः पयनैः सह ।

अमया रुण्डिकेराश्च चन्चरा होत्रधर्तयः ॥ ६१ ॥

एते जनपदा सत्त्वै तत्र विन्ध्यनिवासिनः ।

अतो देशान् प्रवक्ष्यामि पर्वताश्रयिणश्च ये ॥ ६२ ॥

नीदारास्तुगमार्गाश्च कुरवस्तङ्गणा गताः ।

कर्णप्रावरणाश्चैव ऊर्णा दर्घाः सङ्कुन्तकाः ॥ ६३ ॥

चित्रमार्गा मालवाश्च किरातास्तोमरैः सह ।
 कृतत्रेतादिकश्चात्र चतुर्युगकृतो विधिः ॥ ६४ ॥
 एयं तु भारतं धर्मं नवसंस्थानसंस्थितम् ।
 दक्षिणे परतो यस्य पूर्वं चैव महोदधिः ॥ ६५ ॥
 हिमयानुत्तरेणास्य कार्मुकस्य यथा गुणः ।
 तदेतद्वारतं धर्मं सर्व्ववीजं द्विजोत्तमाः ॥ ६६ ॥
 ब्रह्मत्यममरेशत्वं देवत्वं मरुतां तथा ।
 मृगयक्षाप्सरोयोनिं तद्वत् सर्पसरीसृपाः ॥ ६७ ॥
 स्थावराणाञ्च सर्व्वेषामितो विप्रा शुभाशुभैः ।
 प्रयान्ति कर्मभूर्धिप्रा नान्या लोकेषु विद्यते ॥ ६८ ॥
 देवानामपि भो विप्राः सदैवैव मनोरथः ।
 अपि मानुष्यमाप्स्यामो देवत्वात् प्रत्युताः क्षिती ॥ ६९ ॥
 मनुष्यः कुरते यत्तु तत्र शक्यं सुरासुरैः ।
 तत्कर्मनिगङ्गप्रस्तैस्तत्कर्मक्षपणोन्मुखैः ॥ ७० ॥
 न भारतसम धर्मं पृथिव्यामस्ति भो द्विजाः ।
 यत्र विप्रादयो वर्णाः प्राप्नुवन्त्यभिषाञ्छितम् ॥ ७१ ॥
 धन्यास्ते भारते धर्मं जायन्ते ये नरोत्तमाः ।
 धर्मार्थकाममोक्षाणां प्राप्नुवन्ति महाफलम् ॥ ७२ ॥
 प्राप्यते यत्र तपसः फलं परमदुर्लभम् ।
 सर्व्वदानफलञ्चैव सर्व्वयज्ञफलं तथा ॥ ७३ ॥
 तीर्थयात्राफलञ्चैव गुरुसेवाफलं तथा ।
 देवताराधनफलं स्वाध्यायस्य फलं द्विजाः ॥ ७४ ॥

यत्र देवाः सदा हृष्टा जन्म चाञ्छन्ति शोभनम् ।
 नानाव्रतफलञ्चैव नानाशास्त्रफलं तथा ॥ ७५ ॥
 अहिंसादिफलं सम्यक्फलं सर्व्वातिवाञ्छितम् ।
 ब्रह्मचर्य्यफलञ्चैव गार्हस्थ्येन च यत्फलम् ॥ ७६ ॥
 यत् फलं वनवासेन सन्यासेन च यत्फलम् ।
 इष्टापूर्त्तफलञ्चैव तथान्यच्छुभकर्मणाम् ॥ ७७ ॥
 प्राप्यते भारते वर्षे न चान्यत्र द्विजोत्तमा ।
 फः शक्नोति गुणान् वक्तुं भारतस्यापिलान्द्विजाः ॥ ७८ ॥
 एवं सम्यङ्गया प्रोक्तं भारत वर्षमुत्तमम् ।
 सर्व्वपापहरं पुण्यं धन्यं बुद्धिविचर्द्धनम् ॥ ७९ ॥
 य इदं शृणुयान्नित्यं पठेद्वा नियतेन्द्रियः ।
 सर्व्वपापैर्विनिर्मुक्तो विष्णुलोकं स गच्छति ॥ ८० ॥

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे भारतवर्षानुकीर्त्तनं
 नाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥

अष्टाविंशोऽध्यायः ।

तत्रादौ कोणादित्यमाहात्म्यवर्णनम् ।

ब्रह्मोवाच ।

तत्रास्ते भारते वर्षे दक्षिणोदधिसंस्थितः ।

ओण्ड्रदेश इति ख्यातः स्वर्गमोक्षप्रदायकः ॥ १ ॥

समुद्रादुत्तरं तावदुयावद्विरजमण्डलम् ।

देशोऽसौ पुण्यशीलानां गुणैः सर्वैरलङ्कृतः ॥ २ ॥

तत्र देशे प्रसूता ये ब्राह्मणाः संयतेन्द्रियाः ।

तपःस्वाध्यायनिरता घन्याः पूज्याश्च ते सदा ॥ ३ ॥

श्राद्धे दाने विवाहे च यज्ञे चाचार्य्यकर्मणि ।

प्रशस्ताः सर्वकार्य्येषु तत्र देशो द्वया द्विजाः ॥ ४ ॥

पदकर्मनिरतास्तत्र ब्राह्मणा वेदपारगाः ।

इतिहासविदश्चैव पुराणार्थविशारदाः ॥ ५ ॥

सर्वशास्त्रार्थकुशला यज्जानो धीतमत्सराः ।

अग्निहोत्ररताः केचित् केचित् सार्त्ताग्रितत्पराः ॥ ६ ॥

पुत्रदारधनैर्युक्ता दातारः सत्यवादिनः ।

नियसन्तुक्कले पुण्ये यज्ञोत्सवविभूषिते ॥ ७ ॥

इहैऽपि त्रयो घर्णाः क्षत्रियाद्याः सुसयताः ।

म्यधम्मनिरताः शान्तास्तत्र तिष्ठन्ति धार्मिकाः ॥ ८ ॥

। कोणादित्य इति रयातस्तस्मिन् देशे व्यवस्थितः ।

। यं दृष्ट्वा भास्करं मर्त्यः सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ९ ॥

मुनय ऊचुः ।

धातुमिच्छाम तद्गृहि क्षेत्रं सूर्य्यस्य साम्प्रतम् ।

तस्मिन् देशे सुरथेष्ट यत्रास्ते स दिवाकरः ॥ १० ॥

ब्रह्मोवाच ।

रूपणस्योदधेस्तारे पवित्रे सुमनोहरे ।

सूर्य्यत्र धातुकाकीर्णे देशे सूर्य्यगुणान्विते ॥ ११ ॥

विलिख्य पद्मं मेघावो रक्तचन्दनचारिणा ।

अष्टपत्रं केसराढ्यं घर्तुलं चोर्द्धकर्णिकम् ॥ २३ ॥

तिलतण्डुलतोयञ्च रक्तचन्दनसंयुतम् ।

रक्तपुष्पं सदर्भञ्च प्रक्षिपेत्ताम्रभाजने ॥ २४ ॥

ताम्रामायेऽर्कपत्रस्य पुटैः कृत्वा तिलादिकम् ।

विधाय तन्मुनिश्रेष्ठाः पात्रं पात्रेण चिन्त्यसेत् ॥ २५ ॥

करन्यासाङ्गविन्यासं कृत्वाङ्गैर्ह्युक्ष्यादिभिः ।

आत्मानं भास्करं ध्यात्वा सम्यक् धृद्धासमन्वितः ॥ २६ ॥

मध्ये चाग्निदले धीमात्रैर्भृते श्वासने दले ।

फामारिगोचरे चैव पुनर्मध्ये च पूजयेत् ॥ २७ ॥

प्रभूतं विमलं सारमाराध्यं परमं सुखम् ।

सम्पूज्य पद्ममावाप्य गगनात्तत्र भास्करम् ॥ २८ ॥

कर्णिकोपरि सन्ध्याप्य ततो मुद्रां प्रदर्शयेत् ।

कृत्वा स्नानादिकं मध्यं ध्यात्वा तं तुल्यमादितः ॥ २९ ॥

वित्तपद्मोपरि रविं तेजोविश्ये व्ययस्थितम् ।

विद्वांसं त्रिभुजं रत्नं पद्मपत्रावृणाम्बरम् ॥ ३० ॥

सर्व्वलक्षणसंयुतं सर्व्वामरणभूयितम् ।

सुरूपं परमं शान्तं प्रमासृज्यमण्डितम् ॥ ३१ ॥

उद्यन्तं भास्करं कृत्वा साम्द्रमिन्दूरमग्निम् ।

ततस्तत्पात्रमादाय जानुभ्यां धारणीं गतः ॥ ३२ ॥

कृत्वा शिरसि तत्पात्रमेकविलसन्तु धाम्पयतः ।

श्वशरेण तु मण्ड्रेण गृह्णां गार्ह्यं निषेदयेत् ॥ ३३ ॥

अदीक्षितस्तु तस्यैव नाम्नेवाभ्यं प्रयच्छति ।
 श्रद्धया भावयुक्तेन भक्तिप्राप्तो रविर्यत ॥ ३४ ॥
 अग्निनिर्झतिचाप्यवीशमध्यपूर्वादिदिक्षु च ।
 हृच्छिरश्च शिखाचर्मनेत्राण्यस्त्रञ्च पूजयेत् ॥ ३५ ॥
 दत्ताभ्यं गन्धधूपञ्च दीप नैवेद्यमेव च ।
 जप्त्वा स्तुत्वा नमस्कृत्वा मुद्रा यद्वा घिसर्जयेत् ॥ ३६ ॥
 ये धार्ढ्यं सम्प्रयच्छन्ति सूर्याय नियतेन्द्रिया ।
 ब्राह्मणा क्षत्रिया वैश्या स्त्रिय शूद्राश्च सयता ॥ ३७ ॥
 भक्तिभावेन सतत विशद्देनान्तरात्मना ।
 ते भुक्त्वाभिमतान् कामान् प्राप्नुवन्ति परा गतिम् ॥ ३८ ॥
 त्रैलोक्यदीपक देव भास्कर गगनेस्तम् ।
 ये सध्रयन्ति मनुजास्ते स्युः सुखस्य भाजनम् ॥ ३९ ॥
 यावन्न दीयते धार्ढ्यं भास्कराय यथोदितम् ।
 तावन्न पूजयेद्विष्णु शङ्कर वा सुरेश्वरम् ॥ ४० ॥
 तस्मात् प्रयत्नमास्थाय दद्याद्ध्यं दिने दिने ।
 आदित्याय शुचिर्भूत्वा पुष्पैर्गन्धैर्मनोरमै ॥ ४१ ॥
 एव ददाति यच्चाभ्यं सप्तम्या सुसमाहित ।
 आदित्याय शचि स्नात स लभेदीप्सित फलम् ॥ ४२ ॥
 रोगाद्विमुच्यते रोगी चित्तार्थी लभते धनम् ।
 विद्या प्राप्नोति विद्यार्थी सुतार्थी पुत्रवान् भवेत् ॥ ४३ ॥
 य य काममभिधायन् सूर्यायाभ्यं प्रयच्छति ।
 तस्य तस्य फल सम्यक् प्राप्नोति पुरः सुधी ॥ ४४ ॥

स्नात्वा वै सागरे दत्त्वा सूर्यायाभ्यं प्रणम्य च
 नरो वा यदि वा नारा सर्वकामफलं लभेत् ॥ ४५ ॥
 ततः सूर्यालयं गच्छेत् पुष्पमादाय चाग्नयतः ।
 प्रविश्य पूजयेद्भानुं हृत्वा तु त्रिः प्रदक्षिणम् ॥ ४६ ॥
 पूजयेत् परया भक्त्या कोणाकं मुनिसत्तमाः ।
 गन्धं पुष्पैस्तथा दीपैर्धूपैर्नैवेद्यकैरपि ॥ ४७ ॥
 दण्डयन् प्रणिपातेश्च जयशब्दैस्तथा स्तवैः ।
 पर्यं सम्पूज्य तं देवं सहस्रांशं जगत्पतिम् ॥ ४८ ॥
 दशानामभ्येधाना फलं प्राप्नोति मानवः ।
 सर्वपापपिनिर्मुक्तो युधा दिव्यवपुर्नरः ॥ ४९ ॥
 सप्तापरान् सप्त परान् यशानुदधृत्य भो द्विजाः ।
 विमानेनार्चयेत्तं कामगेन सुपर्शसा ॥ ५० ॥
 उपर्णीयमानो गन्धर्वैः सृष्ट्यलोकं स गच्छति ।
 भुक्त्वा तत्र परान् भोगान् यावदाभूतसंश्रयम् ॥ ५१ ॥
 पुण्यक्षयादिहापातः प्रपरे योगिनां कुले ।
 यत्तुर्व्यंशे भवेद्विप्रः स्वधर्मनिरतः शूचिः ॥ ५२ ॥
 योगं विवस्वतः प्राप्य ततो मोक्षमवाप्नुयात् ।
 क्षेत्रे मानि निने पश्ये यात्रां दमनमञ्जिकाम् ॥ ५३ ॥
 यः करोति नरस्तत्र गृण्योतः स गच्छेत् लभेत् ।
 शयनीत्यापने भानोः संव्राम्त्यां विगुपायने ॥ ५४ ॥
 पारे रथेऽग्निर्धौ चैव पर्यकाण्डेऽथवा द्विजाः ।
 ये नत्र यात्रां कुर्यन्ति धनया संवतेन्द्रिया ॥ ५५ ॥

विमानेनार्कवर्णेन सूर्य्यलोकं व्रजन्ति ते ।
 आस्ते तत्र महादेवस्तीरे नदनदीपने ॥ ५६ ॥
 रामेश्वर इति ख्यात सर्वकामफलप्रद ।
 ये तं पश्यन्ति कामारि स्नात्वा सम्यग्महोदधौ ॥ ५७ ॥
 गन्धैः पुष्पैस्तथा धूदोपैर्नैवेद्यकैर्ब्रवीत ।
 प्रणिपातैस्तथा स्तोत्रैर्गीतैर्वाद्यैर्मनोहरैः ॥ ५८ ॥
 राजसूयफलं सम्यग्चाग्निमेघफलं तथा ।
 प्राप्नुवन्ति मशतमान संसिद्धिं परमा तथा ॥ ५९ ॥
 कामगेन विमानेन किङ्किणीजालमालिना ।
 उपगोयमाना गन्धर्वैः शिथलोकं व्रजन्ति ते ॥ ६० ॥
 आभूतसंप्लवं याचद्भुक्त्वा भोगान्मनोरमान् ।
 पुण्यक्षयादिहागत्य चातुर्वेदा भवन्ति ते ६१ ॥
 शाङ्करं योगमास्थाय ततो मोक्षं व्रजन्ति ते ।
 यस्तत्र सचितु क्षेत्रे प्राणास्त्यजति मानव ॥ ६२ ॥
 सूर्य्यलोकमास्थाय देवयन्मोक्षते दिवि ।
 पुनर्मानुषता प्राप्य राजा भवति धार्मिकः ॥ ६३ ॥
 योगं रवेः समासाद्य ततो मोक्षमवाप्नुयात् ।
 परं मया मुनिश्रेष्ठाः प्रोक्तं क्षेत्रं सुदुर्लभम्
 कोणार्कस्योदघेस्तीरे मुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ ६४ ॥
 इति श्रात्राक्षे महापुराणे स्वयम्भु ऋषिसवादे कोणादि-
 त्यमाहात्म्यकीर्तनं नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

एकोनविंशोऽध्यायः ।

तत्रादौसूर्यपूजाप्रकरणम्

मुनय ऊच ।

श्रुतोऽस्माभिः सुरश्रेष्ठ भगवा यदुदाहृतम् ।
भास्करस्य परं क्षेत्रं भुक्तिपुक्तिफलप्रदम् ॥ १ ॥
न तृप्तिमधिगच्छाम शृण्वन्तः सुखदां कथाम् ।
तद्य चक्रोद्भूतमथा पुण्यामादित्यस्याघनाशिनाम् ॥ २ ॥
अतः परं सुरश्रेष्ठ ब्रूहि नो यदनाघर ।
देयपूजाफलं यद्य यद्य दानफलं प्रभो ॥ ३ ॥
प्रणिपाने नमस्कारे तथा चैव प्रदक्षिणे ।
दीपधूपप्रदाने च संमार्जनविधौ च यत् ॥ ४ ॥
उपवासे च यत् पुण्यं यत् पुण्यं नक्तभोजने ।
अर्घ्यश्च कीदृशः प्रोक्तः कुत्र वा संप्रदीयते ॥ ५ ॥
कथञ्च क्रियते भक्ति कथं देवः प्रसीदति ।
एतत् सर्वं सुरश्रेष्ठ श्रोतुमिच्छामहे वयम् ॥ ६ ॥

ब्रह्मोवाच ।

अर्घ्यं पूजादिकं सर्वं भास्करस्य द्विजात्तमाः ।
भक्तिं त्र्यदां समाधिञ्च कथ्यमानं निबोधत ॥ ७ ॥
मनसा भावना भक्तिरिष्टा श्रद्धा च कोत्स्यते ।
ध्यानं समाधिरित्युक्तं शृणुध्वं सुसमाहिताः ॥ ८ ॥

तत्कथां श्रावयेद् यस्तु तद्भक्तान् पूजयित्वा ।
 अग्निशुभ्रपक्षचैव स वै भक्तः सनातनः ॥ ६ ॥
 तच्चित्तस्तन्मनाश्चैव देवपूजारतः सदा ।
 तत्कर्मभृद्भगवेद् यस्तु वै भक्तः सनातनः ॥ १० ॥
 देवार्थे क्रियमाणानि यः कर्माण्यनुमन्यते ।
 कीर्तनाद्वा परो विप्राः स वै भक्ततरो नरः ॥ ११ ॥
 नाम्यसूयेत तद्भक्तान् ननिन्द्याद्यान्यदेवताम् ।
 आदित्यव्रतचारी च स वै भक्ततरो नरः ॥ १२ ॥
 गच्छंस्तिष्ठन् स्वपञ्चिन्ननुन्मिषन्निमिषन्नपि ।
 यः स्मरेद्भगाम्बरं नित्यं स वै भक्ततरो नरः ॥ १३ ॥
 पथंविधा त्वयं भक्तिः सदा कार्या विज्ञानता ।
 भक्त्या समाधिना चैव स्वयेन मनसा तथा ॥ १४ ॥
 क्रियते नियमो यस्तु दानं विप्राय दीयते ।
 प्रतिगृह्णन्ति तं देवा मनुष्याः पितरम्नथा ॥ १५ ॥
 पत्रं पुष्पं फलं तोयं यद्भक्त्या समुपाहृतम् ।
 प्रतिगृह्णन्ति तद्देवो नास्त्रिकान् घर्ज्जयन्ति च ॥ १६ ॥
 भावशुद्धिः प्रयोक्त्या नियमाचारमयुता ।
 भावशुद्ध्या क्रियते यत्तत् सर्वं सफलं भवेत् ॥ १७ ॥
 स्तुतिजप्योपहारेण पूजयापि विवस्वतः ।
 उपवासेन भक्त्या वै सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १८ ॥
 प्रणिधाय शिरो भूम्यां नमस्कारं करोति यः ।
 तत्क्षणात् सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ॥ १९ ॥

भक्तियुक्तो नरो योऽसौ रवेः कुर्यात् प्रदक्षिणाम् ।
 प्रदक्षिणीकृत्वा तेन सप्तद्वीपा घसुन्धरा ॥ २० ॥
 सूर्यं मनसि यः कृत्वा कुर्याद्ध्योमप्रदक्षिणाम् ।
 प्रदक्षिणीकृत्वास्तेन सर्व्वे देवा भवन्ति हि ॥ २१ ॥
 एकाहारो नरो भूत्वा पृथ्वा योऽर्चयते रविम् ।
 नियमप्रतचारी च भवेद्भक्तिसमन्वितः ॥ २२ ॥
 सप्तम्यां वा महाभागा सोऽश्वमेधफलं लभेत् ।
 अहोरात्रोपवासेन पूजयेद् यस्तु भास्करम् ॥ २३ ॥
 सप्तम्यामथवा पृथ्वा स याति परमां गतिम् ।
 कुण्डपक्षस्य सप्तम्या सोपगसो जिनेन्द्रियः ॥ २४ ॥
 सर्व्वरत्नोपहारेण पूजयेद् यस्तु भास्करम् ।
 पद्मप्रभेण यानेन सूर्य्यलोकं स गच्छति ॥ २५ ॥
 शुक्लपक्षस्य सप्तम्यामुपशसपरो नरः ।
 सर्व्वशुक्लोपहारेण पूजयेद् यस्तु भास्करम् ॥ २६ ॥
 सर्व्वपापविनिर्मुक्तः सूर्य्यलोकं स गच्छति ।
 अर्कसम्पुटसंयुक्तमुदकं प्रसृतं पिबेत् ॥ २७ ॥
 क्रमवृद्ध्या चतुर्व्विंशमेकैकं क्षपयेत् पुनः ।
 द्वाभ्यां संवत्सराभ्यान्तु समाप्तनियमो भवेत् ॥ २८ ॥
 सर्व्वकामप्रदा ह्येषा प्रशस्ता ह्यर्कसप्तमी ।
 शुक्लपक्षस्य सप्तम्यां यदादित्यदिनं भवेत् ॥ २९ ॥
 सप्तमी विजया नाम तत्र दत्तं महत् फलम् ।
 स्नानं दानं तपो होम उपवासस्तथैव च ॥ ३० ॥

दीपदाता स्वर्गलोके दीपमालेव राजते ।

यः समालभते नित्यं कुङ्कुमागुरुचन्दनैः ॥ ४२ ॥

सम्पद्यते नरः प्रेत्य धनेन यशसा श्रिया ।

रक्तचन्दनसमिश्रे रक्तपुष्पैः शुचिर्नरः ॥ ४३ ॥

उदयेऽर्घ्यं सदा दत्त्वा सिद्धिं संयत्सरालभेत् ।

उदयात् पर्यिसेत यावदस्तमने स्थितः ॥ ४४ ॥

जपन्नभिमुखः किञ्चिन्मन्त्रं स्तोत्रमथापि वा ।

आदित्यप्रतमेतत्तु महापातफनाशनम् ॥ ४५ ॥

अर्घ्येण सहितञ्चैव सर्व्वं साङ्गं प्रदापयेत् ।

उदये श्रद्धया युक्तं सर्व्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ४६ ॥

सुवर्णधेन्वनहुहवसुधावस्त्रसंयुतम् ।

अर्घ्यप्रदाता लभते सप्तजन्मानुगं फलम् ॥ ४७ ॥

अग्नौ तोयेऽन्तरिक्षे च शुक्लौ भूम्यां तथैव च ।

प्रतिमायां तथा पिण्ड्या दैवमर्घ्यं प्रयत्नतः ॥ ४८ ॥

नापसर्व्वं न सत्यञ्च दद्यादभिमुखः सदा ।

सद्युतं गुग्गुलुं धापि रवेर्भक्तिसमन्वितः ॥ ४९ ॥

तत्क्षणात् सर्व्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ।

श्रीवासं चतुरस्रञ्च देवदारुं तथैव च ॥ ५० ॥

कर्पूरागुरुद्रूपानि दत्त्वा वै स्वर्गगामिनः ।

अयने तूत्तरे सूर्य्यमथवा दक्षिणायने ॥ ५१ ॥

पूजयित्वा विशेषेण सर्व्वपापैः प्रमुच्यते ।

विपुत्रेष्परागेषु षडशीतिमुखेषु च ॥ ५२ ॥

पूजयित्वा विशेषेण सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
 एव वेलासु सर्वसु सर्वकालञ्च मानय ॥ ५३ ॥
 भक्त्या पूजयते योऽकं सोऽर्कलोके महायते ।
 कसुरैः पापसे पूरे फलमूर्धूतोदने ॥ ५४ ॥
 घलिं कृत्वा तु सूर्याय सर्वान् कामानवाप्नुयात् ।
 घृतेन तर्पणं कृत्वा सर्वसिद्धौ भवेन्नर ॥ ५५ ॥
 क्षीरेण तर्पणं कृत्वा मनस्तार्त्तैर्न युज्यते ।
 दध्ना तु तर्पणं कृत्वा कार्थसिद्धिर्लभेन्नर ॥ ५६ ॥
 क्षान्तार्थमाहरेद्वा यस्तु जलं भानो समाहित ।
 तीर्थेषु शुचितापत्रं स याति परमा गतिम् ॥ ५७ ॥
 छत्रं ध्वजं चित्तानं वा पत्राका चामराणि च ।
 श्रद्धया मानये दस्या गतिर्मिष्टामवाप्नुयात् ॥ ५८ ॥
 यद्वयद्वद्रथं नरो भक्त्या भादित्याय प्रयच्छति ।
 तत्तस्य शतसाहस्रमुन्पादयति भारकर ॥ ५९ ॥
 मानसं वाचिकं वापि कायजं यच्च दुरुरुनम् ।
 सर्वं सूर्यप्रसादेन तद्दशैव त्रयोदश ॥ ६० ॥
 एकाहेनापि यद्भानो पूजाया प्राप्यते फलम् ।
 यथोक्तदक्षिणैर्घिर्नैर्न तत् ऋतुशतैरपि ॥ ६१ ॥

इति श्रीब्राह्म महापुराणे सूर्यपूजादि नामैकोन

त्रिंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

त्रिंशोऽध्यायः ।

आदित्यमाहात्म्यवर्णनम्

मुनय ऊचुः ।

अहो देवस्य माहात्म्यं श्रुतमेवं जगत्पते ।

भास्करस्य सुरश्रेष्ठ चदनस्तेषु दुल्लभम् ॥ १ ॥

भूयः प्रब्रूहि देवेश यत् पृच्छामो जगत्पते ।

श्रोतुमिच्छामहे ब्रह्मन् परं कौतूहलं हि नः ॥ २ ॥

गृहस्थो ब्रह्मचारी च घातप्रस्थोऽथ मिश्रुकः ।

य इच्छेन्मोक्षमास्थ तुं देवतां कां यजेन सः ॥ ३ ॥

कुतो ह्यस्याक्षयः स्वर्गं कुतो नि श्रेयसं परम् ।

स्वर्गतश्चैष किं कुर्याद्भूयेन च ध्ययने पुनः ॥ ४ ॥

देवानां चात्र को देवः पितृणाञ्चैष क पिता ।

यस्मात् परतरं नास्ति तन्मे ब्रूहि सुरेश्वर ॥ ५ ॥

कुतः सृष्टमिदं विश्वं सत्त्वं स्याद्वरजङ्गमम् ।

प्रलये च कमभ्येति तद्वान् यत्कुर्महति ॥ ६ ॥

ब्रह्मावाच ।

उद्यन्तेवैष कुरुने जगद्विति मिरं करैः ।

नातः परतरो देवः कश्चिदन्यो द्विजोत्तमाः ॥ ७ ॥

अनादिनिधनो ह्येष पुरुषः शाश्वतोऽव्ययः ।

तापपत्येष त्रौल्लोकान् भवनरश्मिभिरुत्त्वणः ॥ ८ ॥

सर्व्यदेवमयो ह्येष तपता तपनो घट ।

सर्व्यस्य जगतो नाथ सर्व्यसाक्षी जगत्पति ॥ ६ ॥

सक्षिपन्त्येव भूतानि तथा विसृजने पुन ।

एष भाति तपत्येव धरत्येव गमस्तिमि ॥ १० ॥

एष धाता विधाता च भूनादिमूनमाचन ।

न ह्येष क्षयमायानि नित्यमक्षयमण्डल ॥ ११ ॥

पितृणा च पिता ह्येष देवताना हि देवता ।

ध्रुवस्थान स्मृतं होतृद्वयम्मात्रं च्यवने पुन ॥ १२ ॥

सर्गकाले जगत् सृजन्मादिन्यान् सम्यसूरने ।

प्रलये च तमन्ये ते भास्कर दीप्ननेत्रसम् ॥ १३ ॥

योगिनश्च प्यमरयातास यस्या गृहकृतेवत् ।

घायुर्मन्वा वितन्त्यस्मिन्ते नोराशी दिगकर्तृ ॥ १४ ॥

अस्य रश्मिसहस्राणि शाखा इव विहङ्गमा ।

घसन्त्याश्चि य मुनय ससिद्धा देवते सह ॥ १५ ॥

गृहस्था जनकायाश्च राजानो योगधर्मिण ।

पालं विनादयन्त्येव ऋषयो ब्रह्मरादिन ॥ १६ ॥

घानप्रस्थाश्च ये चान्ये व्यासाया मिश्रयन्तथा ।

योगमाध्याय सर्वे ते प्रविष्टा सूर्यमण्डलम् ॥ १७ ॥

शुको व्यासपुन श्रोमान् योगप्रममयाप्य स ।

आदित्यकिरणान् गत्वा ह्यपुनर्भायमास्थित ॥ १८ ॥

शत्रुमात्रश्रुतिमुखा ब्रह्मचिणुशेरादय ।

प्रत्यक्षोऽयं परो देव सूर्यस्तिमिरनाशन ॥ १९ ॥

चतुर्थी तस्य या मूर्तिर्नाम्ना त्वष्टेति विश्रुता ।
 स्थिता धनस्पती सा तु औषधीषु च सर्व्वतः ॥ ३१ ॥
 पञ्चमी तस्य या मूर्तिर्नाम्ना पूषेति विश्रुता ।
 अग्ने द्ययस्थिता सा तु प्रजा पुष्पाति नित्यश ॥ ३२ ॥
 मूर्तिर्' यष्टी रवेर्या तु अर्य्यमा इति विश्रुता ।
 धायो संसर्णा सा तु देवो'पेय समाश्रिता ॥ ३३ ॥
 मानोर्या सप्तमी मूर्तिर्नाम्ना भगेति विश्रुता ।
 भूतिप्यधस्थिता सा तु शरीरैषु च देहिनाम् ॥ ३४ ॥
 मूर्तिर्या त्वष्टमी तस्य विवस्वानिति विश्रुता ।
 अग्नी प्रतिष्ठिता सा तु पचत्यन्नं शरीरिणाम् ॥ ३५ ॥
 नवमी चित्रमानोर्या मूर्तिर्विष्णुश्च नामत ।
 प्रादुर्भवति सा नित्य देवानामरिसूदनी ॥ ३६ ॥
 दशमी तस्य या मूर्तिरंशुमानिति विश्रुता ।
 धायो प्रतिष्ठिता सा तु प्रहादयति वै प्रजाः ॥ ३७ ॥
 मूर्तिस्त्येकादशी मानोर्नाम्ना धरुणसञ्जिता ।
 जलेष्वधस्थिता सा तु प्रजां पुष्पाति नित्यशः ॥ ३८ ॥
 मूर्तिर्या द्वादशी मानोर्नाम्ना मित्रेति संज्ञिता ।
 लोकाना सा हितार्थाय स्थिता चन्द्रसरिच्छे ॥ ३९ ॥
 धायुमक्षस्तपस्तेपे स्थित्वा मैत्रेण चक्षुषा ।
 अनुगृह्णन् सदा भक्तान् धरेर्नानाविधैस्तु सः ॥ ४० ॥
 एवं सा जगता मूर्तिर्हिताय विहिता पुरा ।
 तत्र मित्र स्थितो यस्मात्तस्मान्मित्र परं स्मृतम् ॥ ४१ ॥

तस्मादन्यत्र भक्तिर्हि न कार्या शुभमिच्छता ।

यस्माद्दृष्टेरगम्यास्ते देवा विष्णुपुरोगमाः ॥ २० ॥

अतो भवद्विः सततमभ्यर्च्यो भगवान् रविः ।

स हि माता पिता चैव कृत्स्नस्य जगतो गुरु ॥ २१ ॥

अनाद्यो लोकनाथोऽसौ रश्मिमाली जगत्पतिः ।

मिश्रत्वे च स्थितो यस्मात्तपस्तेपे द्विजोत्तमा ॥ २२ ॥

अनादिनिधनो ब्रह्मा नित्यश्चाक्षय एव च ।

सृष्ट्वा ससागरान् द्वीपान् भुवनानि चतुर्दश ॥ २३ ॥

लोकानां स हितार्थाय स्थितचन्द्रसरित्ते ।

सृष्ट्वा प्रजापतीन् सर्वान्सृष्ट्वा च विविधा प्रजाः ॥ २४ ॥

तत शतसहस्राशुरव्यक्तश्च पुनः स्वयम् ।

कृत्वा द्वादशधात्मानमादित्यमुपपद्यते ॥ २५ ॥

इन्द्रो धाताथ पर्जन्यस्त्वष्टा पूषार्क्यमा भगः ।

विष्वान् विष्णुरंशश्च वरुणो मिश्र एव च ॥ २६ ॥

आभिर्द्वादशभिस्तेन सूर्येण परमात्मना ।

कृत्स्नं जगदिदं व्याप्त मूर्तिभिश्च द्विजोत्तमाः ॥ २७ ॥

तस्य या प्रथमा मूर्तिरादित्यस्येन्द्रसंज्ञिता ।

स्थिता सा देवराजत्वे देवानां रिपुनाशिनी ॥ २८ ॥

द्वितीया तस्य या मूर्तिर्नाम्ना धातेति कीर्तिता ।

स्थिता प्रजापतित्वेन विविधा सृजते प्रजाः ॥ २९ ॥

तृतायार्कस्य या मूर्तिर् पर्जन्य इति विधृता ।

मेघेष्वेव स्थिता सा नु वर्पते च गमस्तिभिः ॥ ३० ॥

चतुर्थी तस्य या मूर्तिर्नाम्ना त्वष्टेति विश्रुता ।
 स्थिता धनस्पती सा तु औपधीषु च सर्व्वतः ॥ ३१ ॥
 पञ्चमी तस्य या मूर्तिर्नाम्ना पूषेति विश्रुता ।
 अन्धे व्यवस्थिता सा तु प्रजां पुष्पाति नित्यशः ॥ ३२ ॥
 मूर्तिः षष्ठो रवेर्या तु अर्घ्यमा दाति विश्रुता ।
 घायोः संसरणा सा तु देवेष्वेव समाश्रिता ॥ ३३ ॥
 भानोर्या सप्तमी मूर्तिर्नाम्ना भगेति विश्रुता ।
 भूतिष्ववस्थिता सा तु शरीरेषु च देहिनाम् ॥ ३४ ॥
 मूर्तिर्या त्वष्टमी तस्य विषखानिति विश्रुता ।
 अग्नीं प्रतिष्ठिता सा तु पचत्यन्नं शरीरिणाम् ॥ ३५ ॥
 नवमी चित्रभानोर्या मूर्तिर्विष्णुश्च नामतः ।
 प्रादुर्भवति सा नित्यं देवानामरिसूदनी ॥ ३६ ॥
 दशमी तस्य या मूर्तिरंशुमानिति विश्रुता ।
 घायौ प्रतिष्ठिता सा तु प्रह्लादयति वै प्रजाः ॥ ३७ ॥
 मूर्तिस्त्यैकादशी भानोर्नाम्ना धरुणसंज्ञिता ।
 जलेष्ववस्थिता सा तु प्रजां पुष्पाति नित्यशः ॥ ३८ ॥
 मूर्तिर्या द्वादशी भानोर्नाम्ना मित्रेति संज्ञिता ।
 लोकानां सा हितार्थाय स्थिता चन्द्रसरित्तटे ॥ ३९ ॥
 घायुमक्षस्तपस्तेपे स्थित्वा मैत्रेण चक्षुषा ।
 अनुगृह्णन् सदा भक्तान् वरैर्नानाविधैस्तु सः ॥ ४० ॥
 एवं सा जगतां मूर्तिर्हिताय विहिता पुरा ।
 तत्र मित्रः स्थितो यस्मात्तस्मान्मित्रं परं स्मृतम् ॥ ४१ ॥

आमिद्वादशभिस्तेन सचित्रा परमात्मना ।

कृ स्न जगदेद व्याप्त मूर्त्तमिष्व द्विजोत्तमा ॥ ४२ ॥

तस्मादुभ्ये गो नमस्यश्च द्वादशस्यासु मूर्त्तिषु ।

भक्तिमद्विरेर्नर्नित्य तद्गतेनान्तरात्मना ॥ ४३ ॥

इत्येष द्वादशादित्याग्नमस्कृत्वा तु मानव ।

नित्य श्रुत्वा पठित्वा च सूर्यलोके महीयते ॥ ४४ ॥

मुनय ऊचुः ।

यदि तावदय सूर्यश्चादिदेव सनातन ।

तत कस्मात्तपस्नेवे घरेषु प्राकृतो यथा ॥ ४५ ॥

एतद्व सप्रवक्ष्यामि पर गुह्य विभावसो ।

पृष्ट मित्रेण यत् पूर्वं नारदाय महात्मने ॥ ४६ ॥

प्राडमयोक्तास्तु युष्मभ्य रवेर्द्वादश मूर्त्तयः ।

मित्रश्च घरुणधामो तासा तपसि स स्थेयी ॥ ४७ ॥

अयमक्षो घरुणस्तासा तस्थौ पश्चिमसागरे ।

मित्रो मित्रवने वास्मिन् वायुमक्षोऽभवत्तदा ॥ ४८ ॥

अथ मेरुगिरे शृङ्गात् प्रच्युतो गन्धमादनात् ।

नारदस्तु महायोगो सर्वलोकाश्चरन् घशी ॥ ४९ ॥

आज्जागामाथ तत्रैव यत्र मित्रोऽचरत्तप ।

तं दृष्ट्वा तु तपस्यन्त यस्य कौतूहल ह्यभूत् ॥ ५० ॥

योऽक्षयश्चाव्ययश्चैव व्यकाव्यक्त सनातन ।

धृतमेकात्मकं येन त्रैलोक्य सुमहात्मना ॥ ५१ ॥

य पिता सर्वदेवानां पराणामपि यः परः ।
 अयजद्देवताः कास्तु पितृन् वा कानसौ यजेत् ॥ ५२ ॥
 इति सञ्चिन्त्य मनसा त देवं नारदोऽब्रवीत् ।

नारद उवाच ।

वेदेषु स पुराणेषु साङ्गोपाङ्गेषु गीयसे ।
 त्वमज्ज शाश्वतो धाता त्वं निधानमनुत्तमम् ॥ ५३ ॥
 भूतं मम्य भवच्छ्रेय त्वयि सर्वं प्रतिष्ठितम् ।
 चत्वारश्चक्रमा देव गृहस्थाद्यान्तथैव हि ॥ ५४ ॥
 यजन्ति त्वामहरहम्स्थां सृष्टित्व समाश्रितम् ।
 पिता माता च सर्वस्य देवतं त्वं हि शाश्वतम् ॥ ५५ ॥
 यजसे पितरं कं त्वं देवं वापि न विदुमहे ॥ ५६ ॥

मित्र उवाच ।

अवाच्यमेतद्वक्तव्यं परं गुह्यं सनातनम् ।
 त्वयि भक्तिमति ब्रह्मन् प्रपश्यामि यथातथम् ॥ ५७ ॥
 यत्तन् सूक्ष्मविज्ञेयमत्यक्तमचलं ध्रुवम् ।
 इन्द्रियैरिन्द्रियार्थैश्च सर्वभूतैर्विचर्जितम् ॥ ५८ ॥
 स ह्यन्तरात्मा भूताना क्षेत्रज्ञश्चैव कथ्यते ।
 त्रिगुणाढ्यतिरिक्तोऽसौ पुरुषश्चैव कल्पितः ॥ ५९ ॥
 हिरण्यगर्भो भगवान् सैव बुद्धिरिति स्मृतः ।
 महानिति च योगेषु प्रधानमिति कथ्यते ॥ ६० ॥
 सांख्यश्च कथ्यते योगे नामभिर्बुधात्मकः ।
 स च त्रिरूपो विश्वात्मा शर्वोऽक्षर इति स्मृतः ॥ ६१ ॥

धृतमेकात्मकं तेन त्रैलोक्यमिदमात्मना ।
 अशरीरः शरीरेषु सर्वेषु निवसत्यसौ ॥ ६२ ॥
 यसन्नपि शरीरेषु न स लिप्येत कर्मभिः ।
 ममान्तरात्मा तत्र च ये चान्ये देहसंस्थिताः ॥ ६३ ॥
 सर्वेषां साक्षिभूतोऽसौ न ग्राह्यं केनचित् क्वचित् ।
 सगुणो निर्गुणो विभ्वो ज्ञानगम्यो ह्यसौ स्मृतः ॥ ६४ ॥
 सर्वतः पाणिपादान्तः सर्वतोऽक्षिशिरोमुखः ।
 सर्वतः श्रुतिमंल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥ ६५ ॥
 विश्वमूर्द्धा विश्वभुजो विभवपादाक्षिनासिकः ।
 एकश्चरति वै क्षेत्रे स्त्रैरचारी यथासुखम् ॥ ६६ ॥
 क्षेत्राणीह शरीराणि तेषाञ्चैव यथासुखम् ।
 तानि वेत्ति स योगात्मा ततः क्षेत्रञ्च उच्यते ॥ ६७ ॥
 अथक्ते च पुरे शेते पुरुषस्तेन चोच्यते ।
 विश्वं बहुविधं ज्ञेयं स च सर्वत्र उच्यते ॥ ६८ ॥
 तस्मात् स बहुरूपाद्विश्वरूप इति स्मृतः ।
 तस्यैकस्य महत्त्वं हि स चैकः पुरुषः स्मृतः ॥ ६९ ॥
 महापुरुषशब्दं हि विमर्त्यकः सनातनः ।
 स तु विधिक्रियायुतः सृजत्यात्मानमात्मना ॥ ७० ॥
 शतधा सद्भ्यधा चैव तथा शतसहस्रधा ।
 कोटिशञ्च करोत्येव प्रत्यगात्मानमात्मना ॥ ७१ ॥
 आकाशात् पतितं तोयं याति स्यादन्तरं यथा ।
 भूमे रसविशेषेण तथा गुणरसात्तु सः ॥ ७२ ॥

एक एव यथा वायुर्देहेष्वेव हि पञ्चधा ।

एकत्वञ्च पृथक्त्वञ्च तथा तस्य न संग्रहः ॥ ७३ ॥

स्थानान्नरविशेषाच्च यथाग्निर्लभनं पराम् ।

संज्ञां तथा मुने सोऽयं ब्रह्मादिषु तयाप्नुयात् ॥ ७४ ॥

यथा वीपसहस्राणि दीप एकः प्रसूयते ।

तथा रूपसहस्राणि स एकः सम्प्रसूयते ॥ ७५ ॥

यदा तु शुध्यत्यात्मानं तदा भवति केवलः ।

एकत्वप्रलये चास्य बहुत्वञ्च प्रवर्तते ॥ ७६ ॥

नित्यं हि नास्ति जगति भूत स्यावरजद्रूपम् ।

अक्षयश्चाप्रमेयश्च सर्वगश्च स उच्यते ॥ ७७ ॥

तस्मादव्यक्तमुत्पन्नं त्रिगुणं द्विजसत्तमाः ।

अव्यक्ताव्यक्तभावस्था या सा प्रकृतिरुच्यते ॥ ७८ ॥

सां योनिं ब्रह्मणो विद्धि योऽसौ सदसदात्मकः ।

लोके तु पूज्यते योऽसौ देवे पित्र्ये च कर्मणि ॥ ७९ ॥

नास्ति तस्मान् पतो ह्यन्यं पिता देवोऽपि वा द्विजाः ।

आत्मना स तु विज्ञेयस्ततस्त्वं पूजयाम्यहम् ॥ ८० ॥

स्वर्गेष्वपि हि ये केचित्त नमस्यन्ति देहिनः ।

तेन गच्छन्ति देव्यं तेनोद्दिष्टफला गतिम् ॥ ८१ ॥

तं देवाः स्वाग्रमस्थाश्च नानामूर्त्तिसमाश्रिताः ।

भक्त्या भग्नपूजयन्त्याद्यं गतिश्चैवा ददाति सः ॥ ८२ ॥

स हि सर्वगश्चैव निर्गुणश्चैव कथ्यते ।

एवं मत्वा यथाज्ञानं पूजयामि दिवाकरम् ॥ ८३ ॥

ये च तद्भाविता लोक एकतस्य समाश्रिताः ।

एतदप्यधिकं तेषां यदेकं प्रविशन्त्युत ॥ ८४ ॥

इति गुह्यसमुद्देशस्तत्र नारद कीर्तितः ।

अस्मद्भक्तापि देवर्षे त्वयापि परमं स्मृतम् ॥ ८५ ॥

सुरैर्षां मुनिभिर्वापि पुराणैर्वरद स्मृतम् ।

सर्वे च परमात्मानं पूजयन्ति दिवाकरम् ॥ ८६ ॥

ब्रह्मोवाच ।

एवमेतन् पुराख्यातं नारदाय तु भानुना ।

मयापि च समाख्याता कथा भानोद्विजोत्तमाः ॥ ८७ ॥

इदमाख्यानमारयेयं मयाख्यातं द्विजोत्तमाः ।

न ह्यनादित्यभक्ताय इदं देयं कदाचन ॥ ८८ ॥

यश्चैतच्छ्रावयेन्नित्यं यश्चैव शृणुयाच्चरः ।

स सहस्रार्चिर्देवं प्रविशेन्नार संशयः ॥ ८९ ॥

मुच्येतार्त्तास्तथा रोगाच्छुद्धेयमामादित कथाम् ।

जिज्ञासुलभने ज्ञानं गतिमिष्टा तथैव च ॥ ९० ॥

क्षणेन लभतेऽध्यानमिदं यः पठने मुने ।

यो यं कामयते कामं स तं प्राप्नोत्यसशयम् ॥ ९१ ॥

तस्माद्भयदुग्निः सततं स्मरन्त्यो भगवान् रविः ।

स च धाता विधाता च सर्व्यस्य जगतः प्रभुः ॥ ९२ ॥

इति श्रीब्रह्मे महापुगणे आदित्यमहात्म्यवर्णनं

नाम त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

एकत्रिंशोऽध्यायः ।

आदित्यमाहात्म्यवर्णनम्

ब्रह्मोवाच ।

आदित्यमूलमपिलं त्रीलोक्य मुनिसत्तमाः ।
भयत्यस्माज्जगत् सद्यं सदैवासुरमानुषम् ॥ १ ॥
रुद्रोपेन्द्रमहेन्द्राणां विप्रेन्द्र त्रिदिर्लोकसाम् ।
महाद्युतिमताञ्चैव तेजोऽयं भार्गवलींककम् ॥ २ ॥
सर्वात्मा सर्वलोनेशो देवदेवः प्रजापति ।
सूर्य्य एव त्रिलोकस्य मूलं परमदैवतम् ॥ ३ ॥
अर्गो प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते ।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्ष्टेरघ्नं ततः प्रजाः ॥ ४ ॥
सूर्यात् प्रसूयते सर्वं तत्र चैव प्रलीयते ।
भाषाभाषौ हि लोकानामादित्याग्नि सृता पुरा ॥ ५ ॥
एतत्तु ध्यानिनां ध्यानं मोक्षश्चाप्येष मोक्षिणाम् ।
तत्र गच्छन्ति निर्व्याण जायन्तेऽस्मात् पुनः पुनः ॥ ६ ॥
क्षणा मुहूर्ता दिवसा निशा पक्षाश्च नित्यशः ।
मासाः सम्वत्सराश्चैव ऋतवश्च युगानि च ॥ ७ ॥
अथादित्यादृते ह्येषां कालसंख्या न विद्यते ।
कालादृते न नियमो नाग्नौ विहरणक्रिया ॥ ८ ॥
ऋतुनामविभागश्च ततः पुष्पफलं कुतः ।
कृतो वै शस्यनिष्पत्तिस्तृणोपधिगणः कुतः ॥ ९ ॥

अभावो व्यवहाराणां जन्तूनां दिवि चेह च ।
 जगत्प्रभावाद्दिशते भास्कराद्धारितस्करात् ॥ १० ॥
 नावृष्ट्या तपते सूर्यो नावृष्ट्या पश्चिष्यति ।
 नावृष्ट्या परिधिं घत्ते धारिणा दीप्यते रविः ॥ ११ ॥
 घसन्ते कपिलः सूर्यो ग्रीष्मे काञ्चनसन्निभः ।
 श्वेतो वर्षासु वर्णेन पाण्डुः शरदि भास्करः ॥ १२ ॥
 हेमन्ते ताम्रवर्णाभः शिशिरै लोहितो रविः ।
 इति वर्णाः समाख्याताः सूर्यस्य ऋतुसम्भवाः ॥ १३ ॥
 ऋतुस्वभाषवर्णैश्च सूर्यः क्षेमसुभिक्षकृत् ।
 अथादित्यस्य नामानि सामान्यानि द्विजोत्तमाः ॥ १४ ॥
 द्वादशैव पृथक्त्वेन तानि वक्ष्याम्यशेषतः ।
 आदित्यः सचिता सूर्यो मिहिरोऽर्कः प्रभाकरः ॥ १५ ॥
 मार्काण्डो भास्करो भानुश्चित्रभानुर्दिवाकरः ।
 रविर्द्वादशभिस्तेषां ज्ञेयः सामान्यनामभिः ॥ १६ ॥
 विष्णुर्धाता भगः पूषा मित्रेन्द्रो धरुणोऽप्यर्मा ।
 विवस्वानंशुर्मास्त्वष्टा पर्जन्यो द्वादशः स्मृतः ॥ १७ ॥
 इत्येते द्वादशादित्याः पृथक्त्वेन व्यवस्थिताः ।
 उत्तिष्ठन्ति सदा ह्येते मासैर्द्वादशभिः क्रमात् ॥ १८ ॥
 विष्णुस्तपति चैत्रे तु वैशाखे चार्प्यमा तथा ।
 विवस्वान् ज्येष्ठमासे तु भाषाढे चांशुमान् स्मृतः ॥ १९ ॥
 पर्जन्यः श्रावणे मासि धरुणः प्रौष्ठसंशके ।
 इन्द्र आश्वयुजे मासि धाता तपति कार्तिके ॥ २० ॥

मार्गशीर्षे तथा मित्र षोडश पूजा दिवाकर ।
 माघे भगस्तु विश्वेयस्त्वणा तपति फाल्गुने ॥ २१ ॥
 शतैर्द्वादशभिर्विष्णु रश्मिमिर्दोष्यते सदा ।
 दीप्यते गौसहस्रेण शतैश्च त्रिमिरय्यमा ॥ २२ ॥
 द्वि सप्तर्षैर्विचस्वास्तु अशुमान् पञ्चमिस्त्रिमि ।
 त्रिधस्वानिव पर्जन्यो घट्टणश्चाय्यमा तथा ॥ २३ ॥
 मित्रवद्भगवास्त्वणा सहस्रेण शतेन च ।
 इन्द्रस्तु द्विगुणे षडभिर्धातेकादशमि शतै ॥ २४ ॥
 सहस्रेण तु मित्रो वै पूजा तु नवमि शतै ।
 उत्तरोपक्रमेऽर्कस्य घट्टन्ते रश्मयस्तथा ॥ २५ ॥
 दक्षिणोपक्रमे भूयो हसन्ते सूर्य्यरश्मय ।
 एव रश्मिसहस्रन्तु सूर्य्यलोकादनुग्रहम् ॥ २६ ॥
 एव नाम्ना चतुर्विंशदेक एषा प्रकीर्त्तित ।
 विस्तरेण सहस्रन्तु पुनरुच्यत् प्रकात्तितम् ॥ २७ ॥

मुनय ऊचु ।

ये तन्नामसहस्रेण स्तुवन्त्येकं प्रजापते ।
 तेषा भवति किं पुण्य गतिश्च परमेश्वर ॥ २८ ॥

ब्रह्मोवाच ।

शृणुष्व मुनिशाद्वर्द्धा सारभूत सनातनम् ।
 अहं नामसहस्रेण पठन्नेव स्तव शुभम् ॥ २९ ॥
 यानि नामानि गुह्यानि पवित्राणि शुभानि च ।
 तानि व कीर्त्तयिष्यामि शृणुष्व भास्करस्य वै ॥ ३० ॥

विकर्त्तनो विवस्वाश्च मार्त्तण्डो माम्करो रवि ।
 लोकप्रकाशक श्रीमाल्लोकचक्षुर्महेश्वर ॥ ३१ ॥
 लोकसाक्षी त्रिलोकेश कर्त्ता दत्ता तमिन्द्रहा ।
 तपनस्तापनश्चैव शुचि सप्ताश्ववाहन ॥ ३२ ॥
 गभस्तिहस्तो ब्रह्मा च सत्र्यदेधनमसृजत ।
 एकविंशतिस्त्रित्येव स्तव इष्ट सदा रणे ॥ ३३ ॥
 शरीरारोग्यदश्चैव धनवृद्धियशस्कर ।
 स्तवराज इति ख्यातस्त्रिषु लोकेषु विश्रुत ॥ ३४ ॥
 य एतेन द्विजश्रेष्ठा हिसन्ध्येऽस्तमनोदये ।
 स्तौति सूर्यं शुचिर्भूत्वा सर्वपापै प्रमुच्यते ॥ ३५ ॥
 मानस वाचिक वापि देहज कर्मज तथा ।
 एकजप्येन तत्सर्वं नश्यत्यर्क्स्य सन्निधौ ॥ ३६ ॥
 एकजप्यश्च हामश्च सन्धोपासनमेव च ।
 धूपमन्त्रार्घ्यमन्त्रश्च बलिमन्त्रस्तथैव च ॥ ३७ ॥
 अन्नप्रदाने स्नाने च प्रणिपाते प्रदक्षिणे ।
 पूजितोऽयं महामन्त्र सर्वपापहर शुभ ॥ ३८ ॥
 तस्माद्वयूय प्रयत्नेन स्तवनेनानेन वै द्विजा ।
 स्तुवीध्व घट् देव सर्वकामफलप्रदम् ॥ ३९ ॥

इति श्रीब्राह्म महापुराणे मार्त्तण्डस्यैकविंशतिनामानुकीर्त्तनं
 नाम एकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥

द्वात्रिंशोऽध्यायः ।

मार्तण्डजन्ममाहात्म्यवर्णनम्

मुनय ऊचुः ।

निर्गुणः शाश्वतो देवस्थया प्रोक्तो दिवाकरः ।
पुनर्द्वादशधा जात ध्रुतोऽस्मामिस्त्वयोदित ॥ १ ॥
स कथं तेजसो रश्मि म्रियया गर्भे महाद्युति ।
सम्भूतो भाम्करो जातस्तत्र न सशयो महान् ॥ २ ॥

ब्रह्मोवाच ।

दक्षस्य हि सुता श्रेष्ठा यमूच पट्टि शोभना ।
अदितिर्दितिर्दनुश्चैव विनताद्यास्तथैव च ॥ ३ ॥
दक्षस्ता प्रददौ कन्या कश्यपाय त्रयोदश ।
अदितिर्जनयामास देवास्त्रिभुवनेश्वरान् ॥ ४ ॥
वैत्यान्दितिर्दनुष्योग्रान्दानवान् रत्नदर्पितान् ।
विनताद्यास्तथा चान्याः सुपुत्रा म्याणुजङ्गमान् ॥ ५ ॥
तस्याथ पुत्रद्वौ हित्रौ पौत्रद्वौ हित्रकादिभिः ।
प्राप्तमेतज्जगत् सत्र्यं तेषां तासां च वै मुने ॥ ६ ॥
तेषां कश्यपपुत्राणां प्रधाना देवतागणाः ।
सात्विका राजासाश्चान्ये तामसाश्च गणा स्मृता ॥ ७ ॥
देवान्यज्जभुजश्चक्रे तथा त्रिभुवनेश्वरान् ।
अष्टा ब्रह्मविदा श्रेष्ठ परमेष्ठौ प्रजापति ॥ ८ ॥

तानवाधन्त सहिताः सापत्न्याहृत्यदानवाः ।

ततो निराकृतान् पुत्रान्दैतेयैर्दानवैस्तथा ॥ ६ ॥

इतं त्रिमुवनं दृष्ट्वा अदितिर्मुनिसत्तमाः ।

आच्छिन्नद्वयज्ञमागांश्च क्षुधासम्पीडितान् भृशम् ॥ ७ ॥

आराधनाय सचितुः परं यत्नं प्रचक्रमै ।

एकाग्रा नियताहारा परं नियममास्थिता ॥ ११ ॥

तुष्टाश्च तेजसां राशिं गगनस्थं दिवाकरम् ॥

अदितिख्यात्वा ।

नमस्तुभ्यं परं सूक्ष्मं सुपुण्यं विघ्नतेऽतुलम् ।

धाम धामचतार्माशं धामाधारं नन्द्यतम् ॥ १२ ॥

जगतामुपकाराय त्वामहं स्तौ

आददानस्य यद्वपं तौघं तस्मै

प्रहीतुमष्टमासेन

विघ्नतस्तव यद्वपमतितीव्रं

समेतमग्निपोमाभ्यां

यद्वपमृग् यजुः साम्नामैक्ये

विश्वमेतत्त्रयीसंशं

यत्तु तस्मात्परं

अस्थूलं स्थूलममलं

ततः कालेन ममता भगवास्तपनो द्विजा ।

प्रत्यक्षतामगात्तस्या दाक्षायण्या द्विजोत्तमाः ॥ १८ ॥

सा ददर्श महाकूटतेजसोऽम्बरसंवृतम् ।

भूमौ च सस्थितं भास्वज्ज्वालाभिरतिदुर्दृशम् ॥ १९ ॥

तं दृष्ट्वा च ततो देवो साध्वसं परमं गता ॥ २० ॥

अदितिर्वाच ।

जगदाद्य प्रसीदेति न त्वा पश्यामि गोपते ।

प्रसादं कुरु पश्येयं यदूपं ते दिवाकर ॥ २१ ॥

भक्तानुक्रमक विभो त्वद्वक्तान् पाहि मे सुतान् ।

ब्रह्मोवाच ।

ततः स तेजसस्तस्मादाधिभूतो विभावसुः ।

अदृश्यत तदादित्यस्तत्तताम्रोपमः प्रभु ॥ २२ ॥

ततस्तां प्रणता देवीं तस्यासन्दर्शने द्विजा ।

प्राह भास्वान् वृणुष्वैकं वरं मत्तो यमिच्छसि ॥ २३ ॥

प्रणता शिरसा सा नु जानुपीडितमेदिनी ।

प्रत्युवाच विधस्वन्तं वरदं समुपस्थितम् ॥ २४ ॥

अदितिर्वाच ।

देव प्रसीद पुत्राणा हृतं त्रिभुवनं मम ।

यज्ञभोगाश्च दैतेयैर्दानवैश्च बलाधिकैः ॥ २५ ॥

तन्निमित्तं प्रसादं त्वं कुरुष्व मम गोपते ।

अंशेन तेषां भ्रातृत्वं गत्वा तान्नाशये रिपून् ॥ २६ ॥

तानवाधन्त सहिताः सापत्न्याद्द्वैत्यदानवाः ।

ततो निराकृतान् पुत्रान्दैतेयैर्दानवैस्तथा ॥ ६ ॥

हतं त्रिभुवनं दृष्ट्वा अदितिर्मुनिसत्तमाः ।

आच्छिन्नद्वयज्ञभागांश्च क्षुधासम्पीडितान् भृशम् ॥ १० ॥

भाराधनाय सवितुः परं यत्नं प्रचक्रमे ।

एकाग्रा नियताहारा परं नियममास्थिता ॥ ११ ॥

तुष्टाव तेजसां राशिं गगनस्थं दिवाकरम् ॥

अदितिरुवाच ।

नमस्तुभ्यं परं सूक्ष्मं सुपुण्यं विभ्रतेऽतुलम् ।

धाम धामवतामीशं धामाधारं च शाश्वतम् ॥ १२ ॥

जगतामुपकाराय त्वामहं स्तोमि गोपते ।

आददानस्य यद्रूपं तोयं तस्मै नमाम्यहम् ॥ १३ ॥

ग्रहीतुमष्टमासेन कालेनाम्बुमयं रसम् ।

विभ्रतस्तथ यद्रूपमतितीव्रं नतास्मि तत् ॥ १४ ॥

समेतमग्निषोमाभ्यां नमस्तस्मै गुणात्मने ।

यद्रूपमृग् यजुः साम्नामैक्येन तपते तथ ॥ १५ ॥

विश्वमेतत्त्रयीसंज्ञं नमस्तस्मैचिमावसो ।

यत्तु तस्मात्परं रूपमोमित्युक्त्वाभिसंहितम् ॥

अस्थूलं स्थूलममलं नमस्तस्मै सनातन ॥ १६ ॥

ब्रह्मावाच ।

एवं सा नियता देवी चक्रे स्तोत्रमहर्निशम् ।

निराहारा चिवस्वन्तमारिराधयिषुर्द्विजाः ॥ १७ ॥

ततः कालेन ममता भगवांस्तपनो द्विजाः ।

प्रत्यक्षनामगात्तस्या दाक्षायण्या द्विजोत्तमाः ॥ १८ ॥

सा ददर्श महाकूटतेजसोऽम्बरसंवृतम् ।

भूमौ च संस्थितं भास्वज्ज्वालाभिरतिदुर्दृशम् ॥ १९ ॥

तं दृष्ट्वा च ततो देवां साध्वसं परमं गता ॥ २० ॥

अदितिरुवाच ।

जगदाद्य प्रसीदेति न त्वां पश्यामि गोपते ।

प्रसादं कुरु पश्येयं यद्वृषं ते दिवाकर ॥ २१ ॥

भक्तानुक्रम्यक विभो त्यद्वक्तान् पाहि मे सुतान् ।

ब्रह्मोवाच ।

ततः स तेजसस्तस्मादाविर्भूतो विभावसुः ।

अदृश्यत तदादित्यस्ततताम्रोपमः प्रभुः ॥ २२ ॥

ततस्तां प्रणतां देवीं तस्यासन्दर्शने द्विजाः ।

प्राह भास्वान् वृणुष्वैकं धरं मत्तो यमिच्छसि ॥ २३ ॥

प्रणता शिरसा सा तु जानुपीडितमेदिनी ।

प्रत्युवाच विवस्वन्तं धरदं समुपस्थितम् ॥ २४ ॥

अदितिरुवाच ।

देव प्रसीद पुत्राणां हृतं त्रिभुवनं मम ।

यज्ञभोगाश्च दैतेयैर्दानवैश्च बलाधिकैः ॥ २५ ॥

तन्निमित्तं प्रसादं त्वं कुरुष्व मम गोपते ।

अंशेन तेषां भ्रातृत्वं गत्वा तान्नाशये रिपून् ॥ २६ ॥

यथा मे तनया भूयो यज्ञभागभुजः प्रभो ।
 भवेयुरधिषाञ्चैव त्रैलोक्यस्य दिघाकर ॥ २७ ॥
 तथानुकल्यं पुत्राणां सुप्रसन्नो रवे मम ।
 पुरः प्रसन्नार्तिहर काव्यं कर्त्ता त्वमुच्यते ॥ २८ ॥

ब्रह्मोवाच ।

ततस्तामाह भगवान् भास्करो पारितस्करः ।
 प्रणतामदितिं विप्राः प्रसादसुमुखो विभुः ॥ २९ ॥

सूर्य उवाच ।

सहस्रांशेन ते गर्भः सम्भूयादमशेषतः ।
 त्वत्पुत्ररात्रून् दत्तोऽहं नाशयाम्याशु निर्गृतः ॥ ३० ॥

ब्रह्मोवाच ।

सा च तं प्राह गर्मान्तमेतत्पश्येति कोपना ।
 न मारितं विपक्षाणां मृत्युरेव भविष्यति ॥ ३५ ॥
 इत्युक्त्वा तं तदा गर्भमुत्सर्ज सुरारणिः ।
 जाड्यव्यमानं तेजोभिः पत्युर्बचनकोपिता ॥ ३६ ॥
 तं हृष्ट्या कश्यपो गर्भमुद्यद्भास्करवर्धसम् ।
 तुष्ट्या च प्रणतो भूत्वा धान्मिराद्यामिरादरात् ॥ ३७ ॥
 संस्तूयमान स तदा गर्माण्डात् प्रकटोऽभवत् ।
 पद्मपत्रसवर्णमस्तेजसा व्याप्तदिङ्मुक्तः ॥ ३८ ॥
 अथान्तरिक्षादाभाप्य कश्यप मुनिसत्तमम् ।
 सतोयमेघगम्भीरा घागुवाचाशरीरिणी ॥ ३९ ॥

घागुवाच ।

मारितमिति यत् प्रोक्तमेतदण्डं त्वयादिते ।
 तस्मान्मुने सुतस्तेऽयं मार्तण्डाख्यो भविष्यति ॥ ४० ॥
 हनिष्यत्यसुरांश्चायं यज्ञभागहरानरीन् ।
 देवा निशम्येति वचो गगनात् समुपागतम् ॥ ४१ ॥
 प्रहर्षमतुलं याता दानवाश्च हतो जसः ।
 ततो युद्धाय दैतेयानाञ्जुहाव शतक्रतुः ॥ ४२ ॥
 सह देवैर्मुदा युक्तो दानवाश्च तमभ्ययुः ।
 तेषां युद्धमभूद्दुधोरं देवानामसुरैः सह ॥ ४३ ॥
 शस्त्रास्त्रवृष्टिसन्दीप्तसमस्तभुवनान्तरम् ।
 तस्मिन् युद्धे भगवता मार्तण्डेन निरीक्षिताः ॥ ४४ ॥

यथा मे तनया भूयो यज्ञभागभुज प्रभो ।
 भवेयुरधिपाश्चैव त्रैलोक्यस्य दिवाकर ॥ २७ ॥
 तथानुकल्प पुत्राणां सुप्रसन्नो रवे मम ।
 कुरु प्रसन्नार्तिहर काव्यं कर्त्ता त्वमुच्यते ॥ २८ ॥

ब्रह्मोवाच ।

ततस्तामाह भगवान् भास्करो चारितस्कर ।
 प्रणतामदिति विप्रा प्रसादसुमुखो विभु ॥ २९ ॥

सूर्य उवाच ।

सहस्रादीन ते गर्भं सम्भूयादमरोपत ।
 त्वत्पुत्रशत्रून् दक्षोऽह नाशयाम्याशु निर्गुत ॥ ३० ॥

ब्रह्मोवाच ।

ब्रह्मोवाच ।

सा च तं प्राह गर्मान्तमेतत्पश्येति कोपना ।
 न मारित विपक्षाणा मृत्युरेव भविष्यति ॥ ३५ ॥
 इत्युत्तवा तं तदा गर्ममुत्सर्ज सुरारणिः ।
 जाञ्ज्वल्यमानं तेजोमि पत्युर्वचनकोपिता ॥ ३६ ॥
 तं दृष्ट्वा कश्यपो गर्ममुद्यद्गमास्करवर्षसम् ।
 तुष्टाथ प्रणतो भून्वा चाग्भिराद्यामिरादरात् ॥ ३७ ॥
 संस्तूयमान स तदा गर्माण्डात् प्रकटोऽभवत् ।
 पद्मपत्रसयर्णाभिस्तेजसा व्याप्तदिङ्मुख ॥ ३८ ॥
 अथान्तरिक्षाद्भाष्य कश्यप मुनिसत्तमम् ।
 सतोयमेवगम्भीरा वागुवाचाशरीरिणी ॥ ३९ ॥

वागुवाच ।

मारितमितियत् प्रोक्तमेतदण्डं त्वयादितेः ।
 तस्मान्मुने सुतस्तेऽयं मार्तण्डारयो भविष्यति ॥ ४० ॥
 हनिष्यत्यसुरांश्चायं यज्ञमागहरानरीन् ।
 देवा निशम्येति वचो गगनात् समुपागतम् ॥ ४१ ॥
 प्रहर्षमतुलं याता दानवाश्च हर्षोजसः ।
 ततो युद्धाय दैतेयानाजुहाव शतक्रतुः ॥ ४२ ॥
 सह देवैर्मुदा युको दानवाश्च तमभ्ययुः ।
 तेषां युद्धममूद्गुधोरं देवानामसुरैः सह ॥ ४३ ॥
 शस्त्रास्त्रवृष्टिसन्दीप्तसमस्तभुवनान्तरम् ।
 तस्मिन् युद्धे भगवता मार्तण्डेन निरीक्षिता ॥ ४४ ॥

तेजसा दह्यमानास्ते भस्मीभूता महासुराः ।

ततः प्रहर्षमतुलं प्राप्ताः सर्व्ये दिव्यौकसः ॥ ४५ ॥

तुष्टुचुस्तेजसां योनिं मार्त्तण्डमदिति तथा ।

स्वाधिकारांस्ततः प्राप्ता यज्ञभागांश्च पूर्व्वत् ॥ ४६ ॥

भगवानपि मार्त्तण्डः स्वाधिकारमथाकरोत् ।

कदम्बपुष्पचद्वास्वानघश्चोद्भृञ्च रश्मिभिः ।

घृतोऽग्निपिण्डसदृशो दध्ने नातिस्फुटं घपुः ॥ ४७ ॥

मुनय ऊचुः ।

कथं कान्ततरं पश्चाद्रूपं संलब्धवान् रयिः ।

कदम्बगालकाकारं तन्मे ब्रूहि जगत्पते ॥ ४८ ॥

ब्रह्मावाच ।

त्वष्टा तस्मै ददौ कन्यां संज्ञां नाम विद्यस्वते ।

प्रसाद्य प्रणतो भूत्वा विभ्वकर्म्म प्रजापतिः ॥ ४९ ॥

श्रीण्यपत्यान्यसौ तस्यां जनयामास गोपतिः ।

द्वौ पुत्रौ सुमहाभागौ कन्याञ्च यमुनां तथा ॥ ५० ॥

यत्तेजोऽभ्यधिकं तस्य मार्त्तण्डस्य विद्यस्वतः ।

तेनाति तापयामास त्रींल्लोकान् सचराचरान् ॥ ५१ ॥

तद्रूपं गोलकाकारं दृष्ट्वा संज्ञा विद्यस्वतः ।

असहन्ती महत्तेजः स्वां छायां धाक्यमग्रधीत् ॥ ५२ ॥

संज्ञोवाच ।

अहं यास्यामि भद्रं ते स्वमेव भवनं पितुः ।

निर्व्विकारं त्वयात्रैव स्थेयं मच्छासनाच्छुभे ॥ ५३ ॥

इमौ च बालकौ महा कन्या च घरवर्णिनी ।
सम्मात्र्या नैव चारयेयमिदं भगवते त्वया ॥ ५४ ॥

छायोचाच ।

आ कचग्रहणाद्देवि आशापान्नैव कर्हिचित् ।
आख्यास्यामि मतं तुभ्य गम्यता यत्र चाञ्छितम् ॥ ५५ ॥
इत्युक्त्वा प्रीडिता सज्ञा जगाम पितुर्मन्दिरम् ।
घत्सराणां सहस्रन्तु घसमाना पितुर्गृहे ॥ ५६ ॥
भर्तुं समीपे याहीति विजोक्ता सा पुन पुन ।
आगच्छद्वड्वा भूया कुरुनथोत्तरास्तत ॥ ५७ ॥
तत्र तैपे तप साध्वी निराहारा द्विजोत्तमा ।
पितु समीप याताया सज्ञाया धाम्नतत्परा ॥ ५८ ॥
तद्रूपधारिणी छाया भास्कर समुपस्थिता ।
तस्याञ्च भगवान् सूर्य सङ्क्षेयमिति चिन्तयन् ॥ ५९ ॥
तथैव जनयामास द्वौ पुत्रौ कन्यका तथा ।
सज्ञा तु पार्थिवी तेषामात्मजानां तथाकरोत् ॥ ६० ॥
स्नेहं न पूर्व्यजातानां तथा कृतवती तु सा ।
मनुस्तत्क्षान्तवास्तस्या यमस्तस्या न चक्षमे ॥ ६१ ॥
बहुधा पीड्यमानस्तु पितु पत्न्या सुदुःखित ।
स वै कोपाच्च वात्याच्च भाविनोऽर्थस्य वै बलात् ।
पदा सन्तर्जयामास न तु देहे न्यपातयत् ॥ ६२ ॥

छायोवाच ।

पद्म तज्जयसे यस्मात्पितुर्भाष्यार्थं गरीयसीम् ।
तस्मात्तवैष चरणं पतिष्यति न सशयः ॥ ६३ ॥
यमस्तु तेन शापेन भृशं पीडितमानसः ।
मनुना सह धर्मात्मा पित्रे सर्वं न्यवेदयत् ॥ ६४ ॥

यम उवाच ।

स्नेहेन तुल्यमस्मासु माता देव न वर्तते ।
चिखुञ्ज उवायस भक्त्या कनीयास बुभूषति ॥ ६५ ॥
तस्या मयोद्यत पादो न तु देहे निपातितः ।
यात्पाद्वा यदि वा मोक्षस्तद्वचान् क्षन्तुमर्हसि ॥ ६६ ॥
शप्तोऽहं तात कोपेन जमन्या तनयो यतः ।
ततो मन्ये न जननीमिमां चै तपतांघर ॥ ६७ ॥
तप प्रसादाद्यरणो भगवन् न पतेदुद्यथा ।
मातृशापादय मेऽप्य तथा चिन्तय गोपते ॥ ६८ ॥

रविदवाच ।

भगवन् मम त्वत्पुत्रं भविष्यत्यत्र वारणम् ।
येन त्वयामाविशन्त्रोयो धर्मज्ञः धर्मशालिन् ॥ ६९ ॥
सर्वेषामेव शापानां प्रतिघातो हि विद्यते ।
न तु मात्राभिशापानां व विच्छिन्नापनिवर्तनम् ॥ ७० ॥
न शक्यमेतन्मिथ्या ॥ वक्तुं मातुर्यं यस्तपः ।
विश्रितोऽहं विधास्यामि पुत्रज्जेदामुपमम् ॥ ७१ ॥

हृमयो मासमाद्राय प्रयास्यन्ति महीतलम् ।

हृत् तस्या घञ सन्य त्वञ्च त्राता भविष्यसि ॥ ७२ ॥

ब्रह्मोवाच ।

आदित्यस्त्वर्चाच्छाया किमयं तनयेषु वै ।

तुल्येष्वप्यधिक स्नेह एक प्रति वृत्तस्त्वया ॥ ७३ ॥

नूनं नैषा ह्यं जननी सन्ना कापि त्वमागता ।

निर्गुणेष्वप्यपत्येषु माता शाप न दास्यति ॥ ७४ ॥

सा तन्परिहरन्ती च शापाद्माता तदा रवे ।

कथयामास वृत्तान्तं स श्रुत्वा ज्यशुरं ययौ ॥ ७५ ॥

स चापि त यथान्यायमर्चयित्वा तदा रविम् ।

निर्दग्धुकाम रोषेण सान्त्वयानस्तमर्चयान् ॥ ७६ ॥

विश्वकर्मावाच ।

तयातिनेजसा व्याप्तमिदं रूपं सुदु सहम् ।

असहन्ता तु तत्संज्ञा घने चरति वै तप ॥ ७७ ॥

द्रक्ष्यते ता भवानग्र स्वा भाष्यां शुभचारिणीम् ।

रूपायं भवतोऽरण्ये चरन्ती सुमहत्तप ॥ ७८ ॥

श्रुत मे ब्रह्मणो घाक्यं तव तेजोऽयरोधने ।

रूपं निवर्त्तयाम्यद्य तव कान्त दिवस्पते ॥ ७९ ॥

ब्रह्मोवाच ।

ततस्तयेति त ग्राह त्वष्टारं भगवान् रवि ।

ततो विवस्वतो रूपं प्रागासीत्परिमण्डलम् ॥ ८० ॥

विश्वकर्मा त्वनुज्ञातं शाकद्वीपे विवस्वता ।

भ्रमिमारोप्य तत्तेजः शतनायोपचक्रमे ॥ ८१ ॥

भ्रमताशेषजगतां नाभिमूतेन भास्वता ।
 समुद्राद्रिचनोपेता त्वारुरोह मही नमः ॥ ८२ ॥
 गगनश्चाखिलं चिप्राः सचन्द्रग्रहतारकम् ।
 अधो गतं महाभागा यभूवाक्षिप्तमाकुलम् ॥ ८३ ॥
 चिक्षिप्तसलिलाः सर्व्वे यभ्रुवुध तथार्णवाः ।
 द्यमिद्यन्त महाशैलाः शीर्णसानुनिघन्धनाः ॥ ८४ ॥
 ध्रुवाधाराण्यशेषाणि धिष्ण्यानि मुनिसत्तमाः ।
 द्रुष्टवद्रश्मिनियन्धानि यन्धनानि अधो ययुः ॥ ८५ ॥
 योगन्नमणसम्पातपायुक्षिप्तां सहस्रशः ।
 ण्यशीर्ष्यन्त महामेघा घोराराधचिरादिनः ॥ ८६ ॥
 भाम्बदुन्नमणपिभ्रान्तभूम्याकाशरसातलम् ।
 जगदाकुलमत्यर्थं तदासीन्मुनिसत्तमाः ॥ ८७ ॥
 त्रैलोक्यममाकुलं धीक्ष्य न्नममाणं सुरर्षयः ।
 देवाश्च ब्रह्मणा सार्द्धं भास्यन्तमगितुष्टुषुः ॥ ८८ ॥
 धादिदेवोऽसि देवानां जातस्त्वंभूतये भुवः ।
 स्वर्गं ग्निह्यन्तकालेषु त्रिधा भेदेन तिष्ठसि ॥ ८९ ॥
 स्यति मेऽप्नु जगन्नाथ धर्मवर्षं दिपाकर ।
 इन्द्रादप्यन्तर्ग देवा लिख्यमानमगाम्नुयन् ॥ ९० ॥
 जय देव जगत्स्यामिन् जयान्ते जगत्पते ।
 श्रुपयध नतः सप्त वसिष्ठात्रिपुरांगमाः ॥ ९१ ॥
 तुष्टुपूर्विपिपैः स्मार्थैः स्वस्ति स्वार्थातिपादिनः ।
 यशोक्तिमिष्टायागमिषांलविवाश्य तुष्टुषुः ॥ ९२ ॥

अग्निराद्याश्च मास्वन्तं लिख्यमानं मुक्षु युताः ।
 त्वं नाथ मोक्षिणां मोक्षो ध्येयस्त्वं ध्यानिनां परः ॥ ६३ ॥
 त्वं गतिः सर्वभूतानां कर्मकाण्डविवर्तिनाम् ।
 सम्पूज्यस्तं तु देवेश शं नोऽस्तु जगतां पते ॥ ६४ ॥
 शं नोऽस्तु द्विपदे निन्यं शं नश्चाम्नु चतुष्पदे ।
 ततोधिद्याघरगणा यक्षराक्षसपन्नगाः ॥ ६५ ॥
 एताञ्जलिपुटाः सर्वे जिरोमिः प्रणता रयिम् ।
 ऊचुस्ते धिविधा पाचो मनःश्रोत्रमुखान्वहाः ॥ ६६ ॥
 सद्यं भयतु तेजस्ते भूतानां मृतमावन ।
 ततो द्वाहाह्वयैव नारदस्तुभ्युरुन्मथाः ॥ ६७ ॥
 उपगायितुमारब्धा गान्धर्वकुशला रयिम् ।
 पद्मजमध्यमगान्धारगानत्रयविशारदाः ॥ ६८ ॥
 मूर्च्छनामिश्रं तालैश्च सम्रयोगैः सुखप्रदम् ।
 विश्वार्चा च घृतार्चा च उर्व्वश्च तिलोत्तमा ॥ ६९ ॥
 मेनका सहजान्या च रम्या चाप्सरसांवरा ।
 ननृतुर्जगतामीशे लिख्यमाने विभावर्त्ता ॥ ७० ॥
 भावहासविलासाद्यान् कुर्व्वत्योऽमिनयान्धहून् ।
 प्राचायन्त ततस्तत्र घाणा वेण्वादिफर्कराः ॥ ७१ ॥
 पणवाः पुष्कराश्चैव मृदङ्गाः पट्टहानकाः ।
 देवदुन्दुमयः शल्खाः शतशोऽथ सहस्रशः ॥ ७२ ॥
 गायत्रिमिश्रं नृत्यदुर्मिर्गन्धर्व्वैरप्सरोगणैः ।
 सूर्य्यवादित्रयोपैश्च सर्व्वं कोलाहलीकृतम् ॥ ७३ ॥

ततः कृताञ्जलिपुटा भक्तिनम्रात्ममूर्त्तयः ।

लिख्यमानं सहस्रांशुं प्रणेमुः सर्वदेवताः ॥ १०४ ॥

ततः कोलाहले तस्मिन् सर्वदेवसमागमे ।

तेजसः शातनं चक्रे विश्वकर्मा शनैः शनैः ॥ १०५ ॥

आजानुलिखितश्चासौ निपुणं विश्वकर्म्मणा ।

नाम्पनन्दत्तु लिखनं ततस्तेनावतारितः ॥ १०६ ॥

न न निर्भेत्सितं रूपं तेजसो हननेन तु ।

कान्तात्कान्ततरं रूपमधिकं शुशुभे ततः ॥ १०७ ॥

इति हिमजलधर्मकालहेतोहरकमलासनविष्णुसंस्तुतस्य ।

तदुपरि लिखनं निशम्य भानो

व्रजति, दिवाकरलोकमायुषोऽन्ते ॥ १०८ ॥

एवं जन्म रवेः पूर्वं बभूव मुनिसत्तमाः ।

रूपञ्च परमं तस्य मया सम्परिकीर्तितम् ॥ १०९ ॥

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे मार्तण्डजन्मशरीरलिखनं नाम
द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥

त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ।

मार्तण्डमाहात्म्यवर्णनम्

मुनय ऊचुः ।

भूयोऽपि कथयास्माकं कथा सूर्यसमाधिताम् ।

न तृप्तिमधिगच्छामः शृण्वन्तस्तां कथां शुभाम् ॥ १ ॥

योऽयं दीप्तो महातेजा वह्निराशिसमप्रभः ।

एतद्वेदितुमिच्छाम प्रभाचोऽस्य कुतः प्रभो ॥ २ ॥

ब्रह्मोवाच ।

तमोभूतपु लोकेषु नष्टे स्थावरजङ्गमे ।

प्रहृतेर्गुणहेतुस्तु पूर्वं बुद्धिरजायत ॥ ३ ॥

अहङ्कारस्ततो जातो महाभूतप्रवर्त्तकः ।

वाय्वग्निरापः खं भूमिस्ततस्त्वण्डमाजयत ॥ ४ ॥

तस्मिन्नण्डे त्विमे लाकाः सप्त चैव प्रतिष्ठिताः ।

पृथिवी सप्तभिर्द्वीपैः समुद्रैश्चैव सप्तभिः ॥ ५ ॥

तत्रैवावस्थितो ह्यासीदहं विष्णुर्महेश्वरः ।

विमूढास्तामसाः सर्वे प्रध्यायन्ति तमीश्वरम् ॥ ६ ॥

ततो वै सुमहातेजाः प्रादुर्भूतस्तमोनुदः ।

ध्यानयोगेन चास्माभिर्विज्ञात सचिता तदा ॥ ७ ॥

ज्ञात्वा च परमात्मानं सर्व एव पृथक् पृथक् ।

दिव्याभिस्तुतिभिर्देवः स्तुतोऽऽस्माभिस्तदेश्वरः ॥ ८ ॥

आदिदेवोऽसि देवानामेश्वर्याश्च त्वमीश्वरः ।

आदिकर्त्ताऽसि भूतानां देवदेवो दिवाकरः ॥ ९ ॥

जीवनः सर्वभूतानां देवगन्धर्व्वरक्षसाम् ।

मुनिकिन्नरसिद्धानां तथैवोरगपक्षिणाम् ॥ १० ॥

त्वं ब्रह्मा त्वं महादेवस्त्व विष्णुस्त्वं प्रजापतिः ।

वायुरिन्द्रश्च सामश्च विवश्वान्वरुणस्तथा ॥ ११ ॥

तयं फालः सृष्टिकर्ता च हर्ता मर्ता तथा प्रभुः ।

सरितः सागराः शैला विद्युदिन्द्रधनूंषि च ॥ १२ ॥

प्रलयः प्रमवश्चैव व्यक्ताव्यक्तः सनातनः ।

ईश्वरात्परतो विद्या विद्यायाः परतः शिषः ॥ १३ ॥

शिवात्परतरो देवस्त्वमेव परमेश्वरः ।

सर्व्वतः पाणिपादान्तः सर्व्वतोऽक्षिशिरोमुखः ॥ १४ ॥

सहस्रांशुः सहस्राक्षः सहस्रचरणेक्षणः ।

भूतादिर्भूभृन्महः सत्यं तपो जनः ॥ १५ ॥

प्रदीप्तं दीपनं दिव्यं सर्व्वलोकप्रकाशकम् ।

दुर्निरीक्षं सुरेन्द्राणां यद्रूपं तस्य ते नमः ॥ १६ ॥

सुरसिद्धगणैर्जुष्टं भृग्वत्रिपुलहादिभिः ।

स्तुतं परममव्यक्तं यद्रूपं तस्य ते नमः ॥ १७ ॥

वेद्यं वेदविदां नित्यं सर्व्वज्ञानसमन्वितम् ।

सर्व्वदेवातिदेवस्य यद्रूपं तस्य ते नमः ॥ १८ ॥

विश्वकृद्विश्वभूतं च यैश्वानरसुरार्चिर्व्वितम् ।

विश्वस्थितमचिन्त्यं च यद्रूपं तस्य ते नमः ॥ १९ ॥

परं यज्ञात् परं वेदात् परं लोकात् परं दिवः ।

परमात्मेत्यभिख्यातं यद्रूपं तस्य ते नमः ॥ २० ॥

अविक्षेयमनालक्ष्यमध्यानगतमव्ययम् ।

अनादिनिधनं चैव यद्रूपं तस्य ते नमः ॥ २१ ॥

नमो नमः कारणकारणाय,

नमो नमः पापविमोचनाय ।

नमो नमस्ते दितिजार्दनाय,

नमो नमो रोगविमोचनाय ॥ २२ ॥

नमो नमः सर्व्ववर्षप्रदाय,

नमो नमः सर्व्वसुखप्रदाय ।

नमो नमः सर्व्वधनप्रदाय,

नमो नमः सर्व्वमतिप्रदाय ॥ २३ ॥

स्तुतः स भगवानेवं तैजसं रूपमास्थितः ।

उवाच धावा कल्याण्या को घरो घः प्रदीयताम् ॥ २४ ॥

देवा ऊचुः ।

तथातितैजसं रूपं न कश्चित्सोढुमुतसहेत् ।

सहनीयं तद्वचतु हिताय जगतः प्रभो ॥ २५ ॥

एषमस्त्विति सोऽप्युत्वा भगवानादिहन् प्रभुः ।

लोकानां कार्यसिद्ध्यर्थं घर्मवर्षहिमप्रदः ॥ २६ ॥

ततः सांख्याश्च योगाश्च ये चान्ये मोक्षकाङ्क्षिणः ।

ध्यायन्ति ध्यायिनो देवं हृदयस्थं दिवाकरम् ॥ २७ ॥

सर्व्वलक्षणहीनोऽपि युक्तो वा सर्व्वपातकैः ।

सर्व्वञ्च तरते पापं देवमकं समाश्रितः ॥ २८ ॥

अग्निहोत्रञ्च वेदाश्च यज्ञाश्च बहुदक्षिणाः ।

मानोर्मक्तिमस्कारकला नार्हन्ति पाङ्गशीम् ॥ २९ ॥

तीर्थानां परमं तीर्थं मङ्गलानाञ्च मङ्गलम् ।

पवित्रञ्च पवित्राणाम् प्रपद्यन्ते दिवाकरम् ॥ ३० ॥

भूताश्रयो भूतपति सर्वलोकनमस्कृतः ।
 स्रष्टा सम्यर्त्तको वह्निः सर्वस्याऽऽदिरलोलुपः ॥ ४१ ॥
 अनन्तः कपिलो भानुः कामदः सर्वतोमुखः ।
 जयो विशालो वरदः सर्वभूतनिपेवितः ॥ ४२ ॥
 मनः सुपर्णो भूतादिः शीघ्रगः प्राणधारणः ।
 धन्वन्तरिधूर्मकेतुरादिदेवोऽदिते सुतः ॥ ४३ ॥
 द्वादशात्मा रविर्दक्ष पिता माता पितामहः ।
 स्वर्गद्वार प्रजाद्वारं मोक्षद्वारं त्रिविष्टपम् ॥ ४४ ॥
 देहकर्त्ता प्रशान्तात्मा विश्वात्मा विश्वतोमुखः ।
 चराचरात्मा सूक्ष्मात्मा मैत्रेयः करुणान्वितः ॥ ४५ ॥
 पतङ्गैः कीर्त्तनीयस्य सूर्यस्यामिततेजसः ।
 नाम्नामष्टशत रम्य मया प्रोक्तं द्विजोत्तमाः ॥ ४६ ॥

सुरगणपितृयक्षसेवितं,

ह्यसुरनिशाकरसिद्धबन्धितम् ।

परकनकद्रुताशनप्रभं,

प्रणिपतितोऽस्मि हिताय मास्करम् ॥ ४७ ॥

सूर्योदये यः सुसमाहितः पठेत्,

स पुत्रदारान् धनरत्नसञ्चयान् ।

लभेत् जातिस्मरतां नरः स तु,

स्मृतिञ्च मेधाञ्च स विन्दते पराम् ॥ ४८ ॥

इमं स्तत्र देववरस्य यो नरः,

प्रकोत्तयेच्छद्मनाः समाहितः ।

मुनय ऊचुः ।

किमर्थं स भवो देवः सर्वभूतहिने रतः ।

जघान यज्ञं दक्षस्य देवैः सर्वैरलङ्कृतम् ॥ ७ ॥

न ह्यल्पं कारणं तत्र प्रभो मन्यामहे वयम् ।

श्रोतुमिच्छामहे ब्रूहि परं कीदृहलं हि न ॥ ८ ॥

ब्रह्मोवाच ।

दक्षस्याऽऽसन्नपुत्रं कन्या याश्चैवं पतिसङ्गताः ।

स्वेभ्यो गृहेभ्यश्चाऽऽनीय ताः पिताऽभ्यर्चयद्गृहे ॥ ९ ॥

ततस्त्वभ्यर्चिता विप्रा न्यवसंस्ताः पितुर्गृहे ।

तासां ज्येष्ठा सती नाम पत्नी या श्यम्यकस्य वै ॥ १० ॥

नाऽऽजुहावाऽत्मजां तां वै दक्षो रुद्रमभिद्विषन् ।

अकरोत्सन्नतिं दक्षे न च काङ्क्षिन्महेश्वरः ॥ ११ ॥

जामाता श्यशुरे तस्मिन् स्वभावात्तेजसि स्थितः ।

ततो ज्ञात्वा सती सर्वास्तास्तु प्राप्ताः पितुर्गृहम् ॥ १२ ॥

जगाम साऽप्यनाहूता सती तु स्वपितुर्गृहम् ।

तान्यो हीनां पिता वक्रे सत्याः पूजामसम्मताम् ॥

ततोऽब्रवीत्सा पितरं देवी कोधसमाकुला ॥ १३ ॥

सत्युवाच ।

यधीयसीभ्यः श्रेष्ठाऽहं किं न पूजसि मां प्रभो ।

असत्कृतामवस्थां यः कृतवानसि गर्हिताम् ॥

अहं ज्येष्ठा वरिष्ठा च मां त्वं सत्कर्तुमर्हसि ॥ १४ ॥

ब्रह्मोवाच ।

एवमुक्तोऽब्रवीदेनां दक्षः संरक्तलोचनः ॥ १५ ॥

दक्ष उवाच ।

त्वत्तः श्रेष्ठा धरिष्ठाश्च पूज्या बालाः सुता मम ।

तासां ये चैव भर्तारस्ते मे बहुमताः सति ॥ १६ ॥

ब्रह्मिष्ठाश्च व्रतस्थाश्च महायोगाः सुधार्मिकाः ।

गुणैश्चैवाधिकाः श्लाघ्याः सर्व्वे ते ऽयम्बकात् सति ॥ १७ ॥

धसिष्ठोऽग्निः पुलस्त्यश्च अङ्गिराः पुलहः क्रतुः ।

भृगुर्मरीचिश्च तथा श्रेष्ठा जामातरो मम ॥ १८ ॥

तैश्चापि स्पर्द्धते शर्व्व्यः सर्व्वे ते चैव तंप्रति ।

तेन त्वां न युभूपामि प्रतिकूलो हि मे भयः ॥ १९ ॥

इत्युक्तवांस्तदा दक्षः सम्प्रभृद्देन चेतसा ।

शापार्थमात्मनश्चैव येनोक्ता ये महर्षयः ।

तथोक्ता पितरं सा ये क्रुद्धा देवी तमवयोत् ॥ २० ॥

सत्युवाच ।

याद्मनःकर्मभिर्यस्माददुष्टां मां विगर्हसि ।

तस्मात्पजाग्वहं देहमिमं तात तपाऽऽत्मजम् ॥ २१ ॥

ब्रह्मोवाच ।

तनस्नेतापमानेन सती दृग्मादमर्षिता ।

अप्रर्षाद्गवर्णं देवी नमस्तृण्य न्ययग्नुये ॥ २२ ॥

सन्त्युवाच ।

येनाहमपदेहा वै पुनर्देहेन मास्वता ।

तत्राप्यहमसम्भृता सम्भृता धार्मिकी पुन ।

गच्छेय धर्मपन्नोत्थ अम्यकस्यैव धीमन ॥ २३ ॥

ब्रह्मोवाच ।

तत्रैवाथ समासीना रुष्टाऽऽत्मान समादधे ।

धारयामास चाऽऽनेयीं धारणामान्मनाऽऽन्मनि ॥ २४ ॥

तत स्वात्मानमुत्थाप्य वायुना समुदीरित ।

सर्वाङ्गभ्यो विनिःसृत्य बहिर्मस्म चकार ताम् ॥ २५ ॥

तदुपश्रुत्य निघ्न सत्या देया न शूलधृक् ।

सयादञ्च तयोर्बुद्ध्या यथातथ्येन शङ्कर ।

वक्षस्य च विनाशाय चुकोप भगवान् प्रभु ॥ २६ ॥

धीशङ्कर उवाच ।

यस्मादवमता दक्ष सहसैवाऽऽगता सती ।

प्रशस्ताश्चेतरा सर्वान्स्वत्सुना भर्तमि सह ॥ २७ ॥

तस्माद्वैवस्यते प्राप्ते पुनरेने महर्षय ।

उत्पत्स्यन्ति द्वितीये वै तव यज्ञे हायोनिजा ॥ २८ ॥

हुने वै ब्रह्मण सत्रे चाक्षुषस्यान्तरे मनो ।

अमित्र्याहृत्य सप्तर्षान् दक्ष सोऽम्यशपत् पुन ॥ २९ ॥

मविना मानुषो राजा चाक्षुषस्यान्तरे मनो ।

प्राचीनरहिष पौत्र पुत्रश्चापि प्रचेतस ॥ ३० ॥

दक्ष इत्येष नाम्ना त्वं मारिष्यायां जनिष्यसि ।

कन्यायां शाखिनाञ्चैव प्राप्ते वै चाक्षुषान्तरे ॥ ३१ ॥

अहं तत्रापि ते विघ्नमाचरिष्यामि दुर्मते ।

धर्मकामार्थयुक्तेषु कर्मस्विह पुनः पुनः ॥ ३२ ॥

ततो वै व्याहृतो दक्षो रुद्रं सोऽभ्यशपत् पुनः ॥ ३३ ॥

दक्ष उवाच ।

यस्मात्त्वं मत्कृते क्रूर ऋषीन् व्याहतवानसि ।

तस्मात् सादं सुरैर्यज्ञे न त्वां यक्ष्यन्ति वै द्विजाः ॥ ३४ ॥

कृत्वाऽऽहुतिं तप क्रूर अपः स्पृशन्नि कर्मसु ।

इहैव घटस्यसे लोके दिवं हित्वाऽऽ युगक्षयात् ।

ततो देवैस्तु ते सादं न तु पूजा भविष्यति ॥ ३५ ॥

रुद्र उवाच ।

चातुर्वर्ण्यन्तु देवानां ते चाप्येकत्र भुञ्जते ।

न भोक्ष्ये सहितस्तेस्तु ततो भोक्ष्याम्यहं पृथक् ॥ ३६ ॥

सर्वेषाञ्चैव लोकानामादिर्भूलोक उच्यते ।

तमहं धारयाम्येकः स्वेच्छया न तवाऽऽज्ञया ॥ ३७ ॥

तस्मिन् धृते सर्वे (स्वर्ग) लोकाः सर्वे तिष्ठन्ति शाश्वताः ।

तस्मादहं घसामीह सततं न तवाज्ञया ॥ ३८ ॥

ब्रह्मोवाच ।

ततोऽभिव्याहृतो दक्षो रुद्रेणामिततेजसा ।

स्वायम्भुषीं तनुं त्यक्त्वा उत्पन्नो मानुषेष्विह ॥ ३९ ॥

यदागृहपतिर्दक्षो यज्ञानामीश्वरः प्रभुः ।
 समस्तेनेह यज्ञेन सोऽयजद्दैवतैः सह ॥ ४० ॥
 अथ देवी सती (यत्ते) जह्ने प्राप्ते वैवस्वतेऽन्तरे ।
 मेनायां तामुमां देवी जनयामास शैलराट् ॥ ४१ ॥
 सा तु देवी सती पूर्वमासीत् पश्चादुमाऽभवत् ।
 सहस्रता भवस्येषा नैतया मुच्यते भवः ॥ ४२ ॥
 यावदिच्छति संस्थानं प्रभुर्मन्यन्तरैष्विह ।
 मारीचं कश्यपं देवी यथाऽदितिरनुप्रता ॥ ४३ ॥
 साऽद्धं नारायणं श्रीस्तु मघवन्तं शची यथा ।
 विष्णुं कीर्तिरुपा सूर्यं वसिष्ठं चाप्यरुन्धती ॥ ४४ ॥
 नैतांस्तु विजहत्येता भर्तृन् देव्यः कथञ्चन ।
 एवं प्राचेतसो दक्षो जह्ने वै चाक्षुषेऽन्तरे ॥ ४५ ॥
 प्राचीनवर्हिषः पौत्रः पुत्रश्चापि प्रचेतसाम् ।
 दशभ्यस्तु प्रचेतोभ्यो मारिषायां पुनर्नृप ॥ ४६ ॥
 जह्ने रुद्राभिशापेन द्वितीयमिति नः श्रुतम् ।
 भृगवादयस्तु ते सर्वे जज्ञिरे वै महर्षयः ॥ ४७ ॥
 आद्ये त्रेतायुगे पूर्वं मनोर्वैवस्वतस्य ॥
 देवस्य महतो यज्ञे चारुणीं विभ्रतस्तनुम् ॥ ४८ ॥
 इत्येषोऽनुशयो ह्यासीत्तयोर्जात्यन्तरे गतः ।
 प्रजापतेश्च दक्षस्य अयम्बकस्य च धीमतः ॥ ४९ ॥
 तस्मान्नानुशयः काव्यो घरेष्विह कदाचन ।

जात्यन्तरगतस्यापि भावितस्य शुभाशुभैः ।

जन्तोर्न भूतये ख्यातिस्तत्र कार्यं विजानता ॥ ५० ॥

मुनय ऊचुः ।

कथं रोपेण सा पूर्वं दक्षस्य दुहिता सती ।

त्यक्त्वा देहं पुनर्जाता गिरिराजगृहे ब्रमो ॥ ५१ ॥

देहान्तरे कथं तस्या पूर्वदेहो बभूव ह ।

भवेन सह संयोगः संवादश्च तयोः कथम् ॥ ५२ ॥

स्वयम्बरः कथं वृत्तस्तस्मिन् महति जन्मनि ।

विवाहश्च जगन्नाथ सग्याश्चर्य्यसमन्वितः ॥ ५३ ॥

तत्सर्वं विस्तराद्ब्रह्मन् वक्तुमर्हसि साम्प्रतम् ।

श्रोतुमिच्छामहे पुण्यां कथां चातिमनोहराम् ॥ ५४ ॥

ब्रह्मोवाच ।

शृणुध्वं मुनिशार्ङ्गलाः कथां पापप्रणाशिनीम् ।

उमाशङ्कुरयोः पुण्यां सर्व्वकामफलप्रदाम् ॥ ५५ ॥

कदाचित् स्वगृहात् प्राप्तं कश्यपं द्विपदां वरम् ।

अपृच्छद्विमघान् घृत्तं लोके ख्यातिकरं हितम् ॥ ५६ ॥

केनाक्षयाश्च लोकाः स्युः ख्यातिश्च परमा मुने ।

तथैव चार्घनीयत्वं सत्सु तत्कथयस्व मे ॥ ५७ ॥

कश्यप उवाच ।

अपत्येन मदायाहो सध्वमेतदपाप्यते ।

ममाऽऽख्यातिरपत्येन ब्रह्मणा ऋषिभिः सह ॥ ५८ ॥

किं न पश्यसि शैलेन्द्र यतो मा परिपृच्छसि ।
वर्त्तयिष्यामि यच्चापि यथादृष्ट पुराऽञ्चल ॥ ५६ ॥
घाराणसीमह गच्छन्नपश्य सस्थित दिवि ।
विमान सुनत्र दिव्यमनीषस्य महर्द्धिमत् ॥ ६० ॥
तस्याधस्तादार्त्तनाड गर्त्तस्थाने शृणोम्यहम् ।
तमह तपसा ज्ञात्वा तत्रैवान्तर्हित स्थित ॥ ६१ ॥
अथागात्तत्र शैलेन्द्र विप्रो नियमवान् शुचि ।
तीर्थामिपेक्षतात्मा पर तपसि सस्थित ॥ ६२ ॥
अथ स धजमानस्तु ध्यात्रेणाऽऽर्त्तापिता द्विज ।
विप्रेष त तदा देश स गर्तो यत्र भूधर ॥ ६३ ॥
गर्त्ताया घोरणस्तम्ये लग्नमानास्तदा मुनीन् ।
अपश्यदार्त्तोदु पात्ता स्तानपृच्छथ स द्विज ॥ ६४ ॥
द्विज उवाच ।

के यूय घोरणस्तम्ये लग्नमाना ह्यधोमुखा ।
दु पिता केन मोक्षश्च युष्माक भविताऽनघा ॥ ६५ ॥
पितर ऊचु ।

घय ते वृत्तपुण्यस्य पितर सपितामहा ।
प्रपितामहाश्च त्रिष्यामस्तव दुष्टेन कर्मणा ॥ ६६ ॥
नरकोऽय महामाग गर्त्तारूपेण सस्थित ।
त्व चापि घोरणस्तम्यस्त्वयि लग्नमहे घयम् ॥ ६७ ॥
यावत्त जीवसे विप्र तावदेव घय स्थिता ।
मृते त्वयि गमिष्यामो नरक पापचेतस ॥ ६८ ॥

यदि त्वं दारसंयोगं कृत्वापत्यं गुणोत्तरम् ।
 उत्पादयसि तेनास्मान् मुच्येम घयमेनसः ॥ ६६ ॥
 नान्येन तपसा पुत्र तीर्थानाञ्च फलेन च ।
 एतत् कुरु महाबुद्धे तारयस्व पितॄन् भयात् ॥ ७० ॥
 कश्यप उवाच ।

स तथेति प्रतिज्ञाय आराध्य बृषभध्वजम् ।
 पितॄन् गर्तात्समुद्धृत्य गणपान् प्रचकार ॥ ७१ ॥
 स्वयं रुद्रस्य दयितः सुवेशो नाम नामतः ।
 सगमतो बलघांश्चैव रुद्रस्य गणपोऽभवत् ॥ ७२ ॥
 तस्मात् कृत्वा तपो धीरमपत्यं गुणबहुभृशम् ।
 उत्पादयस्व शैलेन्द्र सुतां त्वं धरवर्णिनीम् ॥ ७३ ॥
 ब्रह्मोवाच ।

स पथमुक्त्वा ब्रह्मपिना शैलेन्द्रो नियमस्थितः ।
 तपश्चकाराप्यतुलं येन तुष्टिरभून्मम ॥ ७४ ॥
 तदा तमुत्पपाताहं धरदोऽस्मीति चाब्रवम् ।
 ब्रूहि तुष्टोऽसि शैलेन्द्र तपसानेन सुप्रतः ॥ ७५ ॥
 हिमवानुवाच ।

भगवन् पुत्रमिच्छामि गुणैः सर्वैरलङ्कृतम् ।
 एवं धरं प्रयच्छस्व यदि तुष्टोऽसि मे प्रमो ॥ ७६ ॥
 ब्रह्मोवाच ।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा गिरिराजस्य भो द्विजाः ।
 तदा तस्मै धरं चाहं दत्तयाम्ननसेप्सितम् ॥ ७७ ॥

कन्या भवित्री शैलेन्द्र तपसाऽनेन मुनत ।
 यस्याः प्रमादात्सर्वत्र कीर्त्तिमाप्स्यसि शोभनाम् ॥ ७८ ॥
 अर्चितः सर्वदेवानां तीर्थकोटिसमावृतः ।
 पावनश्चैव पुण्येन देवानामपि सर्वतः ॥ ७९ ॥
 ज्येष्ठा च सा भवित्री ते अन्ये चात्र ततः शुभे ॥ ८० ॥
 सोऽपि कालेन शैलेन्द्रो मेनायामुत्पादयत् ।
 अपर्णामेकपर्णान्च तथा चैकपाटलाम् ॥ ८१ ॥
 न्यप्रोधमेकपर्णान्तु पाटलञ्चैकपाटलाम् ।
 अशित्वा त्वेकपर्णान्तु अनिरेतस्तपोऽचरत् ॥ ८२ ॥
 शतं वर्षसहस्राणां दुश्चरं देषदानरीः ।
 आहारमेकपर्णं तु एकपर्णां समान्वरन् ॥ ८३ ॥
 पाटलेन तथैवेन विदधे चैकपाटला ।
 पूर्णं वर्षसहस्रे तु आहारं तां प्रचक्रतुः ॥ ८४ ॥
 अपर्णां तु निराहारा तां माता प्रत्यभाषत ।
 निषेधयन्ती द्योमेति मातुस्नेहेन दुःखिता ॥ ८५ ॥
 सा तथोक्ता तथा मात्रा देवी दुधरचारिणी ।
 तेनैव नाम्ना लोकेषु पिष्यानां मुरपूजिता ॥ ८६ ॥
 एतत्तु त्रिकुमारीकं जगत्स्यावरजद्भ्रमम् ।
 एतासां तपसां वृत्तं यावदभूमिर्घरिष्यति ॥ ८७ ॥
 तपःशरीरास्ताः सर्वास्तिष्ठो योगं समाश्रिताः ।
 सर्वार्थैव महामागास्तथा च स्थिरार्थापनाः ॥ ८८ ॥

ता लोकमातरश्चैव ब्रह्मचारिण्य एव च । ,
 अनुगृह्णन्ति लोकांश्च तपसा स्वेन सर्व्वदा ॥ ८६ ॥
 उमा तासां वरिष्ठा च ज्येष्ठा च वरवर्णिनी ।
 महायोगबलोपेता महादेवमुपस्थिता ॥ ८७ ॥
 दत्तकश्चोशना तस्य पुत्रः स भृगुनन्दन' ।
 आसीत्तस्यैकपर्णा तु देवलं सुपुत्रे सुतम् ॥ ८८ ॥
 या तु तासां कुमारीणां तृतीया ह्येकपाटला ।
 पुत्रं सा तमलकस्य जैगोपव्यमुपस्थिता ॥ ८९ ॥
 तस्याश्च शङ्खलिलितौ स्मृतौ पुत्रावयोनिर्जौ ।
 उमा तु या मया तुभ्यं कीर्तिता वरवर्णिनी ॥ ९० ॥
 अथ तस्यास्तपोयोगात्त्रैलोक्यमपिलं तदा ।
 प्रधूपितमिहाऽऽलक्ष्य घञस्तामहमग्रवम् ॥ ९१ ॥
 देयि किं तपसा लोकांस्तापयिष्यसि शोभने ।
 त्वया खृष्टमिदं सर्व्वं मा हृत्वा तद्विनाशाय ॥ ९२ ॥
 त्वं हि धारयसे लोकानिमान् सर्व्वान् स्वतेजसा ।
 ब्रूहि किं ते जगन्मातः प्रार्थितं सम्प्रसीद नः ॥ ९३ ॥

देव्युवाच ।

यदर्थं तपसो तस्य वरणं मे पितामह ।
 त्वमेव सृष्टिजानीने ततः पृच्छसि किं पुनः ॥ ९४ ॥

ब्रह्मावाच ।

ततस्तामग्रयं घाहं यदर्थं तप्यसे शुभे ।
 स त्वां स्वयमुपागम्य हृदयं परयिष्यति ॥ ९५ ॥

शर्व एव पति श्रेष्ठः सर्वलोकेष्वरेष्ट्वरः ।

वयं सदैव यस्येमे वक्ष्या वै किङ्कराः शुभे ॥ ६६ ॥

स देवदेवः परमेश्वरः स्वयं,

स्वयम्भुरायास्यति देवि ततः कम् ।

उदाररूपो विहृतादिन्प,

समानरूपोऽपि न यस्य कस्यचित् ॥ १०० ॥

महेश्वरः पर्वतलोकधर्मा,

चराचरेशः प्रथमोऽप्रमेयः ।

वितेन्दुना हीन्द्रसमानवर्चसा,

विभीषणं रूपमिवास्थिता य. ॥ १०१ ॥

इति श्री भादि ब्राह्मो महापुराणे स्वयम्भुः ऋषि

संवादे चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥

आदितः श्लोकानां समष्ट्यङ्काः—२३८०

पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ।

पार्वत्युपाख्यानवर्णनम्

ब्रह्मोवाच ।

ततस्ताम्रवन् देवास्तदा गत्वा तु सुन्दरीम् ।

देवी शीघ्रेण कालेन धूर्जटिर्नोल्लोहितः ॥ १ ॥

स भर्ता तव देवेशो भविता मा तपः कृया. ।

ततः प्रदक्षिणीकृत्य देवा विप्रा गिरे. मुताम् ॥ २ ॥

जग्मुश्चादर्शनं तस्याः सा चापि विरराम ह ।
 सा देवी सूक्तमित्येवमुक्त्वा स्वस्याश्रमे शुभे ॥ ३ ॥
 द्वारि जातमशोकञ्च समुपाधित्य चास्थिता ।
 अथागाच्चन्द्रतिलकस्त्रिदशार्त्तिहरो हरः ॥ ४ ॥
 विहृतं रूपमास्थाय ह्रस्वो.बाहुक एव च ।
 विमग्ननासिको भूत्वा कुब्जः केशान्तपिङ्गलः ॥ ५ ॥
 उवाच विहृतास्यश्च देवि त्वां धरयाम्यहम् ।
 अथोमा योगसंसिद्धा ज्ञात्वा शङ्करमागतम् ॥ ६ ॥
 अन्तर्भावविशुद्धात्मा कृपानुष्ठानलिप्सया ।
 तमुवाचार्घ्यपाद्याभ्यां मधुपर्केण चैव ह ॥ ७ ॥
 सम्पूज्य सुमनोभिस्तं ब्राह्मणं ब्राह्मणप्रिया ॥ ८ ॥

देव्युवाच ।

भगवन्न स्वतन्त्राहं पिता मे त्वग्रणीर्गृहे ।
 प्रभुर्मम दाने वै कन्याहं द्विजपुङ्गव ॥ ९ ॥
 गत्या याचस्व पितरं मम शैलेन्द्रमययम् ।
 स चेद्दाति मां विप्र तुभ्यं तदुचितं मम ॥ १० ॥

ब्रह्मोवाच ।

ततः स भगवान् देवस्तथैव विहृतः प्रभुः ।
 उवाच शैलराजानं सुतां मे यच्छ शैलराट् ॥ ११ ॥
 स तं विहृतरूपेण ज्ञात्वा रुद्रमथाव्ययम् ।
 भीतः शापाद्य विमना इदं ध्वनमब्रवीत् ॥ १२ ॥

शैलेन्द्र उवाच ।

भगवन्नाचमन्येऽहं ब्राह्मणान् भुवि देवताः ।
मनीषितन्तु यत् पूर्वं तच्छृणुष्व महामते ॥ १३ ॥
स्वयम्भरो मे दुहितुर्भविता विप्रपूजितः ।
घरयेद्यं स्वयं तत्र स भर्तास्या भविष्यति ॥ १४ ॥
तच्छ्रुत्वा शैल्यक्ष्णं भगवान् वृषभध्वजः ।
देव्या समीपमागत्य इदमाह महामनाः ॥ १५ ॥

शिव उवाच ।

देवि पित्रा त्वनुज्ञातः स्वयम्भर इति श्रुतिः ।
तत्र त्वं घरयित्री यं स ते भर्ता भवेदिति ॥ १६ ॥
तदापृच्छ्य गमिष्यामि दुर्लभां त्वां घरानने ।
रूपयन्त समुत्सृज्य घृणोप्यसदृशं कथम् ॥ १७ ॥

ब्रह्मावाच ।

तेनोक्ता सा तदा तत्र भाषयन्तो तदोरितम् ।
भारश्च रुद्रनिहितं प्रसादं मनसस्तथा ॥ १८ ॥
सम्प्राप्योवाच देवेश मा तेऽभूद्बुद्धिरन्यथा ।
अहं त्वां घरयिष्यामि नादुभुतन्तु कथञ्चन ॥ १९ ॥
अथवा तेऽस्ति सन्देहो मयि विप्र कथञ्चन ।
इहेय त्वां महाभाग घरयामि मनोगतम् ॥ २० ॥

ब्रह्मोवाच ।

गृहीत्वा स्तवकं सा तु हस्ताभ्या तत्र संस्थिता ।
स्कन्धे शम्भोः समाधाय देवी ग्राह वृतोऽसि मे ॥ २१ ॥

ततः स भगवान् देवस्तया देव्या वृतस्तदा ।

उवाच तमशोकं वै धात्रा सञ्जीवयन्निव ॥ २२ ॥

शिव उवाच ।

यस्मात्तव सुपुण्येन स्तववेन वृतोऽस्म्यहम् ।

तस्मात्तुं जरया त्यक्तस्त्यमरः सम्भविष्यसि ॥ २३ ॥

कामरूपां कामपुष्पः कामदो दयितो मम ।

सर्वभरणपुष्पाढ्यः सर्वपुष्पफलोपगः ॥ २४ ॥

सर्वान्नभक्षकश्चैव अमृतस्वाद एव च ।

सर्वगन्धश्च देवानां भविष्यसि दृढप्रियः ॥ २५ ॥

निर्भयः सर्वलोकेषु भविष्यसि सुनिवृतः ।

आश्रमं वेदमत्यर्थं चित्रकूटेति विधुतम् ॥ २६ ॥

यो हि यास्यति पुण्यार्थी सोऽश्वमेधमवाप्स्यति ।

यस्तु तत्र मृतश्चापि ब्रह्मलोकं स गच्छति ॥ २७ ॥

यश्चात्र नियमेयुक्तः प्राणान् सम्यक् परित्यजेत् ।

स देव्यास्तपसा युक्तो महागणपतिर्भवेत् ॥ २८ ॥

ब्रह्मोवाच ।

एवमुक्त्वा तदा देव आपृच्छ्य हिमघत्सुताम् ।

अन्तर्द्धे जगत्स्रष्टा सर्वभूतप ईश्वरः ॥ २९ ॥

सापि देवी गते तस्मिन् भगवत्यमितात्मनि ।

तत एवोन्मुखी भूत्वा शिलायां सम्यभूव ॥ ३० ॥

उन्मुखी सा भवे तस्मिन् महेशे जगतां प्रभौ ।

निशेव चन्द्ररहिता न धर्मो विमनास्तदा ॥ ३१ ॥

अथ शुभ्राय शब्दञ्च बालस्यार्त्तस्य शैलजा ।
 सरस्युदकसम्पूर्णं समीपे चाश्रमस्य च ॥ ३२ ॥
 स कृत्वा बालरूपन्तु देवदेवः स्वयं शिवः ।
 क्रीडाहेतोः सरोमध्ये ग्राहग्रस्तोऽभवत्तदा ॥ ३३ ॥
 योगमायां समास्थाय प्रपञ्चोद्भवकारणम् ।
 तद्रूपं सरसो मध्ये कृत्वैवं सममापत ॥ ३४ ॥

बाल उवाच ।

त्रातु मां कश्चिदित्याह ग्राहेण हतचेतसम् ।
 धिक्कष्टं बाल एवाहमप्राप्तार्थमनोरथः ॥ ३५ ॥
 प्रयामि निधनं घने ग्राहस्यास्य दुरात्मनः ।
 शोचामि न स्वर्गं देहं ग्राहग्रस्तः सुदुःखितः ॥ ३६ ॥
 यथा शोचामि पितरं मातरञ्च तपस्विनीं ।
 ग्राहगृहीतं मां श्रुत्वा प्राप्तं निधनमुन्सुकी ॥ ३७ ॥
 प्रियपुत्रावेकपुत्री प्राणान् न्यूनं त्यजिष्यतः ।
 बहो घत सुकष्टं वै योऽहंबालोऽकृताश्रमः
 अन्तर्ग्राहेण ग्रस्तस्तु यास्यामि निधनं किल ॥ ३८ ॥

ब्रह्मोवाच ।

श्रुत्वा तु देवी तं नारदं विप्रस्याऽऽर्त्तम्य शोमना ।
 उत्थाय प्रस्थिता तत्र यत्र तिष्ठन्वसोःद्विजः ॥ ३९ ॥
 सापश्यदिन्दुवदना बालकं चारुरूपिणम् ।
 ग्राहस्य मुक्षमापन्नं वेपमानमवस्थितम् ॥ ४० ॥

सोऽपि ग्राहवरः श्रीमान् दृष्ट्वा देवीमुपागताम् ।
 तं गृहीत्वा द्रुतं यातो मध्यं सरस एव हि ॥ ४१ ॥
 स कृप्यमाणस्तेजस्वी नादमात्तं तदाकरोत् ।
 अथाह देवि दुःखार्त्ता बालं दृष्ट्वा ग्राहवृतम् ॥ ४२ ॥

पार्षत्युवाच ।

ग्राहराज महासत्त्व बालकं लोकपुत्रकम् ।
 यिमुञ्चेमं महादंष्ट्र क्षिप्रं भोमपराक्रम ॥ ४३ ॥

ग्राह उवाच ।

यो देवि दिषसे पण्डे प्रथमं समुपैति माम् ।
 स ग्राहरो मम पुरा विदितो लोककर्तृभिः ॥ ४४ ॥
 सोऽयं मम महामानो वण्डेऽदनि गिरीन्द्रजे ।
 ग्राहणा प्रेरितो नूनं नैनं मोक्ष्ये कथञ्चन ॥ ४५ ॥

देव्युवाच ।

यन्मया दिमपच्छुद्धे चरितं तप उत्तमम् ।
 तेन बालमिमं मुञ्च ग्राहराज नमोऽस्तु ते ॥ ४६ ॥

ग्राह उवाच ।

मा व्यस्तपसो देवि भृशं बाले शुभानने ।
 यद्दृष्ट्वामि शुच धेष्टे तया मोक्षमवाप्स्यति ॥ ४७ ॥

देव्युवाच ।

ग्राहाधिप यदग्यागु यन् गतामविगर्हितम् ।
 तन् हर्तनाथ सन्देहो यतो मे ग्राहणाः प्रिया ॥ ४८ ॥

ग्राह उवाच ।

यत् कृतं वै तप किञ्चिद्वचन्या स्वतपमुत्तमम् ।
तत् सर्वं मे प्रयच्छाऽऽशु ततो मोक्षमवाप्स्यति ॥ ४६ ॥

दैव्युवाच ।

जन्मप्रभृति यत् पुण्य महाग्राह कृतं मया ।
तत्ते सर्वं मया दत्तं बाल मुञ्च महाग्रह ॥ ५० ॥

ब्रह्मोवाच ।

प्रज्ज्वाल ततो ग्राहस्तपसा तेन भूषित ।
आदित्य इव मन्थाद्दे दुर्निराक्ष्यस्तदाम्भवत् ॥ ५१ ॥
उवाच चैत्र तुष्टात्मा देवो लोकस्थ धारिणीम् ॥ ५२ ॥

ग्राह उवाच ।

देवि किं कृत्यमेतत्ते सुनिश्चित्य महाग्रते ।
तपसोऽप्यर्जनं दुष्णं तस्य त्यागो न शस्यते ।
गृहाण तप एष त्वं बालं चैव सुमध्यमे ।
तुष्टोऽसि ते विप्रभक्त्या धरं तस्माद्दामि ते ॥
सा त्वेयमुक्ता ग्राहेण उवाचेद् महाग्रता ॥ ५३ ॥

दैव्युवाच ।

देहेनापि मया ग्राह रक्ष्यो विप्र प्रयत्नत ।
तप पुनर्मया प्राप्य न प्राप्यो ब्राह्मण पुन ॥ ५४ ॥
सुनिश्चित्य महाग्राह कृतं बालस्य मोक्षणम् ।
न विप्रेभ्यस्तप श्रेष्ठ श्रेष्ठा मे ब्राह्मणा मता ॥ ५५ ॥
दत्त्वा चाह न गृह्णामि ग्राहेन्द्र विहितं हि ते ।
न हि कश्चिन्नरो ग्राहं प्रदत्ता पुनराहरेत् ॥ ५६ ॥

दत्तमेतन्मया तुभ्यं नाऽऽददानि हि तन् पुनः ।
 त्वय्येव गमतामेतद्बालाध्यायं विमुच्यताम् ॥ ५७ ॥

प्रह्लोपाच ।

तथोक्तस्तां प्रशस्याथ मुक्त्वा बालं नमस्य च ।
 देयीमादित्यायमासस्तत्रैवान्तरधीयत ॥ ५८ ॥
 बालोऽपि सरसस्तीरे मुक्तो ग्राहेण वै तदा ।
 स्वप्रलब्ध इषार्थोऽसस्तत्रैवान्तरधीयत ॥ ५९ ॥
 तपसोऽपचयं मत्स्या देवो हिमगिरीन्द्रजा ।
 भूय एव तपः कर्तुंमारेभे नियमस्थिता ॥ ६० ॥
 कर्तुकामां तपो भूयो हात्वा तां शङ्करः स्वयम् ।
 प्रोवाच वचनं विप्रा मा कृयास्तप इत्युत ॥ ६१ ॥
 मह्यमेतत्तपो देवी त्वया दत्तं महाव्रते ।
 तत्तेनैवाक्षयं तुभ्यं भविष्यति सहस्रधा ॥ ६२ ॥
 इति लब्ध्वा धरं देवी तपसोऽक्षयमुत्तमम् ।
 स्वयम्परमुदीक्षन्ती तस्थौ प्रीता मुदा युता ॥ ६३ ॥
 इदं पठेद्भूयो हि नरः सदैव, बालानुभावाचरणं हि शम्भोः
 स देहभेदं समवाप्य पूतो भवेद्गणेशस्तु कुमारतुल्यः ॥ ६४ ॥

इति श्रीब्राह्मं महापुराणे स्वयम्भु ऋषि-

संवादे पार्वत्याः सत्त्वदर्शनं नाम

पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

आदितः श्लोकानां समष्ट्यङ्काः—२४४३

पट्त्रिंशोऽध्यायः ।

पार्वतीस्वयम्बरवर्णनम्

ग्रहोवाच ।

विस्तृते हिमवत्पृष्ठे विमानशतसङ्कुले ।

अभवत् स तु कालेन शैलपुत्र्या स्वयम्बर ॥ १ ॥

अथ पर्वतराजोऽसौ हिमवान् ध्यानकोविद ।

दुहितुर्देवदेवेन ह्यात्मा तदभिमन्त्रितम् ॥ २ ॥

जानन्नपि महाशैल समयारक्षणेप्सया ।

स्वयम्बर तनो देव्या सर्वलोकेष्वघोषयत् ॥ ३ ॥

दैवदानवसिद्धानां सर्वलोकनियासिनाम् ।

वृणुयात् परमेशान समक्ष यदि मे सुता ॥ ४ ॥

तदेव सुम्नः श्लाघ्य ममाभ्युदयसम्मतम् ।

इति सञ्चिन्त्य शैलेन्द्र मया हृदि महेश्वरम् ॥ ५ ॥

आग्रह्यकेषु देवेषु देव्या शैलेन्द्रसत्तम ।

हृत्वा रत्नाकुल देश स्वयम्बरमचाकरत् ॥ ६ ॥

अथैवमाघोषितमात्र एव,

स्वयम्बरे तत्र नगेन्द्रपुत्र्या ।

देवादयः सर्वजगन्निवासा ,

समाययुस्तत्र गृहातरेशा ॥ ७ ॥

प्रफुल्लमासनसन्निविष्ट ,

सिद्धैर्वृतो योगिमिरप्रमेयै ।

विनापितस्तेन महीधराणाऽऽ.

गतस्तदाऽहं त्रिदिगैरपेतः ॥ ८ ॥

अक्षणां सहस्रं सुरराट् स विभ्रद्-

दिव्याङ्गहारस्त्रगुदाररुपः ।

पैराद्यतं सर्व्वगजेन्द्रमुख्यं,

स्त्रयन्मदासारकृतप्रचाहम् ॥ ९ ॥

आरुह्य सर्व्वामरराट् स यज्ञं,

विभ्रत् समागात् पुरतः सुराणाम् ।

तेजःप्रभावाधिकतुल्यरूपी,

प्रोद्धासयन् सर्व्वदिशो विवस्थान् ॥ १० ॥

हैमं विमानं स यत्पत्ताक-

मारुह्य भागात्त्वरितं जवेन ।

मणिप्रदीप्तोज्ज्वलकुण्डलश्च

घटयर्कतेजःप्रतिमे विमाने ॥ ११ ॥

समभ्यगात् कश्यपसूनुरेकः

आदित्यमभ्याहुभगनामधारी ।

पीताङ्गयष्टिः सुहृताङ्गहार-

तेजोबलाज्ञासदृशप्रभावः ॥ १२ ॥

दण्डं समागृह्य कृतान्त आगा-

दारुह्य भीमं महिषं जवेन ।

महामहीघ्रोच्छ्रयपीनगात्र-

। स्वर्णादिरत्नाञ्जितचारुवेशः ॥ १३ ॥

समीरण सर्वजगद्धिमर्त्ता,

विमानमारुह्य समभ्यगाद्धि ।

सतापयन् सर्वसुरासुरेशा-

स्तेजोधिकस्नेजसि सन्निविष्ट ॥ १४ ॥

घट्टि. समभ्येत्य सुरेन्द्रमध्ये,

ज्वलन् प्रतस्थौ वररेशधारी ।

नानामणिप्रज्वलिताङ्ग्यष्टि

जगद्गुरं दिव्यविमानमग्न्यम् ॥ १५ ॥

मारुह्य सर्वदृष्टिणाधिपेश,

स राजराजस्त्वरितीऽभ्यगाद्य ।

आप्याययन् सर्वसुरासुरेशान्,

कान्त्या च वेदो न च चारुरूप ॥ १६ ॥

ज्वलन्महारत्नविचित्ररूप,

विमानमारुह्य शशी समायात् ।

श्यामाङ्ग्यष्टि सुविचित्रेश,

सर्वाङ्ग आवद्धसुगन्धिमाल्य ॥ १७ ॥

ताक्ष्यं समाह्वय महीध्रकल्प,

गदाधरोऽसौ त्वरित समेत ।

अथाश्विनौ चापि मिषवरो द्वा

वेक विमान त्वरत्याऽधिह्व ॥ १८ ॥

मनोहरो प्रज्वलचारुशै,

आजग्मतुर्देववरो सुवीरो ।

सहस्रनागः स्फुरदग्निघणं,

विभ्रसत्तदानीं ज्वलनार्धनेजाः ॥ १६ ॥

सादं ॥ नागैरपरैर्महात्मा,

विमानमाद्यह्य समभ्यगाच्च ।

दितेः सुतानाञ्च महासुराणां,

घट्पर्वशक्रानिलतुल्यभासाम् ॥ २० ॥

वरानुरूपं प्रविधाय घेशं,

घृन्द समागात् पुरतः सुराणाम् ।

गन्धर्वराजः स च चारुरूपी,

दिष्याद्गदो दिव्यविमानचारी ॥ २१ ॥

गन्धर्वसङ्घैः सहितोऽप्सरोभिः,

शक्राज्ञया तत्र समाजगाम ।

अन्ये च देवास्त्रिदिवात्तदानीं,

पृथक् पृथक् चारुगृहीतयेशाः ॥ २२ ॥

आजगमुरारुह्य विमानपृष्ठं,

गन्धर्वयक्षोरगकिन्नराश्च ।

शङ्खपतिस्तत्र सुरेन्द्रमध्ये,

रराज राजाऽधिकलक्ष्यमूर्तिः ॥ २३ ॥

आज्ञावलम्ब्यैरुत्तममोदः,

स्वयम्बरं तं समलञ्चकार ।

हेतुस्त्रिलोकस्य जगत्प्रसूतेः,

माता च तेषां स सुरासुराणाम् ॥ २४ ॥

पत्नी च शम्भो पुरुषस्य धीमतो,
 गीता पुराणे प्रजति परा या ।
 दक्षस्य कोपाद्धिमवदुगृह सा
 कायार्थमायास्त्रिदिवोकसा हि ॥ २५ ॥
 विमानपृष्ठे मणिहेमनुष्ठे
 स्थिता बलञ्चामरबीनिताङ्गी ।
 सर्व्यत्तुपुष्पा सुसुगन्धमाला
 प्रगृह्य देवी प्रसन्न प्रतस्थे ॥ २६ ॥

ब्रह्मोवाच ।

माला प्रगृह्य देयान्तुस्थिताया देवससदि ।
 शम्भोरागतैर्देवै स्वयम्बर उपागते ॥ २७ ॥
 देया निजासया शम्भूमूल्या पञ्चशिव शिशु ।
 उत्सङ्गनलसुप्तो बभूव सहसा विभु ॥ २८ ॥
 ततो ददश त देवा शिशु पञ्चशिप स्थितम् ।
 ज्ञात्वा त समययानाञ्जगृहे प्रातिसयुता ॥ २९ ॥
 अथ सा शुद्धसङ्कल्पा काङ्क्षिन प्राप्य सत्पतिम् ।
 निवृत्ता च तदा तस्यै कृत्वा सा हृदि त विभुम् ॥ ३० ॥
 ततो हृत्प्या शिशु देवा देया उत्सङ्गवर्त्तिनम् ।
 कोऽयमत्रेति समन्य चुन्नुशुभ्रं शमोहिता ॥ ३१ ॥
 वज्रमाहारयत्तस्य बाहुमुत्क्षिप्य वृत्रहा ।
 स पादुखलितस्तस्य तथैव समतिष्ठत ॥ ३२ ॥

स्तम्भितः शिशुरूपेण देवदेवेन शम्भुना ।

घञ्जं क्षेप्तुं न शशाक वृत्रहा चलितुं न च ॥ ३३ ॥

भगो नाम ततो देव आदित्यः काश्यपो बली ।

उत्क्षिप्य (चिक्षेप) आयुधं दीप्तं छेतुमिच्छन् विमोहितः ॥ ३४ ॥

तस्यापि भगवान् बाहुं तथैवास्तम्भयत्तदा ।

घलं तेजश्च योगश्च तथैवास्तम्भयद्विभुः ॥ ३५ ॥

शिरः प्रकम्पयन् विष्णुः शङ्करं समवैक्षत ।

अथ तेषु स्थितेष्वेवं मन्युमत्सु सुरेषु च ॥ ३६ ॥

अहं परमसंविप्रो ध्यानमास्थाय सादरम् ।

बुद्धवान् देवदेवेशमुमोत्सङ्गे समास्थितम् ॥ ३७ ॥

ज्ञात्वाऽहं परमेशानं शीघ्रमुत्थाय सादरम् ।

पवनं चरणं शम्भोः स्तुतवांस्तमहं द्विजाः ॥ ३८ ॥

पुराणैः सामसङ्गीतैः पुण्याख्यैर्गुह्यनामभिः ।

अजस्त्यमजरो देवः कृष्टा विभुः परापरम् ॥ ३९ ॥

प्रधानं पुरुषो यस्यं ब्रह्म ध्येयं तदक्षरम् ।

अमृतं परमात्मा च ईश्वरः कारणं महत् ॥ ४० ॥

ब्रह्मसृक् प्रकृतेः कृष्टा सत्त्वैर्गुणैर्गुह्यनामभिः ।

इयं प्रकृतिर्देवी सदा ते सृष्टिकारणम् ॥ ४१ ॥

पद्मीरूपं समास्थाय जगन्कारणमागता ।

नमस्तुभ्यं महादेव महादेया ये सद्दिताय च ॥ ४२ ॥

प्रमादात्तव देवेश नियोगाच्च मया प्रजाः ।

देवाद्यास्तु इमाः सृष्टा मृदागत्वयोगमायया ॥ ४३ ॥

कुरु प्रसादमेतेषा यथापूर्वं भवन्तिवमे ।
 तत एवमहविप्रा विज्ञाप्य परमेश्वरम् ॥ ४४ ॥
 स्तम्भितान् सर्वदेवास्तानिदं चाह तदोक्तवान् ।
 मूढाश्च देवता सर्वा नैनं पुन्यत शङ्करम् ॥ ४५ ॥
 गच्छन्त्य शरणं शीघ्रमेतमेव महेश्वरम् ।
 सार्धं मयैव देवेश परमात्मानमभ्ययम् ॥ ४६ ॥
 ततस्ते स्तम्भिता सर्वे तथैव त्रिदिवीकसः ।
 प्रणेमुर्मनसा सर्वं भावशुद्धेन चेतसा ॥ ४७ ॥
 अथ तेषां प्रसन्नोऽभूद्देवदेवो महेश्वरः ।
 यथापूर्वं चकाराऽऽशु देवतानां तनूस्तदा ॥ ४८ ॥
 तत एव प्रवृत्ते तु सर्वदेवनियारणे ।
 वपुश्चकार देवेशस्तथैव परममद्भुतम् ॥ ४९ ॥
 तेजसा तस्य ते ध्वस्ताश्च नु सर्वे न्यमीलयन् ।
 तेभ्यः स परमं चक्षुः स्ववपुर्दृष्टिशक्तिमत् ॥ ५० ॥
 प्रादात् परमदेवेशमपश्यस्ते तदा विभुम् ।
 ते दृष्ट्वा परमेशानं तृतीयेक्षणधारिणम् ॥ ५१ ॥
 शक्राद्या मेनिरे देवा सर्वे एव सुरेश्वराः ।
 तस्य देवो तदा दृष्टा समश्च त्रिदिवीकसाम् ॥ ५२ ॥
 पादयोः स्थापयामास स्रङ्मालाममितद्युतिः ।
 साधु साध्विति ते होतुः सर्वे देवा पुनर्विभुम् ॥ ५३ ॥
 सह देव्या नमश्चक्रुः शिरोभिर्मूतलाश्रितैः ।
 अथास्मिन्नन्तरे विप्रास्तमहं दैवतं सह ॥ ५४ ॥

हिमचन्तं महाशैलमुक्तवांश्च महाद्युतिम् ।

श्लाघ्यः पूज्यश्च वन्द्यश्च सर्व्वेषां त्वं महानसि ॥ ५५ ॥

शर्व्वेण सह सम्बन्धो यस्य तेऽभ्युदयो महान् ।

क्रियतां चारुद्धाहः किमर्थं स्थीयते परम् ॥

ततः प्रणम्य हिमवांस्तदा मां प्रत्यभापत ॥ ५६ ॥

हिमयानुवाच

त्वमेव कारणं देव यस्य सर्व्वोदये मम ।

प्रसादः सहस्रोत्पन्नो हेतुश्चापि त्वमेव हि ॥

उद्वाहस्तु यदा यादृक् तद्वि (कं वि) घटस्व पितामह ॥ ५७ ॥

ब्रह्मोवाच ।

ततः एवं वचः श्रुत्वा गिरिराजस्य मो द्विजाः ।

उद्वाहः क्रियतां देव इत्यहं चोक्तवान् विभुम् ॥ ५८ ॥

मामाह शङ्करो देवो यथेष्टमिति लोकपः ।

तत्क्षणाच्च ततो विप्रा अस्माभिर्निर्मितं पुरम् ॥ ५९ ॥

उद्वाहार्थं महेशस्य नानारत्नोपशोभितम् ।

रत्नानि मणयश्चित्रा हेममौक्तिकमेव च ॥ ६० ॥

मूर्त्तिमन्त उपागम्य बलञ्चक्रुः पुरोत्तमम् ।

चित्रा मारकती भूमिः सुवर्णस्तम्भशोभिता ॥ ६१ ॥

भास्वत्स्फटिकमिच्छिश्च मुक्ताहारप्रलम्बिता ।

तस्मिन् द्वारि पुरे रम्य उद्वाहार्थं विनिर्मिता ॥ ६२ ॥

शुशुभे देवदेवस्य महेशस्य महात्मनः ।

सोमादित्यौ समं तत्र तापयन्तौ महामणी ॥ ६३ ॥

सौरभेयं मनोरम्यं गन्धमादाय मास्तः ।

प्रवर्चा सुखसंस्पर्शो भवमक्तिं प्रदर्शयन् ॥ ६४ ॥

समुद्रास्तत्र चत्वारः शक्राद्याश्च सुरोत्तमाः ।

देवनद्यो महानद्यः सिद्धा मुनय एव च ॥ ६५ ॥

गन्धर्वाप्सरसः सर्वे नागा यक्षाः सराक्षसाः ।

औदका ऐचराश्चान्ये किन्नरा देवचारणा ॥ ६६ ॥

तुम्बुरुर्नारदो हाहा हहश्चैव तु सामगाः ।

रम्याण्यादाय घाद्यानि तत्राऽऽजग्मुस्तदा पुरम् ॥ ६७ ॥

ऋषयस्तु कथास्तत्र वेदगीतास्तपोधना ।

पुण्यान् वैयाहिकान्मन्त्राञ्जेषु संहृष्टमानसा ॥ ६८ ॥

जगतो मातरः सर्वा देवकन्याश्च कृत्स्नशः ।

गायन्ति हर्षिताः सर्वा उद्वाहे परमेष्ठिन ॥ ६९ ॥

ऋतवः पद्मं तत्र नानागन्धसुखायहाः ।

उद्वाहः शङ्करस्येति मूर्तिमन्त उपस्थिताः ॥ ७० ॥

नीलजीमूतसङ्काशीर्मन्त्रध्वनिप्रहर्षिभिः ।

केकायमानैः शिखिभिर्नृत्यमानैश्च सर्वशः ॥ ७१ ॥

विलोलपिङ्गलस्पष्टचिह्नुर्ह्रस्वाविहासिता ।

कुमुदापीडशुक्लामिर्वलाकामिश्च शोमिता ॥ ७२ ॥

प्रत्यप्रसञ्जातशिलीन्ध्रकन्दली-

लताद्रुमाद्युदुगतपल्लवा शुभा ।

शुभाम्बुधाराप्रणयप्रबोधितै

र्महालसेर्मकगणैश्च नादिता ॥ ७३ ॥

प्रियेषु मानोद्धतमानसानां,

मनस्विनीनामपि कामिनीनाम् ।

मयूस्केकामिरुतैः क्षणेन,

मनोहरैर्मानचिभङ्गहेतुभिः ॥ ७४ ॥

तथा विचर्णोज्ज्वलचारुमूर्तिना,

शशाङ्कलेखाकुटिलेन सर्वतः ।

पयोदसङ्घातसमीपवर्तिना,

महेन्द्रचापेन भृशं विराजिता ॥ ७५ ॥

विचित्रपुष्पाम्बुभवैः सुगन्धिमि-

र्घनाम्बुसम्पर्कतया सुशीतलैः ।

विकम्पयन्ती पवनैर्मनोहरैः,

सुराङ्गनानामलकावलीः शुभाः ॥ ७६ ॥

गर्जत्पयोदस्थगितेन्दुचिम्ब्या,

नघाम्बुसिक्तोदकचारुदूर्वा ।

निरीक्षिता सादरमुत्सुकामि-

र्निश्वासधून् पथिकाङ्गनाभिः ॥ ७७ ॥

हंसनूपुरशब्दाढ्या समुन्नतपयोधरा ।

चलद्विद्युलताहारा स्पष्टपदुमविलोचना ॥ ७८ ॥

र्भासतजलदधीरध्वानचित्रस्तहंसा,

विमलसलिलधारोत्पातनप्रोत्पलाग्रा ।

सुरमिकुसुमरेणुक्लृप्तसर्घाङ्गशोभा,

गिरिदुहितृविवाहे प्रावृड्भाविर्धभूष ॥ ७९ ॥

मेघकञ्चुकनिर्मुक्ता पद्मकोशोद्भवास्तनी ।
 हंसनूपुरनिहादा सर्वशस्यदिगन्तरा ॥ ८० ॥
 विस्तीर्णपुलिनथोणी कूजत्सारसमेखला ।
 प्रफुल्लेन्दीवरश्यामविलोचनमनोहरा ॥ ८१ ॥
 पद्मविम्याधरपुटा कुन्ददन्तप्रहासिनी ।
 नवश्यामलताश्यामरोमराजिपुरस्कृता ॥ ८२ ॥
 चन्द्रांशुहारवर्गेण कण्ठोरस्थलगामिना ।
 प्रहावयन्तो चेतसि सर्वेषां त्रिदिशोऽकसाम् ॥ ८३ ॥
 समदालिकुलोद्भूतमधुरस्वरमापिनी ।
 खलत्कुमदसंघातचारुकुण्डलशोभिनी ॥ ८४ ॥
 रक्ताशोकप्रशाखोत्थपल्लवाङ्गुलिधारिणी ।
 तत्पुष्पसञ्चयमयैर्वासोभिः समलङ्कृता ॥ ८५ ॥
 रक्तोत्पलाप्रचरणा जातीपुष्पनखाधली ।
 कदलीस्तम्भवामोरूः शशाङ्कवदना तथा ॥ ८६ ॥
 सर्वलक्षणसम्पन्ना सर्वालङ्कारभूषिता ।
 प्रेम्णा स्पृशति कान्तेव सानुरागा मनोरमा ॥ ८७ ॥
 निर्मुक्तासितमैत्रकञ्चुकपटा पूर्णेन्दुविम्यानना ।
 नीलाम्भोजविलोचना रविकरप्रोद्भुमित्रपद्मस्तनी ॥
 नानापुष्परजःसुगन्धिपवनप्रहादनी चेतसां ।
 तत्राऽऽसीत् कलहंसनूपुररवा देव्या विवाहे शरत् ॥ ८८ ॥
 अत्यर्थशीतलाम्भोभिः प्लावयन्ती दिशः सदा ।
 श्रुत हेमन्तशिशिरौ आजगमतुरतिद्युतो ॥ ८९ ॥

ताभ्यामृतुभ्या सप्राप्तो हिमवान् स नमोत्तम
 प्रालेयचूर्णवर्षिभ्या क्षिप्र रौप्यहरो वर्मो ॥ ६० ॥
 तेन प्रालेयवर्षेण घनेनैव हिमालय ।
 क्षगाधेन तदा रेजे क्षीरोद इव सागर ॥ ६१ ॥
 ऋतुपथ्यायसप्राप्तो यभूय स महागिरि ।
 साधूपचारात् सहसा वृत्तार्थ इव दुर्जन ॥ ६२ ॥
 प्रालेयपटलच्छत्रे शृङ्गैस्तु शुशुभे नग ।
 छत्रैरिय महाभागे पाण्डुरै पृथिवीपति ॥ ६३ ॥

मनोभवोद्रेककरा सुराणा,

सुराङ्गनानाञ्च मुहु समीरा ।

स्वच्छाम्युपूर्णाश्च तथा नलिन्य ,

पद्मोत्पलाना कुसुमैरपेता ॥ ६४ ॥

विवाहे गुरुकन्याया वसन्त समगादृतु ॥ ६५ ॥

इपत्समुद्रुमिन्नपयोधराग्रा,

नाट्यो यथा रम्यतरा यभूवु ।

नाट्युष्णशीतानि पय सरासि,

किञ्चलकूर्णे कपिलीवृत्तानि ॥

चक्राह्युग्मैरुपनादितानि,

ययु प्रदृष्टा सुरदन्तिमुख्या ॥ ६६ ॥

प्रियङ्गूश्चूततरवश्चूताश्चापि प्रियङ्गव ।

तर्जयन्त इवान्योन्य मञ्जरीमिश्रकाशिरे ॥ ६७ ॥

हिमशृङ्गेषु शुक्लेषु निलकाः कुसुमोत्कगाः ।

शुशुभुः कार्यमद्दिश्य वृद्धा इव समागता ॥ ६८ ॥

पुद्गाशोकलतास्तत्र रेजिरे गालमंथिताः ।

कामिन्य इव कान्तानां कण्डालम्विनशाद्वयः ॥ ६९ ॥

तन्मिमृतां शुभ्रकदम्बनीपा-

न्मालाः स्तमालाः सरलाः कपिन्था ॥ १०० ॥

अशोकसज्जार्ज्जुनकोविदारा ,

पुष्पागनागेभ्यरकर्णिकाराः ।

लघुङ्गतालागुरुसप्तपर्णा,

न्वप्रोधशोमाञ्जननारिकेलः ॥ १०१ ॥

वृक्षास्तथाऽन्ये फलपुष्पवन्तो,

दृश्या यमूयुः सुमनोहराङ्गाः ।

जलाशयाश्चैव मुवर्णतोया-

श्चकाङ्गकाण्डवहसज्जुष्टा ॥ १०२ ॥

कोपष्टिदात्यूखलाफयुक्ता,

दृश्यान्तु पद्मोत्पलमीनपूर्णाः ।

रगाश्च नानाविधभूषिताङ्गा,

दृश्यास्तु वृक्षेषु सुचित्रपक्षाः ॥ १०३ ॥

प्रीटासु युनानथ सज्जयन्तः,

वृन्ति शब्दं मदनेरिताङ्गाः ।

तस्मिन् गिरावद्रिसुताविषादे

धद्युश्च घानाः सुगर्शानलाङ्गा ॥ १०४ ॥

पुष्पाणि शुभ्राण्यपि पातयन्तः,
शनैर्नगेभ्यो मलयाद्रिजाताः ।

तथैव सर्वे ऋतवश्च पुण्या-

श्चकाशिरेऽन्योन्यविमिश्रिताङ्गाः ॥ १०५ ॥

येषां सुलिङ्गानि च कीर्तितानि,

ते तत्र आसन् सुमनोजरूपाः ॥ १०६ ॥

समदालिकुलोद्भूतोतशिलाकुसुमसञ्चयैः ।

परस्परं हि मालत्यो भावयन्त्यो विरेजिरे ॥ १०७ ॥

नीलानि नीलाम्युरुहैः पयांसि,

गौराणि गौरैश्च मृणालदण्डैः ।

रक्तैश्च रक्तानि भृशं कृतानि,

मत्तद्विरेफावलिजुष्टपत्रैः ॥ १०८ ॥

हैमानि विस्तीर्णजलेषु केषुचि-

न्निरन्तरं चारुतराणि केषुचित् ।

घैदूर्यमालानि सरःसु केषुचित्-

प्रजङ्घिरे पद्मवनानि सर्वतः ॥ १०९ ॥

षाप्यस्तत्राभवन् रम्याः कमलोत्पलपुष्पिताः ।

नानाविहङ्गसंजुष्टा हैमसोपानपङ्क्तयः ॥ ११० ॥

शृङ्गाणि तस्य तु गिरेः कर्णिकारैः सुपुष्पितैः ।

समुच्छ्रितान्यविरलैर्हैमानीध धमुर्द्विजाः ॥ १११ ॥

ईपद्विभिन्नकुसुमैः पाटलैश्चापि पाटलाः ।

संवभूयुर्दिशः सर्धाः पवनाकम्पमूर्त्तिभिः ॥ ११२ ॥

कृष्णाज्जुना दशगुणा नीलाशोकमहीच्छाः ।

गिरौ घवृधिरे फुल्लाः स्पर्धयन्तः परस्परम् ॥ ११३ ॥

चारुवायविजुष्टानि किंशुकानां वनानि च ।

पर्वतस्य नितम्बेषु सर्वेषु च विरेजिरे ॥ ११४ ॥

तमालगुल्मेस्तस्यासीऽऽच्छ्रोमा हिमयतस्तदा ।

नीलजीमूतसङ्घातेर्निलोनैरिव सन्धिषु ॥ ११५ ॥

निकामपुष्पैः सुचिगालशान्वैः,

समुच्छ्रितैश्चन्दनचम्पकैश्च ।

प्रमत्तपुंस्कोकिलसम्प्रलापै-

हिमाचलोऽतीव तदा रराज ॥ ११६ ॥

श्रुत्वा शब्दं मृदुमदकलं सर्व्वतः कोकिलानां,

चञ्चत्पक्षाः समधुरतरं नीलकण्ठा चिनेदुः ।

तेषां शब्दैरुपचितबलः पुष्पवापेषुहस्तः,

सज्जीभूतस्त्रिदशबनिता वेदुमङ्गेष्वनङ्गः ॥ ११७ ॥

पटुः सूर्यातपश्चापि प्रायशोऽल्प(ल्पो)जलाशयः ।

दैवीविधाहसमये ग्रीष्म आगादिमाचलम् ॥ ११८ ॥

स चापि तरुमिस्तत्र बहुमिः कुसुमोत्करैः ।

शोभयामास शृङ्गाणि प्रालेयात्रेः समन्ततः ॥ ११९ ॥

तथाऽपि च गिरौ तत्र धायवः सुमनोहराः ।

ययुः पाटलचिस्तीर्णकदम्बाज्जुनगन्धिनः ॥ १२० ॥

घाप्यः प्रफुल्लपद्मौघकेसरारुणमूर्त्तयः ।

अमचंस्तटसंघु(जु)ष्टकलहंसकदम्बकाः ॥ १२१ ॥

तथा कुर्यकाश्चापि कुसुमापाण्डुमूर्तयः ।

सर्वेषु नगशृङ्गेषु भ्रमरावल्लिसेविताः ॥ १२२ ॥

यकुलाश्च नितम्बेषु विशालेषु महीभृतः ।

उत्ससर्जं मनोभानि कुसुमानि समन्ततः ॥ १२३ ॥

इति कुसुमचित्रसर्ववृक्षा,

विविधविहङ्गमनादरम्यदेशाः ।

हिमगिरितनयाविवाहभूम्यै,

पटुपययुर्ऋतघो मुनिप्रवीराः ॥ १२४ ॥

तत एव प्रवृत्ते तु सर्वभूतसमागमे ।

नानावाद्यसमाकीर्णं ग्रहं तत्र द्विजातयः ॥ १२५ ॥

शैलपुत्रीमलंकृत्य योग्याभरणसम्पदा ।

पुरं प्रवेशितवांस्तां स्वयमादाय भोद्विजाः ॥ १२६ ॥

ततस्तु पुनरेवेशमहं चैवोक्तवान् विभुम् ।

हविर्जुहोमि बहौ ते उपाध्यायपदे स्थितः ॥ १२७ ॥

वदासि मह्यं यद्याज्ञां कर्त्तव्योऽयं क्रियाविधिः ।

मामाह शङ्करश्चैयं देवदेवो जगत्पतिः ॥ १२८ ॥

शिव उवाच ।

यदुद्दिष्टं सुरैश्चान तत्कुरुष्व यथेप्सितम् ।

कर्त्ताऽसि वचनं सर्वं ब्रह्मंस्तव जगद्विभो ॥ १२९ ॥

ब्रह्मोवाच ।

ततश्चाहं प्रहृष्टात्मा कुशानादाय सत्त्वरम् ।

हस्तं देवस्य देव्याश्च योगबन्धेन युक्तवान् ॥ १३० ॥

ज्वलन्त्य स्वयं तत्र कृतावलिपुटं स्थितम् ।
 श्रुतिगीतैर्महामन्त्रैर्मूर्तिमद्विरूपस्थितैः ॥ १३१ ॥
 यथोक्तविधिना नुन्वा सर्पिस्तदमृतं हविः ।
 ततस्तं ज्वलन् सर्वं कारयित्वा प्रदद्यात् ॥ १३२ ॥
 मुक्त्वा हस्तसमायोगं सहितं सर्वं चतैः ।
 पुनरेव मानसैः सिद्धैः प्रकृष्टेनाम्नरात्मना ॥ १३३ ॥
 वृत्तं उद्वाहकाले तु प्रणम्य च वृषध्वजम् ।
 योगेनैव तयोर्विग्रहान्तदुमापरमेशयोः ॥ १३४ ॥
 उद्वाह स परो वृत्तो य देवा न विदुः क्वचित् ।
 इति च सर्वमाख्यातं स्वयम्बरमिदं शुभम् ॥ १३५ ॥
 इति ध्यानादिग्राह्यं महापुराणेन्द्रियभुक् शृण्विन्द्रादे उमासहेश्वर
 योर्विवाहनिरूपणं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥
 श्लोकानामादितः सम्पञ्चदश — ५७३८

सप्तत्रिंशोऽध्यायः ।

शिवस्तुतिवर्णनम् ।

प्रस्तावना ।

अथ वृत्ते विवाहे तु भवम्यामितनेन स ।
 प्रहर्षमनु गन्वा देवा शत्रुपुरोगमाः ॥
 तुष्टुनुवाङ्मिराद्यामि प्रणेमुन्ने महेश्वरम् ॥ १ ॥

देवा ऊचुः ।

नमः पर्वतलिङ्गाय पर्वतेशाय चै नमः ।

नमः पवनवेगाय विरूपायोजिताय च ॥

नमः क्लेशघ्निनाशाय दात्रे च शुभसम्पदाम् ॥ २ ॥

नमो नीलशिखण्डाय अम्बिकापतये नमः ।

नमः पवनरूपाय शतरूपाय चै नमः ॥ ३ ॥

नमो भैरवरूपाय विरूपनयनाय च ।

नमः सहस्रनेत्राय सहस्रचरणाय च ॥ ४ ॥

नमो देवघयस्याय वेदाङ्गाय नमो नमः ।

विष्टम्भनाय शक्रस्य पाद्भोर्येदाङ्कुराय च ॥ ५ ॥

चराचराधिपतये शमनाय नमो नमः ।

सलिलाशयलिङ्गाय युगान्ताय नमो नमः ॥ ६ ॥

नमः कपालमालाय कपालसूत्रधारिणे ।

नमः कपालहस्ताय दण्डिने गदिने नमः ॥ ७ ॥

नमस्त्रैलोक्यनाथाय पशुलोकरताय च ।

नमः खड्गाङ्गहस्ताय प्रमथार्त्तिहराय च ॥ ८ ॥

नमो यज्ञशिरोहन्त्रे कृष्णकेशापहारिणे ।

भगनेत्रनिपाताय पूष्णो दन्तहराय च ॥ ९ ॥

नमः पिनाकशूलासिखङ्गमुद्गरधारिणे ।

नमोऽस्तु कालकालाय तृतीयनयनाय च ॥ १० ॥

अन्तकान्तवृत्ते चैव नमः पर्वतघासिने ।

सुवर्णरेतसे चैव नमः कुण्डलधारिणे ॥ ११ ॥

दैत्याना योगनाशाय योगिना गुरवे नम ।
 शशाङ्कादित्यनेत्राय ललाटनयनाय च ॥ १२ ॥
 नम श्मशानरतये श्मशानवरदाय च ।
 नमो दैवतनाथाय यम्यकाय नमो नम ॥ १३ ॥
 गृहस्थसाधये नित्य जटिले ब्रह्मचारिणे ।
 नमो मुण्डार्धमुण्डाय पशूना पतये नम ॥ १४ ॥
 सलिङ्गे तप्यमानाय योगैश्वर्य्यप्रदाय च ।
 नम शान्ताय दान्ताय प्रलयोत्पत्तिकारिणे ॥ १५ ॥
 नमोऽनुग्रहकर्त्रे च स्थितिकर्त्रे नमो नम ।
 नमो रूद्राय घसघ आदित्यायाश्विने नम ॥ १६ ॥
 नम पित्रेऽथ साहस्रयाय विश्वेदेवाय चै नम ।
 नम शर्वाय उग्राय शिवाय घरदाय च ॥ १७ ॥
 नमो भामाय सेनान्यै पशूना पतये नम ।
 शुचये वैरिहानाय सद्योजाताय चै नम ॥ १८ ॥
 महादेवाय चित्राय विचित्राय च वै नम ।
 प्रधानायाप्रमेयाय कार्याय कारणाय च ॥ १९ ॥
 पुरुषाय नमस्तेऽस्तु पुरुषेच्छाकराय च ।
 नम पुरुषसयोगप्रधानगुणकारिणे ॥ २० ॥
 प्रवर्त्तकाय प्रवृत्ते पुरुषस्य च सर्वश ।
 वृतावृत्तस्य सत्कत्र फलसयोगदाय च ॥ २१ ॥
 कालहाय च सर्वेषा नमो नियमकारिणे ।
 नमो वैषम्यकर्त्रे च गुणाना वृत्तिदाय च ॥ २२ ॥

नमस्ते देवदेवेश नमस्ते भूतमावन ।

शिव सौम्यमुखो द्रष्टुं भव सौम्यो हि नः प्रभो ॥ २३ ॥

ब्रह्मोवाच ।

एवं स भगवान् देवो जगत्पतिरुमापतिः ।

स्तूयमानः सुरैः सर्वैरमरानिदमब्रवीत् ॥ २४ ॥

श्रीशङ्कर उवाच ।

द्रष्टुं सुखञ्च सौम्यञ्च देवानामसि भोः सुराः ।

घरं वरयत क्षिप्रं दाताऽसि तमसंशयम् ॥ २५ ॥

ब्रह्मोवाच ।

सतस्ते प्रणताः सर्वे सुरा ऊचुस्त्रिलोचनम् ॥ २६ ॥

देवा ऊचः ।

तवैव भगवन् हस्ते घर एषोऽवतिष्ठताम् ।

यदा कार्यं तदा नस्त्वं दास्यसे वरमीप्सितम् ॥ २७ ॥

ब्रह्मोवाच ।

एवमस्त्विति तानुत्तमा विसृज्य च सुरान् हरः ।

लोकांश्च प्रमथेः सार्धं विवेश भवनं स्वकम् ॥ २८ ॥

यस्तु हरोत्सवमद्भुतमेनं,

गायति दैवतविप्रसमक्षम् ।

सोऽप्रतिरूपगणेशसमानो,

देहविपर्ययमेत्य सुखी स्यात् ॥ २९ ॥

ब्रह्मोवाच ।

विप्रवर्याः स्तवं ह्रीमं शृणुयाद्वा पठेच्च यः ।

स सर्वलोकगो देवैः पूज्यतेऽमराडिव ॥ ३० ॥

इति श्रोत्रादिब्राह्मे महापुराणे स्वयम्भु ऋषिर्नृवादे शिवस्तुति-

निरूपणं नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

श्लोकानामादितः सम्पट्यङ्का.—२६२६

— — —

अथाष्टात्रिंशोऽध्यायः ।

मदनदहनवर्णनम् ।

ब्रह्मोवाच ।

प्रपिष्टे भवनं देवे सपविष्टे घरासने ।

स घ्नो मन्मथः क्रूरो देवं वेदुधुमना भवत् ॥ १ ॥

तमनाचारसंयुक्तं दुरात्मानं कुलाधमम् ।

लोकान् सर्वान् पीडयन्तं सर्वाङ्गावरणात्मकम् ॥ २ ॥

ऋषीणां विघ्नकर्त्तारं नियमानां ततैः सह ।

द्यक्ताह्वयस्य रूपेण रत्या सह समागतम् ॥ ३ ॥

अथाऽऽततायिन विप्रा वेदुधुकामं सुरेवरः ।

नयनेन तृतीयेन सावज्ञं समवैक्षत ॥ ४ ॥

ततोऽस्य नेत्रजो वह्निर्ज्वालामालासहस्रवान् ।

सदसा रतिमर्त्तारमददत् सपरिच्छदम् ॥ ५ ॥

स दहमानः करुणमात्तोंऽक्रोशत विस्वरम् ।
 प्रसादयंश्च तं देवं पपात धरणीतले ॥ ६ ॥
 अथ सोऽग्निपरीताङ्गो मन्मथो लोकतापनः ।
 पपात सहसा मूच्छां क्षणेन समपद्यत ॥ ७ ॥
 पत्नी तु करुणं तस्य विललाप सुदुःखिता ।
 देर्घीं देषञ्च दुःखात्ता भयाच्चत् करुणावती ॥ ८ ॥
 तस्याश्च करुणं ज्ञात्वा देवी तौ करुणात्मकौ ।
 ऊचतुस्तां समालोम्य समाश्वास्य च दुःखिताम् ॥ ९ ॥

उमामहेश्वरावूचतुः ।

दग्ध एव ध्रुवं भद्रे नास्योत्पत्तिरिहेष्यते ।
 अशरीरोऽपि ते भद्रे कार्यं सर्वं करिष्यति ॥ १० ॥
 यदा तु पिप्पुर्भगवान् धसुदेवसुतः शुभे ।
 तदा तस्य सुतो यश्च पतिस्ते सम्भविष्यति ॥ ११ ॥

ब्रह्मोवाच ॥

ततः सा तु घरं लब्ध्वा कामपत्नी शुभानना ।
 जगामेष्टं तदा देशं प्रीतियुक्ता गतह्रमा ॥ १२ ॥
 दग्ध्वा कामं ततो विप्राः स तु देवो धृषध्वजः ।
 रैमे तत्रोमया साद्वं प्रदृष्टस्तु हिमाचले ॥ १३ ॥
 कन्दरेषु च रम्येषु पद्मिनीषु गुहासु च ॥
 निर्भरेषु च रम्येषु कर्णिकारणेषु च ॥ १४ ॥
 नदीतीरेषु कान्तेषु किन्नराचरिणेषु च ।
 शृङ्गेषु शैलराजस्य तटगणेषु सरःसु च ॥ १५ ॥

घनराजिषु रम्यासु नानापक्षिस्नेषु च ।

तीर्थेषु पुण्यतोयेषु मुनीनामाश्रमेषु च ॥ १६ ॥

एतेषु पुण्येषु मनोहरेषु,

देशेषु विद्याधरभूषितेषु ।

गन्धर्वयक्षामरसेवितेषु,

रेमे स देव्या सहितस्त्रिनेत्रः ॥ १७ ॥

देवैः सहेन्द्रैर्मुनियज्ञसिद्धै-

र्गन्धर्वविद्याधरदैत्यमुख्यैः ।

अन्यैश्च सर्वैर्विषिधैर्वृतोऽसौ,

तस्मिन्नेव हर्षमवाप शम्भुः ॥ १८ ॥

नृत्यन्ति तत्राप्सरसः सुरैश्चा,

गायन्ति गन्धर्वगणाः प्रहृष्टाः ।

दिव्यानि वाद्यान्यथ वादयन्ति,

केचिद्भुजं देववरं स्तुवन्ति ॥ १९ ॥

एवं स देवः स्थगणैरुपेतो,

महाबले शक्रयमाग्निनुज्यैः ।

देव्याः प्रियार्थं भगनेत्रहन्ता,

गिरिं न तन्याज तदा महात्मा ॥ २० ॥

ऋषय ऊचुः ।

देव्या समं तु भगवांस्तिष्ठंस्तत्र स कामहा ।

अकरोत् किं महादेव एतदिच्छाम वेदितुम् ॥ २१ ॥

देव्युवाच ।

न मेऽस्ति धन्युमिः किञ्चित् कृत्य सुरधरेश्वर ।

तथा कुरु महादेव यथाऽहं सुखमाप्नुयाम् ॥ ३६ ॥

ब्रह्मोवाच ।

श्रुत्वा स देव्या वचनं सुरेश-

स्तस्याः प्रियार्थं स्वगिरिं विहाय ।

जगाम मेरुं सुरसिद्धसेवितं,

भाष्यसहायः स्वगणैश्च युक्तः ॥ ४० ॥

इति श्री आदिब्राह्मे महापुराणे स्वयम्भुवृष्टिसंवादे उमा महेश्वर-

योर्हिमवत्परित्यागनिरूपणं नामाष्टात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥

श्लोकानामादितः समष्ट्यङ्काः—२६४६

अथै को ऊनचत्वारिंशोऽध्यायः ।

दक्षयज्ञविध्वंसनम्

श्रूय ऊचुः ।

प्राचेतस्य दक्षस्य कथं वैवस्वतेऽन्तरे ।

विनाशमगमद् ब्रह्मन् हयमेघः प्रजापतेः ॥ १ ॥

देव्या मन्युकृतं बुद्ध्वा क्रुद्धः सर्वात्मकः प्रभुः ।

कथं विनाशितो यज्ञो दक्षस्यामिततेजसः ॥

महादेवेन रोषाद्धै तन्नः प्रवूहि विस्तरात् ॥ २ ॥

ग्रहोवाच ।

वर्णयिष्यामि वो विप्रा महादेवेन वै यथा ।

क्रोधाद्विध्यसितो यज्ञोदेव्याः प्रियचिकीर्षया ॥ ३ ॥

पुरा मेरोर्द्विजश्रेष्ठाः शृङ्गं त्रैलोक्यपूजितम् ।

ज्योतिःस्थलं नाम चित्रं सर्वरत्नविमूषितम् ॥ ४ ॥

अप्रमेयमनाधृष्यं सर्वलोकनमस्कृतम् ।

तत्र देवो गिरितटे सर्वधातुविचित्रिते ॥ ५ ॥

पर्यङ्कु इव विस्तीर्णं उपविष्टो यभूष ह ।

शैलराजसुता चास्य नित्यं पार्श्वस्थिताऽभवत् ॥ ६ ॥

आदित्याश्च महात्मानो षसवश्च महोजसः ।

तथैव च महात्मानावश्विनौ भिषजां वरौ ॥ ७ ॥

तथा वैश्रवणो राजा गुह्यकैः परिवारितः ।

यक्षाणामीश्वरः धीमान् कौलासनिलयः प्रभुः ॥ ८ ॥

उपासते महात्मानमुशना च महामुनिः ।

सनत्कुमारप्रमुखास्तथैव परमर्षयः ॥ ९ ॥

अङ्गिरःप्रमुखाश्चैव तथा देवर्षयोऽपि च ।

विशवावसुश्च गन्धर्वस्तथा नारदपर्यतो ॥ १० ॥

अप्सरोगणसङ्घाश्च समाजग्मुर्नेकशः ।

चर्यो सुखशिवो वायुर्नानागन्धवहः शुचिः ॥ ११ ॥

सर्वसुक्तसुमोपेतः पुष्पवन्तोऽभवन्द्रुमाः ।

तथा विद्याधराः साध्याः सिद्धाश्चैव तपोधनाः ॥ १२ ॥

महादेवं पशुपतिं पर्युपासत तत्र वै ।

भूतानि च तथाऽन्यानि नानारूपधराण्यथ ॥ १३ ॥

राक्षसाश्च महारौद्राः पिशाचाश्च महाबलाः ।

बहुरूपधरा धृष्टा नानाप्रहरणायुधाः ॥ १४ ॥

देवस्यानुचरास्तत्र तस्थुर्वैश्वानरोपमाः ।

नन्दीश्वरश्च भगवान् देवस्यानुमते स्थितः ॥ १५ ॥

प्रगृह्य ज्वलितं शूलं दीप्यमानं स्वतेजसा ।

गङ्गा च सरितां श्रेष्ठा सर्वतीर्थजलोद्भवा ॥ १६ ॥

पर्युपासत तं देवं रूपिणी द्विजसत्तमाः ।

एवं स भगवांस्तत्र पूज्यमानः सुरर्षिभिः ॥ १७ ॥

देवैश्च सुमहाभागैर्महादेवो व्यतिष्ठत ।

कस्यचित्त्वथ कालस्य वक्षो नाम प्रजापतिः ॥ १८ ॥

पूर्वोक्तेन विधानेन यक्ष्यमाणोऽभ्यपद्यत ।

ततस्तस्य मन्त्रे देवाः सर्वे शक्रपुरोगमाः ॥ १९ ॥

स्वर्गस्थानादथाऽऽगम्य दक्षमापेदिरे तथा ।

ते विमानैर्महात्मानो ज्वलद्विज्ज्वलनप्रभाः ॥ २० ॥

देवस्यानुमतेऽगच्छन् गङ्गाद्वारमिति ध्रुतिः ।

गन्धर्वाप्सरसाकीर्णं नानाद्रुमलतावृतम् ॥ २१ ॥

अपिसिद्धैः परिवृतं दशं धर्मभृतां घरम् ।

पृथिव्यामन्तरिक्षे च ये च स्वर्लोकास्तिनः ॥ २२ ॥

सर्वे प्राञ्जलयो भूत्वा उपतस्थुः प्रजापतिम् ।

आदित्या वसधो रुद्राः साध्याः सर्वे मरुद्गणाः ॥ २३ ॥

चिष्णुना सहिता. सर्व आगता यज्ञमाग्निः ।

ऊष्मपा धूमपाश्चैव आञ्ज्यपाः सोमपास्तथा ॥ २४ ॥

अश्विनो मरुतश्चैव नानादेवगणैः सह ।

एने चान्ये च बहवो भूतग्रामास्तथैव च ॥ २५ ॥

जरायुजाण्डजाश्चैव तथैव स्येदजोद्विद् ।

आगताः सत्रिणः सर्वे देवान्निमि सहर्षिभिः ॥ २६ ॥

पिराजन्ते विमानस्था क्षीप्यमाना इवाग्रयः ।

तान् दृष्ट्वा मन्युनाऽऽचिष्टो दधीचिर्चाक्यमत्रर्चान् ॥ २७ ॥

दधीचिरवाच ।

अपूज्यपूजने चैव पूज्यानां चाप्यपूजने ।

नरः पापमयाप्नोति महद्वै नात्र सशयः ॥ २८ ॥

ब्रह्मोवाच ।

एषमुक्त्वा तु पिप्रर्षिः पुनर्दक्षमभाषत ॥ २९ ॥

दधीचिरवाच ।

पूज्यञ्च पशुमर्त्सरं कम्मानार्घ्ययमे प्रभुम् ॥ ३० ॥

दक्ष उवाच ।

सन्ति मे बहवो रुद्रा शूलहस्ता कपर्दिन ।

एकादशस्थानगता नान्यं विद्मो महेश्वरम् ॥ ३१ ॥

दधीचिरवाच ।

सर्वेषामेकमन्त्रोऽयं ममेशो न निमन्त्रित ।

यथाऽहं शङ्करादूर्द्धं नान्य पश्यामि दैवतम् ।

तथा दक्षस्य विपुत्रो यज्ञोऽयं न मविष्यति ॥ ३२ ॥

दक्ष उवाच ।

धिष्णोश्च भागा विविधाः प्रदत्ता-

स्तथा च रुद्रेभ्य उत प्रदत्ताः ।

अन्येऽपि देवा निजभागयुक्ता,

ददामि भागं न तु शङ्कुराय ॥ ३३ ॥

ब्रह्मोवाच ।

गतास्तु देवता ज्ञात्वा शैलराजसुता तदा ।

उवाच घचनं शवं देवं पशुपतिं पतिम् ॥ ३४ ॥

उमोवाच ।

भगवन् कुत्र यान्त्येते देवाः शक्रपुरोगमाः ।

ब्रूहि तत्त्वेन तत्त्वज्ञ संशयो मे महानयम् ॥ ३५ ॥

महेश्वर उवाच ।

दक्षो नाम महाभागो प्रजानां पतिरुत्तमः ।

हयमेधेन यजते तत्र यान्ति दिर्घौकसः ॥ ३६ ॥

देव्युवाच ।

यज्ञमेतं महाभाग किमर्थं नानुगच्छसि ।

केन वा प्रतिपेधेन गमनं ते न विध्यते ॥ ३७ ॥

महेश्वर उवाच ।

सुरैरेव महाभागे सर्वमेतदनुष्ठितम् ।

यज्ञेषु मम सर्वेषु न भाग उपकल्पितः ॥ ३८ ॥

पूर्वागतेन गन्तव्यं मार्गेण धरचर्णिनि ।

न मे सुराः प्रयच्छन्ति भागं यज्ञस्य धर्मतः ॥ ३९ ॥

उमोवाच ।

भगवन् सर्वदेवेषु प्रमावाम्यधिको गुणै ।

अजेयश्चाप्यधृष्यश्च तेजसा यशसा श्रिया ॥ ४० ॥

अनेन तु महाभाग प्रतिषेधेन भागत ।

अतोय तु खमापन्ना वेपथुश्च महानयम् ॥ ४१ ॥

किं नाम दान नियम तपो वा,

कुर्यामह येन पतिर्ममाद्य ।

लभेत भाग भगवानचिन्त्यो,

यज्ञस्य चेन्द्राद्यमरैर्विचित्र (भक्त)म् ॥ ४२ ॥

ब्रह्मोवाच ।

एव ह्रुवाणा भगवान् विचिन्त्य,

पत्नीं प्रहृष्ट श्रुभितामुवाच ।

महेश्वर उवाच ।

न वेत्सि मा देवि कुशोदराङ्गि,

किं नाम युक्त वचन तवेदम् ॥ ४३ ॥

अहं विजानामि विशालनेत्रे,

ध्यानेन सर्वे च विदन्ति सन्त ।

तवाद्य मोहेन सहेन्द्रदेवा,

लोकत्रय सर्वमथो विनष्टम् ॥ ४४ ॥

तावध्यरेश नितरा स्तुवन्ति,

रथन्तर साम गायन्ति मह्यम् ।

मां ब्राह्मणाब्रह्ममन्त्रैर्यजन्ति,

ममाध्वर्य्वः कल्पयन्ते च भागम् ॥ ४५ ॥

देव्युवाच ।

विकथ्यसे प्राकृतवत् सर्वस्वीजनसंसदि ।

स्तौयि गर्वायसे चापि स्वमात्मानं न संशयः ॥ ४६ ॥

भगवानुवाच ।

नाऽऽत्मानं स्तौमि देवेशि यथा त्वमनुगच्छसि ।

सस्रक्षयामि परारोहे भागार्थं परवर्णिनि ॥ ४७ ॥

ब्रह्मोवाच ।

इत्युक्त्वा भगवान् पत्नीमुमा प्राणैरपि प्रियाम् ।

सोऽसृजद्भगवान् चक्रानुभूत क्रोधाग्निसम्भवम् ॥ ४८ ॥

तमुवाच मख गच्छ दक्षस्य त्व महेश्वर ।

नाशयाऽऽशु क्रतुं तस्य दक्षस्य मदनुज्ञया ॥ ४९ ॥

ब्रह्मोवाच ।

हतो रुद्रप्रयुक्तेन सिंहरेपेण लीलया ।

देव्या मन्युकृतं ज्ञात्वा हतो दक्षस्य स क्रतुः ॥ ५० ॥

मन्युना च महामीमा भद्रकाली महेश्वरी ।

आत्मन कर्मसाक्षित्वे तेन सार्द्धं सहानुगा ॥ ५१ ॥

स एष भगवान् क्रोधं प्रेतावासरुतालय ।

वीरभद्रेति विख्यातो देव्या मन्युप्रमार्जकः ॥ ५२ ॥

सोऽसृजद्रोमकूपेभ्य आत्मनैव गणेश्वरान् ।

रुद्रानुगान्गणान् रौद्रान् रुद्रवीर्यपराक्रमान् ॥ ५३ ॥

रद्रस्यानुचराः सर्वे सर्वे रुद्रपराक्रमाः ।

ते निपेतुस्ततस्नूर्णं शतशोऽथ सहस्रशः ॥ ५३ ॥

ततः किलकिलाशब्द आकाशं पूरयन्निव ।

समभूत् सुमहान् विप्राः सर्वरुद्रगणैः कृतः ॥ ५५ ॥

तेन शब्देन महता त्रस्ताः सर्वे दिव्यौकसः ।

पर्वताश्च ध्वशीर्यन्त चकम्पे च वसुन्धरा ॥ ५६ ॥

महतश्च ववुः क्रूराण्युक्षुमे चरुणालयः ।

अग्नयो वै न क्षीप्यन्ते न चाक्षीप्यत भास्करः ॥ ५७ ॥

ग्रहा नैव प्रकाशन्ते नक्षत्राणि न तारकाः ।

ऋषयो न प्रमासन्ते न देवा न च दानवा ॥ ५८ ॥

एवं हि तिमिरीभूने निर्द्दहन्ति गणेश्वराः ।

प्रभञ्जन्त्यपरे यूपान् घोरानुत्पादयन्ति च ॥ ५९ ॥

प्रणदन्ति तथा चान्ये विकुर्यन्ति तथा परे ।

त्वरितं वै प्रधायन्ति वायुश्रेणा मनोजवाः ॥ ६० ॥

चूर्ण्यन्ते यज्ञपात्राणि यज्ञस्यायतनानि च ।

शीर्यमाणान्यदृश्यन्त तारा इव नभस्तलात् ॥ ६१ ॥

दिव्यान्नपानभक्ष्याणां राशयः पर्वतोपमाः ।

क्षीरनयस्तथा चान्या घृतपायसकर्द्धमाः ॥ ६२ ॥

मधुमण्डोदका दिव्या खण्डशर्करखलुकाः ।

पङ् रसान्निवहन्त्यन्या गुडकुल्या मनोरमाः ॥ ६३ ॥

उच्चावचानि मांसानि मक्ष्यानि विविधानि च ।

यानि कानि च दिव्यानि लेह्यचोराणि यानि च ॥ ६४ ॥

भुञ्जन्ति विविधैर्वक्त्रैर्विलुम्पन्ति क्षिपन्ति च ।
 रुद्रकोपा महाकोपाः कालाग्निसदृशोपमाः ॥ ६५ ॥
 भक्षयन्तोऽथ शैलाभा भोषयन्तश्च सर्वतः ।
 क्रीडन्ति विविधाकाराश्चिक्षिपुः सुरयोषितः ॥ ६६ ॥
 एवं गणाश्च तैर्युक्तो धीरमद्रः प्रतापयान् ।
 रुद्रकोपप्रयुक्तश्च सर्वदेवैः सुरक्षितम् ॥ ६७ ॥
 तं यत्नमदहच्छीघ्रं भद्रकाल्याः समीपतः ।
 चक्रुरन्ये तथा नादान् सर्वभूतभयङ्करान् ॥ ६८ ॥
 छित्त्वा शिरोऽन्ये यज्ञस्य व्यनदन्त भयङ्करम् ।
 ततः शक्रादयो देवा दक्षश्चैव प्रजापतिः ।
 ऊचुः प्राञ्जलयो भूत्वा कथ्यतां को भयानिति ॥ ६९ ॥

धीरमद्र उवाच ।

नाह देवो न दैत्यो वा न च भोक्तुमिहागतः ।
 नैव द्रष्टुञ्च देवेन्द्रा न च कौतूहलान्वितः ॥ ७० ॥
 दक्षयज्ञविनाशार्थं सम्प्राप्तोऽहं सुरोत्तमाः ।
 धीरमद्रेति विख्यातो रुद्रकोपादुचिनिःसृतः ॥ ७१ ॥
 भद्रकाली च विख्याता देव्याः क्रोधाद्विनिर्गता ।
 प्रेषिता देवदेवेन यज्ञान्तिकमुपागता ॥ ७२ ॥
 शरणं गच्छ राजेन्द्र देवदेवमुमापतिम् ।
 घरं क्रोधोऽपि देवस्य न घरः परिचारकैः ॥ ७३ ॥

ब्रह्मोवाच ।

निष्ठातोत्पाटितैर्यूपैरपविद्धैस्ततस्तनः ।

उत्पतद्भिः पतद्भिश्च गृध्रैरामिपगृध्नुमिः ॥ ७४ ॥

पक्षवातविनिर्धूतैः शिवास्तविनादितैः ।

स तस्य यज्ञो नततेर्चाध्यमानस्तर्द्दागणैः ॥ ७५ ॥

आस्याय मृगम्पं धौ खमेवाम्यपतत्तदा ।

तन्तु यज्ञं तथारूपं गच्छन्तमुपलभ्य सः ॥ ७६ ॥

धनुरादाय घाणञ्च तदर्थमगमत् प्रभुः ।

ततस्तस्य गणेशस्य क्रोधादमिततेजसः ॥ ७७ ॥

ललादात्प्रसृतो घोरः स्येद्विन्दुर्यभूव ह ।

तस्मिन्पतितमात्रे च स्येद्विन्दी तदा भुवि ॥ ७८ ॥

प्रादुर्भूतो महानग्निर्ज्वलत्कालानलोपमः ।

तत्रोदपद्यत तदा पुरुषो द्विजसत्तमाः ॥ ७९ ॥

हस्योऽतिमात्रो रक्ताक्षो हरिच्छमश्रुर्विभीषणः ।

ऊर्ध्वकेशोऽतिरोमाढः शोणकर्णस्तथैव च ॥ ८० ॥

करालकृष्णघर्णश्च रक्तवासास्तथैव च ।

तं यज्ञं स महासत्त्वोऽदहत्कश्मिधानलः ॥ ८१ ॥

देवाश्च प्रद्रुताः सर्वे गता मोता दिशो दश ।

तेन तस्मिन्विचरता विक्रमेण तदा तु वै ॥ ८२ ॥

पृथिवी व्यचलत्सर्वा सप्तद्वीपा समन्ततः ।

महामूते प्रवृत्ते तु देवलोकमयंकरे ॥ ८३ ॥

तदा चाह महादेवमग्रव प्रतिपूजयन् ।

भवतेऽपि सुरा सर्वे भाग दास्यन्ति वै प्रभो ॥ ८४ ॥

क्रियता प्रतिसहार सर्वदेवेश्वर त्वया ।

इमाञ्च देवता सर्वा ऋषयश्च सहस्रश ॥ ८५ ॥

तद्य क्रोधान्महादेव न शान्तिमुपलेभिरे ।

यश्चैष पुष्ट्यो जात स्वेदजस्ते सुरर्षभ ॥ ८६ ॥

ज्वरो नामैष धर्मज्ञ लोकेषु प्रचरिष्यति ।

एकीभूतस्य न ह्यास्य धारणे तेजस प्रभो ॥ ८७ ॥

समर्था सकला पृथ्वी बहुधा सृज्यतामयम् ।

इत्युक्त स मया देवो भागे चापि प्रकल्पिते ॥ ८८ ॥

भगवान्मा तथेत्याह देवदेव पिनाकधृक् ।

परा च प्रीतिमगमत्स स्वयं च पिनाकधृक् ॥ ८९ ॥

दक्षोऽपि मनसा देव भव शरणमन्वगात् ।

प्राणापानी समाकृष्य चक्षु स्थाने प्रयतत ॥ ९० ॥

विधार्य सर्वतो दृष्टिं यद्दृष्टिरमिश्रजित् ।

स्मितं दृष्ट्वाऽब्रवीत्तावय ब्रूहि किं कर्याणि ते ॥ ९१ ॥

श्राविते च महान्याने देवानां पितृभि सह ।

तमुवाचाऽत्रि दृष्ट्वा दक्षो देव प्रजापति ॥

भीत शङ्कितचित्तस्तु सयाप्पवदनेक्षण ॥ ९२ ॥

दक्ष उवाच ।

यदि प्रमथो भगवान्यदि पाऽह तव प्रिय ।

यदि चादममुग्राहो यदि देवो धरो मम ॥ ९३ ॥

यद्वश्यं भक्षितं पीतं त्रासितं यच्च नाशितम् ।
 चूर्णीकृतापविद्धं च यद्यसंभारमोदृशम् ॥ ६४ ॥
 दीर्घकालेन महताः प्रयत्नेन च संचितम् ।
 न च मिथ्या भवेन्महां त्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥ ६५ ॥

ग्रहोवाच ।

तथाऽम्वित्याह भगवान्भगनेग्रहरो हरः ।
 धर्माध्यक्षं महादेवं त्र्यम्बकं च प्रजापतिः ॥ ६६ ॥
 जानुभ्यामवनीं गत्वा दक्षो लङ्घ्या भवाद्धरम् ।
 नाम्नां चाष्टसहस्रेण स्तुतवान्वृषभध्वजम् ॥ ६७ ॥
 इति श्रीमहापुराणे आदित्राहो स्वयंभुक्तृपिसंयादे
 दक्षप्रह्विध्यंस्तन नामैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥
 आदितः श्लोकानां समष्ट्यङ्काः—२७४६

अथ चत्वारिंशोऽध्यायः ।

दक्षकृतिशिवस्तुतिवर्णनम्

ग्रहोवाच ।

एवं दृष्ट्वा तदा दक्ष-शमोर्वीर्यं द्विजोत्तमाः ।
 प्राञ्जलिः प्रणतो भूत्वा संस्तोतुमुपचक्रमे ॥ १ ॥

दक्ष उवाच

नमस्ते देवदेवेश नमस्तेऽन्धकसूदन ।

देवेन्द्र त्वं बलश्रेष्ठ देवदानवपूजित ॥ २ ॥

सहस्राक्ष चिरूपाक्ष त्र्यक्ष यक्षाधिपप्रिय ।

सर्वतः पाणिपादस्थ सर्वतोक्षिशिरोमुख ॥ ३ ॥

सर्वतः ध्रुतिमालोके सर्वमावृत्य तिष्ठसि ।

शङ्कुकर्णो महाकर्णं कुम्भकर्णोऽर्णवालय ॥ ४ ॥

गजेन्द्रकर्णो गोकर्णं शतकर्णो नमोऽस्तु ते ।

शतोदरं शताघर्तं शतजिह्वं सनातन ॥ ५ ॥

गायन्ति त्वं गायत्रिणो अर्चयन्त्यकंमर्किणः ।

देवदानवगोप्ता च ब्रह्मा च त्वं शतक्रतु ॥ ६ ॥

मूर्तिमास्य महामूर्तिं समुद्रं सरसा निधि ।

त्वयि सर्वा देवता हि गावो गोष्ठं श्वाऽऽसते ॥ ७ ॥

रघत्तं शरीरे पश्यामि सोममग्निजलेश्वरम् ।

आदित्यमथ पिप्पुं च ब्रह्माणं सवृहस्पतिम् ॥ ८ ॥

प्रिया करणकार्यं च कर्ता कारणमेव च ।

असद्यः सदसद्यैव तथैव प्रमथाय (प्य)यी ॥ ९ ॥

नमो भूपाय शर्पाय रुद्राय धरदाय च ।

पशूनां पतये चैव नमोऽस्त्यन्धक्यातिने ॥ १० ॥

त्रिजटाय त्रिशीर्षाय त्रिशूलपरधारिणे ।

त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय त्रिपुरायाय ये नमः ॥ ११ ॥

नमश्चण्डाय मुण्डाय विश्वचण्डधराय च ।

दण्डिने शङ्कुकर्णाय दण्डिदण्डाय वै नमः ॥ १२ ॥

नमोऽर्धदण्डिकेशाय शुष्काय चिह्नाय च ।

विलोहिताय धूम्राय नीलग्रीवाय वै नमः ॥ १३ ॥

नमोऽस्त्यप्रतिरूपाय विरूपाय शिवाय च ।

सूर्याय सूर्यपतयेसूर्यध्वजपताकिने ॥ १४ ॥

नमः प्रमथनाशाय घृपस्कन्धाय वै नमः ।

नमो हिरण्यगर्भाय हिरण्यकवचाय च ॥ १५ ॥

हिरण्यकृतचूडाय हिरण्यपतये नमः ।

शत्रुघाताय चण्डाय पर्णसंघशयाय च ॥ १६ ॥

नमः स्तुताय स्तुतये स्तूयमानाय वै नमः ।

सर्वाय सर्वभक्षाय सर्वभूतान्तरात्मने ॥ १७ ॥

नमो होमाय मन्त्राय शुक्रध्वजपताकिने ।

नमोऽनम्याय नम्याय नमः किलकिलाय च ॥ १८ ॥

नमस्त्वां शयमानाय शयितायोत्थिताय च ।

स्थिताय धायमानाय कुञ्जाय कुटिलाय च ॥ १९ ॥

नमो नर्तनशीलाय मुखवादित्रकारिणे ।

वाघापहाय लुब्धाय गीतवादित्रकारिणे ॥ २० ॥

नमो ज्येष्ठाय श्रेष्ठाय बलप्रमथनाय च ।

उग्राय च नमो नित्यं नमश्च दशव्याहवे ॥ २१ ॥

नमः कपालहस्ताय सितमस्मप्रियाय च ।

विभीषणाय भीमोय भीष्मव्रतधराय च ॥ २२ ॥

नानाविहृतवक्त्राय खड्गजिह्वोप्रदंष्ट्रिणे ।

पक्षमासलवार्धाय तुर्ग्यावीणाप्रियाय च ॥ २३ ॥

अघोरघोररूपाय घोराघोरस्तराय च ।

नमः शिवाय शान्ताय नमः शान्ततमाय च ॥ २४ ॥

नमो युद्धाय शुद्धाय संधिभागप्रियाय च ।

पयनाय पतङ्गाय नमः सांख्यपराय च ॥ २५ ॥

नमध्वण्टैकघण्टाय घण्टाजल्पाय घण्टिने ।

सदम्ब्रशतघण्टाय घण्टामालाप्रियाय च ॥ २६ ॥

प्राणदण्डाय नित्याय नमस्ते लोहिताय च ।

हृत्काराय रूद्राय भगाकारप्रियाय च ॥ २७ ॥

नमोऽपारपते नित्यं गिरिवृक्षप्रियाय च ।

नमो यज्ञाधिपतये भूताय प्रस्तुताय च ॥ २८ ॥

यज्ञपादाय दान्ताय तप्याय च भगाय च ।

नमस्तटाय तटपाय तटिनीपतये नमः ॥ २९ ॥

शान्तदायान्नपतये

नमः सहस्रशीष

॥ ३० ॥

घर्णाश्रमाणां विधित्पृथग्धर्मप्रवर्तिने ।
 नमः श्रेष्ठाय ज्येष्ठाय नमः कलकलाय च ॥ ३४ ॥
 श्वेतपिङ्गलनेत्राय कृष्णरक्तेश्वराय च ।
 धर्मकामार्थमोक्षाय क्रथाय क्रथनाय च ॥ ३५ ॥
 सांख्याय सांख्यमुख्याय योगाधिपतये नमः ।
 नमो रथ्याधिरथ्याय चतुष्पथपथाय च ॥ ३६ ॥
 कृष्णाजिनोत्तरीयाय व्यालवज्जोषजोतिने ।
 ईशान रुद्रसंघात हरिकेश नमोऽस्तु ते ॥ ३७ ॥
 श्वश्र्वायाम्बिकानाथ ध्यक्त्यायक नमोऽस्तु ते ।
 कालकामदकामघ्न दुष्टोद्धृत्तनिषूदन ॥ ३८ ॥
 सर्वगर्हितसर्वघ्न सद्योजात नमोऽस्तु ते ।
 उन्मादनशताघर्त गङ्गातोयार्द्रमूर्धज ॥ ३९ ॥
 चन्द्रार्घसंयुगाघर्त मेघाघर्त नमोऽस्तु ते ।
 नमोऽन्नदानकर्त्रे च अन्नदप्रभरे नमः ॥ ४० ॥
 अन्नमोक्षत्रे च गोप्त्रे च त्वमेव प्रलयानल ।
 जरायुजाण्डजाश्चैव स्येदजोद्विज्ज पृथक् च ॥ ४१ ॥
 त्वमेव देवदेवेश भूतग्रामधनुर्विधः ।
 चराचरस्य स्रष्टा त्वं प्रतिहर्ता त्वमेव ॥ ४२ ॥
 त्वमेव ब्रह्मा विश्वेश अप्सु ब्रह्म घदन्ति ते ।
 सर्वस्य परमा योनिः सुधांशो ज्योतिरा निधि ॥ ४३ ॥
 ऋक्सामानि तर्पणकारमाहुस्त्यां ब्रह्मवादिन ।
 दायि दायि हरेदायि हुवादावेति पाऽसदम् ॥ ४४ ॥

नानाचिरुतवक्त्राय खड्गजिह्वोग्रदंष्ट्रिणे ।

पक्ष्मासलघार्घाय तुम्बीवीणाप्रियाय च ॥ २३ ॥

अघोरघोररूपाय घोराघोरतराय च ।

नमः शिवाय शान्ताय नमः शान्ततमाय च ॥ २४ ॥

नमो बुद्धाय शुद्धाय संविभागप्रियाय च ।

पद्मनाथ पद्मनाथ नमः सांख्यपराय च ॥ २५ ॥

नमश्चण्डैकघण्टाय घण्टाजत्पाय घण्टिने ।

सहस्रशतघण्टाय घण्टामालाप्रियाय च ॥ २६ ॥

प्राणवण्डाय नित्याय नमस्ते लोहिताय च ।

हृद्दकाराय रुद्राय भगाकारप्रियाय च ॥ २७ ॥

नमोऽपारवते नित्यं गिरिवृक्षप्रियाय च ।

नमो यज्ञाधिपतये भूताय प्रस्तुताय च ॥ २८ ॥

यज्ञचाहाय दान्ताय तप्याय च भगाय च ।

नमस्तटाय तट्याय तटिनीपतये नमः ॥ २९ ॥

अन्नदायान्नपतये नमस्तघ्नभुजाय च ।

नमः सहस्रशीर्षाय सहस्रचरणाय च ॥ ३० ॥

सहस्रोद्धतशूलाय सहस्रनयनाय च ।

नमो बालार्कघर्णाय बालरूपधराय च ॥ ३१ ॥

नमो बालार्करूपाय कालजीटनकाय च ।

नमः शुद्धाय बुद्धाय क्षोमणाय क्षयाय च ॥ ३२ ॥

तरङ्गाङ्कितकेशाय मुक्तकेशाय चै नमः ।

नमः पद्मकर्मनिष्ठाय त्रिकर्मनिताय च ॥ ३३ ॥

घर्णाश्रमाणां विधितृयधर्मप्रवर्तिने ।
 नमः श्रेष्ठाय उयेष्ठाय नमः कलकलाय च ॥ ३४ ॥
 श्वेतपिङ्गलनेत्राय कृष्णरक्तक्षणाय च ।
 धर्मकामार्थमोक्षाय क्रयाय क्रयनाय च ॥ ३५ ॥
 सांख्याय सांख्यमुप्याय योगाधिपतये नमः ।
 नमो रथ्याधिरथ्याय अनुप्ययपथाय च ॥ ३६ ॥
 कृष्णाजिनोत्तरायाय व्यालवज्रोपयोतिने ।
 ईशान रुद्रसंघात हरिकेश नमोऽस्तु ते ॥ ३७ ॥
 श्वस्यकायाम्बिकानाथ ध्यकायक नमोऽस्तु ते ।
 कालकामदकामघ्न दुष्टोद्धृत्तनिपूढन ॥ ३८ ॥
 सर्वगर्हितसर्वघ्न सद्योजात नमोऽस्तु ते ।
 उन्मादनशताघर्न गङ्गानोयार्द्रमूर्धज ॥ ३९ ॥
 चन्द्रार्चसंयुगाघर्त मेघाघर्न नमोऽस्तु ते ।
 नमोऽन्नदानकर्त्रे च अन्नदप्रमये नमः ॥ ४० ॥
 अन्नमोक्षत्रे च गोप्त्रे च त्वमेव प्रलयातन ।
 जरायुजाण्टजाध्वैव स्वेदजोद्विज्ज एष च ॥ ४१ ॥
 त्वमेव देवदेवेश भूतप्रामादनुर्विधः ।
 अराचरस्य स्रष्टा त्वं प्रतिहर्ता त्वमेव ॥ ४२ ॥
 त्वमेव ब्रह्मा विश्वेश अप्सु ब्रह्म पदन्ति ते ।
 सर्वस्य परमा योनिः सुधांसो ज्योतिषां निधिः ॥ ४३ ॥
 श्रक्सामानि तयोकारमाहुस्त्वां ब्रह्मवादिन ।
 दायि दायि हरेदायि हुषादायेति पाऽसहन् ॥ ४४ ॥

गायन्ति त्वां सुरश्रेष्ठाः सामगा ग्रहवादिनः ।
 यजुर्मय ऋद्धमयश्च सामाथर्वयुतस्तथा ॥ ४५ ॥
 पठ्यसे ग्रहचिद्विस्त्वं कल्पोपनिषदां गणैः ।
 ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा घर्णाध्रमाश्च ये ॥ ४६ ॥
 त्वमेवाऽऽश्रमसघाश्च विद्युत्स्तनितमेव च ।
 संवत्सरस्त्वमृतयो मासा मासार्धमेव च ॥ ४७ ॥
 कला काण्डा निमेषाश्च नक्षत्राणि युगानि च ।
 वृषाणां ककुदं त्व हि गिरीणां शिखराणि च ॥ ४८ ॥
 सिंहो मृगाणां पतयस्तश्चकानन्तभोगिनाम् ।
 क्षीरोदो ह्युद्धीनां च मन्त्राणां प्रणवस्तथा ॥ ४९ ॥
 धज्रं प्रहरणानां च व्रतानां सत्यमेव च ।
 त्वमेवेच्छा च द्वेषश्च रागो मोह शमः क्षमा ॥ ५० ॥
 व्यवसायो धृतिर्लोभः कामक्रोधौ जयाजयौ ।
 त्वं गदी त्वं शरी चापी खट्वाङ्गी मुद्गरौ तथा ॥ ५१ ॥
 छेत्ता भेत्ता प्रहर्ता च नेता मन्ताऽसि नो मतः ।
 दशलक्षणसंयुक्तो धर्मोऽर्थ काम एव च ॥ ५२ ॥
 इन्दुः समुद्रः सरितः पद्मवलानि सरासि च ।
 लतावलयस्तृणौषध्यः पशवो मृगपक्षिणः ॥ ५३ ॥
 द्रव्यकर्मगुणारम्भः कालपुष्पफलप्रदः ।
 आदिध्वान्तश्च मध्यश्च गायत्र्योकार एव च ॥ ५४ ॥
 हरितो लोहितः कृष्णो नीलः पीतस्तथा क्षणः ।
 कद्रुश्च कपिलो यमुः कपोतो मच्छ (तस्य) कस्तथा ।

सुवर्णरेता विख्यातः सुवर्णश्चाप्यथो मतः ।
 सुवर्णनाम च तथा सुवर्णप्रिय एव च ॥ ५६ ॥
 त्वमिन्द्रश्च यमश्चैव वरुणो धनदोऽनलः ।
 उत्फुल्लश्चित्रमानुश्च स्वर्मानुर्मानुरेव च ॥ ५७ ॥
 होत्रं होता च होम्यं च हुतं चैव तथा प्रभुः ।
 त्रिसौपर्णस्तथा ग्रहान्वजुषां शतरुद्रियम् ॥ ५८ ॥
 पवित्रं च पवित्राणा मङ्गलाना च मङ्गलम् ।
 प्राणश्च त्व रजश्च त्व तमः सत्त्वयुतस्तथा ॥ ५९ ॥
 प्राणोऽपानः समानश्च उदानो व्यान एव च ।
 उन्मेपश्च निमेपश्च हृत्तुङ्गजृम्भा तथैव च ॥ ६० ॥
 लोहिताङ्गश्च दध्नी च महाचक्रो महोदरः ।
 शुचिरोमा हरिच्छल्मश्रुर्ध्वकेशश्चलाचलः ॥ ६१ ॥
 गीतवादित्रनृत्याङ्गो गीतवादनकप्रियः ।
 मत्स्यो जालो जलोऽजय्यो जलध्यालः कुटीचरः ॥ ६२ ॥
 विकालश्च सुकालश्च दुष्कालः कालनाशनः ।
 मृत्युश्चैवाक्षयोऽन्तश्च क्षमामायाकरोन्करः ॥ ६३ ॥
 सवर्तो वर्तकश्चैव संवर्तकयलाहर्को ।
 घण्टाकी घण्टकी घण्टो चूटालो लवणोदधिः ॥ ६४ ॥
 ब्रह्मा कालाग्निवज्रश्च दण्डो मुण्डस्त्रिदण्डधृक् ।
 चतुर्युगश्चतुर्वेदश्चतुर्होत्रश्चतुष्पथः ॥ ६५ ॥
 चातुराश्रम्यनेता च चातुर्गण्यकरश्च ह ।
 क्षराक्षरः प्रियो धूर्तो गणैर्गण्यो गणाधिपः ॥ ६६ ॥

रक्तमाल्याम्बरधरो गिरीशो गिरिजाप्रियः ।

शिल्पीशः शिल्पिनः श्रेष्ठं सर्वशिल्पिप्रवर्तकः ॥ ६७ ॥

भगनेत्रान्तकश्चण्डः पूष्णो दन्तचिनाशनः ।

स्वाहा स्वधा वषट्कारो नमस्कार नमोऽस्तु ते ॥ ६८ ॥

गूढव्रतश्च गूढश्च गूढव्रतनिपेक्षितः ।

तरणस्तारणश्चैव सर्वभूतेषु तारणः ॥ ६९ ॥

धाता विधाता सधाता निधाता धारणो धरः ।

तपो ब्रह्म च सत्यं च ब्रह्मवर्यं तथाऽऽर्जवम् ॥ ७० ॥

भूतात्मा भूतकृद्भूतो भूतमयभवोद्भवः ।

भूर्भुवः स्वरितश्चैव भूतो ह्यग्नेर्महेश्वरः ॥ ७१ ॥

ब्रह्मावर्तः सुरावर्तः कामावर्त नमोऽस्तु ते ।

कामविम्बविनिर्हन्ता कर्णिकारस्त्रजप्रियः ॥ ७२ ॥

गोनेता गोप्रचारश्च गोवृपेश्वरवाहनः ।

ध्रैलोक्यगोप्ता गोविन्दो गोप्ता गोगर्ग (?) एव च ॥ ७३ ॥

अखण्डचन्द्राभिमुखः सुमुखो दुर्मुखोऽमुखः ।

चतुर्मुखो बहुमुखो रणेऽप्यभिमुखः सदा ॥ ७४ ॥

हिरण्यगर्भः शकुनिर्धनदोऽर्धपतिर्विराट् ।

अधर्महा महादक्षो दण्डधारो रणप्रियः ॥ ७५ ॥

तिष्ठन्निश्चरश्च स्थागुश्च निष्कम्पश्च सुनिश्चलः ।

दुर्वारणो दुर्विपदो दुःसहो दुरतिक्रमः ॥ ७६ ॥

दुर्धरा दुर्वशो नित्यो दुर्दोषो विजयो जयः ।

शशः शशाङ्कनयनशातोष्णः क्षुत्तृषा जरा ॥ ७७ ॥

आधरो व्याधरश्चैव व्याधिहा व्याधिपञ्च यः ।

मयो यन्मृगयाधो व्याधिनामाकरोऽकरः ॥ ७८ ॥

शिवण्डो पुण्डरीकश्च पुण्डरोक्तावलोकनः ।

दण्डधृक्चक्रदण्डश्च रौद्रमागविनाशनः ॥ ७९ ॥

विषपोऽमृतपञ्चैव सुराप. क्षीरसोमपः ।

मधुपञ्चाऽऽपपञ्चैव सर्वपञ्च बलायलः ॥ ८० ॥

वृषाङ्गराम्भो(?) वृषमस्तया वृषमलोचन ।

वृषमश्चैव विख्यातो लोकानां लोकसंमृतः ॥ ८१ ॥

चन्द्रादित्यौ चक्षुषी ने हृद्यं च पितामहः ।

अग्निष्टोमस्तथा देहो धर्मकर्मप्रसाधितः ॥ ८२ ॥

न ग्रहा न च गोविन्द पुराणऋषयो न च ।

माहात्म्यं वेदितुं शक्ता याथातथ्येन ते शिवः ॥ ८३ ॥

शिवा या मूर्तयः सूक्ष्मान्मे महां यान्तु दर्शनम् ।

तामिमां सर्वतो रक्ष पिता पुत्रमिवौरसम् ॥ ८४ ॥

रक्ष मां रक्षणीयोऽहं तवानघ नमोऽस्तु ते ।

भक्तानुकम्पी भगवान्भक्तद्वार्हं नदा त्वयि ॥ ८५ ॥

यः सहस्राण्यनेकानि पुंसामामृत्य दुर्द्रुशाम् ।

निष्ठत्येकः समुद्रान्ते स मे गोप्ताऽस्तु नित्यशः ॥ ८६ ॥

यं विनिद्रा जितश्वासा सत्त्वस्थाः समदर्शिनः ।

ज्योतिः पश्यन्ति युञ्जानाम्भस्मै योगान्मने नमः ॥ ८७ ॥

ममक्ष्य सर्वभूतानि युगान्ते समुपस्थिते ।

यः शेते जलमध्यस्थस्तं प्रपन्नेऽम्बुरागिनम् ॥ ८८ ॥

प्रचिश्य घदनं राहोयः सोमं पिबते निशि ।

प्रसत्यफं च स्वर्मानुभूत्या सोमाग्निरेव च ॥ ८६ ॥

अङ्गुष्ठमात्राः पुरुषा देहस्थाः सर्वदेहिनाम् ।

रक्षन्तु ते च मां नित्यं नित्यं चाऽऽप्याययन्तु माम् ॥ ८७ ॥

येनाप्नुत्पादिता गर्भा अपो भागगताश्च ये ।

तेषां स्थाहा स्वधा चैव आप्नुवन्ति स्वदन्ति च ॥ ८८ ॥

येन रोहन्ति देहस्थाः प्राणिनो रोदयन्ति च ।

हर्षयन्ति न कृष्यन्ति नमस्तेभ्यस्तु नित्यशः ॥ ८९ ॥

ये समुद्रे नदीदुर्गे पर्वतेषु गुहासु च ।

वृक्षमूलेषु गोष्ठेषु फान्तारगहनेषु च ॥ ९० ॥

चतुष्पथेषु रथ्यासु चत्वरेषु सभासु च ।

हस्त्यश्वरथशालासु जीर्णोद्यानालयेषु च ॥ ९१ ॥

येषु पञ्चसु भूतेषु दिशासु विदिशासु च ।

इन्द्रार्कयोर्मध्यगता ये च चन्द्रार्करश्मिषु ॥ ९२ ॥

रसातलगता ये च येच तस्मात्परं गताः ।

नमस्तेभ्यो नमस्तेभ्यो नमस्तेभ्यस्तु सर्वशः ॥ ९३ ॥

सर्वस्त्वं सर्वगो देवः सर्वभूतपतिर्भवः ।

सर्वभूतान्तरात्मा च तेन त्वं न निमन्त्रितः ॥ ९४ ॥

त्वमेव चेज्यसे देव यज्ञैर्विविधदक्षिणैः ।

त्यमेव कर्ता सर्वस्य तेन त्वं न निमन्त्रितः ॥ ९५ ॥

अथवा मायया देव मोहितः सूक्ष्मया तव ।

तस्मात्तु कारणाद्वाऽपि त्वं मया न निमन्त्रितः ॥ ९६ ॥

प्रसीद मम देवेश त्वमेव शरणं मम ।

त्य गतिस्त्व्य प्रतिष्ठा च न चान्योऽस्तीति मे मति ॥ १०० ॥

ब्रह्मोवाच ।

स्तुत्येय त्व महादेवं चिरराम प्रजापति ।

भगवानपि सुप्रीत पुनर्दक्षमभापत ॥ १०१ ॥

श्रीभगवानुवाच ।

परितुष्टोऽस्मि ते दक्ष स्तत्रेनानेन सुव्रत ।

यदुना तु किमुक्तेन मत्समीपं गमिष्यसि ॥ १०२ ॥

ब्रह्मोवाच ।

तथैवमब्रवीद्वाक्यं त्रैलोक्याधिपतिर्भव ।

कृत्याऽऽश्वासकरं वाक्यं सर्वशो वाक्यसहितम् ॥ १०३ ॥

श्रीशिव उवाच ।

दक्ष दुःखं न कतव्यं यज्ञविध्वंसनं प्रति ।

अहं यज्ञह्नस्तुभ्यं दूष्टमेतत्पुराऽनघ ॥ १०४ ॥

भूयश्च त्वं धरमिमं मत्तो गृह्णोष्व सुव्रत ।

प्रसन्नसुमुखो भूत्वा ममैकाग्रमना शृणु ॥ १०५ ॥

अश्वमेधसहस्रस्य वाजपेयशतस्य वै ।

प्रजापते मत्प्रसादात्फलभागी भविष्यसि ॥ १०६ ॥

वेदान्पडङ्गान्बुध्यस्व साख्ययोगाश्च कृत्स्नशः ।

तपश्च विपुलं तप्त्वा दुश्चरं देवदानत्रे ॥ १०७ ॥

अब्देर्द्वादशमिर्युक्तं गूढमप्रज्ञनिन्दितम् ।

वर्णाश्रमकृतैर्धर्मैर्धिनीतं न क्वचित्कचित् ॥ १०८ ॥

समागतं व्यवसितं पशुपाशविमोक्षणम् ।

सर्वेषामाश्रमाणां च मया पाशुपतं व्रतम् ॥ १०६ ॥

उत्पादितं दक्ष शुभं सर्वपापविमोचनम् ।

अस्य चीर्णस्य यत्सम्यक्फलं भवति पुष्कलम् ॥

तद्यास्तु सुमहाभाग मानसस्त्यज्यतां ज्वरः ॥ ११० ॥

ब्रह्मोवाच ।

एषमुक्त्वा तु देवेशः सप्तलोकः सहानुगः ।

अदर्शनमनुप्राप्तो दक्षस्यामिततेजसः ॥ १११ ॥

अघाप्य च तथा भागं यथोक्तं चोमया भयः ।

ज्वरं च सर्वधर्मज्ञो बहुधा व्यभजत्तदा ॥ ११२ ॥

शान्त्यर्थं सर्वभूतानां शृणुष्वमथ वै द्विजाः ।

शिखाभितापो नागानां पर्वतानां शिलाजतु ॥ ११३ ॥

अपां तु नीलिकां विद्याग्निर्मोको भुजगेषु च ।

खोरकः सौरमेयाणामूखरः पृथिवीतले ॥ ११४ ॥

शुनामपि च धर्मज्ञा दृष्टिप्रत्यवरोधनम् ।

रन्ध्रागतमथाश्वानां शिखोदुभेदश्च यर्हिणाम् ॥ ११५ ॥

नेत्ररागः कोकिलानां द्वेषः प्रोक्तो महात्मनाम् ।

जनानामपि भेदश्च सर्वेषामिति नः श्रुतम् ॥ ११६ ॥

शुकानामपि सर्वेषां हिक्किका प्रीच्यते ज्वरः ।

शार्दूलेष्वथ वै चिप्राः श्रमो ज्वर इहोच्यते ॥ ११७ ॥

मानुषेषु च सर्वज्ञा ज्वरो नामैष कीर्तितः ।

मरणे जन्मनि तथा मध्ये चापि निवेशितः ॥ ११८ ॥

पतन्माहेश्वर तेजो ज्वरो नाम सुदारुण ।

नमस्यश्चैव मान्यश्च सर्वप्राणिमिरोश्वर ॥ ११६ ॥

इमा ज्वरोत्पत्तिमर्दीनमानस ,

पठेत्सदा य सुसमाहितो नर ।

विमुक्तरोग स नरो मुदायुतो,

लभेत् कामाश्च यथामनीषितान् ॥ ११७ ॥

दक्षप्रोक्त स्तत्र चापि कीर्तयेत् ऋणोति वा ।

नाशुम प्राप्नुयात्किञ्चिद्दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥ ११८ ॥

यथा सर्वेषु देवेषु चरिष्ठो भगवान्भव ।

तथा स्तत्रो चरिष्ठोऽय स्तवाना दक्षनिर्मित ॥ ११९ ॥

यश न्यर्गन्तुरैश्वर्यवित्तादिजयकाङ्क्षिणि ।

स्तोतव्यो भक्तिमान्ध्याय विद्याकामैश्च यत्नत ॥ १२० ॥

न्याधितो दु खितो दीनो नरो ग्रस्तो भयादिभि ।

राजकार्यनियुक्तो वा मुच्यते महतो भयात् ॥ १२१ ॥

अनेनैव च देहेन गणाना च महेश्वरात् ।

इह लोके सुख प्राप्य गणराडुपजायते ॥ १२२ ॥

न यक्षा न पिशाचा वा न नागा न चिनायका ।

तुयुर्विघ्न गृहे तस्य यत्र सस्तुयते भव ॥ १२३ ॥

ऋणयाद्वा इदं नारी मक्त्याऽय भवमाविता ।

पितृपक्षे भर्तृपक्षे पूज्या भवति चैव ह ॥ १२४ ॥

ऋणयाद्वा इदं सर्वं कीर्तयेद्वाऽप्यमीदृश ।

तस्य सर्वाणि कार्याणि सिद्धि गच्छन्त्यविघ्नत ॥ १२५ ॥

मनसा चिन्तितं यच्च यच्च वाचाऽप्युदाहृतम् ।
 सर्वं संपद्यते तस्य रतवम्यास्यानुकीर्तनात् ॥ १२६ ॥
 देवस्य सगुहस्याथ देव्या नदीश्वरस्य च ।
 यलिं विभज(भाग)तः कृत्वा दमेन नियमेन च ॥ १२७ ॥
 ततः प्रयुक्तो गृहणीयाभ्रामान्याशु यथाक्रमम् ।
 ईप्सिताह्वं भतेऽप्यर्थान्कामान्भोगांश्च मानयः ॥ १२८ ॥
 मृतश्च स्वर्गमाप्नोति स्त्रीसहस्रसमावृतः ।
 सर्वकामसुयुक्तो वा युक्तो वा सर्वपातकैः ॥ १२९ ॥
 पठन्दक्षकृतं स्तोत्रं सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
 मृतश्च गणसापुज्यं पूज्यमानः सुरासुरैः ॥ १३० ॥
 वृषेण विनियुक्तेन विमानेन विराजते ।
 आभूतसंप्लवस्थायी रुद्रस्यानुचरो भवेत् ॥ १३१ ॥
 इत्याह भगवान्व्यासः पराशरसुतः प्रभुः ।
 नैतद्वेदयते कश्चिन्नैतच्छ्राव्यं च कस्यचित् ॥ १३२ ॥
 श्रुत्वेमं परमं गुह्यं येऽपि स्युः पापयोनयः ।
 वैश्याः स्त्रियश्च शूद्राश्च रुद्रलोकमवाप्नुयुः ॥ १३३ ॥
 भ्रातृभ्यश्च विप्रेभ्यः सदा पर्वसु पर्वसु ।
 रुद्रलोकमवाप्नोति द्विजो वै नात्र संशयः ॥ १३४ ॥
 इति श्रीमहापुराणे आदिब्राह्म स्वयंभृपिसचादे दक्षस्तव-
 निरूपणं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥
 आदित. श्लोकानां समष्ट्यङ्काः—२८८३

अथैकचत्वारिंशोऽध्यायः ।

एकाग्रकक्षेत्रमाहात्म्यकथनम्

लोमहर्षण उवाच ।

श्रुत्वैवं वै मुनिश्रेष्ठाः कथां पापप्रणाशिनीम् ।
रुद्रक्रोधोद्धवां पुण्या व्यासस्य चक्षुः क्षिप्ताः ॥ १ ॥
पार्श्वत्याश्च तथा रोषं क्रोधं शमोश्च दुःसहम् ।
उत्पत्तिं धीरमद्रस्य भद्रकाल्याञ्च संभवम् ॥ २ ॥
दक्षयज्ञविनाशं च घोरं शंभोस्तथाऽद्भुतम् ।
पुनः प्रसादं देवस्य दक्षस्य सुमहात्मनः ॥ ३ ॥
यज्ञभागं च रुद्रस्य दक्षस्य च फलं क्रतोः ।
दृष्ट्वा बभूवुः संप्रीता विस्मिताश्च पुनः पुनः ॥ ४ ॥
पप्रच्छुश्च पुनर्व्यासं कथाशेषं तथा द्विजाः ।
पृष्ट्वा प्रोवाच तान्व्यासः क्षेत्रमेकाग्रकं पुनः ॥ ५ ॥

व्यास उवाच ।

ब्रह्मप्रोक्तां कथां पुण्यां श्रुत्वा तु ऋषिपुंगवाः ।
प्रशशंसुस्तदा दृष्ट्वा रोमाञ्चिततनूरुहाः ॥ ६ ॥

ऋषय ऊचुः ।

अहो देवस्य माहात्म्यं त्वया शंभोः प्रकीर्तितम् ।
दक्षस्य च सुरश्रेष्ठ यज्ञविध्वंसनं तथा ॥ ७ ॥
एकाग्रकं क्षेत्रवरं चक्रुर्महसि सांप्रतम् ।
श्रोतुमिच्छामहे ब्रह्मन्परं कीतूहलं हि नः ॥ ८ ॥

व्यास उवाच ।

तेषा तद्वचन श्रुत्वा लोकनाथश्चतुर्मुख ।

प्रोवाच शमोस्तत्क्षेत्र भूतले दुष्टतच्छदम् ॥ ६ ॥

ब्रह्मोवाच ।

शृणुष्व मुनिशार्दूल प्रवक्ष्यामि समासत ।

सर्वपापहर पुण्य क्षेत्र परमदुर्लभम् ॥ १० ॥

लिङ्गकोटिसमायुक्त चाराणसीसम शुभम् ।

एकाम्रकेति विख्यात तीर्याष्टकसमन्वितम् ॥ ११ ॥

एकाम्रवृक्षस्तत्राऽऽसीत्पुरा कल्पे द्विजोत्तमा ।

नाम्ना तस्यैव तत्क्षेत्रमेकाम्रकमिति धृतम् ॥ १२ ॥

हृष्टपुष्टजनाकीर्णं नरनारीसमन्वितम् ।

विद्यासग(द्यावद्)नभूविष्ट धनधान्यादिसयुतम् ॥ १३ ॥

गृहगोपुरसयाध त्रिकचाद्वारभूषितम् ।

नानावणिकसमाकीर्णं नानारत्नोपशोभितम् ॥ १४ ॥

पुराट्टालकसयुक्त रथिभि समलङ्कृतम् ।

राजहसनिमै शुभ्रै प्रासादैरुपशोभितम् ॥ १५ ॥

मार्गगद्दारसयुक्त सितप्राकारशोभितम् ।

रक्षित शस्त्रसघैश्च परिखाभिरलङ्कृतम् ॥ १६ ॥

सितरक्तैस्तथा पीतै हृण्णश्यामैश्च वर्णकै ।

समीरणोद्धतामिश्च पताकामिरलङ्कृतम् ॥ १७ ॥

नित्योत्सवप्रमुदित नानावादित्रनिखनै ।

घीणावेणुमृदङ्गैश्च क्षेपणीभिरलङ्कृतम् ॥ १८ ॥

देवनायतनैर्दिव्यैः प्राकारोद्यानमण्डितैः ।

पूजाविचित्ररचितैः सर्वत्र समलंकृतम् ॥ १६ ॥

स्त्रियः प्रमुदितास्तत्र दृश्यन्ते तनुमश्रयमाः ।

दारैरलंकृतग्रीवाः पद्मपत्रायनेक्षणाः ॥ २० ॥

पीनोन्नतकुचाः श्यामाः पूर्णवन्दनिमाननाः ।

स्थिगालकाः सुरुपोलाः काञ्चीनूपुरनादिताः ॥ २१ ॥

सुकेश्यश्वारुजयताः कर्णान्तायतनोचनाः ।

सर्वलक्षणसंपन्नाः सर्वाभरणभूषिताः ॥ २२ ॥

दिव्ययस्त्रधराः शुभ्राः काञ्चिन्काञ्चनसंनिभाः ।

हंसचारणगामिन्यः कुचभारायनामिनाः ॥ २३ ॥

दिव्यगन्धानुलिप्ताङ्गाः कर्णाभरणभूषिताः ।

मङ्गलसाग्न्य सुश्रोण्यो नित्यं प्रहसिताननाः ॥ २४ ॥

इषडिम्पट्टदशना विम्वोष्टा मधुरस्वराः ।

ताम्यूलरज्जिनमुक्ता पिङ्गधाः प्रियदर्शनाः ॥ २५ ॥

सुमगाः प्रियधादिन्यो नित्यं रीयनगर्हिताः ।

दिव्ययस्त्रधराः सर्वाः सदा चारित्रमण्डिताः ॥ २६ ॥

क्रीडन्ति ताः सदा तत्र म्रियद्वाप्सरसोपमाः ।

स्ये स्ये गृहे प्रमुदिता दिवा रात्रौ वराननाः ॥ २७ ॥

पुरुषान्तत्र दृश्यन्ते रूपर्योवनगर्हिताः ।

सर्वलक्षणसंपन्नाः सुमृष्टमणिकुण्डलाः ॥ २८ ॥

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्च मुनिसत्तमाः ।

सधर्मनिरतान्तत्र निवसन्ति सुधार्मिकाः ॥ २९ ॥

अन्याश्च तत्र तिष्ठन्ति वारमुख्या सुलोचना ।

घृताचीमेनकातुल्यास्तथा समतिलोत्तमा ॥ ३० ॥

उर्ध्वशीसदृशाश्चैव विप्रचित्तिमास्तथा ।

विश्वाचीसहजन्त्याभा प्रम्लोचासदृशास्तथा ॥ ३१ ॥

सर्वास्ता प्रियवादिन्य सर्वा विहसितानना ।

कलाकौशलसयुक्ता सर्वास्ता गुणसयुता ॥ ३२ ॥

एष पश्यस्त्रियस्तत्र नस्यगीतविशारदा ।

निवसन्ति मुनिश्रेष्ठा सर्वस्त्रीगुणगर्विता ॥ ३३ ॥

प्रेक्षणालापकुशला सुन्दर्य प्रियदशना ।

न रूपहीना दुर्वृत्ता न परद्रोहकारिका ॥ ३४ ॥

यासा कटाक्षपातेन मोह गच्छन्ति मानवा ।

न तत्र निर्धना सन्ति न मूर्खा न परद्विष ॥ ३५ ॥

न रोगिणो न मलिना न कट्र्या न मायिन ।

न रूपहीना दुर्वृत्ता न परद्रोहकारिण ॥ ३६ ॥

तिष्ठन्ति मानवास्तत्र क्षेत्रे जगति विश्रुते ।

सर्वत्र सुखसचार सर्वसत्त्वसुखायहम् ॥ ३७ ॥

नानाजनसमाकीर्णं सर्वसस्यसमन्वितम् ।

कर्णिकारैश्च धनसैश्चमयैर्नागकेसरै ॥ ३८ ॥

पाटलाशोकवकुलै कपित्थैर्वहुलैर्घवै ।

चुतनिम्बकदम्भैश्च तथाऽन्ये पुष्पजातिभि ॥ ३९ ॥

नीपकैर्घवपद्मदिरेलंतामिश्च विराजितम् ।

शालैस्तालेस्तमालैश्च नारिकेलै शुभाञ्जने ॥ ४० ॥

अर्जुनैः समपर्णेश्च कोविदारैः सपिप्पलैः ।
 लकुचैः सरलैर्लोघ्रैर्हिन्तालैर्देवदारुभिः ॥ ४१ ॥
 पलाशीर्मृचुकुन्दैश्च पारिजातैः सकुब्जकैः ।
 कदलीचनखण्डैश्च जम्बूपूगफलैस्तथा ॥ ४२ ॥
 केतकीकरवीरैश्च अतिमुक्तैश्च किंशुकैः ।
 मन्दारकुन्दपुष्पैश्च तथाऽन्यैः पुष्पजातिभिः ॥ ४३ ॥
 नानापक्षिभूतैः सेव्यैरुद्यानैर्नन्दनोपमैः ।
 फलमारानतैर्बृक्षैः सर्वतुङ्गकुसुमोत्करैः ॥ ४४ ॥
 चक्रोरैः शतपत्रैश्च भृङ्गराजैश्च कोकिलैः ।
 कलघिङ्कैर्मयूरैश्च प्रियपुत्रैः शुकैस्तथा ॥ ४५ ॥
 जीयंजीवकहारीतैश्चातर्क्यनवेष्टितैः ।
 नानापक्षिगणैश्चान्यैः कृजद्विर्मयुरम्यरैः ॥ ४६ ॥
 दीर्घिकाभिस्तडागैश्च पुष्करिणीभिश्च घापिभिः ।
 नानाजलाशयैश्चान्यैः पद्मिनीषण्डमण्डितैः ॥ ४७ ॥
 कुमुदैः पुण्टरीकैश्च तथा नीलोत्पलैः शुभैः ।
 फादम्यैश्चक्रवाकैश्च तथैव जलकुक्कुटैः ॥ ४८ ॥
 कारण्डवैः प्लवैर्हंसैस्तथाऽन्यैर्जलचारिभिः ।
 ण्यं नानाविधैर्बृक्षैः पुष्पैर्नानाविधैर्वरैः ॥ ४९ ॥
 नानाजलाशयैः पुष्पैः शोभिनां क्षन्समन्ततः ।
 आम्ने तत्र स्वयं देवः कृत्तिवासा वृषध्वजः ॥ ५० ॥
 हिताय सर्वलोकस्य मुक्तिमुक्तिप्रदः शिवः ।
 पृथिव्यां यानि तीर्थानि सरितश्च सरांसि च ॥ ५१ ॥

पुष्करिण्यस्तडागानि चाप्यः कृपाश्च सागराः ।
 तेभ्यः पूर्वं समाहृत्य जलविन्दूनृथक्पृथक् ॥ ५२ ॥
 सर्वलोकहितार्थाय रुद्रः सर्वसुरैः सह ।
 तीर्थं विन्दुसरो नाम तस्मिन्क्षेत्रे द्विजोत्तमाः ॥ ५३ ॥
 चकार ऋषिभिः साधुं तेन विन्दुसरः स्मृतम् ।
 अष्टम्पां बहुले पक्षे मार्गशीर्षे द्विजोत्तमाः ॥ ५४ ॥
 यस्तत्र यात्रां कुरुते विपुत्रे विजितेन्द्रियः ।
 विधिवद्विन्दुसरसि स्नात्वा श्रद्धासमन्वितः ॥ ५५ ॥
 देवानृषीन्मनुष्यांश्च पितृन्संतर्प्य घाग्यतः ।
 तिलोदकेन विधिना नामगोत्रविधानचित् ॥ ५६ ॥
 स्नात्वैषं विधिपत्तत्र सोऽश्वमेधफलं लभेत् ।
 ब्रह्मोपराने विपुत्रे संक्रान्त्यामयने तथा ॥ ५७ ॥
 युगादिषु पडशीत्यां तथाऽन्यत्र शुभे तिथौ ।
 ये तत्र दानं विप्रेभ्यः प्रयच्छन्ति धनादिकम् ॥ ५८ ॥
 अन्यतीर्थाच्छतगुणं फलं ते प्राप्नुवन्ति वै ।
 पिण्डं ये संप्रयच्छन्ति पितृभ्यः सरसस्तटे ॥ ५९ ॥
 गितृणामक्षयं तृप्तिं ते कुर्वन्ति न संशयः ।
 ततः शंभोर्गृहं गत्वा घाग्यतः संपतेन्द्रियः ॥ ६० ॥
 प्रचिश्य पूजयेच्छर्वं कृत्वा तं त्रिः प्रदक्षिणम् ।
 मृतक्षीरादिभिः स्नानं कारयित्वा भवं शुचिः ॥ ६१ ॥
 चन्दनेन सुगन्धेन विलिप्य कुङ्कुमेन च ।
 ततः संपूजयेद्देवं चन्द्रमौलिमुभापतिम् ॥ ६२ ॥

पुष्पैर्नानाविधैर्मध्यैर्विल्वार्ककमलादिभि ।
 आगमोक्तेन मन्त्रेण वेदोक्तेन च शंकरम् ॥ ६३ ॥
 अदीक्षितस्तु नाम्नैव मूलमन्त्रेण चार्चयेत् ।
 एव संपूज्य तं देवं गन्धपुष्पानुरागिभि ॥ ६४ ॥
 धूपदीपैश्च नैवेद्यैरपहारैस्तथा स्तवैः ।
 दण्डयत्प्रणिपातैश्च गीतैर्वाद्यैर्मनोहरैः ६५ ॥
 नृत्यजप्यनमस्कारैर्जयशब्दैः प्रदक्षिणैः ।
 एवं संपूज्य विधिवद्देवदेवमुमापतिम् ॥ ६६ ॥
 सर्वपापघ्निर्मुक्तो रूपयौवनगर्वित ।
 कुलैकविशमुद्धृत्य दिव्याभरणभूषित ॥ ६७ ॥
 सौवर्णेन विमानेन किङ्किणीजालमालिना ।
 उपगीयमानो गन्धर्वैरप्सरोभिरलंकृतः ॥ ६८ ॥
 उद्योतयन्दिश सर्वाः शिवलोकस गच्छति ।
 भुक्त्वा तत्र सुखं विप्रा मनसः प्रीतिदायकम् ॥ ६९ ॥
 तल्लोकयासिभिः सार्धं यावदाभूतसंप्लवम् ।
 ततस्तस्मादिहाऽऽयात पृथिव्या पुण्यसक्षये ॥ ७० ॥
 जायते योगिना मेहे चतुर्वेदी द्विजोत्तमाः ।
 योगं पाशुपतं प्राप्य ततो मोक्षमवाप्नुयान् ॥ ७१ ॥
 शयनोत्थापने चैव संक्रान्त्यामयने तथा ।
 अशोकाख्यां तथाऽष्टम्या पवित्रागेपने तथा ॥ ७२ ॥
 ये च पश्यन्ति तं देवं हृत्तिद्यामृमृन्ममम् ।
 विमानेनार्कवर्णेन शिवलोकं यत्रान्ति ते ॥ ७३ ॥

सर्वकालेऽपि तं देवं ये पश्यन्ति सुमेधसः ।

तेऽपि पापविनिर्मुक्ताः शिवलोकं व्रजन्ति वै ॥ ५३ ॥

देवस्य पश्चिमे पूर्वे दक्षिणे चोत्तरे तथा ।

योजनद्वितयं सार्धं क्षेत्रं तदनुत्तिमुत्तिदम् ॥ ५४ ॥

तस्मिन्क्षेत्रवरे लिङ्गं भाम्करेश्वरसंज्ञितम् ।

पश्यन्ति ये तु तं देवं स्नान्वा कुण्डे महेश्वरम् ॥ ५५ ॥

आदिन्येनार्चितं पूर्वं देवदेवं त्रिलोचनम् ।

सर्वपापविनिर्मुक्ता विमानवरजास्थिताः ॥ ५६ ॥

उपगीयमाना गन्धर्वैः शिवलोकं व्रजन्ति ते ।

विष्टन्ति तत्र मुदिताः कल्पमेकं द्विजोत्तमाः ॥ ५७ ॥

भुक्त्वा तु विपुलाग्मोणाञ्छिवलोके मनोरमान् ।

पुण्यक्षपादिहाऽऽयाता जायन्ते प्रवरे ह्यग्रे ॥ ५८ ॥

अथवा योगिनां गेहे घेदरेदाङ्गयाणां ।

उत्पद्यन्ते द्विजवरा सर्वमूतहिते रताः ॥ ५९ ॥

दण्डवत्प्रणिपातैश्च नृत्यगीतादिभिस्तथा ।
 संपूज्यैव विधानेन शिवलोकं व्रजेन्नरः ॥ ८५ ॥
 नारो वा द्विजशार्दूलः संपूज्य श्रद्धयाऽन्विता ।
 पूर्वोक्तं फलमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥ ८६ ॥
 कः शक्नोति गुणान्वक्तुं समग्रान्मुनिसत्तमाः ।
 तस्य क्षेत्रवरस्याथ ऋते देवान्महेश्वरात् ॥ ८७ ॥
 तस्मिन्क्षेत्रोत्तमे गत्वा श्रद्धयाऽश्रद्धयाऽपि वा ।
 माधवादिषु मासेषु नरो वा यदिचाऽङ्गना ॥ ८८ ॥
 यस्मिन्यस्मिंस्तिथौ विप्राः स्नात्वा बिन्दुसरोभ्रमसि ।
 पश्येद्देवं विरूपाक्षं देवीं च वरदां शिवाम् ॥ ८९ ॥
 गर्गं चण्डं कार्तिकेयं गणेशं धृपमं तथा ।
 कल्पद्रुमं च सावित्रीं शिवलोकं स गच्छति ॥ ९० ॥
 स्नात्वा च कापिले तीर्थे विधिवत्पापनाशने ।
 प्राप्नोत्यभिमतान्कामाञ्छिवलोकं स गच्छति ॥ ९१ ॥
 यः स्तम्भं तत्र विधिवत्करोति नियतेन्द्रियः ।
 कुलैकविंशमुद्धृत्य शिवलोकं स गच्छति ॥ ९२ ॥
 एकाग्रके शिवक्षेत्रे वाराणसोसमे शुभे ।
 स्नानं करोति यस्तत्र मोक्षं स लभते ध्रुवम् ॥ ९३ ॥
 इति श्रीमहापुराणे आदित्राहो स्वयंभृपिसंवाद एकाग्रक्षेत्र-
 माहात्म्यवर्णनं नामैकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥
 आदितः श्लोकानां समष्ट्यङ्काः — २६७६

अथ द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ।

उत्कलक्षेत्रवर्णनम्

ब्रह्मापानम् ।

विरजे विरजा माता ब्रह्माणी संप्रतिष्ठिता ।

यस्याः संदर्शनान्मर्त्यः पुनात्यासप्तमं पुन्यम् ॥ १ ॥

सदृद्दृष्ट्वा तु तां देवीं भक्त्याऽऽपूज्य प्रणम्य च ।

नरः स्वयंशमुद्धृत्य मम लोकं स गच्छति ॥ २ ॥

अन्याश्च तत्र तिष्ठन्ति विरजे लोकमातरः ।

सर्वपापहरा देव्यो धरदा भक्तिपत्सलाः ॥ ३ ॥

आस्ते घैतरणी तत्र सर्वपापहरा नदी ।

यस्यां स्नात्वा नरधेष्टः सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ४ ॥

आस्ते स्वयंभूस्तत्रैव क्रोडरूपी हरिः स्वयम् ।

दृष्ट्वा प्रणम्य तं भक्त्या परं विष्णुं व्रजन्ति ते ॥ ५ ॥

कापिले गोब्रहे सोमे तीर्थे चालाघुसंक्षिते ।

मृत्युञ्जये क्रोडतीर्थे घासुके सिद्धेश्वरे ॥ ६ ॥

तीर्थेष्वेतेषु मतिमान्विरजे संयतेन्द्रियः ।

गत्वाऽष्टतीयं विधिचत्स्नात्वा देवान्प्रणम्य च ॥ ७ ॥

सर्वपापविनिर्मुक्तो विमानवरमास्थितः ।

उपगोयमानो गन्धर्वैर्मम लोके महीयते ॥ ८ ॥

विरजे यो मम क्षेत्रे पिण्डदानं करोति वै ।

स करोत्यक्षयां तृप्तिं पितॄणां नात्र संशयः ॥ ९ ॥

मम क्षेत्रे मुनिश्रेष्ठा विरजे ये कलेवरम् ।
 परित्यजन्ति पुरुषास्ते मोक्षं प्राप्नुवन्ति वैः ॥ १० ॥
 स्नात्वा यः सागरे मर्त्यो दृष्ट्वा च कपिलं हरिम् ।
 पश्येद्देवीं च धाराहीं स याति त्रिदशालयम् ॥ ११ ॥
 सन्ति धान्यानि तीर्थानि पुण्यान्यायतनानि च ।
 तत्काले तु मुनिश्रेष्ठा घेदित्यानि तानि वै ॥ १२ ॥
 समुद्रस्योत्तरे तीरे तस्मिन्देशे द्विजोत्तमाः ।
 आस्ते गुह्यं परं क्षेत्रं मुक्तिदं पापनाशनम् ॥ १३ ॥
 सर्वत्र धालुकाकीर्णं पवित्रं सर्वकामदम् ।
 दशयोजनविस्तीर्णं क्षेत्रं परमदुर्लभम् ॥ १४ ॥
 अशोकार्जुनपुंनागैर्यकुलैः सरलद्रुमैः ।
 पनसैर्नारिकेलैश्च शालैस्तालैः कपित्थकैः ॥ १५ ॥
 चम्पकैःकर्णिकारैश्च चूतविल्वैः सपाटलैः ।
 कदम्बैः कोविदारैश्च लकुचैर्नागकेसरैः ॥ १६ ॥
 प्राचीनामलकैर्लोध्रैर्नारङ्गैर्धवलादिरैः ।
 सर्जभूर्जाश्वकर्णैश्च तमालैर्देवदारुभिः ॥ १७ ॥
 मन्दारैः पारिजातैश्च न्यग्रोधगुरुचन्दनैः ।
 खजूराप्रातपैः सिद्धैर्मुचुकुन्दैः सर्किशुकैः ॥ १८ ॥
 अश्वत्थैः सप्तपर्णैश्च मधुधारशुभाञ्जनैः ।
 शिशपामलकैर्नीपैर्निम्बतिन्दुविमीतकैः ॥ १९ ॥
 सर्वतुफलगन्धाढ्यैः सर्वतुकुसुमोज्ज्वलैः ।
 मनोहादकरैः शुभ्रैर्नानाविहगनादितैः ॥ २० ॥

धोत्ररम्यैः सुमधुरैर्वन्दनिर्मदनेग्निः ।

मनसः श्रोतिजनकैः शब्दैः गगमुग्नेरिनेः ॥ २१ ॥

घफोरेः शतपत्रैश्च भृङ्गराजैस्तथा शुभैः ।

फोफिलैः कन्दपिष्टैश्च दारुतैर्जर्विर्जापकैः ॥ २२ ॥

प्रियपुत्रैश्चासकैश्च तथाऽग्न्यैर्मधुरस्वरैः ।

धोत्ररम्यैः प्रियकरैः कृजद्विधार्पधिष्टिनेः ॥ २३ ॥

फेतकीयनराण्डैश्च अतिमुक्तैः सकुटजकैः ।

मालतोकुन्दयाणैश्च करपीरैः मितैतरैः ॥ २४ ॥

जम्पीरकरुणाङ्गोलैर्दाडिमैर्योजपूरकैः ।

मातुलुङ्गैः पूगफलैर्हिन्तालैः फदलीवनैः ॥ २५ ॥

अन्यैश्च विविधैर्षृङ्गैः पुष्पैश्चान्यैर्मनोहरैः ।

लताधितानगुल्मैश्च विविधैश्च जलाशयैः ॥ २६ ॥

दीर्घिकामिस्तङ्गाणैश्च पुष्करिणीमिश्च पापिमिः ।

नानाजलाशयैः पुष्पैः पद्मिनीराण्डमण्डितैः ॥ २७ ॥

सरांसि च मनोज्ञानि प्रसन्नसलिलानि च ।

कुमुदैः पुण्डरीकैश्च तथा नीलोत्पलैः शुभैः ॥ २८ ॥

कह्लारैः कमलैश्चापि आचितानि समन्ततः ।

कादम्यैश्चक्रवाकैश्च तथैव जलकुवकुटैः ॥ २९ ॥

कारण्डवैः पुवैर्हंसैः कूर्मैर्मत्स्यैश्च मद्गुभिः ।

दात्यूहसारसाकीर्णैः कोयष्टिवक्त्रशोमितैः ॥ ३० ॥

एतैश्चान्यैश्च कृजद्विः समन्ताञ्जलचारिभिः ।

खगैर्जलचरैश्चान्यैः कुसुमैश्च जलोद्गमवैः ॥ ३१ ॥

एव नानाविधैर्वृक्षैः पुष्पैः स्वल्पजलोद्भवैः ।
 रत्नचारिगृहस्यैश्च धानप्रस्यैश्च मिश्रुमि ॥ ३२ ॥
 स्वधर्मनिरतैर्वर्णैस्तथाऽन्यैः समलरुतम् ।
 हृष्टपुष्टजनाकार्णं नरनारासमानुलम् ॥ ३३ ॥
 अशेषविद्यानिलयः सर्वधर्मगुणाकरम् ।
 एव सर्वगुणोपेतः क्षेत्रः परमदुर्लभम् ॥ ३४ ॥
 आस्ते तत्र मुनिश्रेष्ठा विख्याताः पुरयोत्तमाः ।
 यावदुत्कलमर्यादा दिक्क्रमेण प्रकाशिता ॥ ३५ ॥
 तावत्कृष्णप्रसादेन देशः पुण्यतमो हि सः ।
 यत्र तिष्ठति विद्यात्मा देशे स पुरुषोत्तमः ॥ ३६ ॥
 जगद्व्यापा जगन्नाथस्तत्र सर्वं प्रतिष्ठितम् ।
 अहं रघुश्च शत्रुश्च देवश्चाग्निपुरोगमा ॥ ३७ ॥
 नियसामो मुनिश्रेष्ठास्तस्मिन्देसे सदा धयम् ।
 गन्धर्वाप्सरसः सर्वाः पितरो देवामानुषा ॥ ३८ ॥
 यक्षा विद्याधरा सिद्धा मुनयः सशितरताः ।
 ऋषयो घातकिल्याश्च कश्यपाद्याः प्रनेश्वरा ॥ ३९ ॥
 सुपर्णाः किनरा नागास्तथाऽन्ये स्वर्गवासिनः ।
 साङ्गाश्च चतुरो वेदाः शास्त्राणि विविधानि च ॥ ४० ॥
 इतिहासपुराणानि यज्ञाञ्चरदक्षिणाः ।
 नद्यश्च विविधाः पुण्यास्तीर्थान्यायतनानि च ॥ ४१ ॥
 सागराश्च तथा शैलास्तस्मिन्देसे व्यवस्थिताः ।
 एव पुण्यतमे देशे देवर्षिपितृसेविते ॥ ४२ ॥

सर्वोपभोगसहिते घासः कस्य न रोचते ।

श्रेष्ठत्वं कस्य देशस्य किं चान्यदधिकं ततः ॥ ४३ ॥

धारते यत्र स्वयं देवो मुक्तिदः पुरुषोत्तमः ।

धन्यास्ते विबुधप्रख्या ये घसन्त्युत्कले नराः ॥ ४४ ॥

तीर्थराजजले स्नात्वा पश्यन्ति पुरुषोत्तमे ।

स्वर्गे घसन्ति ते मर्त्या न ते यान्ति यमालये ॥ ४५ ॥

ये घसन्त्युत्कले क्षेत्रे पुण्ये श्रीपुरुषोत्तमे ।

सफलं जीवितं तेषामुत्कलानां सुमेघसाम् ॥ ४६ ॥

ये पश्यन्ति सुरश्रेष्ठं प्रसन्नायतलोचनम् ।

चारुसूकेशमुकुटं चारुकर्णवितंसकम् ॥ ४७ ॥

चारुस्मितं चारुदन्तं चारुकुण्डलमण्डितम् ।

सुनासं सुकपोलं च सुललाटं सुलक्षणम् ॥ ४८ ॥

त्रैलोक्यानन्दजननं कृष्णस्य मुखपङ्कजम् ॥ ४९ ॥

इति श्रीमहापुराणे आदिग्राह्ये स्वयंभुवःपिसंवाद उत्कल-

क्षेत्रवर्णन नाम द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४२ ॥

आदितः श्लोकानां समष्ट्यङ्काः—३०२४

अथ त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ।

अग्रन्तिकावर्णनम्

ब्रह्मोवाच ।

पुरा कृतयुगे विप्राः शक्रतुल्यपराक्रमः ।

यभूव नृपतिः श्रीमानिन्द्रद्युम्न इति श्रुतः ॥ १ ॥

सत्यवादी शुचिर्दक्ष सर्वशास्त्रविशारदः ।

रूपवान्सुभगः शूरो दाता भोक्ता प्रियंवदः ॥ २ ॥

यप्ता समस्तयज्ञाना ब्रह्मण्य सन्यसगरः ।

धनुर्वेदे च वेदे च शास्त्रे च निपुणः कृती ॥ ३ ॥

पल्लवो नरनारीणां पौर्णमान्या यथा शशी ।

आव्रित्य इव दुष्प्रेक्ष्यः शत्रुमघमयंकरः ॥ ४ ॥

यैष्णवः सत्यसंपन्नो जितक्रोधो जितेन्द्रियः ।

अध्येता योगसांख्यानां मुमुक्षुर्मतन्परः ॥ ५ ॥

एवं स पालयन्पृथ्वीं राजा सर्वगुणाकरः ।

तस्य बुद्धिः समुत्पन्ना हरेराराधनं प्रति ॥ ६ ॥

कथमाराधयिष्यामि देवदेवं जनार्दनम् ।

कस्मिन्क्षेत्रेऽथवा तीर्थे नदीतीरे तथाऽऽश्रमे ॥ ७ ॥

एव चिन्तापरः सोऽथ निरीक्ष्य मनसा महीम् ।

आलोक्य सप्ततीर्थानि क्षेत्राण्यथ पुराण्यपि ॥ ८ ॥

तानि सर्वाणि संत्यज्य जगामाऽऽयतनं पुनः ।

विष्ट्वात परमं क्षेत्रं मुक्तिदं पुरुषोत्तमम् ॥ ९ ॥

स गत्वा तत्क्षेत्रवर समृद्धवलघादन ।

अयजच्चाभ्यमेधेन विधिवद्भूरिदक्षिण ॥ १० ॥

कारयित्वा महोत्सेध प्रासाद चैव विश्रुतम् ।

तत्र सकर्षण कृष्ण सुभद्रा स्थाप्य वीर्यवान् ॥ ११ ॥

पञ्चतीर्थं च विधिवत्कृत्वा तत्र महीपति ।

स्नान दान तपो होम देवताप्रेक्षण तथा ॥ १२ ॥

भक्त्या चाऽऽराभ्य विधिवत्प्रत्यह पुरुषोत्तमम् ।

प्रसादाद्देवदेवस्य ततोमोक्षमवाप्तवान् ॥ १३ ॥

मार्कण्डेय च कृष्ण च दृष्ट्वा राम च भो द्विजा ।

सागरे चेन्द्रद्युम्नारये स्नात्वा मोक्ष लभेद्वधुपम् ॥ १४ ॥

मुनय ऊचुः ।

कस्मात्स नृपति पूर्वमिन्द्रद्युम्नो जगत्पति ।

जगाम परम क्षेत्र मुक्तिद पुरुषोत्तमम् ॥ १५ ॥

गत्वा तत्र सुरश्रेष्ठ कथं स नृपसत्तम ।

वाजिमेधेन विधिवदिष्टवान्पुरुषोत्तमम् ॥ १६ ॥

कथं स सर्वफलदे क्षेत्रे परमदुलभे ।

प्रासाद कारयामास चेष्ट त्रैलोक्यविश्रुतम् ॥ १७ ॥

कथं स कृष्ण राम च सुभद्रा च प्रजापते ।

निर्ममे राजशार्दूल क्षेत्र रक्षितवान्कथम् ॥ १८ ॥

कथं तत्र महीपाल प्रासादे भुवनोत्तमे ।

स्थापयामास मतिमान्कृष्णादीन्निदशार्चितान् ॥ १९ ॥

एतत्सर्वं सुरश्रेष्ठ विस्तरेण यथातथम् ।

यत्कुमर्हस्यशेषेण चरितं तस्य धीमतः ॥ २० ॥

न तृप्तिमधिगच्छामस्तव वाक्यामृतेन वै ।

श्रोतुमिच्छामहे ब्रह्मन्परं कौतूहलं हि नः ॥ २१ ॥

ब्रह्मोवाच ।

साधु साधु द्विजश्रेष्ठा यत्पृच्छध्वं पुरातनम् ।

सर्वपापहरं पुण्यं भुक्तिमुक्तिप्रदं शुभम् ॥ २२ ॥

पश्यामि तस्य चरितं यथावृत्तं कृते युगे ।

शृणुध्वं मुनिशार्दूलः प्रयताः संयतेन्द्रियाः ॥ २३ ॥

अवन्ती नाम नगरी मालये भुवि विश्रुता ।

यभूव तस्य नृपतेः पृथिवी ककुद्गोपमा ॥ २४ ॥

दृष्टपुष्टजनाकीर्णा दृढप्राकारतोरेणा ।

दृढयन्त्रार्गलद्वारा परिखाभिरलंकृता ॥ २५ ॥

नानावणिकसमाकीर्णा नानामाण्डसुचिक्रिया ।

रथ्यापणवती रम्या सुविमलचतुष्पथा ॥ २६ ॥

गृहगोपुरसंचाधा वीर्यामिः समलंकृता ।

राजहंसनिभैः शुभ्रैश्चित्रग्रीवैर्मनोहरैः ॥ २७ ॥

अनेकशतसाहस्रैः प्रासादैः समलंकृता ।

यज्ञोत्सवप्रमुदिता गीतवादित्रनिस्वना ॥ २८ ॥

नानावर्णपताकामिर्ध्वजैश्च समलंकृता ।

हस्त्यश्वरथसंकीर्णा पदातिगणसंकुला ॥ २९ ॥

नानायोधसमाकीर्णा नानाजनपदैर्युता ।
 ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः शूद्रैश्चैव द्विजातिभिः ॥ ३० ॥
 समृद्धा सा मुनिश्रेष्ठा चिद्वद्विः समलकृता ।
 न तत्र मलिना सन्ति न मूर्खा नापि निर्धनाः ॥ ३१ ॥
 न रोगिणो न हीनाङ्गा न द्यूतव्यसनान्विता ।
 सदा हृष्टा सुमनसो दृश्यन्ते पुरपा स्त्रिय ॥ ३२ ॥
 ब्रीडन्ति स्म दिवा रात्रौ हृष्टास्तत्र पृथक्पृथक् ।
 सुवेषा पुरुषास्तत्र दृश्यन्ते मृष्टकुण्डला ॥ ३३ ॥
 सुरुपा सुगुणाश्चैव दिव्यालकारभूषिता ।
 कामदेवप्रतीकाशा सर्वलक्षणलक्षिता ॥ ३४ ॥
 सुकेशा सुकपोलाश्च सुमुखा श्मश्रुधारिणः ।
 ह्यतार सर्वशास्त्राणां भेत्तार शत्रुबाहिनीम् ॥ ३५ ॥
 दातार सर्वरत्नानां भोक्तार सर्वसपदाम् ।
 स्त्रियस्तत्र मुनिश्रेष्ठा दृश्यन्ते सुमनोहरा ॥ ३६ ॥
 हसदारणगामिन्यः प्रफुल्लाम्भोजलोचनाः ।
 सुमध्यमा सुजघना पीनोन्नतपयोधरा ॥ ३७ ॥
 सुनेशाश्चारवदना सुकपोला स्थिरालकाः ।
 हावभावानतग्रीवा कर्णामरणभूषिता ॥ ३८ ॥
 धिग्वोष्ठयो रञ्जितमुखास्ताम्बूलेन विराजिताः ।
 सुवर्णाभरणोपेता सर्वालकारभूषिता ॥ ३९ ॥
 श्यामावदाता सुश्रोण्य काञ्चीनूपुरनादिताः ।
 दिव्यमातृगाम्बरधरा दिव्यगन्धानुलेपना ॥ ४० ॥

विदग्धाः सुभगाः कान्ताञ्चार्चङ्ग्य. प्रियदर्शनाः ।
 रूपलाघण्यसंयुक्ताः सर्वाः प्रहसिताननाः ॥ ४१ ॥
 क्रीडन्त्यश्च मदोन्मत्ताः समासु चत्वरेषु च ।
 गीतावाद्यकथालापे रमयन्त्यश्च ता. स्त्रिय ॥ ४२ ॥
 धारमुल्याश्च दृश्यन्ते नृत्यगातविशारदाः ।
 प्रेक्षणालापकुशला. सर्वयोपिदुगुणान्विताः ॥ ४३ ॥
 भग्याश्च तत्र दृश्यन्ते गुणाचार्या कुलस्त्रियः ।
 पतिव्रताश्च सुभगा गुणैः सर्वैरलंकृताः ॥ ४४ ॥
 धनैश्चोपवनैः पुण्यैरद्यानैश्च मनोरमैः ।
 देवतायतनैर्दिव्यैर्नानाकुसुमशोभितैः ॥ ४५ ॥
 शालैस्तालैस्तमालैश्च यशुलैर्नागवैसरैः ।
 पिप्पलैः कर्णिकारैश्च चन्दनागुरुचम्पकैः ॥ ४६ ॥
 पुंनागैर्नारिकेरैश्च पनसै. सरलद्रुमैः ।
 नारङ्गैर्लकुचैर्लोध्रैः सप्तपर्णैः शुभाञ्जनैः ॥ ४७ ॥
 चूतविल्वकदम्बैश्च शिशपैर्धवलादिभिः ।
 पाटलाशोकतगरैः करवीरैः सितैर्गैः ॥ ४८ ॥
 पीतार्जुनकमलातै. सिद्धेराम्रातकैस्तथा ।
 न्यग्रोधाश्वत्थकाश्रम्यै. पलाशैर्देवदारुभिः ॥ ४९ ॥
 मन्दारैः पारिजातैश्च तिलिप्पीकविभीनर्कैः ।
 प्राचीनामलकै. लृक्षैर्जम्बूशरीरपादपैः ॥ ५० ॥
 कालेयै. काञ्चनारैश्च मनुजर्म्यगन्दिन्युक्तैः ।
 यज्ञरागस्त्ययशुन्यैः शाग्रोटकदरीतकैः ॥ ५१ ॥

फट्कोलेर्मुचुबुन्दैश्च हिन्तालैर्धोजपूरकै ।

फेतकीघनपण्डैश्च अतिमुक्तै सङ्कुञ्जकै ॥ ५२ ॥

मल्लिकानुन्दयाणैश्च फदलीपण्डमण्डितै ।

मातुलुङ्गै पूगफलै करुणै सिन्धुवारकै ॥ ५३ ॥

यहुवारै कोविदारैर्बदरै सकरञ्जकै ।

अन्यैश्च विविधै पुष्पवृक्षैश्चान्यैर्मनोहरै ॥ ५४ ॥

लतागुटमैर्वितानैश्च उद्यानैर्नन्दनोपमै ।

सदा कुसुमगन्धाढ्यै सदा फलभरानतै ॥ ५५ ॥

नानापक्षिरतै रम्यैर्नानामृगगणावृतै ।

चकोरै शतपत्रैश्च भृङ्गारै प्रियपुत्रकै ॥ ५६ ॥

कलविट्कैर्मयूरैश्च शुकै कोकिलकैस्तथा ।

कपोतै खञ्जरीटैश्च श्येनै पारायणैस्तथा ॥ ५७ ॥

खगैश्चान्यैर्बहुविधै श्रोत्ररम्यैर्मनोरमै ।

सरित पुष्करिण्यश्च सरासि सुबहूनि च ॥ ५८ ॥

अन्यैर्जलाशयै पुण्यै कुमुदोत्पलमण्डितै ।

पद्मै सितेतरै शुभ्रै कर्हारैश्च सुगन्धिमि ॥ ५९ ॥

अन्यैर्बहुविधै पुष्पैर्जलजै सुमनोहरै ।

गन्धामोदकरैर्दिव्यै सर्वतुङ्कुसुमोज्ज्वलै ॥ ६० ॥

ह्रस्वकारण्डवाकीर्णैश्चक्रवाकोपशोमितै ।

सारसैश्च बलाकैश्च कूर्मैर्मत्स्यै सनककै ॥ ६१ ॥

जलपादै कदम्बैश्च पृथैश्च जलकुक्कुटै ।

खगैर्जलचरैश्चान्यैर्नानारवविभूषितै ॥ ६२ ॥

नानाघर्षैः सदा हृष्टैरञ्जितानि समन्ततः ।
 एवं नानाविधैः पुण्यैर्विविधैश्च जलाशयैः ॥ ६३ ॥
 विविधैः पादपैः पुण्यैरुद्यानैर्विविधैस्तथा ।
 जलस्थलचरैश्चैव विहगैश्चार्चधिष्ठितैः ॥ ६४ ॥
 देधतायतनैर्दिव्यैः शोमिता सा महापुरी ।
 तत्राऽऽस्ते भगवान्देवस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः ॥ ६५ ॥
 महाकालेति विख्यातः सर्वकामप्रदः शिवः ।
 शिवकुण्डे नरः स्नात्वा विधिवत्पापनाशने ॥ ६६ ॥
 देवान्पितॄन्पृष्वींश्चैव संतर्प्य विधिवद्भुजः ।
 गत्वा शिवालयं पश्चात्कृत्वा तं त्रिः प्रदक्षिणम् ॥ ६७ ॥
 अविश्य संयतो भूत्वा धौतयासा जितेन्द्रियः ।
 स्नानैः पुण्यैस्तथा गन्धैर्धूपैर्दीपैश्च भक्तिः ॥ ६८ ॥
 नैवेद्यैरपहारैश्च गीतवाद्यैः प्रदक्षिणैः ।
 दण्डघटप्रणिपातैश्च नृत्यैः स्तोत्रैश्च शंकरम् ॥ ६९ ॥
 संपूज्य विधिवद्भक्त्या महाकालं सहज्जिह्वम् ।
 अभ्वमेधसहस्रस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥ ७० ॥
 पापैः सर्वैर्विनिर्मुक्तो विमानैः सर्वकामिकैः ।
 आरुह्य त्रिदिवं याति यत्र शंमोर्निकेननम् ॥ ७१ ॥
 दिव्यरूपधरः श्रीमान्दिव्यालंकारभूषितः ।
 भुङ्क्ते तत्र परान्भोगान्यावदाभूतसंप्लवम् ॥ ७२ ॥
 शिवलोके मुनिश्रेष्ठा जरामरणवर्जितः ।
 पुण्यक्षयादिहाऽऽयातः प्रचरे ब्राह्मणे कुले ॥ ७३ ॥

चतुर्वेदी भवेद्विप्रः सर्वशास्त्रविशारदः ।
 योगं पाशुपतं प्राप्य ततो मोक्षमवाप्नुयात् ॥ ७४ ॥
 आस्ते तत्र नदी पुण्या शिषा नामेति विश्रुता ।
 तस्यां स्नातस्तु विधिवत्संतर्प्य पितृदेवताः ॥ ७५ ॥
 सर्वपापचिनिर्मुक्तो विमानवरमास्थितः ।
 भुङ्क्ते बहुविधान्भोगान्स्वर्गलोके नरोत्तमः ॥ ७६ ॥
 आस्ते तत्रैव भगवान्वेवदेयो जनार्दनः ।
 गोविन्दस्वामिनामाऽसौ भुक्तिमुक्तिप्रदो हरिः ॥ ७७ ॥
 तं दृष्ट्वा मुक्तिमाप्नोति त्रिसप्तकुलसंयुतः ।
 विमानेनार्कचर्णेन किङ्किणीजालमालिना ॥ ७८ ॥
 सर्वकामसमृद्धेन कामगेनास्थिरेण च ।
 उपगीयमानो गन्धर्वैर्विष्णुलोके महीयते ॥ ७९ ॥
 भुङ्क्ते च विविधान्कामान्निरातङ्को गतज्वरः ।
 आभूतसंप्लवं यावत्सुरूपः सुमगः सुखी ॥ ८० ॥
 कालेनाऽऽगत्य मतिमान्ब्राह्मणः स्यान्महीतले ।
 प्रवरे योगिनां गेहे वेदशास्त्रार्थतत्त्ववित् ॥ ८१ ॥
 घैष्णवं योगमास्थाय ततो मोक्षमवाप्नुयात् ।
 विष्णुस्वामिनामानं विष्णुं तत्रैव भो द्विजाः ॥ ८२ ॥
 दृष्ट्वा नरो वा नारी वा फलं पूर्वोदितं लभेत् ।
 अन्येऽपि तत्र तिष्ठन्ति देवाः शक्रपुरोगमाः ॥ ८३ ॥
 मातरश्च मुनिश्रेष्ठाः सर्वकामफलप्रदाः ।
 दृष्ट्वा तान्विधिवद्भक्त्या संपूज्य प्रणिपत्य च ॥ ८४ ॥

सर्वपापविनिर्मुक्तो नरो याति त्रिविष्टपम् ।
 एवं सा नगरी रम्या राजसिंहेन पालिता ॥ ८५ ॥
 निन्योत्सवप्रमुदिता यथेन्द्रस्यामरावती ।
 पुराष्टादशसंयुक्ता सुविस्तीर्णचतुष्पथा ॥ ८६ ॥
 धनुर्ज्याघोषनिनदा सिद्धसंगमभूयिता ।
 विद्याचक्षुषमूयिष्ठा वेदनिर्घोषनादिना ॥ ८७ ॥
 इतिहासपुराणानि शास्त्राणि विविधानि च ।
 काव्यालोककथाश्चैव श्रूयन्तेऽहर्निशं द्विजाः ॥ ८८ ॥
 एवं मया गुणाख्या सा तदु(सोज्ज)यिनी समुदाहृता ।
 यस्यां राजाऽमघत्पूर्वमिन्द्रद्युम्नो महामतिः ॥ ८९ ॥
 इति श्रीमहापुराणे आदिब्राह्मे स्वयंभुवद्विषंवादेऽयन्तिका-
 वर्णनं नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४३ ॥
 आदितः श्लोकानां समष्ट्यङ्का—३११३

अथ चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

इन्द्रद्युम्नस्यदक्षिणोदधितटगमनम्

ब्रह्मोवाच ।

तस्यां स नृपतिः पूर्वं कुर्यद्वाज्यमनुत्तमम् ।
 पालयामास मतिमान्प्रजाः पुत्रानिर्वारसान् ॥ १ ॥
 सत्यवादी महाप्राज्ञः शूरः सर्वगुणाकरः ।
 मतिमान्धर्मसंपन्नः सर्वशस्त्रभृतां धरः ॥ २ ॥

सत्यवाञ्छोलवान्दान्तः श्रोमान्यरपुरंजयः ।
 आदित्य इव तेजोभी रूपैराश्विनयोरिषि ॥ ३ ॥
 वर्धमानसुराश्चर्यः शक्तुल्यपराक्रमः ।
 शारदेन्दुरिषाऽऽभाति लक्षणेः समलंकृतः ॥ ४ ॥
 आहर्ता सर्वयज्ञानां हयमेधादिकृत्तथा ।
 दानैर्यज्ञैस्तपोभिश्च तत्सुख्यो नास्ति भूपतिः ॥ ५ ॥
 सुवर्णमणिमुक्तानां गजाश्वानां च भूपतिः ।
 प्रददौ विप्रमुख्येभ्यो यागे यागे महाधनम् ॥ ६ ॥
 हस्त्यश्वरथमुख्यानां कम्बलाजिनवाससाम् ।
 रत्नानां धनधान्यानामन्तस्तस्य न विद्यते ॥ ७ ॥
 एष सर्वधनैर्युक्तो गुणैः सर्वैरलंकृतः ।
 सर्वकामसमृद्धात्मा कुर्यग्राज्यमकण्टकम् ॥ ८ ॥
 तस्येयं मतिस्तपन्ना सर्वयोगेश्वरं हरिम् ।
 कथमाराधयिष्यामि भुक्तिमुक्तिप्रदं प्रभुम् ।
 विचार्य सर्वशास्त्राणि तन्त्राण्यागमविस्तरम् ।
 इतिहासपुराणानि वेदाङ्गानि च सर्वशः ॥ १० ॥
 धर्मशास्त्राणि सर्वाणि नियमानृषिमापितान् ।
 वेदाङ्गानि च शास्त्राणि विद्यास्थानानि यानि च ॥ ११ ॥
 गुरुं संसेव्य यत्नेन ब्राह्मणान्वेदपारगान् ।
 आधाय परमां फाष्टां कृतकृत्योऽभवत्तदा ॥ १२ ॥
 संप्राप्य परमं तत्त्वं घामुदेषाद्यमव्ययम् ।
 भ्रान्तिज्ञानादतीतं तु मुमुक्षुः संयतेन्द्रियः ॥ १३ ॥

कथमाराधयिष्यामि देवदेवं सनातनम् ।

पीतवस्त्रं चतुर्बाहुं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥ १४ ॥

वनमालावृतोरस्कं पद्मपत्रायतेक्षणम् ।

श्रीवत्सोरःसमायुक्तं मुकुटाद्गद्गदशोमितम् ॥ १५ ॥

स्वपुरात्स तु निष्क्रान्त उज्जयिन्यां प्रजापतिः ।

यत्नेन महता युक्तः सभृत्यः सपुरोहितः ॥ १६ ॥

अनुजग्मुस्तु तं सर्वे रथिनः शस्त्रपाणयः ।

रथैर्धिमानसंकाशैः पताकाध्वजसेवितैः ॥ १७ ॥

सादिनश्च तथा सद्यः प्राप्तोमरपाणयः ।

भद्रैः पवनसंकाशैरनुजग्मुस्तु तं नृपम् ॥ १८ ॥

हिमयत्संभवैर्मत्तैर्वारणैः पर्यतोपमैः ।

ईपादन्तैः सदा मत्तैः प्रचण्डैः पट्टिहायनैः ॥ १९ ॥

हेमकक्षैः सपताकेर्घण्टारवभिभूषितैः ।

अनुजग्मुश्च तं सर्वे गजयुद्धविशारदाः ॥ २० ॥

असंख्येयाश्च पादात्ता धनुःप्रासासिपाणयः ।

दिव्यमाल्याम्यधरा दिव्यगन्धानुलेपना ॥ २१ ॥

अनुजग्मुश्च तं सर्वे युवानो मृष्टकुण्डलाः ।

सर्वास्त्रकुशलाः शूराः सदा सङ्ग्रामलालसाः ॥ २२ ॥

अन्तःपुरनिवासिन्यः स्त्रियः सर्वाः खलकृताः ।

विर्घोष्टत्रासुदशनाः सर्वाभरणभूषिताः ॥ २३ ॥

दिव्यवस्त्रधराः सर्वा दिव्यमाल्यविभूषिताः ।

दिव्यगन्धानुलिप्ताङ्गाः शरच्चन्द्रनिमानता ॥ २४ ॥

सुमध्यमाश्चारुवेपाश्चारुकर्णालकाञ्चिताः ।

ताम्बूलरञ्जितमुखा रक्षिभिश्च सुरक्षिताः ॥ २५ ॥

यानैरुच्चावचैः शुभ्रैर्मणिकाञ्चनभूषितैः ।

उपगीयमानास्ताः सर्वा गायनैः स्तुतिपाठकैः ॥ २६ ॥

वेष्टिताः शस्त्रहस्तैश्च पद्मपत्रायतेक्षणाः ।

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्या अनुजग्मुश्च तं नृपम् ॥ २७ ॥

घणिग्रामगणाः सर्वे नानापुरनिवासिनः ।

धनै रत्नैः सुवर्णैश्च सदाराः सपरिच्छदाः ॥ २८ ॥

अस्त्रचिन्मयकाश्चैव ताम्बूलपण्यजीविनः ।

तृणविक्रयकाश्चैव काष्ठविक्रयकारकाः ॥ २९ ॥

रङ्गोपजीविनः सर्वे मांसविक्रयिणस्तथा ।

तैलविक्रयकाश्चैव घस्त्रचिन्मयकास्तथा ॥ ३० ॥

फलविक्रयिणश्चैव पत्रचिन्मयिणस्तथा ।

तथा जयसहाराश्च रजकाश्च सहस्रशः ॥ ३१ ॥

गोपाला नापिताश्चैव तथाऽन्ये घस्त्रसूचकाः ।

मेघपालाश्चाजपाला मृगपालाश्च हंसकाः ॥ ३२ ॥

भ्रान्त्यविक्रयिणश्चैव सक्तुविक्रयिणश्च ये ।

गुट्टविक्रयिकाश्चैव तथा लवणजीविनः ॥ ३३ ॥

गायना नर्तकाश्चैव तथा मङ्गलपाठकाः ।

शैलूपाः कथकाश्चैव पुराणार्थविशारदाः ॥ ३४ ॥

कथयः काव्यकर्तारो नानाकाव्यविशारदाः ।

विश्या गाढहाश्चैव मानारक्षणीक्षकाः ॥ ३५ ॥

व्योकारान्ताप्रकाराश्च कांस्यकाराश्च रुटकाः ।

कौपकाराश्चित्रकाराः कुन्दकाराश्च पाचकाः ॥ ३६ ॥

दण्डकाराश्चासिकाराः सुराधूनोपजीविनः ।

मत्ता दूताश्च कायस्था ये चान्ये कर्मकारिणः ॥ ३७ ॥

तन्तुपाया रुपकारा चार्तिकास्तैलपाटकाः ।

लावजीपास्तैत्तिरिका मृगपशुपजीविनः ॥ ३८ ॥

गजवैद्याश्च घैद्याश्च नखवैद्याश्च ये नराः ।

वृक्षवैद्याश्च गोवैद्या ये चान्ये छेददाहकाः ॥ ३९ ॥

एते नागरकाः सर्वे ये चान्ये नानुकीर्तिताः ।

अनुजामुन्तु राजान समस्तपुरवासिनः ॥ ४० ॥

यथा यजन्तं पितरं प्रामान्तरं समुत्सुकाः ।

अनुयान्ति यथा पुत्रास्तथा त तेऽपि नागराः ॥ ४१ ॥

एवं स नृपतिः श्रीमान्भूतः सर्वैर्महाजनैः ।

हस्त्यश्वरथपादानैर्जगाम च शनैः शनैः ॥ ४२ ॥

एवं गत्वा स नृपतिर्दक्षिणस्योदधेस्तटम् ।

सर्वैस्तैर्दोर्ध्रकालेन बलैरनुगतः प्रभुः ॥ ४३ ॥

ददर्श सागरं रम्यं नृत्यन्तमिव च स्थितम् ।

अनेकशतसाहस्रैरुर्मिमिश्रं समाकुलम् ॥ ४४ ॥

नानारक्षालय पूर्णं नानाप्राणिसमाकुलम् ।

चोचोतरङ्ग्यदुलं महाश्चर्यसमन्वितम् ॥ ४५ ॥

तीर्थराजं महाशब्दमपारं सुमयंकरम् ।

मेघघृन्दप्रतीकाशमगार्धं मकरालयम् ॥ ४६ ॥

मन्मथैः कूर्मैश्च शङ्खैश्च शुनिवान्नशङ्खैः ।
 शिङ्गुमारैः कर्पटैश्च वृत्तं सर्वमहापिप्लवः ॥ ४७ ॥
 लयणोद् हरे. स्थानं शयनस्य मर्दापतिम् ।
 सर्पपाण्डुरं पुण्यं सर्वपाण्डुराण्यप्रदम् ॥ ४८ ॥
 भनेपापनगर्भांश्च दानपाना समाध्रयम् ।
 शम्भुत्पारणिं दिव्यं देवयोनिमपां पतिम् ॥ ४९ ॥
 पिशिष्टं सर्वभूतानां प्राणिनां जीवधारणम् ।
 सुपवित्रं पवित्राणां मङ्गलानां च मङ्गलम् ॥ ५० ॥
 तीर्थानामुत्तमं तीर्थमव्ययं वादनां पतिम् ।
 चन्द्रपृष्ठिक्षयस्येव यस्य मानं प्रतिष्ठितम् ॥ ५१ ॥
 अभेद्यं सर्वभूतानां देवानाममृतालयम् ।
 वृत्पत्तिम्यतिमन्दारदेतुभूतं सनातनम् ॥ ५२ ॥
 उपजीव्यं च सर्वेषां पुण्यं नदनदीपतिम् ।
 दृष्ट्वा तं नृपतिश्चेष्टो विस्मयं परमं गतः ॥ ५३ ॥
 निवासमकरोत्तत्र धैर्यामासाद्य सागरीम् ।
 पुण्ये मनोहरे देवे सर्वभूमिगुणैर्युते ॥ ५४ ॥
 वृत्तं शालैः कदम्बैश्च पुंनागैः सरलद्रुमैः ।
 पतसैर्नारिकेलैश्च बहुलैर्नागकेसरैः ॥ ५५ ॥
 तालैः पिप्पलैः यज्जैर्नारङ्गैर्वीजपूरकैः ।
 शालैराभ्रातकैर्लोध्रैर्वकुलैर्वटुधारकैः ॥ ५६ ॥
 कपित्थैः कर्णिकारैश्च पाटलाशोकचम्पकैः ।
 दाडिमैश्च तमालैश्च पारिजातैस्तथाऽञ्जुनैः ॥ ५७ ॥

प्राचीनामलम्बैर्विल्वै प्रियगुचटखादिरै ।
 इड्दीसप्तपर्णैश्च अश्वत्थागस्त्यजम्बुकै ॥ ५८ ॥
 मधुकै कर्णिकारैश्च बहुचारै सतिन्दुकै ।
 पलाशप्रदरेर्नोपै सिद्धनिम्बशुभाचनै ॥ ५९ ॥
 धारकै कोटिदारैश्च मल्लतामलम्बैस्तथा ।
 इति हिन्तालकाङ्गोलै करञ्जै सविमातकै ॥ ६० ॥
 ससर्जमधुकाशमयै शालमलादेवदारुभि ।
 शाखोटकैर्निम्बवै बुग्मीकोष्ठहरातकै ॥ ६१ ॥
 गुग्गुलैश्चन्दनैर्वृक्षैस्तथैवागुरुपाण्डुलै ।
 जम्बीरकरुणैर्वृक्षैस्तिन्तिडारक्तचन्दनै ॥ ६२ ॥
 एव नानाविधैर्वृक्षैस्तथाऽन्यैर्घटपादपै ।
 कल्पद्रुमैर्नित्यफले सर्वतुङ्गसुमोत्करै ॥ ६३ ॥
 नानापक्षिष्ठैर्दिव्यैर्मत्तकोकिलनादितै ।
 मयूरवरसधुप्तै शुकसारिकसकुत्रै ॥ ६४ ॥
 हारीतैर्भृङ्गराजैश्च घातकैर्गहुपुत्रकै ।
 जीवजीवककाकोलै कलविड्कै कपोतकै ॥ ६५ ॥
 खगैर्नानाविधैश्चान्यै श्रोत्ररम्यैर्मनोहरै ।
 पुष्पिताम्रेषु वृक्षेषु कूजद्विश्चार्चधिष्ठितै ॥ ६६ ॥
 केतकीवनपण्डैश्च सदा पुष्पधरै सितै ।
 मल्लिकार्जुन्दुसुमैर्युधिकातगरैस्तथा ॥ ६७ ॥
 कुटजैर्वाणपुष्पैश्चअतिमुक्तै सकुञ्जकै ।
 मालतीकरवीरैश्च तथा कदलकाञ्चनै ॥ ६८ ॥

शन्यैर्नानाविधैः पुण्यैः सुगन्धैश्चाभ्युदयैः ।
 पनोद्यानोपवनजैर्नानाघर्षैः सुगन्धिमि ॥ ६६ ॥
 विद्याधरगणार्कीर्णैः सिद्धचारणसेवितैः ।
 गन्धर्वोरगरक्षोभिर्मूलाप्सरसकिन्नरैः ॥ ७० ॥
 मुनियक्षगणार्कीर्णैर्नानामरधनिषेधितैः ।
 मृगैः शाक्यैः सिद्धैर्वराहमहिषाकुलैः ॥ ७१ ॥
 तथाऽन्यैः पृथक्साराद्यैर्मृगैः सर्वत्र शोभितैः ।
 शार्दूलैर्दीप्तमासङ्गैस्तथाऽन्यैर्धनचारिमि ॥ ७२ ॥
 एव नानाविधैर्दृष्टैरुद्यानैर्नन्दनापमैः ।
 लतागुल्मवितानैश्च विविधैश्च जलाशयैः ॥ ७३ ॥
 हस्तकारण्ड्याकीर्णैः पद्मिनीरण्डमण्डितैः ।
 फाद्वैश्वैश्च पुष्पैर्हंसैश्चक्रवाकोपशोभितैः ॥ ७४ ॥
 कमलैः शतपत्रैश्च कङ्कारे कुमुदोत्पलैः ।
 खगेर्जलचरैश्चान्यैः पुण्यैर्जलसमुद्भवैः ॥ ७५ ॥
 पर्वतैर्दीप्तशिखरैश्चारुकरुन्दरमण्डितैः ।
 नानावृक्षसमाकीर्णैर्नानाधातुविभूषितैः ॥ ७६ ॥
 सर्वार्थसमयैः शृङ्गैः सर्वभूतालयैः शुभैः ।
 सर्वोपधिसमायुक्तैर्विपुलैश्चित्रसानुमि ॥ ७७ ॥
 एव सर्वैः समुदितैः शोभितैः सुमनोहरैः ।
 ददर्श स महीपालः स्थानत्रैलोक्यपूजितम् ॥ ७८ ॥
 दशयोजनविस्तीर्णं पञ्चयोजनमायतम् ।
 नानाश्चर्यसमायुक्तं क्षेत्रं परमदुलभम् ॥ ७९ ॥

इति श्रीमहापुराणे आदित्राहो स्वयम्भृपिसवादे क्षेत्रदर्शनं

नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४४ ॥

आदित श्लोकानां समष्ट्यङ्का — ३१६२

अथ पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ।

पुरुषोत्तमक्षेत्रवर्णनम्

मुनय ऊचुः ।

तस्मिन्क्षेत्रगरे पुण्ये वैष्णवे पुरुषोत्तमे ।

किं तत्र प्रतिमा पूर्वं न स्थिता वैष्णवी प्रभो ॥ १ ॥

येनासीं नृपतिस्तत्र गत्वा सयत्नवाहन ।

स्थापयामास कृष्ण च राम भद्रा शुभप्रदाम् ॥ २ ॥

सशयो नो महानत्र विस्मयश्च जगत्पते ।

श्रोतुमिच्छामहे सर्वं त्रिहि तत्कारणं च न ॥ ३ ॥

ब्रह्मोवाच ।

शृणुष्व पूर्वसंवृत्ता कथा पापप्रणाशिनीम् ।

प्रथम्यामि समासेन त्रिया पृष्ठं पुरा हरि ॥ ४ ॥

सुमेरो काञ्चने शृङ्गे सर्वाश्चर्यसमन्विते ।

सिद्धविद्याधरेयंश्चै किंनरैर्यशोमितं ॥ ५ ॥

देवदानवगन्धर्वनागागरप्सरसा गणे ।

मुनिभिर्गुह्यकै सिद्धै सौपर्णै समरुद्गणै ॥ ६ ॥

अन्यैर्द्वैचालयै साभ्यै कश्यपाद्यै प्रजेश्वरै ।
 घालखिल्यादिभिश्चैव शोभिते सुमनोहरे ॥ ७ ॥
 कर्णिकारवनैर्दिव्यै सर्वतुङ्कुसुमोत्करै ।
 जातरूपप्रतीकाशैर्भूषिते सूर्यसनिभै ॥ ८ ॥
 अन्यैश्च बहुभिर्बृक्षै शालतालादिभिर्वनै ।
 पुनागाशोकसरलन्यग्रोधाम्नातकार्जुनै ॥ ९ ॥
 पारिजाताम्रखदिरनीपयित्यकदम्यकै ।
 धवलादिरपालाशशीर्षामलकतिन्दुकै ॥ १० ॥
 नारिङ्गकोलयकुललोध्रदाडिमदारुकै ।
 सर्जैश्च कर्णैस्तगरै शिशिभूर्जयनिम्यकै ॥ ११ ॥
 अन्यैश्चकाञ्चनैश्चैव फलभारैश्चनामितै ।
 नानानुसुमगन्धाढ्यैर्भूषिते पुष्पपादपै ॥ १२ ॥
 मालतीयूधिकामल्लीनुन्दघाणकुरुण्टकै ।
 पाटलागस्त्यनुजमन्दारकुसुमादिभि ॥ १३ ॥
 अन्यैश्च विविधै पुष्पैर्मनस प्रीतिदायकै ।
 नानाविहगसघैश्च कृजद्विर्मधुरस्परै ॥ १४ ॥
 पुष्कोकिलरुतैर्दिव्यैर्मत्तयर्हिणनादितै ।
 एव नानाविधैर्बृक्षै पुष्पैर्नानाविधैस्तथा ॥ १५ ॥
 रणेर्नानाविधैश्चैव शोभिते सुरसेविते ।
 तत्र स्थित जगन्नाथ जगत्स्त्रिष्टारमग्नयम् ॥ १६ ॥
 सर्वलोकविधातार घामुदेवाख्यमग्नयम् ।
 प्रणम्य शिरसा देवी लोषानां हितकाम्यया ॥
 पप्रच्छेम महाप्रज्ञं पञ्चज्ञा समनुत्तमम् ॥ १७ ॥

श्रीरुवाच ।

ब्रूहि त्वं सर्वलोकेश संशयं मे हृदि स्थितम् ।
मर्त्यलोके महाश्वर्यं कर्मभूमौ सुदुर्लभम् ॥ १८ ॥
लोममोदप्रहप्रस्ते कामक्रोधमहार्णवे ।
येन मुच्येत देवेश अस्मात्संसारसागरात् ॥ १९ ॥
आचक्ष्व सर्वदेवेश प्रणतां यदि मन्त्रसे ।
त्यदृते नास्ति लोकेऽस्मिन्धका संशयनिर्णये ॥ २० ॥

ब्रह्मोवाच ।

श्रुत्यैवं घनं तस्या देवदेवो जनार्दन ।
प्रोवाच परया प्रीत्या परं सारामृतोपमम् ॥ २१ ॥

श्रीमगवानुवाच ।

सुलोपाय सुसाध्यश्चाभिरामश्च सुसफल ।
आप्ते तीर्थचरे देवि विख्यात पुरुषोत्तम ॥ २२ ॥
न तेन सदृशः कश्चिन्नृत्तिषु लोकेषु विद्यते ।
कीर्तनाद्यस्य देवेशि मुच्यते सर्वपातकैः ॥ २३ ॥
न विज्ञातोऽमरैः सर्वैर्न दैत्यैर्न च दानवैः ।
मरीच्याद्यैर्मुनिवरैर्गोपितं मे धरानने ॥ २४ ॥
तत्तेऽहं संप्रवक्ष्यामि तीर्थराज च सांग्रतम् ।
मायेनैकेन सुश्रोणि शृणुष्व धरवर्णिनि ॥ २५ ॥
धासीत्कल्पे समुत्पन्ने नष्टे स्थावरजङ्गमे ।
प्रलीना देवगन्धर्वदैत्यविद्याधरोरगाः ॥ २६ ॥

तमोभूतमिदं सर्वं न प्राज्ञायत किञ्चन ।
 तस्मिन्नागतिं भूतात्मा परमात्मा जगद्गुरुः ॥ २७ ॥
 श्रीमांस्त्रिमूर्तिर्हृद्दो जगत्कर्ता महेश्वरः ।
 घासुदेयंति चिद्धातो योगात्मा हस्तिश्वरः ॥ २८ ॥
 सोऽसृजयोगनिद्रान्ते नाभ्यम्भोरुदमध्यगम् ।
 पद्मपेशरसंकाशं ब्रह्माणं भूतमग्र्यम् ॥ २९ ॥
 तादृग्भूतस्ततो ब्रह्मा सर्वलोकमहेश्वरः ।
 पञ्चभूतसमायुक्तं सृजते च शनैः शनैः ॥ ३० ॥
 मात्रायोनीनि भूतानि स्थूलसूक्ष्माणि यानि च ।
 चतुर्विधानि सर्वाणि स्थावराणि चराणि च ॥ ३१ ॥
 ततः प्रजापतिर्ब्रह्मा चक्रे सर्वं चराचरम् ।
 संचिन्त्य मनसाऽऽत्मानं ससर्ज विविधाः प्रजाः ॥ ३२ ॥
 मरोच्चादीन्मुनीन्सर्वान्देवासुरपितृनपि ।
 यक्षविद्याधरांश्चान्यान्गङ्गाद्याः सरितस्तथा ॥ ३३ ॥
 नरघानरसिंहांश्च विविधांश्च विहंगमान् ।
 जरायूतण्डजान्देवि स्वेदजोद्भेदजांस्तथा ॥ ३४ ॥
 ब्रह्मक्षत्रं तथा वैश्यं शूद्रं चैव चतुष्टयम् ।
 अन्त्यजातांश्च म्लेच्छांश्च ससर्ज विविधान्पृथक् ॥ ३५ ॥
 यत्किञ्चिज्जीवसंज्ञं तु तूणगुल्मपिपीलिकम् ।
 ब्रह्मा भूत्वा जगत्सर्वं निर्ममे स चराचरम् ॥ ३६ ॥
 दक्षिणाङ्गे तथाऽऽत्मानं संचिन्त्य पुरुषं स्वयम् ।
 वामे चैव तु नारीं स द्विधा भूतमकल्पयत् ॥ ३७ ॥

ततः प्रभृति लोकेऽस्मिन्प्रजा मैथुनमंमवाः ।
 अधमोत्तममध्यान्व मम क्षेत्राणि यानि च ॥ ३८ ॥
 पयं संचिन्त्य देवोऽसौ पुरा सलिलयोनिजः ।
 जगाम ध्यानमास्थाय पातुदेवात्मिकां तनुम् ॥ ३९ ॥
 ध्यानमात्रेण देवेन स्वयमेव जनादनः ।
 तस्मिन्क्षणे समुत्पन्नः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ ४० ॥
 सहस्रशीर्षा पुरुषः पुण्डरीकनिभेक्षणः ।
 सलिलध्यानमेधामः धामाद्भ्यायत्सलक्षणः ॥ ४१ ॥
 अपश्यत्सदृसा तं तु ब्रह्मा लोकपितामहः ।
 आसनैरर्घ्यपाद्यैश्च अक्षनैरमिन्य च ॥ ४२ ॥
 तुष्टाय परमैः स्तोत्रैर्वित्तिञ्च सुममाहितः ।
 ततोऽहमुक्तवान्देवं ब्रह्माणं कमलोद्भवम् ॥
 कारणं यद् मां तात मम ध्यानस्य सांप्रतम् ॥ ४३ ॥

ब्रह्मोवाच ।

जगद्धिताय देवेश मत्पल्लोकैश्च दुर्लभम् ।
 स्वर्गद्वारस्य मार्गाणि यज्ञदानव्रतानि च ॥ ४४ ॥
 योगः सत्यं तपः श्रद्धा तीर्थानि विधधानि च ।
 विहाय सर्वमेतेषां सुखं तत्साधनं यद् ॥ ४५ ॥
 स्थानं जगत्पते महामुष्टरूपं च यदुच्यते ।
 सर्वेषामुत्तमं स्थानं ब्रूहि मे पुरुषोत्तम ॥ ४६ ॥
 विधातुर्वचनं श्रुत्या ततोऽहं प्रोक्तवान्प्रिये ।
 शृणु ब्रह्मन्प्रवक्ष्यामि निर्मलं भुवि दुर्लभम् ॥ ४७ ॥

उत्तमं सूर्यक्षेत्राणां धन्यं नक्षत्राणाम् ।
 गोब्राह्मणदितं पुण्यं चानुर्यर्ण्यमुणोदयम् ॥ ४८ ॥
 भुक्तिमुक्तिप्रदं नृणां क्षेत्रं परमदुर्लभम् ।
 मदापुण्यं ॥ सर्वेषां मिद्विदं ये पिनामह ॥ ४९ ॥
 तस्मादासां तस्मत्पत्रं तीर्थराजं सनातनम् ।
 विख्यातं परमं क्षेत्रं चतुर्युगनिषेधितम् ॥ ५० ॥
 सर्वेषामेव देवानामृषीणां ब्रह्मचारिणाम् ।
 दैत्यदानवसिद्धानां गन्धर्वोरगरक्षसाम् ॥ ५१ ॥
 नानाविद्याधराणां च स्थावरस्य चरस्य च ।
 उत्तमः पुरुषो यस्मात्तन्मात्म पुदयोत्तमः ॥ ५२ ॥
 दक्षिणस्योदधेस्तीरे न्यग्रोधो यत्र तिष्ठति ।
 दशयोजनविस्तीर्णं क्षेत्रं परमदुर्लभम् ॥ ५३ ॥
 यस्तु कल्पे समुत्पन्ने महदुत्सुकानियर्हणे ।
 विनाश नैवमभ्येति स्वयं तत्रैवमास्थितः ॥ ५४ ॥
 दृष्टमात्रे घटे तस्मिंश्छायायाः क्रम्य चासह्यम् ।
 ब्रह्महत्यात्प्रमुच्येत पापेष्वन्येषु का कथा ॥ ५५ ॥
 प्रदक्षिणा कृता यैस्तु नमस्कारश्च जन्तुभिः ।
 सर्वे विधूतपाप्मानस्ते गताः केशवालयम् ॥ ५६ ॥
 न्यग्रोधस्योत्तरे किञ्चिद्दक्षिणे केशवस्य तु ।
 प्रासादस्तत्र तिष्ठेत्तु पदं धर्ममयं हि तन् ॥ ५७ ॥
 प्रतिमां तत्र वै दृष्ट्या स्वयं देवेन निर्मिताम् ।
 अनायासेन वै यान्ति भुवनं मे ततो नराः ॥ ५८ ॥

गच्छमानांस्तु तान्प्रेक्ष्य एकदा धर्मराट्प्रिये ।
मदन्तिकमनुप्राप्य प्रणम्य शिरसाऽब्रवीत् ॥ ५४ ॥

यम उवाच ।

नमस्ते भगवन्देव लोकनाथ जगत्पते ।
क्षीरोदघासिनं देवं शेषभोगानुशायिनम् ॥ ६० ॥
घरं घरेण्यं घरदं कर्तारमकृतं प्रभुम् ।
विद्येश्वरमजं विष्णुं सर्वज्ञमपराजितम् ॥ ६१ ॥
नीलोत्पलदलय्यामं पुण्डरीकनिमेषणम् ।
सर्वज्ञं निर्गुणं शान्तं जगद्धातारमथ्ययम् ॥ ६२ ॥
सर्वलोकविधातारं सर्वलोकसुखावहम् ।
पुराणं पुरुषं धेयं व्यक्तायकं सनातनम् ॥ ६३ ॥
पराधराणां स्रष्टारं लोकनाथं जगद्गुरुम् ।
श्रीयत्सोरस्कसयुक्तं धनमालाविभूषितम् ॥ ६४ ॥
पीतवस्त्र चतुर्बाहु शङ्खचक्रगदाधरम् ।
हारकेयूरसंयुक्तं मुकुटाङ्गदधारिणम् ॥ ६५ ॥
सर्वलक्षणसंपूर्णं सर्वेन्द्रियविवर्जितम् ।
कूटस्थमचलं सक्षमं ज्योतिरूपं सनातनम् ॥ ६६ ॥
भावामावचिनिर्मुक्तं व्यापिनं प्रवृत्तेः परम् ।
नमस्यामि जगन्नाथमीश्वरं सुरादं प्रभुम् ॥ ६७ ॥
इत्येवं धर्मराजस्तु पुरा न्यग्रोधसंनिधौ ।
मनुत्वा नानाविधैः स्तोत्रैः प्रणाममकरोत्तदा ॥ ६८ ॥

त दृष्ट्वा तु महामागे प्रणत प्राञ्जलिस्थितम् ।
 स्तोत्रस्य कारणं देवि पृष्ट्वानहमन्तरुम् ॥ ६६ ॥
 वैद्यस्थत महाबाहो सचदेवोत्तमो ह्यसि ।
 किमर्थं स्तुनवान्मा त्वं सक्षेपात्तद्वृत्तवीहि मे ॥ ७० ॥

धर्मराज उवाच ।

अस्मिन्नायतने पुण्ये विख्याते पुरुषोत्तमे ।
 इन्द्रनीलमयी श्रेष्ठा प्रतिमा सार्वकामिकी ॥ ७१ ॥
 तां दृष्ट्वा पुण्डरीकाक्ष भागेनैकेन धृष्टया ।
 श्रेताख्य भयनं यान्ति निष्कामाश्चैव मानवा ॥ ७२ ॥
 अतः कर्तुं न शक्नोमि व्यापारमरिसूदन ।
 प्रसीद सुमहादेव सहर प्रतिमा विभो ॥ ७३ ॥
 श्रुत्वा वैद्यस्तस्यैतद्वाक्यमेतदुवाच ह ।
 यमं तां गोपयिष्यामि सिकताभिः समन्ततः ॥ ७४ ॥
 ततः सा प्रतिमा देवि बल्लिभिर्गोपिता मया ।
 यथा तत्र न पश्यन्ति मनुजाः स्वर्गकाङ्क्षिणः ॥ ७५ ॥
 प्रवृत्ताय बल्लिकैर्देवि जातरूपपरिच्छदैः ।
 यमं प्रस्थापयामास स्वां पुरीं दक्षिणां दिशम् ॥ ७६ ॥

ब्रह्मोवाच ।

लुप्तायां प्रतिमायां तु इन्द्रनीलस्य भो द्विजा ।
 तस्मिन्क्षेत्रवरे पुण्ये विख्याते पुरुषोत्तमे ॥ ७७ ॥
 यो भूतस्तत्र वृत्तान्तो देवदेवो जनार्दन ।
 त सर्वं कथयामास स तस्यै भगवान्पूरा ॥ ७८ ॥

इन्द्रद्युम्नस्य गमन क्षेत्रसदर्शनं तथा ।
 क्षेत्रस्य वर्णनं चैव प्रासादकरणं तथा ॥ ७६ ॥
 हयमेधस्य यजनं स्वप्नदर्शनमेव च ।
 लवणस्योदधेस्तीरे काष्ठस्य दर्शनं तथा ॥ ८० ॥
 दर्शनं पासुदेवस्य शिल्पिराजस्य च द्विजा ।
 निर्माणं प्रतिमायास्तु यथावर्णं विदोषत ॥ ८१ ॥
 स्थापनं चैव सर्वेषां प्रासादे भुवनोत्तमे ।
 यात्राकाले च विप्रेन्द्राः कल्पसर्कितनं तथा ॥ ८२ ॥
 मार्कण्डेयस्य चरितं स्थापनं शकरस्य च ।
 पञ्चतार्यस्य माहात्म्यं दर्शनं शूलपाणिन ॥ ८३ ॥
 वटस्य दर्शनं चैव व्युष्टिस्तस्य च भो द्विजा ।
 दर्शनं गलदेवस्य कृष्णस्य च विदोषत ॥ ८४ ॥
 सुमद्रायाश्च तत्रैव माहात्म्यं चैव सर्वशः ।
 दर्शनं नरसिंहस्य व्युष्टिसर्कितनं तथा ॥ ८५ ॥
 अनन्तपासुदेवस्य दर्शनं गुणसर्कितनम् ।
 श्वेतमाधवमाहात्म्यं स्वर्गद्वारस्य दर्शनम् ॥ ८६ ॥
 उदधेर्दर्शनं चैव स्नानं तर्पणमेव च ।
 समुद्रस्नानमाहात्म्यमिन्द्रद्युम्नस्य च द्विजा ॥ ८७ ॥
 पञ्चतार्यफलं चैव महाज्येष्ठं तथैव च ।
 स्थानं कृष्णस्य हस्तिनं पर्ययात्राफलं तथा ॥ ८८ ॥
 वर्णनं विष्णुलोकस्य क्षेत्रस्य च पुनः पुनः ।
 पूर्वं कथितवान्सर्वं तस्यैव स पुरुषोत्तम ॥ ८९ ॥

इति श्रीमहापुराणे आदिब्राह्मे स्वयंभुवःपिसंवादे पूर्ववृत्ता-
नुवर्णनं नाम षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४५ ॥

आदितः श्लोकानां समष्ट्यङ्काः—३२८१

अथ षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

पुरुषोत्तमक्षेत्रवर्णनम्

मुनय ऊचुः ।

श्रोतुमिच्छामहे देव फथाशेषं महीपतेः ।

तस्मिन्क्षेत्रे वरे गत्वा किं चकार नराधिपः ॥ १ ॥

ब्रह्मोवाच ।

शृणुध्वं मुनिशार्दूलाः प्रयक्ष्यामि समासतः ।

क्षेत्रसदर्शनं चैव कृत्यं तस्य च भूपतेः ॥ २ ॥

गत्वा तत्र महीपाल क्षेत्रे त्रैलोक्यविभ्रुते ।

वदर्श रमणीयानि स्थानानि सरितस्तथा ॥ ३ ॥

नदी तत्र महापुण्या विन्ध्यपादविनिर्गता ।

स्वित्रोपलेति विख्याता सर्वपापहरा शिवा ॥ ४ ॥

गङ्गा तुल्या महास्रोता दक्षिणार्णवगामिनी ।

महानदीति नाम्ना सा पुण्यतोया सखिहरा ॥ ५ ॥

दक्षिणस्योदधेर्गमं गताऽऽवर्तातिशोभिता ।

उभयोस्तटयोर्गम्या ग्रामाश्च नगराणि च ॥ ६ ॥

दृश्यन्ते मुनिशार्दूलाः सुसस्याः सुमनोहराः ।
 हृष्टपुष्टजनाकीर्णा वस्त्रालंकारभूषिताः ॥ ७ ॥
 ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रास्तत्र पृथक्पृथक् ।
 स्वधर्मनिरताः शान्ता दृश्यन्ते शुभलक्षणाः ॥ ८ ॥
 ताम्बूलपूर्णवदना मालादामबिभूषिताः ।
 घेदपूर्णमुखा विप्राः सपङ्कपदक्रमाः ॥ ९ ॥
 अग्निहोत्ररताः केचित्केचिदीपासनक्रियाः ।
 सर्वशास्त्रार्थकुशला यज्वानो भूरिदक्षिणाः ॥ १० ॥
 चत्परे राजमार्गेषु पनेयूपघनेषु च ।
 सभामण्डलहर्म्येषु देवतायतनेषु च ॥ ११ ॥
 इतिहासपुराणानि वेदाः साङ्गा सुलक्षणाः ।
 काव्यशास्त्रकथास्तत्र श्रूयन्ते च महाजनैः ॥ १२ ॥
 स्त्रियस्तद्देशवासिन्यो रूपयौघनगरिक्ताः ।
 संपूर्णलक्षणोपेता विस्तीर्णश्रोणिमण्डलाः ॥ १३ ॥
 सरोरुहमुखाः श्यामाः शरच्चन्द्रनिभानताः ।
 पीनोन्नतस्तनाः सर्वा समृद्ध्या चारुदर्शनाः ॥ १४ ॥
 सौवर्णवलयाम्रान्ता दिव्यैर्वस्त्रैरलंकृताः ।
 फदलीगर्मसंकाशाः पद्मकिञ्जल्कसप्रभाः ॥ १५ ॥
 विम्याधरपुटाः कान्ताः कर्णान्तायतलोचनाः ।
 सुमुखाश्चारुनेत्राश्च हावमावाचनामिताः ॥ १६ ॥
 काञ्चिपद्मपलाशाक्षयः काञ्चिदिन्दीचरेक्षणाः ।
 विद्युद्विस्पष्टदशनास्तन्वङ्मन्यश्च तथाऽपराः ॥ १७ ॥

कुटिलालकसंयुक्ताः सीमन्तेन धिराजिताः ।

ग्रीवामरणसंयुक्ता माल्यदामविभूषिताः ॥ १८ ॥

कुण्डलै रत्नसंयुक्ताः कर्णपूरैर्मनोहरैः ।

देवयोषित्प्रतीकाशा दृश्यन्ते शुभलक्षणाः ॥ १९ ॥

दिध्यगीतचरैर्धन्यैः क्रीडमाना वराङ्गनाः ।

घोणायेणुमृदङ्गैश्च पणयैश्चैव गोमुपैः ॥ २० ॥

शङ्खदुन्दुभिनिर्घोषैर्नानाचार्यैर्मनोहरैः ।

क्रीडन्त्यस्ताः सदा हृष्टा विलासिन्यः परस्परम् ॥ २१ ॥

एवमादि तथाऽनेकगीतवाद्यविशारदाः ।

दिवा रात्रौ समायुक्ताः कामोन्मत्ता वराङ्गनाः ॥ २२ ॥

भिक्षुषैलानसैः सिद्धैः स्नातकैर्यज्ञचारिभिः ।

मन्त्रसिद्धैस्तप सिद्धैर्यज्ञसिद्धैर्निषेवितम् ॥ २३ ॥

इत्येव ददृशे राजा क्षेत्रं परमशोभनम् ।

अत्रैवाऽऽराधयिष्यामि भगवन्तं सनातनम् ॥ २४ ॥

जगद्गुरुं परं देवं परं पारं परं पदम् ।

सर्वेश्वरेश्वरं विष्णुमनन्तमपराजितम् ॥ २५ ॥

इदं तन्मानस तीर्थं ज्ञात मे पुरुषोत्तमम् ।

कल्पवृक्षो महाकायो न्यग्रोधो यत्र तिष्ठति ॥ २६ ॥

प्रतिमा चेन्द्रनीलाख्या स्वयं देवेन गोपिता ।

न चात्र दृश्यते चान्या प्रतिमा वैष्णवी शुभा ॥ २७ ॥

तथा यत्नं करिष्यामि यथा देवो जगत्पतिः ।

प्रत्यक्षं मम चाम्येति विष्णुः सत्यपराक्रमः ॥ २८ ॥

यज्ञेर्दानैस्तपोमिश्र होमैर्ध्यानैस्तथाऽर्चनैः ।

दण्वासैश्च विधिवच्चरेयं व्रतमुत्तमम् ॥ २६ ॥

अनन्यमनसा चैव तन्मना नान्यमानसः ।

विष्णवायतनविन्यासे प्रारम्भं च करोम्यहम् ॥ २७ ॥

इति श्रीमहापुराणे आदित्राहो स्वयंभुमृषिसंवादे श्वेत्प्रवर्णनं नाम
षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४६ ॥

आदितः श्लोकानां समष्ट्यङ्का — ३३११

—

अथ सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ।

इन्द्रद्युम्नस्यप्रासादकरणार्थं राजा माह्वानम्

ब्रह्मोवाच ।

एवं स पृथिवीपालधिष्ठितयित्वा द्विजोत्तमा ।

प्रासादार्थं हरेस्तत्र प्रारम्भमकरोत्तदा ॥ १ ॥

आनाय्य गणकान्सर्धानाचार्यांश्छास्त्रपारगान् ।

भूमिं सशोध्य यत्नेन राजा तु परया मुदा ॥ २ ॥

प्राप्त्यर्णैर्ज्ञानसंपन्नैर्षेदशास्त्रार्थपारगैः ।

अमात्यैर्मन्त्रिमिथैष चास्तुपिशापिशारदैः ॥ ३ ॥

तेः साधं स समालोक्य सुमुहूर्ते शुभे दिने ।

सुचन्द्रतारसंयोगे प्रदानुमूल्यसंयुते ॥ ४ ॥

जयमङ्गलशब्दैश्च नानापाद्यैर्मनोहरैः ।

धेदाध्ययननिर्घोषैर्गोतिः सुमधुरस्वरैः ॥ ५ ॥

पुष्पलाजाक्षतेर्गन्धैः पूर्णकुम्भैः सक्षीपफैः ।

ददावस्यै सतो राजा ध्रुवया सुमादितः ॥ ६ ॥

दत्त्वैवमस्यै पिधिघदानाय्य स मर्हापतिः ।

फलङ्गाधिपतिं शूरमुत्कलाधिपतिं तथा ॥

फोशलाधिपतिं चैष तानुवाच तदा नृपः ॥ ७ ॥

राजोवाच ।

गच्छध्वं सहिताः सर्वे शिलार्थं सुसमादिताः ।

गृहीत्वा शिल्पिमुख्यांश्च शिलाकर्मविशारदान् ॥ ८ ॥

विन्ध्याचलं सुविस्तीर्णं बहुकन्दरशोभितम् ।

निरूप्य सर्वसानूनि च्छेदयित्वा शिलाः शुभाः ॥

संयाह्यन्तां च शकटैर्नौकामिर्मा विलम्बथ ॥ ९ ॥

ब्रह्मोवाच ।

एवं गन्तुं समादिश्य तान्नृपान्स मर्हापतिः ।

पुनरेषाव्रवीद्वाक्यं सामात्यान्स पुरोहितान् ॥ १० ॥

राजोवाच ।

गच्छन्तु दूताः सर्वत्र मामाऽऽज्ञां प्रवदन्तु ये ।

यत्र तिष्ठन्ति राजानः पृथिव्यां तान्सुशीघ्रगाः ॥ ११ ॥

हस्त्यश्वरथपादातैः सामात्यैः सपुरोहितैः ।

गच्छत सहिताः सर्वेन्द्रद्युम्नस्य शासनात् ॥ १२ ॥

ब्रह्मोवाच ।

एव दूता समानता राजा तेन महात्मना ।
 गत्वा तदा नृपानूचूर्चन तम्य भूपते ॥ १३ ॥
 श्रुत्वा तु ते तथा सर्वे दूताना वचन नृपा ।
 आजगमुस्त्वरिता सर्वे म्वसैन्यै परिवारिता ॥ १४ ॥
 ये नृपा पूर्वदिग्भागे ये च दक्षिणत स्थिता ।
 पश्चिमाया स्थिता ये च उत्तरापथमस्थिता ॥ १५ ॥
 प्रत्यन्तवासिनो येऽपि ये च सन्धिवासिन ।
 पार्श्वतीयाश्च ये केचित्तया ह्यपनिवासिन ॥ १६ ॥
 रथैर्नागै पदातैश्च वाजिमिर्धनविस्तरैः ।
 संप्राप्ता यदुशो विप्रा श्रुत्वेन्द्रध्वमशासनम् ॥ १७ ॥
 तानागतान्नृपान्दृष्ट्वा सामात्यान्सपुरोहितान् ।
 प्रोवाच राजा हृष्टात्मा कार्यमुद्दिश्य सादरम् ॥ १८ ॥

राजोवाच ।

शृणुष्व नृपशार्दूल यथा किञ्चिदुत्रवाम्यहम् ।
 मस्मिन्क्षेत्रवरे पुण्ये भुक्तिमुक्तिप्रद शिरे ॥ १९ ॥
 हयमेध महायज्ञ प्रासाद चैव धैर्यवम् ।
 कथं राज्ञोम्यहं कर्तुमिति चिन्ताकुल मन ॥ २० ॥
 भयद्वि सुसहायैस्तु सर्वमेत्करोम्यहम् ।
 यदि यूय सहया मे भवन् नृपसत्तमा ॥ २१ ॥

ब्रह्मोवाच ।

इत्येव वदमानस्य राजराजस्य धीमत ।
 सर्वे प्रमुदिता हृष्टा भूपास्ते तम्य शासनात् ॥ २२ ॥

पट्टपुर्धनरत्नैश्च सुवर्णमणिमौक्तिकैः ।
 कम्बलाजिनरत्नैश्च राङ्गचास्तरणैः शुभैः ॥ २३ ॥
 घञ्जयैर्दूर्यमाणिक्यैः पद्मरागेन्द्रनीलकैः ।
 गजैरश्वैर्धनैश्चान्यै रथैश्चैव करेणुभिः ॥ २४ ॥
 असंख्येयैर्वटुविधैर्द्रव्यैरुद्यावचैस्तथा ।
 शालित्रीह्रियवैश्चैव मापमुद्रतिलैस्तथा ॥ २५ ॥
 सिद्धार्थचणकैश्चैव गोधूमैर्मसुरादिभिः ।
 श्यामाकैर्मधुकैश्चैव नीवारैः सकुलत्थकैः ॥ २६ ॥
 अन्यैश्च विविधैर्धान्यैर्ग्राभ्यारण्यैः सहस्रशः ।
 बहुधान्यसहस्राणां तण्डुलानां च राशिभिः ॥ २७ ॥
 गव्यस्य हविषः कुम्भैः शतशोऽथ सहस्रशः ।
 तथाऽन्यैर्विविधैर्द्रव्यैर्भक्ष्यभोज्यानुलेपनैः ॥ २८ ॥
 राजानः पूरयामासुर्यर्त्तिकविदुद्रथसंभवैः ।
 तान्दृष्ट्वा यज्ञसंभारान्सर्वसंपत्समन्वितान् ॥ २९ ॥
 यज्ञकर्मविदो विप्रान्वेदवेदाङ्गपारमान् ।
 शास्त्रेषु निपुणान्दक्षान्कुशलान्सर्वकर्मसु ॥ ३० ॥
 ऋषीश्चैव महर्षीश्च देवर्षीश्चैव तापसान् ।
 ब्रह्मचारिगृहस्थांश्च घानप्रस्थान्यतीस्तथा ॥ ३१ ॥
 स्नातकान्ग्राह्याणांश्चान्यानग्निहोत्रे सदा स्थितान् ।
 आचार्योपाध्यायघरान्स्वाध्यायतपसाऽन्वितान् ॥ ३२ ॥
 सदस्याञ्छास्त्रकुशलांस्तथाऽन्यान्पाचकान्वहून् ।
 दृष्ट्वा तान्नृपतिः श्रीमानुवाच स्वं पुरोहितम् ॥ ३३ ॥

राजोवाच ।

ततः प्रयान्तु विद्वांसो ब्राह्मणा वेदपात्माः ।

वाजिमेधार्यसिद्ध्यर्थं देशं पश्यन्तु यज्ञियम् ॥ ३४ ॥

ब्रह्मोवाच ।

इत्युक्तः स तथा चक्रे वचनं तस्य भूपतेः ।

हृष्टः स मन्त्रिभिः सार्धं तदा राजपुरोहितः ॥ ३५ ॥

ततो ययौ पुरोधाञ्च प्राज स्थपतिभिः सह ।

ब्राह्मणानग्रतः कृत्वा कुशलान्यत्रकर्मणि ॥ ३६ ॥

तं देशं धीवरग्रामं सप्रतोलिखिटङ्गिणम् ।

कारयामास विप्रोऽसौ यज्ञवाटं यथाविधि ॥ ३७ ॥

प्रासादशतसंघाद्यं मणिप्रवरशोभितम् ।

इन्द्रसदृमनिभं रम्यं हेमरत्नविभूषितम् ॥ ३८ ॥

स्तम्भान्कनकचित्राञ्च तौरणानि बृहन्ति च ।

यज्ञायतनदेशेषु दृष्ट्वा शुद्धं च काञ्चनम् ॥ ३९ ॥

भन्त पुराणि राज्ञां च नानादेशनिवासिनाम् ।

कारयामास धर्मात्मा तत्र तत्र यथाविधि ॥ ४० ॥

ब्राह्मणानां च वैश्यानां नानादेशसर्मायुषाम् ।

कारयामास विधिवच्छालास्तत्राप्यनेकशः ॥ ४१ ॥

प्रियार्थं तस्य नृपनेराययुर्नृपसत्तमाः ।

रत्नान्यनेकान्यादाय स्त्रियश्चाऽऽययुस्सवे ॥ ४२ ॥

तेषां निर्विशतां स्वेषु शिविरेषु महात्मनाम् ।

नदतः सागरस्येव दिविस्पृगमवद्गुह्वनि ॥ ४३ ॥

तेषामभ्यागतानां च स राजा मुनिसत्तमा ।

व्यादिदेशाऽऽयतनानि शय्याश्चाप्युपचारतः ॥ ४४ ॥

भोजनानि चित्राणि शालीक्षुयवगोरसैः ।

उपेत्य नृपतिश्रेष्ठो व्यादिदेश स्वयं तदा ॥ ४५ ॥

तथा तस्मिन्महायज्ञे बहवो ब्रह्मवादिनः ।

ये च द्विजातिप्रचरास्तत्राऽऽसन्निजसत्तमाः ॥ ४६ ॥

समाजग्मुः सशिष्यास्ताःप्रतिजग्राह पार्थिवः ।

सर्वाश्च ताननुययौ यावदावसथानिति ॥ ४७ ॥

स्वयमेव महातेजा दम्भं त्यक्त्वा नृपोत्तमः ।

ततः कृत्वा स्वशिल्पं च शिल्पिनोऽन्ये च ये तदा ॥ ४८ ॥

कृत्स्नं यज्ञविधिं राक्षे तदा तस्मै न्यवेदयन् ।

ततः श्रुत्वा नृपश्रेष्ठः कृतं सघर्मतन्निवृतः ॥

हृष्टरोमाऽभयद्राजा सह मन्त्रिभिरव्युतः ॥ ४९ ॥

ब्रह्मोवाच ।

तस्मिन्यज्ञे प्रवृत्ते तु घाग्निमनो हेतुवादिभिः ।

हेतुवादान्वह्मनाहुः परस्परजिगीषवः ॥ ५० ॥

देवेन्द्रस्येव (?)विहितं राजसिंहेन भो द्विजाः ।

ददृशुस्तोरणान्यत्र शातकुम्भमयानि च ॥ ५१ ॥

शय्यासनविकाराश्च सुयहग्रजसंचयान् ।

घटपात्रीकटाहानि कलशान्वर्धमानकान् ॥ ५२ ॥

न कश्चिदसौघर्णमपश्यद्वसुधाधिपः ।

यूपांश्च शास्त्रपठितान्दारघान्देमभूषितान् ॥ ५३ ॥

उपक्षितान्यथाकालं विधियद्भूर्खिर्वस ।
 स्थलजा जलजा ये च पशव केचन द्विजा ॥ ५३ ॥
 सर्वानेव समानातानपश्यस्तत्र ते नृपा ।
 गाश्चैव महिषीश्चैव तथा वृद्धन्त्रियोऽपि च ॥ ५५ ॥
 औदकानि च सत्त्वानि श्वापदानि ययासि च ।
 जरायुजाण्डजातानि म्यद्देनान्युद्विदानि च ॥ ५६ ॥
 पर्येतान्युपधान्यानि भूतानि ददृशुश्च ते ।
 एव प्रमुदित स्रग्ं पशुतो घनधान्यत ॥ ५७ ॥
 यज्ञवाट नृपा दृष्ट्वा विस्मय परम गता ।
 ग्राह्यगाना विशा चैव ऋमिणामृद्धिमत् ॥ ५८ ॥
 पूर्णे शतसहस्रे तु विप्राणा तत्र भुवताम् ।
 दुन्दुभिर्मैघनिर्गोपाः सुदुम्भुरयाकरोत् ॥ ५९ ॥
 विननादासदृष्ट्यापि दिवसे दिवसे गते ।
 एव स घट्ट्रे यनस्तस्य रातस्तु धीमत ॥ ६० ॥
 धनस्य सुगृह्णिविप्रा उत्सगात्रिर्गतोपमान् ।
 दधिदुत्त्याश्च नृदृशु पयसश्च हृदास्तथा ॥ ६१ ॥
 जग्मूद्वापो हि सकलो नानाजनपदैर्युत ।
 द्विजाश्च तत्र दृश्यन्ते रातस्तस्य महामखे ॥ ६२ ॥
 तत्र यानि सहस्राणि पुरपाणा ततस्त ।
 गृहीत्वा भाजन जग्मुर्गृह्णन्ति द्विनसत्तमा ॥ ६३ ॥
 श्राविणश्चापि ते सर्वे सुमृष्टमणिरुण्डला ।
 पर्यत्रेपयन्दिजाताञ्छतशोऽथ सहस्रश ॥ ६४ ॥

विधिधान्यनुपानानि पुरुषा येऽनुयायिनः ।

ते ये नृपोपमोज्यानि ग्राहणेभ्यो ददुः मरु ॥ ६५ ॥

समागतान्चेद्विदो राक्षश्च नृधिर्याभ्यरान् ।

पूजां चपेः तदा तेषां विधियद्भूमूर्दिक्षिणः ॥ ६६ ॥

दिदेशादागताग्रामा महासङ्ग्रामशालिनः ।

नटनर्तककादीश्च गीतस्तुतिविशारदान् ॥ ६७ ॥

पत्न्यो मनोरमास्तस्य पानोन्नतपथोधराः ।

इन्दीवरपलाशाक्षयः शरच्चन्द्रनिभाननाः ॥ ६८ ॥

कुलशीलगुणोपेताः सहस्रैकं शताधिकम् ।

एवं तद्भूषणपरमपत्नीगणसमन्वितम् ॥ ६९ ॥

रत्नमालाकुलं दिव्यं पताकाध्यजसेवितम् ।

रत्नहारयुतं रम्यं चन्द्रकान्तिसुप्रभम् ॥ ७० ॥

करिणः पर्वताकारान्मदसिक्तान्महायलान् ।

शतशः कोटिसंघातैर्दन्तिभिर्दन्तभूषणैः ॥ ७१ ॥

घातवेगजयैरथैः सिन्धुजातैः सुशोभनैः ।

श्वेताश्वैः श्यामकर्णैश्च कोट्यनेकैर्जघान्वितैः ॥ ७२ ॥

संनद्धयद्भक्षैश्च नानाप्रहरणोद्यतैः ।

असंख्येयैः पदातैश्च देवपुत्रोपमैस्तथा ॥ ७३ ॥

इत्येवं ददृशे राजा यज्ञसंभारविस्तरम् ।

मुदं लेभे तदा राजा संहृष्टो वाक्यमब्रवीत् ॥ ७४ ॥

राजोवाच ।

मानयध्वं हयश्रेष्ठं सर्वलक्षणलक्षितम् ।

चारयध्वं पृथिव्यां धै राजपुत्राः सुसंयताः ॥ ७५ ॥

धर्मचिद्विश्च अत्र होमो विधीयताम् ।
 न्नागं च महिषं कृष्णसारमृगं द्विजान् ॥ ७६ ॥
 राहं च गाश्चैव सर्वाश्च पशुपालकान् ।
 च प्रवर्तन्तां प्रासादं वैष्णवं ततः ॥ ७७ ॥
 ष्व विप्रेभ्यो दीयता मनसेप्सितम् ।
 र रत्नकोट्यश्च ग्रामाश्च नगराणि च ॥ ७८ ॥
 समुद्रभूम्यश्च विषयाश्चैवमर्थिनाम् ।
 ने द्रव्यजातानि मनोज्ञानि यद्वनि च ॥ ७९ ॥
 याचमानानां नास्ति ह्येतन्न भापयेत् ।
 वर्ततां यज्ञो यावद्देवः पुरा त्विह ॥
 मम चाभ्येति यज्ञस्यास्य समीपतः ॥ ८० ॥

ग्रहोवाच ।

त्वा तदा धिप्रा राजासिंहो महाभुजः ।
 ष्वर्णसंघातं कीटीनां चैव भूषणम् ॥ ८१ ॥
 तसाहस्रं वाजिनो नियुतानि च ।
 चैव वृषभं स्वर्णशृङ्गीश्च धेनुकाः ॥ ८२ ॥
 सुरभीश्चैव कांस्यदोहाः पयस्विनीः ।
 त्स तु विप्रेभ्यो वेदविदुभ्यो मुदा युतः ॥ ८३ ॥
 से च महार्हाणि राङ्गवास्तराणानि च ।
 नि च शुभ्राणि प्रवालमणिमुत्तमम् ॥ ८४ ॥
 स महायज्ञे रत्नानि विविधानि च ॥ ८५ ॥

विविधान्यनुपानानि पुरुषा येऽनुयायिनः ।
 ते चै नृपोपभोज्यानि ब्राह्मणेभ्यो ददुः सह ॥ ६५ ॥
 समागतान्येदविदो राज्ञश्च पृथिवीश्वरान् ।
 पूजां चक्रे तदा तेषां विधिवद्भूरिदक्षिणः ॥ ६६ ॥
 दिग्देशादागताग्राहो महासङ्ग्रामशालिनः ।
 नटनर्तककादीश्च गीतस्तुतिविशारदान् ॥ ६७ ॥
 पत्न्यो मनोरमास्तस्य पीनोन्नतपयोधराः ।
 हन्दीवरपलाशाक्ष्यः शरच्चन्द्रनिभाननाः ॥ ६८ ॥
 कुलशीलगुणोपेताः सहस्रैकं शताधिकम् ।
 एवं तद्भूपपरमपत्नीगणसमन्वितम् ॥ ६९ ॥
 रत्नमाळाकुलं दिव्यं पताकाध्वजसेवितम् ।
 रत्नहारयुतं रम्यं चन्द्रकान्तिसमप्रभम् ॥ ७० ॥
 करिणः पर्यंताकारान्मदसिक्ताग्महायलान् ।
 शतशः कोटिसंघातैर्दन्तिभिर्दन्तभूषणैः ॥ ७१ ॥
 घातवेगजवैरश्वैः सिन्धुजातैः सुशोभनैः ।
 श्वेताश्वैः श्यामकर्णैश्च कोट्यनेकैर्जघाम्घितैः ॥ ७२ ॥
 संनद्धयद्दक्षैश्च नानाप्रहरणोद्यतैः ।
 असंख्येयैः पदातैश्च देवपुत्रोपमैस्तथा ॥ ७३ ॥
 इत्येवं ददृशे राजा यज्ञसंभारविस्तरम् ।
 मुदं लेभे तदा राजा संहृष्टो वाक्यमब्रवीत् ॥ ७४ ॥
 राजोवाच ।
 भानपध्वं हयश्रेष्ठं सर्वलक्षणलक्षितम् ।
 चारयध्वं पृथिव्यां चै राजपुत्राः सुसंयताः ॥ ७५ ॥

विद्वद्भिर्धर्मविद्विश्च अत्र होमो विधीयताम् ।
 कृष्णच्छाग च महिष कृष्णसारमृग द्विजान् ॥ ७६ ॥
 अनङ्घ्राह च गाश्चैव सर्वाश्च पशुपालकान् ।
 इष्टयश्च प्रवर्तन्ता प्रासाद वैष्णव तत ॥ ७७ ॥
 सर्वमेतद्य विप्रेभ्यो दायता मनसेप्सितम् ।
 त्रियश्च रत्नकोटयश्च ग्रामाश्च नगराणि च ॥ ७८ ॥
 सम्यक्समृद्धभूम्यश्च विषयाश्चैवमर्थिनाम् ।
 अन्यानि द्रव्यजातानि मनोज्ञानि यदृनि च ॥ ७९ ॥
 सर्वेषा याचमानाना नास्ति ह्येतन्न भाषयेत् ।
 तावत्प्रवर्तता यज्ञो याचद्देव पुरा त्विह ॥
 प्रत्यक्ष मम चाभ्येति यनस्यास्य समीपत ॥ ८० ॥

ब्रह्मोवाच ।

एवमुक्त्वा तदा विप्रा राजासिंहो महाभुज ।
 ददौ सुवर्णसंघात कोटीना चैव भूषणम् ॥ ८१ ॥
 करणशतसाहस्र वाजिनो नियुतानि च ।
 अयुद् चैव वृषभ स्वर्णशृङ्गाश्च घेनुका ॥ ८२ ॥
 सुरुषा सुरमाश्चैव कास्यदोहा पयस्विनी ।
 प्रायच्छत्स तु विप्रेभ्यो वेदविदुभ्यो मुदा युत ॥ ८३ ॥
 पासासि च महार्हाणि राङ्गवास्तराणानि च ।
 सुशुक्लानि च शुभ्राणि प्रवालमणिमुत्तमम् ॥ ८४ ॥
 मददात्स मदायाने रत्नानि विविधानि च ॥ ८५ ॥

घञ्जवैदूर्यमाणिक्यमुक्तिकाद्यानि यानि च ।

अलंकारवतीः शुभ्राः कन्या राजीवलोचनाः ॥ ८६ ॥

शतावि पञ्च विप्रेभ्यो राजा हृष्टः प्रदत्तवान् ।

स्त्रियः पीनपयोमाराः कञ्चुकैः स्वस्तनावृताः ॥ ८७ ॥

मध्यहीनाश्च सुश्रोण्यः पद्मपत्रायतेक्षणाः ।

हावमान्वितप्रीया बह्व्यो बलयभूषिताः ॥ ८८ ॥

पादनूपुरसंयुक्ताः पट्टदुकूलवाससः ।

एकैकशोऽवदात्तस्मिन्काम्याश्च कामिनीर्वह्नः ॥ ८९ ॥

अर्थिभ्यो ब्राह्मणादिभ्यो हयमेधे द्विजोत्तमाः ।

भक्ष्यं भोज्यं च संपूर्णं नानासंभारसंयुतम् ॥ ९० ॥

खण्डकाद्यान्यनेकानि स्थिरपक्वांश्च पिष्टकान् ।

अन्नान्यन्यानि मेध्यांश्च घृतपूरांश्च खाण्डवान् ॥ ९१ ॥

मधुरांस्तर्जितान्पूपानन्नं मृष्टं तुपाकिकम् ।

प्रीत्यर्थं सर्वसत्त्वानां दीयतेऽन्नं पुनः पुनः ॥ ९२ ॥

दत्तस्य दीयमानस्य धनस्यान्तो न विद्यते ।

एवं दृष्ट्वा महायशं देवदैत्याः सखा (चा)रणाः ॥ ९३ ॥

गन्धर्वाप्सरसः सिद्धा ऋषयश्च प्रजेश्वराः ।

विस्मयं परमं याता दृष्ट्वा क्रतुचरं शुभम् ॥ ९४ ॥

पुरोधो मन्त्रिणो राजा हृष्टास्तत्रैव सर्वशः ।

न तत्र मलिनः कश्चिन्न दीनो न श्लुघाऽन्वितः ॥ ९५ ॥

न घोषसर्गो न ग्लानिर्नाऽऽघयो व्याघयस्तथा ।

नाकालमरणं तत्र न दंशो न ग्रहा विषम् ॥ ९६ ॥

हृष्टपुष्टजना सर्वे तस्मिन्नाहो महोत्सवे ।

ये च तत्र तप सिद्धा मुनयश्चिरजीविन ॥ ६७ ॥

न जात तादृशं यज्ञ धनधान्यसमन्वितम् ।

एव स राजा विधिवद्वाजिमेध द्विजोत्तमा ॥

घृतं समापयामास प्रासाद वैष्णव तथा ॥ ६८ ॥

इति श्रीमहापुराण भाद्रिग्राह्ये स्वयम्भृपिसत्वादे प्रासादकरणं

नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥

आदित्यः श्लोकानां समष्ट्यङ्का — ३४०६

अथाष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ।

इन्द्रद्युम्नस्यप्रतिमानिर्माणम्

मुनय ऊचुः ।

ब्रूहि नो देवदेवेश यत्पृच्छाम पुरातनम् ।

यथा सा प्रतिमा पूर्णमिन्द्रद्युम्नेन निर्मिता ॥ १ ॥

केन चैव प्रकारेण तुष्टस्तस्मै स माधव ।

तत्सर्वं वद चास्माक पर कोतूहलं हि न ॥ २ ॥

ब्रह्मोवाच ।

शृणु ध मुनिशार्दूल पुराण वेदसमितम् ।

कथयामि पुरा वृत्तं प्रतिमाना च समवम् ॥ ३ ॥

प्रवृत्ते च महायज्ञे प्रासादे चैव निर्मिते ।

चिन्ता तस्य भूयाय प्रतिमार्थमहर्निशम् ॥ ४ ॥

न वेदुमि केन देवेशं सर्वेशं लोकपावनम् ।

सर्गस्थित्यन्तकर्तारं पश्यामि पुरुषोत्तमम् ॥ ५ ॥

चिन्ताधिप्टस्त्वभूद्राजा शेते रात्रौ दिवाऽपि न ।

त भुङ्क्ते विविधान्भोगान्न च स्नानं प्रसाधनम् ॥ ६ ॥

नैव घाघेन गन्धेन गायनैर्वर्णकैरपि ।

न गजैर्मदयुक्तैश्च न चानेकैहयान्वितैः ॥ ७ ॥

नेन्द्रनीलैर्महानीलैः पद्मरागमयैर्न च ।

सुवर्णरजताद्यैश्च घञ्जस्फटिकसंयुतैः ॥ ८ ॥

यदुरागार्थकामैर्वा न घनैरन्तरिक्षगैः ।

यभूव तस्य नृपतेर्मनसस्तुष्टिवर्धनम् ॥ ९ ॥

शैलमृदायजातेषु प्रशस्तं किं महीतले ।

धिष्णुप्रतिमायोग्यं च सर्वलक्षणलक्षितम् ॥ १० ॥

एतैरेव त्रयाणां तु दयितं स्यात्सुरार्चितम् ।

स्थापिते प्रीतिमभ्येति इति चिन्तापरोऽभवत् ॥ ११ ॥

पञ्चरात्रविधानेन संपूज्य पुरुषोत्तमम् ।

चिन्ताविष्टो महीपालः संस्तोतुमुपचकमे ॥ १२ ॥

इति श्रीमहापुराणे आदिब्राह्मे इन्द्रद्युम्नस्य प्रतिमानिर्माण-

विधानं नामाष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥

आदितः श्लोकानां समष्ट्यङ्काः—३४२१

अथैकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

इन्द्रद्युम्नकृतभगवत्स्तुतिः

वासुदेव नमस्तेऽस्तु नमस्ते मोक्षकारण ।
ब्राह्मि मा सर्वलोकेश जन्मससारसागरान् ॥ १ ॥
निर्मलग्नरसकाश नमस्ते पुरुषोत्तम ।
सर्कार्पण नमस्तेऽस्तु ब्राह्मि मा धरणीधर ॥ २ ॥
नमस्ते हेमगर्भाय नमस्ते भकरभुज ।
रतिकान्त नमस्तेऽस्तु ब्राह्मि मा सखरान्तक ॥ ३ ॥
नमस्तेऽम्बनसकाश नमस्ते भक्तवत्सल ।
अनिरुद्ध नमस्तेऽस्तु ब्राह्मि मा धरदो भव ॥ ४ ॥
नमस्ते विबुधावास नमस्ते विबुधप्रिय ।
नारायण नमस्तेऽस्तु ब्राह्मि मा शरणागतम् ॥ ५ ॥
नमस्ते बलिना श्रेष्ठ नमस्ते लाङ्गलायुध ।
चतुर्मुख जगद्धाम ब्राह्मि मा प्रपितामह ॥ ६ ॥
नमस्ते नीलमेघाय नमस्ते त्रिदशार्चित ।
ब्राह्मि विष्णो जगन्नाथ मय मा भवसागरे ॥ ७ ॥
प्रलयानलसकाश नमस्ते दितिनान्तक ।
नरसिंह महार्घार्य ब्राह्मि मा दीप्तलोचन ॥ ८ ॥
यथा रसातलादुर्वो त्वया दप्नोद्धृता पुरा ।
तथा महावराहस्त्व ब्राह्मि मा दुःखसागरात् ॥ ९ ॥

तथैता मूर्तयः कृष्ण वरदाः संस्तुता मया ।
 तवेमे बलदेवाद्याः पृथग्रूपेण संस्थिताः ॥ १० ॥
 अङ्गानि तव देवेश गरुत्माद्यास्तथा प्रभो ।
 दिक्पालाः मायुधाश्चैव केशवाद्यास्तथाऽच्युत ॥ ११ ॥
 ये चान्ये तव देवेश भेदाः प्रोक्ता मनीषिभिः ।
 तेऽपि सर्वे जगन्नाथ प्रसन्नायतलोचन ॥ १२ ॥
 मयाऽर्चिताः स्तुताः सर्वे तथा यूयं नमस्कृताः ।
 प्रयच्छत धरं मह्यं धर्मकामार्थमोक्षदम् ॥ १३ ॥
 भेदास्ते कर्तिता ये तु हरे संकर्षणादयः ।
 तव पूजार्थसंभूतास्ततस्त्वयि समाश्रिताः ॥ १४ ॥
 न भेदस्तव देवेश विद्यते परमार्थतः ।
 विविधं तव यद्रूपमुक्तं तद्रूपचारतः ॥ १५ ॥
 अद्वैतं त्वां कथं द्वैतं वक्तुं शक्नोति मानवः ।
 एकस्त्व हि हरे व्यापी चित्स्वभावो निरञ्जनः ॥ १६ ॥
 परमं तव यद्रूपं भावाभावविचर्जितम् ।
 निर्लेपं निर्गुणं श्रेष्ठं कृत्स्नमचलं ध्रुवम् ॥ १७ ॥
 सर्वोपाधिविनिर्मुक्तं सत्तामाश्रय्यस्थितम् ।
 तद्देवाश्च न जानन्ति कथं जानाम्यहं प्रभो ॥ १८ ॥
 अपरं तव यद्रूपं पीतवस्त्रं चतुर्भुजम् ।
 शङ्खचक्रगदापाणिमुकुटाङ्गदधारिणम् ॥ १९ ॥
 ध्रापत्सौररक्तसंयुतं धनमालाविभूषितम् ।
 तदर्चयन्ति विबुधा ये चान्ये तव मन्त्रयाः ॥ २० ॥

देवदेव सुरप्रेष्ठ भक्तानाममयप्रद ।
 ब्राह्मि मा पञ्चपत्राञ्च मग्न विषयमागर ॥ २१ ॥
 नान्य पश्यामि लोकेश यस्याह शरण त्रये ।
 त्वामृते कमलाकान्त प्रसाद मधुमृदन ॥ २२ ॥
 जगत्याग्रिशनैयुक्तो नानाहु र्वनिर्णीत ।
 हर्षशोकान्वितो मूढ कर्मपाशे मुयन्निव ॥ २३ ॥
 पतितोऽह महारोडे गोर मसारसागर ।
 विषमाङ्कुरुष्यागे रागद्वेषमयाकु ॥ २४ ॥
 इन्द्रियाचर्तगम्भार लब्धागोकोर्मिसकुले ।
 निगात्रये निराग्ये नि सारऽन्यन्तचञ्चले ॥ २५ ॥
 मायया मोहितस्तत्र भ्रमामि सुचिर प्रभो ।
 नानानातिमहन्त्रेषु जायमान पुन पुन ॥ २६ ॥
 मया जन्मान्यनेकानि सहस्राण्ययुतानि च ।
 विवित्रान्यनुभूतानि मसारऽस्मिन्नार्दन ॥ २७ ॥
 नैश साक्षा मयाऽघाता शास्त्राणि विविधानि च ।
 इतिहासपुराणानि तथा शिष्यान्यनकश ॥ २८ ॥
 असतोपाद्य मतोया सचथापचया त्रया ।
 मया प्राप्ता जगत्राय क्षयवृद्ध्यश्रयेतरा ॥ २९ ॥
 भार्यारिमित्रशत्रूना वियोगा मगमास्तथा ।
 पितरो विवित्रा दृष्टा मातरऽप्य तथा मया ॥ ३० ॥
 दुःखानि चानुभूतानि यानि सौख्यान्यनेकश ।
 प्राप्ताऽप्य चान्त्रया पुत्रा भ्रातरा ज्ञानयस्तथा ॥ ३१ ॥

मयोपितं तथा स्त्रीणां कोष्ठे विष्मूत्रपिच्छले ।

गर्भवासे महादुःखमनुभूतं तथा प्रमो ॥ ३२ ॥

दुःखानि यान्यनेकानि चाल्ययौवनगोचरे ।

घार्धके च हृषीकेश तानि प्राप्तानि वै मया ॥ ३३ ॥

मरणे यानि दुःखानि यममार्गे यमालये ।

मया तान्यनुभूतानि नरके यातनास्तथा ॥ ३४ ॥

कुमिकीटद्रुमाणां च हस्त्यश्वमृगपक्षिणाम् ।

महिषोद्भगवां चैव तथाऽन्येषां घनौकसाम् ॥ ३५ ॥

द्विजातीनां च सर्वेषां शूद्राणां चैव योनिषु ।

धनिनां क्षत्रियाणां च दरिद्राणां तपस्विनाम् ॥ ३६ ॥

नृपाणां नृपभृत्यानां तथाऽन्येषां च देहिनाम् ।

गृहेषु तेषामुत्पन्नो देव चाहं पुनः पुनः ॥ ३७ ॥

गतोऽस्मि दासतां नाथ भृत्यानां बहुशो नृणाम् ।

दरिद्रत्वं चेभ्यस्तत्त्वं स्यामित्त्वं च तथा गतः ॥ ३८ ॥

हतो मया हताध्यान्ये घातितो घातितास्तथा ।

दत्तं ममान्यैरन्येभ्यो मया दत्तमनेकशः ॥ ३९ ॥

पितृमानृमुहृद्भ्रातृफलव्राणां कृतेन च ।

धनिनां ध्योत्रियाणां च दरिद्राणां तपस्विनाम् ॥ ४० ॥

उक्तं दैन्यं च पिविषं त्यक्त्वा लज्जां जनार्दन ।

देवतिर्यङ्मनुष्येषु स्यादरेषु चरेषु च ॥ ४१ ॥

न पिबते तथा स्थानं यत्राहं न गतः प्रमो ।

कदा मे नरके धामः कदा एषो जगत्पते ॥ ४२ ॥

कदा मनुष्यलोकेषु कदा तिर्यग्गतेषु च ।

जलयन्त्रे यथा चक्रे घटी रज्जुनिबन्धना ॥ ४३ ॥

यानि चोर्ध्वमधश्चैव कदा मध्ये च तिष्ठति ।

तथा चाहं सुरश्रेष्ठ कर्मरज्जुसमावृतः ॥ ४४ ॥

अधोर्ध्वं तथा मध्ये भ्रमन्गच्छामि योगतः ।

एवं संसारचक्रेऽस्मिन्मरवे रोमहर्षणे ॥ ४५ ॥

भ्रमामि सुचिरं कालं नास्तं पश्यामि कर्हिचित् ।

न जाने किं करोम्यत्र हरे व्याकुलिनेन्द्रियः ॥ ४६ ॥

शोकनृष्णामिभूतोऽहं कांदिशोको विचेतनः ।

इदानीं त्वामहं देव विह्वलः शरणं गतः ॥ ४७ ॥

आहि मां दुःखिनं कृष्ण मग्नं संसारसागरे ।

रूपां कुरु जगन्नाथ भक्तं मां यदि मन्यसे ॥ ४८ ॥

त्यदृते नास्ति मे यन्धुर्योऽर्मी चिन्तां करिष्यति ।

देव त्वां नाथमासाद्य न भयं मेऽस्मि कुरुचित् ॥ ४९ ॥

जीविते मरणे चैव योगक्षेमेऽथ वा प्रभो ।

ये तु त्वां विधिवद्देव नार्चयन्ति नराधमाः ॥ ५० ॥

मुगतिस्तु कथं तेषां भवेन्मंसारयन्धनात् ।

किं तेषां कुलशोभेन विद्यया जीविनेन च ॥ ५१ ॥

येषां न जायते भक्तिर्जगद्धातरि केनवे ।

प्रकृतिं त्वासुरो प्राप्य ये त्वां निन्दन्ति मोहिताः ॥ ५२ ॥

पतन्ति नरके घोरे जायमानाः पुन पुनः ।

न तेषां निष्कृतिस्तस्माद्विघ्ने नरकार्णवात् ॥ ५३ ॥

ये दूषयन्ति दुर्वृत्तास्त्वा देव पुरुषाधमा ।

यत्र यत्र भवेज्जन्म मम कर्मनिबन्धनात् ॥ ५४ ॥

तत्र तत्र हरे भक्तिस्त्वयि चास्तु दृढा सदा ।

आराभ्य त्वा सुरा दैत्या नराश्चान्येऽपि सयता ॥ ५५ ॥

अथापु परमा सिद्धिं कस्त्वा देव न पूजयेत् ।

न शक्नुवन्ति ब्रह्माद्या स्तोतु त्वा त्रिदशा हरे ॥ ५६ ॥

अथ मानुषबुद्ध्याऽह स्तौमि त्वा प्रकृते परम् ।

तथा ब्राह्मणभावेन सस्तुतोऽसि मया प्रभो ॥ ५७ ॥

तत्क्षमस्वापराध मे यदि तेऽस्ति दया मयि ।

वृत्तापराधेऽपि हरे क्षमा कुर्वन्ति साधव ॥ ५८ ॥

तस्मात्प्रसाद देवेश भक्तस्नेह समाश्रित ।

स्तुतोऽसि यन्मया देव भक्तिभावेन चेतसा ॥

साङ्ग भयतु तत्सर्वं घासुदेव नमोऽस्तु ते ॥ ५९ ॥

ब्रह्मोवाच ।

इत्थ स्तुतस्तदा तेन प्रसन्नो गदङ्घ्र्यज ।

दर्शो तस्मै मुनिश्रेष्ठा सकल मनसेप्सितम् ॥ ६० ॥

य सपूज्य जगन्नाथ प्रत्यह स्तौति मानव ।

स्तोत्रेणानेन मतिमान्स मोक्ष लभते ध्रुवम् ॥ ६१ ॥

त्रिमध्य यो जपेद्विद्वानिद स्तोत्रपरं शुचि ।

धर्मं न्यायं च धाम च मोक्ष च लभते नर ॥ ६२ ॥

य पठेच्छृणुयाद्वाऽपि ध्यापयेद्वा समाहित ।

स लोभं शाश्वतं विष्णोर्याति तिष्ठूतकम्प ॥ ६३ ॥

घन्यं पापहरं चेदं मुक्तिमुक्तिप्रदं शिवम् ।

गुह्यं सुदुर्लभं पुण्यं न देय यस्य कस्यचित् ॥ ६४ ॥

न नास्तिकाय मूर्खाय न कृनघ्नाय मानिने ।

न दुष्टमतये दद्यान्नाभक्ताय कदाचन ॥ ६५ ॥

दातव्यं भक्तियुक्ताय गुणशालान्विताय च ।

विष्णुभक्ताय शान्ताय श्रद्धानुष्ठानशालिने ॥ ६६ ॥

इदं समस्तात्रिणाशहेतु ,

कारुण्यसज्ज सुप्तमोक्षद च ।

अशेषवाञ्छाफलदं धरिष्ठ,

स्तोत्रमयोक्त पुण्योत्तमस्य ॥ ६७ ॥

ये तं सुसूक्ष्मं विमला मुरारि,

ध्यायन्ति नित्यं पुरय पुराणम् ।

ते मुक्तिभाज प्रविशन्ति विष्णुं,

मन्त्रैर्यथाऽऽऽयं द्रुतमध्यरात्री ॥ ६८ ॥

एक स देवो भवदुःखहन्ता,

पर परेषा न ततोऽस्ति चान्यत् ।

द्र(स्त्र)ष्टा स पाता स तु नाशकर्ता,

विष्णु समस्ताखिलसारमूत ॥ ६९ ॥

किं विद्यया किं स्वगुणैश्च तेषा,

यज्ञैश्च दानैश्च तपोभिरग्रै ।

येषा न भक्तिर्मवतीह वृष्णे,

जगद्गुरो मोक्षसुखप्रदे च ॥ ७० ॥

लोके स धन्यः स शुचिः सविद्वान्

मखैस्तपोभिः स गुणैर्वरिष्ठः ।

ज्ञाता स दाता स तु सत्यवक्ता,

यस्यास्ति भक्तिः पुरुषोत्तमाढ्ये ॥ ७१ ॥

इति श्रीमहापुराण आदिवाह्ये स्वयंभुवृषिसंवादे कारुण्यस्तव-

घर्णनं नामैकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४६ ॥

आदितः श्लोकानां समष्टयङ्काः—३४६२

—

अथ पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

प्रतिमोत्पत्तिकथनम्

ग्रहोपाच ।

स्तुत्यैयं मुनिशार्दूलाः प्रणम्य च सनातनम् ।

पासुदेवं जगन्नार्थं सर्वकामफलप्रदं ॥ १ ॥

चिन्तापिष्टो महोपालः कुशानास्तीर्य भूतले ।

षष्ठं च तन्मना भूत्या सुप्याप धरणीतले ॥ २ ॥

कथं प्रत्यक्षमस्येति देवदेवो जनार्दनः ।

मम चाऽऽर्तिहरो देवस्तदाऽसायिति चिन्तयन् ॥ ३ ॥

स्तुतस्य तस्य नृपतेर्षामुदेवो जगद्गुरुः ।

आत्मानं दशयामास शङ्खचक्रगदामृतम् ॥ ४ ॥

स ददर्श तु सप्रेमदेवदेव जगद्गुरुम् ।
 शङ्खचक्रधर देव गदाचक्रोग्रपाणिनम् ॥ ५ ॥
 शार्ङ्गबाणधर देव ज्वलत्तेजोतिमण्डलम् ।
 युगान्तादित्यवर्णाम नीलपैदूर्यसनिभम् ॥ ६ ॥
 सुपणा से तमार्त्तान षोडशार्त्तभुन शुभम् ।
 स चास्मै प्रात्रर्षीहारा साधु राजन्महामने ॥ ७ ॥
 क्रतुनाऽनेन दिव्येन तया भक्त्या च श्रद्धया ।
 तुष्टोऽस्मि ते महीपाल वृथा किमनुशोचसि ॥ ८ ॥
 यद्वा प्रतिमा राजजगत्पूज्या सनातनी ।
 यथा सा प्राप्यते भूप तदुपाय त्रयमि ते ॥ ९ ॥
 गतायामद्य शर्पयां निर्मले भास्वरोदिते ।
 सागरस्य जलस्यान्ते नानाद्रुमविभूषिणे ॥ १० ॥
 जल तथैव धेलाया दृश्यते तत्र र्व महत् ।
 लघणस्योद्ध राजस्तरङ्गै सममिप्लुतम् ॥ ११ ॥
 कूलान्ते हि महावृक्ष स्थित म्थलजलेषु च ।
 धेलामिर्हन्यमानश्च न चासी कम्पते द्रुम ॥ १२ ॥
 परशुमादाय हस्तेन ऊर्मरन्तम्वततो व्रज ।
 एकाका विहरन्नाजन्स न्व पश्यसि पादपम् ॥ १३ ॥
 ईदृक्चिह्नं समालोक्य छेदय त्वमशङ्कित ।
 छेद्यमान तु त वृक्ष प्रातरद्भुतदर्शनम् ॥ १४ ॥
 द्रष्टृणा तेनैव सचिन्त्य ततो भूपाल दर्शनात् ।
 कुरु ता प्रतिमा दिव्या जहि चिन्ता विमोहिनीम् ॥ १५ ॥

ब्रह्मोवाच ।

एवमुक्त्वा महाभागो जगामादर्शन हरि ।
 स चापि स्वप्नमालोक्य पर विस्मयमागत ॥ १६ ॥
 ता निशा स समुद्वीक्ष्य स्थितस्तद्गतमानस ।
 व्याहरन्वैष्णवान्मन्त्रा-सूक्तं चैव तदात्मकम् ॥ १७ ॥
 प्रगताया रजन्या ॥ उत्थितो नान्यमानस ।
 स स्नात्वा सागरे सम्यग्यथार्चद्विधिना तत ॥ १८ ॥
 दत्त्वा दानं विप्रेभ्यो ग्रामाश्च नगराणि च ।
 कृत्वा पौर्वाह्निकं कर्म जगाम स नपोत्तम ॥ १९ ॥
 न चाश्वो न पदातिश्च न गजो न च सारथि ।
 एकाकी स महाबला प्रविवेश महोपति ॥ २० ॥
 त ददर्श महावृक्षं तेजस्यन्तं महाद्रुमम् ।
 महातिगमदारोहं पुण्यं विपुलमेव च ॥ २१ ॥
 महोत्सेधं महाकायं प्रसुप्तं च जलान्तिके ।
 सान्द्रमाज्जिष्ठवर्णान्म नामजातिविधर्जितम् ॥ २२ ॥
 नरनाथस्तदा विप्रांश्च द्रुमं दृष्ट्वा मुदाऽन्वित ।
 परशुना शतयामास निशितेन दूढेन च ॥ २३ ॥
 द्वेधीकर्तुमनास्तत्र बभूवेन्द्रसखः स च ।
 निरीक्ष्यमाणे काण्ठे तु बभूवादुभुतदर्शनम् ॥ २४ ॥
 विश्वकर्मा च विष्णुश्च विप्ररूपधराद्युभौ ।
 आजगमतुर्महाभागौ तदा तुल्याग्रजन्मानौ ॥ २५ ॥

निःसारं दुःखबहुले कामक्रोधसमाकुले ।
 इन्द्रियावर्तकलिले दुस्तरे रोमहर्षणे ॥ ३५ ॥
 नानाव्याधिशतावर्ते जलबुद्बुदसंनिभे ।
 यतस्ते मतिरुत्पन्ना विष्णोरायाधनाय वै ॥ ३६ ॥
 धन्यस्थं नृपशार्दूल गुणैः सर्वैरलंकृत ।
 सप्रजा पृथिवी धन्या सशैलवनकानना ॥ ३७ ॥
 सपुरग्रामनगरा चतुर्यणैरलंकृता ।
 यत्र त्वं नृपशार्दूल प्रजाः पालयिता प्रभुः ॥ ३८ ॥
 एहो हि सुमहाभाग द्रुमेऽस्मिन्सुखशीतले ।
 आवाभ्यां सह तिष्ठ त्वं कथाभिर्धर्मसंश्रितः ॥ ३९ ॥
 अयं मम सहायस्तु भागतः शिल्पिनां वरः ।
 विश्वकर्मसमः साक्षात्त्रिपुणः सर्वकर्मसु ॥
 मयोद्दिष्टां तु प्रतिमां करोत्येष तटं त्यज ॥ ४० ॥

ग्रहोवाच ।

ध्रुवैव घवनं तस्य तदा राजा द्विजन्मनः ।
 सागरस्य तटं त्यक्त्वा गत्वा तस्य समीपतः ॥ ४१ ॥
 तस्यो स नृपतिश्रेष्ठो वृक्षच्छाये सुशीतले ।
 ततस्तस्मै स विश्वात्मा ददावाशां द्विजाकृतिः ॥ ४२ ॥
 शिल्पिमुख्याय चिप्रेन्द्राः कुरुष्व प्रतिमा इति ।
 कृष्णरूपं परं शान्तं पद्मपत्रायतेक्षणम् ॥ ४३ ॥
 श्रीवत्सकीस्तुमघरं शङ्खचक्रगदाधरम् ।
 गौराङ्गं क्षीरवर्णामं द्वितीयं म्वस्तिकाङ्कितम् ॥ ४४ ॥

लाङ्गुलास्त्रधरं देवमनन्ताग्र्यं महाबलम् ।

देवदानवगन्धर्वयक्षविद्याधरोरगैः ॥ ४० ॥

न चित्रानो हि तस्यान्तस्तेनानन्त इति स्मृतः ।

मणिर्नां घासुदेवस्य रुक्मवर्णां सुरोमनाम् ॥ ४१ ॥

सुतीयां घै सुमद्रां च सर्वलक्षणलक्षिनाम् ॥ ४२ ॥

ग्रहोवाच ।

श्रुत्वैतद्वचनं तस्य विश्वकर्मा सुकर्मवृत् ।

तन्क्षणान्कारयामास प्रतिमाः शुभलक्षणाः ॥ ४८ ॥

प्रथमं शुक्लवर्णामं शारदेन्दुसमप्रभम् ।

धारकाक्षं महाकायं स्फटाविकटमम्बकम् ॥ ४९ ॥

नीलाम्बरधरं चोग्रं बलं बलमदोद्धतम् ।

कुण्डलैकधरं दिव्यं गदामुगलधारिणम् ॥ ५० ॥

द्वितीयं पुण्डरीकाक्षं नीलजीमूतसनिभम् ।

अतर्सीपुष्पमंकाशं पद्मपत्रायनेक्षणम् ॥ ५१ ॥

पीतवाससमत्युग्रं शुभं श्रीधत्सलक्षणम् ।

चक्रपूर्णकरं दिव्यं सर्वपापहरं हरिम् ॥ ५२ ॥

तृतीयां स्वर्णवर्णाभां पद्मपत्रायनेक्षणाम् ।

विचित्रचम्रसंलभ्रां हारत्रेयूरभूषिताम् ॥ ५३ ॥

विचित्रामरणोपेतां रत्नहारावलम्बिताम् ।

पीनोन्नतकुचां रम्यां विश्वकर्मा विनिर्ममे ॥ ५४ ॥

स तु राजाऽद्भुतं दृष्ट्वा क्षणेनैकेन निर्मिताः ।

दिव्यवस्त्रयुगच्छन्ना नानारत्नैरलंकृताः ॥ ५५ ॥

सर्वलक्षणसपत्ना प्रतिमा सुमनोहरा ।

विस्मय परम गत्वा इदं घननमत्रवीत् ॥ ५६ ॥

इन्द्रद्युम्न उवाच

किं देवो समनुप्राप्तौ द्विजरूपधराद्युम्नौ ।

उभौ चाद्भुतकर्माणौ देववृत्ताघमानुर्यौ ॥ ५७ ॥

देवौ वा मानुर्यौ वाऽपि यक्षविद्याधरो युवाम् ।

किंतु ब्रह्महृषीकेशौ किं वसू किमुताश्विनौ ॥ ५८ ॥

न येद्वमि सत्यसद्भुमावौ मायाहूपेण सस्थितौ ।

युधा गतोऽस्मि शरणमात्मा तु मे प्रकाशयताम् ॥ ५९ ॥

इति श्री महापुराणे ब्राह्मे स्वयम्भुविसंवादे प्रतिमोत्पत्ति

कथन नाम पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥

आदित श्लोकानां सम्पट्यङ्का — ३५७१

अथैकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

भगवदिन्द्रद्युम्नसंवादकथनम्

श्रीभगवानुवाच ।

नाहं देवो न यक्षो वा न दैत्यो न च देवराट् ।

न ब्रह्मा न इन्द्रोऽहं विद्धि मां पुरुषोत्तमम् ॥ १ ॥

अर्तिहा सर्वलोकानामनन्तबलपोरुष ।

आराधनीयो भूतानामन्तो यस्य न विद्यते ॥ २ ॥

पट्टयते सर्वशास्त्रेषु वेदान्तेषु निगद्यते ।

यमाहुर्ज्ञानगम्येति घासुदेवेति योगिन ॥ ३ ॥

अहमेव स्वयं ब्रह्मा मह विष्णु शिवोऽप्यहम् ।

इन्द्रोऽहं देवराजश्च जगत्सयमनो यम ॥ ४ ॥

पृथिव्यादीनि भूतानि त्रेताग्रिर्दुर्लभमुद्भूतम् ।

घरुणोऽपा पतिश्चाह धरित्री च महीधर ॥ ५ ॥

यत्किञ्चिद्वाङ्मय लोके जगत्स्थाचरजङ्गमम् ।

चराचर च यद्विश्य मदन्यथास्ति किञ्चन ॥ ६ ॥

प्रीतोऽहं ते नृपश्रेष्ठ धर धरय सुवत ।

यदिष्टं तत्प्रयच्छामि हृदि यत्ते व्यवस्थितम् ॥ ७ ॥

मद्दर्शनमपुण्यानां स्वप्नान्तेऽपि न जायते ।

तत्र पुनर्दृढमक्तित्वात्प्रत्यक्षं दृष्टवानसि ॥ ८ ॥

ब्रह्मोवाच ।

श्रुत्वैव घासुदेवस्य घञ्चन तस्य भो द्विजा ।

रोमाञ्चितननुभूत्वा इदं स्तोत्रं जगौ नृप ॥ ९ ॥

राजोवाच ।

श्रियं कान्तं नमस्तेऽस्तु श्रीपते पीतवाससे ।

श्रीदं श्रीशं श्रीनिवासं नमस्ते श्रानिजेतन ॥ १० ॥

आद्यं पुण्यमीशानं सर्वेशं सर्वतोमुपमम् ।

निष्कलं परमं देवं प्रणतोऽस्मि सनातनम् ॥ ११ ॥

शब्दातीतं गुणातीतं भावामावबिबर्जितम् ।

निर्लेपं निर्गुणं सूक्ष्मं सर्वज्ञं सर्वमाचनम् ॥ १२ ॥

प्रावृण्मेघप्रतीकाशं गोघ्राह्यणहिते रतम् ।

सर्वेषामेव गोप्तारं व्यापिनं सर्वमाविनम् ॥ १३ ॥

शङ्खचक्रधरं देवं गदामुशलधारिणम् ।

नमस्ये धरद् देवं नीलोत्पलदलच्छविम् ॥ १४ ॥

नागपर्यङ्कुशयनं क्षीरोदार्यघशायिनम् ।

नमस्येऽहं हृषीकेशं सर्वपापहरं हरिम् ॥ १५ ॥

पुनस्त्वां देवदेवेशं नमस्ये धरद् विभुम् ।

सर्वलोकेश्वरं विष्णुं मोक्षकारणमध्ययम् ॥ १६ ॥

ब्रह्मावाच ।

एव स्तुतवा ॥ तं देवं प्रणिपत्य कृताञ्जलिः ।

उवाच प्रणतो भूत्वा निपत्य धरणीतले ॥ १७ ॥

राजोवाच ।

प्रीतोऽसि यदि मे नाथ वृणोमि धरमुत्तमम् ।

देवासुरा. सगन्धर्वा यक्षरक्षोमहोरगा. ॥ १८ ॥

सिद्धविद्याधराः साध्या. किंनरा गुह्यकास्था ।

ऋषयो ये महामागा नानाशास्त्रविशारदाः ॥ १९ ॥

परिव्राड्योगयुक्ताश्च वेदतत्त्वार्थचिन्तका. ।

मोक्षमार्गविदो येऽन्ये ध्यायन्ति परमं पदम् ॥ २० ॥

निर्गुणं निर्मलं शान्तं यत्पश्यन्ति मनीषिणः ।

तत्पदं गन्तुमिच्छामि त्वत्प्रसादात्सुदुर्लभम् ॥ २१ ॥

श्रीभगवानुवाच ।

सर्वं भवतु भद्रं ते यथेष्टं सर्वमाप्नुहि ।

भविष्यति यथाकामं मत्प्रसादान्न संशयः ॥ २२ ॥

दश वर्षसहस्राणि तथा नव शतानि च ।
 अविच्छिन्नं महाराज्यं कुरु त्वं नृपसत्तम ॥ २३ ॥
 प्रयास्यसि पदं दिव्यं दुर्लभं यत्सुरासुरैः ।
 पूर्णमनोरथं शान्तं गुह्यमव्यक्तमव्ययम् ॥ २४ ॥
 परात्परतरं सूक्ष्मं निर्लेपं निष्कलं ध्रुवम् ।
 चिन्ताशोकविनिर्मुक्तं क्रियाकारणवर्जितम् ॥ २५ ॥
 तदहं दर्शयिष्यामि क्षेयाख्यं परमं पदम् ।
 यं प्राप्य परमानन्दं प्राप्स्यसि परमां गतिम् ॥ २६ ॥
 कीर्तिश्च तव राजेन्द्र भवत्यत्र महीतले ।
 यावद्दुघना नभो यावद्यावच्चन्द्रार्कतारकम् ॥ २७ ॥
 यावत्समुद्राः सप्तीव यावन्मेघादिपर्यताः ।
 तिष्ठन्ति दिवि देवाश्च तावत्सर्वत्र चाव्यया ॥ २८ ॥
 इन्द्रद्युम्नसरो नाम तीर्थं यज्ञाङ्गसंभवम् ।
 यत्र स्नात्वा सकललोकं शक्रलोकमवाप्नुयात् ॥ २९ ॥
 दापयिष्यति यः पिण्डास्तत्रेऽस्मिन्सरसः शुभे ।
 कुलैकर्विशमुद्भृत्य शक्रलोकं गमिष्यति ॥ ३० ॥
 पूज्यमानोऽप्सरोभिश्च गन्धर्वैर्गौतनिस्वनेः ।
 विमानेन घसेत्तत्र यावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥ ३१ ॥
 सरसो दक्षिणे भामे नैऋत्यां तु समाश्रिते ।
 न्यग्रोधस्तिष्ठने तत्र तत्समीपे तु मण्डपः ॥ ३२ ॥
 केतकीवनसंछन्नो नानापादपसंकुलः ।
 नारिकेलैरसंख्येयैश्चम्पकैर्वकुलावृतैः ॥ ३३ ॥

अशोकैः कर्णिकारैश्च पुंनागैर्ना ॥
 पाटलाभ्रातसरलैश्चन्द्रनैर्दधद्रुमैः
 न्यग्रोधाभ्वत्थद्विरैः पारिजातैः
 हिन्तालैश्चैव तालैश्च ॥ ११ ॥
 करञ्जैर्लङ्कुचैः प्लक्षैः ॥ १२ ॥
 अमरैर्वहुविधैर्वृक्षैः शोभितः समलंछ
 भापाद्वयसिंसे पक्षे पञ्चम्यां ॥ १३ ॥
 ऋक्षे नेप्यन्ति नस्तत्र नीत्या सप्त ॥
 मण्डपे स्थापयिष्यन्ति सुवेश्याभिः
 प्रीडाचिशेयबहुलैर्नृत्यगीतमनोहरैः
 चामरैः स्वर्णदण्डैश्च वृज्जनैः ॥ १४ ॥
 धात्रयन्तस्तथाऽस्मभ्यं ॥ १५ ॥
 प्रह्वयारो यतिश्चैव स्नातकाश्च ॥
 धानप्रस्था गृहस्थाश्च ॥ १६ ॥
 नानाघर्णपदेः स्तोत्रैर्भृग्वज्रुः ॥
 कलिं यन्ति स्तुति ॥ १७ ॥

तपःश्रयादिहाऽऽगत्य मनुष्यो ब्राह्मणो भवेत् ।
कोटियनपतिः श्रीमांश्चतुर्वेदी भवेद्ब्रुवम् ॥ ४५ ॥

ब्रह्मोवाच ।

एवं तस्मै चरं दत्त्वा कृत्वा च समर्थं हरिः ।
अगामादर्शनं विप्राः सहितो विश्वकर्मणा ॥ ४६ ॥
स तु राजा तदा हृष्टो रोमाञ्चि वतनृद्धः ।
कृत्यकृत्यमिवाऽऽत्मानं मेने मंदर्शनादरैः ॥ ४७ ॥
ततः कृष्णं च रामं च सुमद्रां च यत्प्रदाम् ।
रथैर्धिमानसंकाशैर्मणिकाञ्चनविचित्रैः ॥ ४८ ॥
मंथाद्य तान्मदा राजामहामङ्गलनिःस्वनैः ।
आनयामास मतिमान्मामान्यः सपुरोहितः ॥ ४९ ॥
नानायादिप्रनिर्घोषैर्नानावेदम्भ्रतैः शुभैः ।
मंस्थाप्य च शुभे द्वेजे पवित्रे सुमनोहरे ॥ ५० ॥
ततः शुभतिर्यो काले नक्षत्रे शुभलक्षणे ।
प्रतिष्ठां कारयामास सुमुहूर्ते द्विजैः सह ॥ ५१ ॥
यथोक्तेन विधानेन विधिदृष्टेन कर्मणा ।
आचार्यानुमतेनैव सर्वं कृत्वा महीपतिः ॥ ५२ ॥
आचार्याय तदा दत्त्वा दक्षिणां विधिवत्प्रभुः ।
ऋत्विगम्यश्च विधानेन तथाऽन्येभ्यो धनं ददा ॥ ५३ ॥
कृत्वा प्रतिष्ठां विचित्रासादे भवनोत्तमे ।
स्थापयामास तान्सर्वान्विचिदृष्टेन कर्मणा ॥ ५४ ॥
ततः संपूज्य विधिना नानापुष्पैः सुगन्धिमिः ।

सुवर्णमणिमुक्ताद्यैर्नानावस्त्रैः सुशोभनैः ॥ ५५ ॥
 रत्नैश्च विविधैर्दिव्यैरासनैर्ग्रामपत्तनैः ।
 ददौ चान्यान्स विषयान्पुराणि नगराणि च ॥ ५६ ॥
 एवं बहुविधं दत्त्वा राज्यं कृत्वा यथोचितम् ।
 इष्ट्वा च विविधैर्यज्ञैर्दत्त्वा दानान्यनेकशः ॥ ५७ ॥
 कृतकृत्यस्ततो राजा त्यक्तसर्वपरिग्रहः ।
 जगाम परमं स्थानं तद्विष्णोः परमं पदम् ॥ ५८ ॥
 एवं मया मुनिश्रेष्ठाः कथितो धो नृपोत्तमः ।
 क्षेत्रस्य चैव माहात्म्यं किमन्यच्छ्रोतुमिच्छथ ॥ ५९ ॥

विष्णुरुवाच ।

श्रुत्वैवं वचनं तस्य ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः ।
 आश्चर्यं मेनिरे विप्राः पप्रच्छुश्च पुनर्मदा ॥ ६० ॥

मुनय ऊचुः ।

कस्मिन्काले सुरश्रेष्ठ गन्तव्यं पुरुषोत्तमम् ।
 विधिना केन कर्तव्यं पञ्चतीर्थमितिऽप्रभो ॥ ६१ ॥
 एकैकस्य च तीर्थस्य स्नानदानस्य यत्फलम् ।
 देवताप्रेक्षणे चैव ब्रूहि सर्वं पृथक्पृथक् ॥ ६२ ॥

ब्रह्मोवाच ।

निराहारः कुरुक्षेत्रे पादेनैकेन यस्तपेत् ।
 जितेन्द्रियो जितक्रोधः सप्तसंवत्सरायुतम् ॥ ६३ ॥

दृष्ट्वा सदा ज्येष्ठशुद्धादश्या पुरुषोत्तमम् ।
 रनोपवास प्राप्नोति तनोऽधिकतरं फलम् ॥ ६४ ॥
 तस्माज्ज्येष्ठे मुनिश्रेष्ठा प्रयत्नेन सुसयतै ।
 म्यर्गलोकेषु विप्राद्यैर्दृष्ट्य पुरुषोत्तम ॥ ६५ ॥
 पञ्चतीर्थं तु विधिवन्मृत्वा ज्येष्ठे नरोत्तम ।
 शुक्लपक्षस्य द्वादश्या पश्येत्तं पुरुषोत्तमम् ॥ ६६ ॥
 ये पश्यन्त्यप्यथ देव द्वादश्या पुरुषोत्तमम् ।
 ते विष्णुलोकमासाद्य न च्यवन्ते कदाचन ॥ ६७ ॥
 तस्माज्ज्येष्ठे प्रयत्नेन गन्तव्यं मो द्विजोत्तमा ।
 दृष्ट्वा तस्मिन्पञ्चतीर्थं द्रष्टव्यं पुरुषोत्तम ॥ ६८ ॥
 सुदूरस्थोऽपि यो भक्त्या कीर्तयेत्पुरुषोत्तमम् ।
 अहन्यहनि शुद्धात्मा सोऽपि विष्णुपुर व्रजेत् ॥ ६९ ॥
 यात्रा करोति कृष्णस्य भद्रया य समाहित ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोक व्रजेत्तर ॥ ७० ॥
 यत्र दृष्ट्वा हरेर्दृष्टात्प्रासादोपरि मस्थितम् ।
 महता मुच्यते पापाक्षरो भक्त्या प्रणम्य तत् ॥ ७१ ॥
 इति श्रीमहापुराणे आदिग्राह्ये स्वयंभुवःपुत्रादेः पुरुषोत्तम-
 वर्णनं नामैकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥

आदितः श्लोकानां सम्पष्टगङ्गा — ३६२२

अथ द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

मार्कण्डेयाख्यानम्

ब्रह्मोवाच ।

भासीत्कल्पे मुनिश्रेष्ठाः संप्रवृत्ते महाक्षये ।
नष्टेऽर्कचन्द्रे पवने नष्टे स्थावरजङ्गमे ॥ १ ॥
उदिते प्रलयादित्ये प्रचण्डे घनगर्जिते ।
विद्युदुत्पातसंघातैः संभग्ने तरुपर्वते ॥ २ ॥
लोके च सहते सर्वे महदुल्कानियर्हणे ।
शुष्केषु सूर्यतोयेषु सरःसु च खरित्सु च ॥ ३ ॥
ततः संवर्तको घृहिर्वायुना सह भो द्विजाः ।
लोकं तु प्राविशत्सर्वमादित्यैरुपशोभितम् ॥ ४ ॥
पश्चात्स पृथिवी मिथ्या प्रविश्य च रसातलम् ।
देवदानवयक्षाणां भयं जनयते महत् ॥ ५ ॥
निर्दहन्नागलोकं च यच्च किञ्चित्क्षितायिह ।
अधस्तान्मुनिशार्दूलाः सर्वं नाशयते क्षणात् ॥ ६ ॥
ततो योजनविंशानां सहस्राणि शतानि च ।
निर्दहत्याशुगो वायुः स च संवर्तकोऽनलः ॥ ७ ॥
सदेवासुरगन्धर्वं सयक्षोरगराक्षसम् ।
ततो दहति संदीप्तः सर्वमेव जगत्प्रभुः ॥ ८ ॥

प्रदोप्तोऽसौ महारौद्रः कल्पाग्निरितिसंश्रुतः ।
 महाज्वालो महार्चिष्मान्सप्रदीप्तमहास्वनः ॥ ९ ॥
 सूर्यकोटिप्रतोकाशो ज्वलन्निव स तेजसा ।
 त्रैलोक्यं चादहतूर्णं ससुरासुरमानुषम् ॥ १० ॥
 पृथिव्ये महाघोरे महाप्रलयदारुणे ।
 ऋषिः परमधर्मात्मा ध्यानयोगपरोऽभयम् ॥ ११ ॥
 एकः संतिष्ठने विप्रा मार्कण्डेयेति विश्रुतः ।
 मोहपाशैर्नियद्धोऽसौ क्षुत्तृष्णाकुलितेन्द्रियः ॥ १२ ॥
 स दृष्ट्वा तं महाबहिं शुष्ककण्ठोष्ठतालुकः ।
 तृष्णार्तः प्रस्त्रलन्विप्रास्तदाऽसौ भयविह्वलः ॥ १३ ॥
 यन्नाम पृथिवीं सर्वां कांदिशीको विचेतनः ।
 आतारं नाधिगच्छन्वै इतश्चेतश्च धावति ॥ १४ ॥
 न लेभे च तदा शर्म यत्र विश्राम्यता द्विजाः ।
 करोमि किं न जानामि यस्याहं शरणं व्रजे ॥ १५ ॥
 कथं पश्यामि तं देवं पुरुपेशं सनातनम् ।
 इति संचितयन्देवमेकाग्रेण सनातनम् ॥ १६ ॥
 प्राप्तर्वास्तत्पदं दिव्यं महाप्रलयकारणम् ।
 पुरुपेशमिति ख्यातं घटराजं सनातनम् ॥ १७ ॥
 त्वरायुक्तो मुनिश्चासौ न्यग्रोधम्यान्तिकं ययौ ।
 आसाद्य तं मुनिश्रेष्ठास्तस्य मूढे समाविशन् ॥ १८ ॥
 न कालाग्निमयं तत्र न चाङ्गाय्यपरंगम् ।
 न संवर्तागमस्तत्र न च वज्राशनिमृगम् ॥ १९ ॥

इति श्रीमहापुराणे आदिवाह्ये स्वयंभुवःपिसंवादे मार्कण्डेयेन
षट्दशतमं नाम द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५२ ॥

आदितः श्लोकानां समष्ट्यङ्काः—३६४१

—

अथ त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

मार्कण्डेयारूपानम्

ब्रह्मोवाच ।

ततो गजकुलप्रख्यास्तडिन्माला विभूषिताः ।
समुत्तस्थुर्महामेघा नभस्यद्भुतदर्शनाः ॥ १ ॥
केचिन्नीलोत्पलश्यामाः केचित्कुमुदसंनिभाः ।
केचित्किञ्जल्कसंकाशाः केचित्पीताः पयोधराः ॥ २ ॥
केचिद्भरितसंकाशाः काकाण्डसंनिभास्तथा ।
केचित्कमलपत्राभाः केचिद्भिद्गुलसंनिभाः ॥ ३ ॥
केचित्पुरवराकाराः केचिद्गिरिषरोपमाः ।
केचिदञ्जनसंकाशाः केचिन्मरकतप्रभाः ॥ ४ ॥
चिद्गन्मालापिनद्वाङ्गाः समुत्तस्थुर्महाघनाः ।
घोररूपा महाभागा घोरस्वननिनादिताः ॥ ५ ॥
ततो जलधराः सर्वे समावृण्वन्नभस्तलम् ।
तैरियं पृथिवी सर्वा सपर्वतवनाकरा ॥ ६ ॥

आपूरिता दिश सर्वा सन्निवेशपङ्क्तुता ।
 ततस्ते जग्दा घोरा धारिणा मुनिसत्तमा ॥ ७ ॥
 सर्वतः प्लावयामासुश्चोदिता परमेष्ठिता ।
 धर्ममाणा महातोय पूरयन्तो धमुधराम् ॥ ८ ॥
 सुगौरमशिर रौद्र नाशयन्ति स्म पावकम् ।
 ततो द्वादश पयाणि पयोदा समुपप्लवे ॥ ९ ॥
 धारामि पूरयन्तो यै चोद्यमाना महात्मना ।
 तत्र समुद्रा स्यां त्रैलोक्यमतिप्रामन्ति भो द्विजा ॥ १० ॥
 पर्यताश्च व्यशीर्यन्त महा चाप्सु निमज्जन्ति ।
 सर्वतः सुमहाभ्रान्तास्ते पयोऽत्र नमस्तत्रम् ॥ ११ ॥
 स्रष्टृष्वित्वा नश्यन्ति पायुयेनसमाहता ।
 ततस्त्र माग्न घोरं न विष्णुमुनिसत्तमा ॥ १२ ॥
 आदिपटुमात्रयो देव पा वा स्रविति भो द्विजा ।
 तस्मिन्नेकाण्यं घोरे नष्टे स्याद्वज्रद्वये ॥ १३ ॥
 नष्टे देवासुग्नरे यक्षगक्षसवर्जिते ।
 ततो मुनि म विजान्तो यथावा च पुण्योत्तमम् ॥ १४ ॥
 ददर्श चक्रगन्त्रीय जग्पूर्णा धमुधराम् ।
 नापश्यत्त घट नोर्ध्वो न त्रिणादि न भास्कम् ॥ १५ ॥
 न चन्द्रार्काग्निपवन न देवासुगपश्रगम् ।
 तस्मिन्नेकाण्यं घोरं तमोभूने निराश्रये ॥ १६ ॥
 निमज्जन्स तदा विद्या सततमुपचक्रमे ।
 यन्नामासौ मुनिश्चाऽऽर्त इत्यथेतश्च सप्लवन् ॥ १७ ॥

निममज्ज तदा विप्रास्त्रातारं नाधिगच्छति ।

एवं तं विह्वलं दृष्ट्वा कृपया पुरुषोत्तमः ॥

प्रोवाच मुनिशार्दूलस्तदा ध्यानेन तोषितः ॥ १८ ॥

श्रीभगवानुवाच ।

घटस श्रान्तोऽसि बालस्त्वं भक्तत्र मम सुव्रत ।

आगच्छाऽऽगच्छ शीघ्रं त्वं मार्कण्डेय ममान्तिकम् ॥ १९ ॥

मा त्वयैव च भेतव्यं संप्राप्तोऽसि ममाग्रतः ।

मार्कण्डेय मुने धीर बालस्त्वं श्रमपीडितः ॥ २० ॥

ब्रह्मोवाच ।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा मुनिः परमकोपितः ।

उवाच स तदा विप्रा विस्मितश्चाभवन्मुहुः ॥ २१ ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

कोऽय नान्ना कीर्तयति तपः परिभवन्निव ।

यदुवर्षसहस्राख्यं धर्पयन्निव मे वपुः ॥ २२ ॥

न ह्येव समुदाचारो देवेष्वपि समाहितः ।

मां ब्रह्मा स च देवेशो दीर्घायुरिति भाषते ॥ २३ ॥

कस्तपो घोरशिरसो ममाद्य त्यक्तजीवितः ।

मार्कण्डेयेति चोक्त्वा भन्मृत्युं गन्तुमिहेच्छति ॥ २४ ॥

ब्रह्मोवाच ।

एवमुक्त्वा तदा विप्राश्चिन्ताविष्टोऽभवन्मुनिः ।

किं स्वप्नोऽयं मया दृष्टः किंवा मोहोऽयमागतः ॥ २५ ॥

इत्थं चिन्तयतस्तस्य उत्पन्ना दुःखहा मतिः ।

ब्रजामि शरणं देवं भक्त्याऽहं पुरुषोत्तमम् ॥ २६ ॥

गत्वा शरणं देवं मुनिस्तद्गतमानसः ।
 ददर्श तं घटं भूयो विशालं सलिलोपरि ॥ २७ ॥
 शाखाया तस्य सौघर्णं विस्तीर्णाया महाद्भुतम् ।
 रचिरं विध्यपर्यटुं रचितं विभक्तकर्मणा ॥ २८ ॥
 पञ्चचैदूर्यरचितं मणिचिद्रुमशोभितम् ।
 पद्मरागादिभिर्जुष्टं गन्धैर्गन्धैरलङ्कितम् ॥ २९ ॥
 नानान्तराण्यमयान नानारत्नोपशोभितम् ।
 नानागन्धैर्ममयुक्तं प्रभामण्डलमण्डितम् ॥ ३० ॥
 तस्योपरि स्थितं देवदृष्टं शालशुभ्रम् ।
 सूर्यकोटिप्रतीकाग्रादीप्यमानं सुवर्चसम् ॥ ३१ ॥
 चतुर्भुजं सुन्दराङ्गं पद्मपत्रायनेक्षणम् ।
 श्रीचन्द्रसदृशं देवशङ्खचक्रगदाधरम् ॥ ३२ ॥
 घनमाद्युतोरगम्य दिव्यकुण्डलधारिणम् ।
 हारमारविनम्रीय दिव्यरत्नविभूषितम् ॥ ३३ ॥
 दृष्ट्वा तदा मुनिर्देवविष्णुयोन्मृष्टोचनः ।
 रोमाञ्जिततनुर्देवप्रणिपत्येदमब्रवीत् ॥ ३४ ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

ब्रह्मो चैकार्णवे घोरे विनष्टे भवराचरे ।
 कथमेको ह्ययं शालस्तिष्ठत्यत्र मुनिर्मयः ॥ ३५ ॥

ब्रह्मोवाच ।

भूतमन्यभविष्यच्च ज्ञानमपि महामुनिः ।
 न बुबोध तदा देवमायया तस्य मोहितः ॥
 यदा न बुबुधे चैन तदा गदाद्भुवाच ह ॥ ३६ ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

वृथा मे तपसो घोर्यं वृथा ज्ञानं वृथा क्रिया ।
वृथा मे जीवित दीर्घं वृथा मानुष्यमेव च ॥ ३७ ॥
योऽहं सुप्त न जानामि पर्यङ्गे दिव्यबालकम् ॥ ३८ ॥

ब्रह्मोवाच ।

एव सचिन्तयन्विप्र प्लवमानो विचेतन ।
त्राणार्थं विह्वलश्चासौ निर्देह गतवास्तदा ॥ ३९ ॥
ततो बालार्कसकाश स्वमहिम्ना व्यवस्थितम् ।
सर्वतैर्जीमय विप्रा न शशाकामिषीक्षितुम् ॥ ४० ॥
दृष्ट्वा त मुनिमावान्त स बाल ब्रह्मसन्निव ।
प्रोवाच मुनिशार्दूलस्तदा मेघौघनिस्वन ॥ ४१ ॥

श्रीभगवानुवाच ।

घटस जानामि श्रान्त त्वा त्राणार्थं मामुपस्थितम् ।
शरीर विश मे क्षिप्र विश्रामस्ते मयोदित ॥ ४२ ॥

ब्रह्मोवाच ।

श्रुत्वा स घवन तस्य किञ्चिज्जोवाच मोहित ।
विवेश यदन तस्य चित्तं चावशो मुनि ॥ ४३ ॥

इति श्रीमहापुराणे ब्रह्मे रजयम्भृपिसवादे मार्कण्डेयप्रलयदर्शन

नाम त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥

श्लोकानामादितः सम्प्लवङ्गा -- ३६८४

अथ चतुष्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

मार्कण्डेयान्धानम्

ब्रह्मोवाच ।

स प्रविश्योदरे तस्य बालस्य मुनिसत्तम ।
ददर्श पृथिवीं हस्तानां नानाजनपदैर्बृताम् ॥ १ ॥
लवणेषुसुरासर्पिर्दधिदुग्धजलोदधौ ।
ददर्श तान्समुद्राश्च जम्बु इन्द्र च शात्मलम् ॥ २ ॥
कुशं कौञ्जं च शाकं च पुष्करं च ददर्श स ।
भारतादीनि वर्षाणि तथा सर्गाश्च पर्यतान् ॥ ३ ॥
मेरुं च सधरत्नाढ्यमपश्यत्कनकाचलम् ।
नानारत्नान्वितैः शृङ्गैर्मूषित बहुवन्द्यम् ॥ ४ ॥
नानामुनिजनाकोर्णं नानावृक्षवनाकुलम् ।
नानासत्त्वसमायुक्तं नानाधर्मममन्वितम् ॥ ५ ॥
ध्यात्रैः सिद्धैर्वराहैश्च वामरैर्महिषैर्गणैः ।
मृगैः शाखाभृगैश्चान्यैर्मूषितं सुमनोहरम् ॥ ६ ॥
शक्राद्यैर्विचित्रैर्देवैः सिद्धचारुपद्मैः ।
मुनियक्षाप्सरोभिश्च वृत्तैश्चान्यैः सुगन्धैः ॥ ७ ॥

[ब्रह्मोवाच] ।

एव सुमेरुं श्रीमन्तमपश्यन्मुनिमनमः ।
पर्यटन्स तदा विप्रस्तस्य बालस्य चोदरे ॥

हिमयन्त हेमकूट निपथ गन्धमादनम् ।

ग्रेत च दुर्धरं नील विलासं मन्दरं गिरिम् ॥ ९ ॥

महेन्द्रं मलय विन्ध्य पारियात्र तथाऽर्जुदम् ।

सह्यं च शुक्तिमन्त च मैनाक वक्पर्वतम् ॥ १० ॥

एताश्चान्याश्च यहवो यावन्त पृथिवीधरा ।

ततस्तास्तु मुनिश्रेष्ठा सोऽपश्यद्रत्नमूपितान् ॥ ११ ॥

कुरुक्षेत्र च पाञ्चालान्मत्स्यामद्रान्सकेकयान् ।

वाहीकान्शूरसेनाश्च काश्मीरास्तङ्गणान्प्रसान् ॥ १२ ॥

पार्वतीयान्किराताश्च कर्णप्राचरणान्मरून् ।

अन्त्यजानन्त्यजातींश्च सोऽपश्यत्तस्य चोदरे ॥ १३ ॥

मृगाञ्छालामृगान्सिंहान्वराहान्पुमराञ्छशान् ।

गजाश्चान्यास्तथा सत्त्वान्सोऽपश्यत्तस्य चोदरे ॥ १४ ॥

पृथिव्या यानि तीर्थानि ग्रामाश्च नगराणि च ।

वृषिगोरक्षयाणिज्य क्रयविक्रयण तथा ॥ १५ ॥

शक्रादीन्विबुधाञ्छ्रेष्ठास्तथाऽन्याश्च दिवौकस ।

गन्धर्वाप्सरसो यक्षानृपीश्रैव सनातनान् ॥ १६ ॥

दैत्यदानवसंघाश्च नागाश्च मुनिसत्तमा ।

सिद्धिकातनयाश्चैव ये चान्ये सुरशत्रव ॥ १७ ॥

यत्किञ्चित्तेन लोकेऽस्मिन्दृष्टपूर्वं चराचरम् ।

अपश्यत्स तदा सर्वं तस्य कुक्षौ द्विजोत्तमा ॥ १८ ॥

अथवा किं बहूक्तेन कीर्तितेन पुन पुन ।

ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्त यत्किञ्चित्सचराचरम् ॥ १९ ॥

भूर्लोक च भुवर्लोक स्वर्लोक च द्विजोत्तमा ।
 महर्जनस्तप सत्यमतल चित्तल तथा ॥ २० ॥
 पाताल सुतल चैव चित्तल च रसातलम् ।
 महातल च ग्रहाण्डमपश्यत्तस्य चोदरे ॥ २१ ॥
 अव्याहता गतिस्तस्य तदाऽमृद्द्विजसत्तमा ।
 प्रसादास्तस्य देवस्मृतिलोपश्च नामयत् ॥ २२ ॥
 भ्रममाणस्तदा कुक्षौ कृत्स्न जगदिदं द्विजा ।
 नान्तं जगाम देहस्य तस्य विष्णो कदाचन ॥ २३ ॥
 यदाऽसौ नाऽऽगतश्चान्तं तस्य देहस्य भो द्विजा ।
 तदा तं धरद् देव शरणं गतवान्मुनि ॥ २४ ॥
 ततोऽसौ सहसा चित्रा घायुषेणेन नि सृत ।
 महात्मनो मुखास्तस्य विवृतात्पुरपस्य स ॥ २५ ॥
 इति श्रीमहापुराणे आदित्राह्णे स्वयम्भृषिसंवादे मार्कण्डेयस्य
 भगवत्कुक्षिपरिवर्तनं नाम चतुष्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५४ ॥
 आदितः श्लोकानां समष्ट्यङ्का — ३७०६

अथ पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

मार्कण्डेयाग्यानम्

ग्रहोद्याय ।

स निष्प्रभ्योदरात्तस्य बालस्य मुनिसत्तमा ।

पुनश्चैकार्णधामुर्वीमपश्यज्जनवर्जिताम् ॥ १ ॥

पूर्वदृष्टं च तं देवं ददर्श शिशुरुपिणम् ।
 शाखायां घटवृक्षस्य पर्यङ्कोपरि संस्थितम् ॥ २ ॥
 श्रोतस्वक्षसं देवं पोतवस्त्रं चतुर्भुजम् ।
 जगदादाय तिष्ठन्तं पद्मपत्रायतेक्षणम् ॥ ३ ॥
 सोऽपि तं मुनिमायान्तं ग्लयमानमचेतनम् ।
 दृष्ट्वा मुस्त्राद्विनिष्क्रान्तं प्रोवाच ग्रहसन्निव ॥ ४ ॥

श्रीमगधानुवाच ।

कच्चित्स्थयोपितं घटस्य विश्रान्तं च ममोदरे ।
 भ्रममाणश्च किं तत्र ब्रह्मर्यं दृष्ट्वानसि ॥ ५ ॥
 भक्तोऽसि मे मुनिश्रेष्ठ आगतोऽसि च ममाऽऽश्रितः ।
 तेन त्वामुपकाराय संभाषे पश्य मामिह ॥ ६ ॥

ब्रह्मोवाच ।

श्रुत्वा सु धचनं तस्य संप्रहृष्टतनूदहः ।
 ददर्श तं सुदुष्प्रेक्ष रत्नैर्दिव्यैरलंकृतम् ॥ ७ ॥
 प्रसन्ना निर्मला दृष्टिर्मुहूर्तात्तस्य भो द्विजा ।
 प्रसादात्तस्य देवस्य प्रादुर्भूता पुनर्नवा ॥ ८ ॥
 रक्ताङ्गुलितलौ पादौ ततस्तस्य सुरार्चितौ ।
 प्रणम्य शिरसा यिप्रा हर्षगद्गदया गिरा ॥ ९ ॥
 कृताञ्जलिस्तदा हृष्टो विस्मितश्च पुनः पुनः ।
 दृष्ट्वा तं परमात्मानं संस्तोतुमुपचक्रमे ॥ १० ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

देवदेव जगन्नाथ मायाबालवपुर्धर ।
 त्रादि मां चारुपद्माक्ष दुःखितं शरणागतम् ॥ ११ ॥

संतप्तोऽस्मि सुरश्रेष्ठ संवर्ताप्येन वह्निना ।
 मद्भारवर्षमीतं च ब्राहि मां पुरुषोत्तम ॥ १२ ॥
 शोषितश्च प्रचण्डेन घायुना जगदायुना ।
 विह्वलोऽहं तथा श्रान्तस्त्राहि मां पुरुषोत्तम ॥ १३ ॥
 तापितश्च तशामात्यैः (?) प्रलयावर्णकादिभिः ।
 न शान्तिमधिगच्छामि ब्राहि मा पुरुषोत्तम ॥ १४ ॥
 तृपितश्च क्षुधाऽऽविष्टो दुःखितश्च जगत्पते ।
 आतारं नात्र पश्यामि ब्राहि मा पुरुषोत्तम ॥ १५ ॥
 अस्मिन्नेकार्णवे घोरे विनष्टे सचराचरे ।
 न चान्तमधिगच्छामि ब्राहि मा पुरुषोत्तम ॥ १६ ॥
 तयोद्गरे च देवेश मया दृष्टं नृसत्वरम् ।
 विस्मितोऽहं विषण्णश्च ब्राहि मां पुरुषोत्तम ॥ १७ ॥
 संसारेऽस्मिन्निरालम्बे प्रसीद पुरुषोत्तम ।
 प्रसीद विबुधश्रेष्ठ प्रसीद विबुधप्रिय ॥ १८ ॥
 प्रसीद विबुधां नाथ प्रसीद विबुधालय ।
 प्रसीद सर्वलोकेश जगत्कारणकारण ॥ १९ ॥
 प्रसीद सर्ववृद्धेध प्रसीद मम भूधर ।
 प्रसीद सलिलावास प्रसीद मधुसूदन ॥ २० ॥
 प्रसीद कमलाकान्त प्रसीद त्रिदशेश्वर ।
 प्रसीद कंसकेशिञ्ज प्रसीदारिष्टनाशन ॥ २१ ॥
 प्रसीद कृष्ण दैत्यञ्ज प्रसीद दनुजान्तक ।
 प्रसीद मथुरावास प्रसीद यदुनन्दन ॥ २२ ॥

प्रसीद शक्रावरज प्रसीद घरदाव्यय ।

त्वं मही त्वं जलं देव त्वमग्निस्त्वं समीरणः ॥ २३ ॥

त्वं नभस्त्वं मनश्चैव त्वमहंकार एव च ।

त्वं बुद्धिः प्रकृतिश्चैव सत्त्वाद्यास्त्वं जगत्पते ॥ २४ ॥

पुरुषस्त्वं जगद्व्यापी पुरुषादपि चोत्तमः ।

त्वमिन्द्रियाणि सर्वाणि शब्दाद्या विषयाः प्रभो ॥ २५ ॥

त्वं दिक्पालाश्च धर्माश्च वेदा यज्ञाः सदक्षिणाः ।

त्वमिन्द्रस्त्वं शिषोदेवस्त्वं हविस्त्वं हुताशनः ॥ २६ ॥

त्वं यमः पितुराद्देव त्वं रक्षोधिपतिः स्वयम् ।

घरुणस्त्वमपां नाथ त्वं धायुस्त्वं धनेश्वरः ॥ २७ ॥

त्वमीशानस्त्वमनन्तस्त्वं गणेशश्च पण्मुखः ।

वसवस्त्वं तथा रुद्रास्त्वमादित्याश्च खेचराः ॥ २८ ॥

दानयास्त्वं तथा यक्षास्त्वं दैत्याः समस्तुगणाः ।

सिद्धाश्चाप्सरसो नागा गन्धर्वास्त्वं सवारणाः ॥ २९ ॥

पितरो घालपित्याश्च प्रजानां पतयोऽच्युत ।

मुनयस्त्वमृषिगणास्त्वमभिनी निशानराः ॥ ३० ॥

गन्धाश्च जातयस्त्वं हि यत्किञ्चिज्जीवसंक्षितम् ।

किञ्चात्र यदुनोक्तेन ब्रह्मादिस्तम्बगोचरम् ॥ ३१ ॥

भूतं भव्यं भविष्यं च त्वं जगत्सन्धराचरम् ।

यस्ते रूपं परं देव कृत्स्नमचलं ध्रुवम् ॥ ३२ ॥

ब्रह्माद्यास्तत्र जानन्ति कथमन्येऽल्पमेधसः ।

देव शुद्धमभाषोऽसि निर्यमस्त्वं प्रहृतेः परः ॥ ३३ ॥

॥ १५ ॥ * विष्णुमार्कण्डेयसंवादकथनम् *

अथ त्वां शाश्वतोऽनन्त सर्वत्र्यापी महेश्वर ।
त्वमाकाश पर शान्तो अजस्त्य विभुरण्य ॥ १३ ॥
एव त्वा निर्गुण स्तोतुं क शक्नोति निरञ्जाम् ।
स्तुतोऽसि यन्मया देव विकलेनाल्पचेतसा ॥
तत्सर्वं देवदेवेश क्षन्तुमर्हसि चाध्यय ॥ १५ ॥
ति श्रीमहापुराणे आदित्राहो स्वयंभुवःसंवादे भगवत्स्तव-
निरूपण नाम पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५५ ॥
श्लोकानामादित्त समष्ट्यङ्का — ३७४४

अथ पट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

पिस्तरेण विष्णुमार्कण्डेयसंवादकथनम्

ब्रह्मोवाच ।

इत्थं स्तुतस्तदा तेन मार्कण्डेयेन भो द्विजा ।
प्रीत प्रोवाच भगवान्मेतन्ममोरया निरा ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच ।

रूहि काम मुनिश्रेष्ठ यत्ते मनसि वर्तते ।
ददामि सर्वं विप्रर्षे मत्तो यद्विवाञ्जसि ॥ २ ॥

ब्रह्मोवाच ।

श्रुत्वा स वचन विप्रा शिशोस्तस्य महात्मनः ।
उवाच परमप्रीतो मुनिस्त्वदुगतमानस ॥ ३ ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

ज्ञातुमिच्छामि देव त्वां मायां चै तव चोत्तमाम् ।

त्यत्रसादान्च देवेश स्मृतिर्न परिहीयते ॥ ४ ॥

दुतमन्तः शरीरेण सततं पर्य(रि)वर्तितम् ।

इच्छामि पुण्डरीकाक्ष ज्ञातुं त्वामहमश्रयम् ॥ ५ ॥

इह भूत्वा शिशुः साक्षात्किं भवानवतिष्ठने ।

पीत्वा जगदिदं सर्वमेतदाख्यातुमर्हसि ॥ ६ ॥

किमयं च जगत्सर्वं शरीरस्थं तथाऽनघ ।

कियन्तं च त्वया कालमिह स्येयमर्दिमम् ॥ ७ ॥

ज्ञातुमिच्छामि देवेश ब्रूहि सर्वमशेषतः ।

तवत्त कमलपत्राक्ष विस्तरेण यथातथम् ॥

मददेतदग्नित्वं न यदहं द्रष्टव्याग्रमो ॥ ८ ॥

ब्रह्मोवाच ।

इत्युक्तः स तदा तेन देवदेवो महापुनि ।

साग्न्ययत्नस तदा पापयमुषान् यदतां परः ॥ ९ ॥

धीमगवानुवाच ।

वामं देवाऽऽ मां विप्र नदि जानन्ति तस्यतः ।

तव ब्रूत्वा ब्रह्मयामि यगेदं विभृतायतम् ॥ १० ॥

विभृताऽऽनि विप्रैर्मांसेष शस्त्रं गतः ।

ततो द्रष्टोऽस्मि मे खासाद्ब्रह्मययं च मे महम् ॥ ११ ॥

मायां नारा इति पुरा वंशावर्म हर्षं मया ।

तेन नारायणोऽब्रह्मपुत्रो मम साग्न्ययनं यदा ॥ १२ ॥

अहं नारायणो नाम प्रभवः शाश्वतोऽव्ययः ।
 विधाता सर्व भूतानां संहर्ता च द्विजोत्तम ॥ १३ ॥
 अहं विष्णुरहं ब्रह्मा शक्रश्चापि सुराधिपः ।
 अहं वैश्रवणो राजा यमः प्रेताधिपस्तथा ॥ १४ ॥
 अहं शिवश्च सोमश्च कश्यपश्च प्रजापतिः ।
 अहं धाता विधाता च यज्ञश्चाहं द्विजोत्तम ॥ १५ ॥
 अग्निरास्यं क्षितिः पादौ चन्द्रादित्यौ च लोचने ।
 धौर्मूर्धा एं दिशः श्रोत्रे तथाऽऽपः स्वेदसंभवाः ॥ १६ ॥
 सदिशं च नभः कायो वायुर्मनसि मे स्थितः ।
 मया क्रतुशतैरिष्टं बहुमिश्नाऽऽसदक्षिणैः ॥ १७ ॥
 यजन्ते वेदविदुषो मां देवयजने स्थितम् ।
 पृथिव्यां क्षत्रियेन्द्राश्च पार्थिवाः स्वर्गकाङ्क्षिणः ॥ १८ ॥
 यजन्ते मां तथा वैश्याः स्वर्गलोकजिगीषवः ।
 चतुःसमुद्रपर्यन्तां मेरुमन्दरभूषणाम् ॥ १९ ॥
 शेषो भूत्वाऽहमेको हि धारयामि वसुंधराम् ।
 धाराह रूपमास्थाय ममेव जगती पुरा ॥ २० ॥
 मञ्जमाना जले विप्र र्घीर्यणास्मि समुद्धृता ।
 अग्निश्च घाटयो विप्र भूत्वाऽहं द्विजसत्तम ॥ २१ ॥
 पियाम्यपः समाविष्टाश्चैव विसृजाम्यहम् ।
 ब्रह्म पक्वं भुज्जी क्षत्रमूरु मे सन्निता विशः ॥ २२ ॥
 पादौ शूद्रा भवन्तीमे विक्रमेण क्रमेण च ।
 ऋग्वेदः सामवेदश्च यजुर्वेदस्त्वथर्वणः ॥ २३ ॥

मत्तः प्रादुर्भवन्त्येते मामेव प्रविशन्ति च ।

यतयः शान्तिपरमा यतात्मानो बुभुत्सवः ॥ २४ ॥

कामक्रोधद्वेषमुक्ता निःसङ्गा धीतकल्मषाः ।

सत्त्वस्था निरहंकारा नित्यमध्यात्मकोविदाः ॥ २५ ॥

मामेव सत्तनं विप्राध्विन्त्यन्त उपासते ।

अहं संघर्तको ज्योतिरहं संघर्तकोऽनलः ॥ २६ ॥

अहं संघर्तकः सूर्यस्त्वहं संघर्तकोऽनिलः ।

ताराकृपाणि दृश्यन्ते यान्येतानि नमस्तले ॥ २७ ॥

मम वै रोमकृपाणि विदि त्वं द्विजसत्तम ।

रक्षाकराः समुद्राश्च सूर्य एव धनुर्दिशः ॥ २८ ॥

यस्य शयनं चैव निलयं चैव विदि मे ।

वामः प्रोषध दण्डश्च मयं मोदस्तथैव च ॥ २९ ॥

ममैव विदि कृपाणि सर्पाण्येतानि सत्तम ।

प्राप्नुयन्ति नरा विप्र यन्मृत्स्या कर्म शोभनम् ॥ ३० ॥

सत्यं दानं तपश्चाग्नमहिता मयं जग्नुषु ।

मद्विधानेन विदिता मम देवविगारिणः ॥ ३१ ॥

मयाऽनिमृतविज्ञानाध्यक्ष्यन्ति न कामतः ।

तापयेंदमर्धायाना यजन्तो विविधैर्मंगी ॥ ३२ ॥

शान्तात्मानो जितक्रोधा प्राप्नुयन्ति द्विजातयः ।

प्राप्नुं शक्यो न क्षेपात् नरेभ्यश्चरकर्मणि ॥ ३३ ॥

लोभानिभूतैः कृष्यजैश्चायैश्चरात्मनि ।

तस्मात् मदागच्छ विदि नराणां भाविताग्रजाम् ॥ ३४ ॥

सुदुष्प्रापं विमूढानां मां कुयोगनिपेविणाम् ।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति सत्तम ॥ ३५ ॥

अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम् ।

दैत्या हिंसानुरक्ताश्च अवध्याः सुरसत्तमः ॥ ३६ ॥

राक्षसाश्चापि लोकेऽस्मिन्यदोत्पत्स्यन्ति दारुणाः ।

तदाऽहं संप्रसूयामि गृहेषु पुण्यकमणाम् ॥ ३७ ॥

प्रविष्टो मानुषं देहं सर्वं प्रशमयाम्यहम् ।

सृष्ट्वा देवमनुष्यांश्च गन्धर्वोरगराक्षसान् ॥ ३८ ॥

स्थावराणि च भूतानि संहराम्यान्ममायया ।

कर्मकाले पुनर्देहमनुचिन्त्य सृजाम्यहम् ॥ ३९ ॥

आविश्य मानुषं देहं मर्यादाबन्धकारणात् ।

श्येतः कृतयुगे धर्मः श्यामस्त्रेतायुगे मम ॥ ४० ॥

रको ह्यापरमासाद्य कृष्णः कलियुगे तथा ।

त्रयो भागा ह्यधर्मस्य तस्मिन्काले भवन्ति च ॥ ४१ ॥

अन्तकाले च संप्राप्ते कालो भूत्वाऽतिदारुणः ।

त्रैलोक्यं नाशयाम्येकं सर्वं स्थावरजङ्गमम् ॥ ४२ ॥

अहं त्रिधर्मा विश्वात्मा सर्वलोकसुपापहः ।

अमित्रः सर्वगोऽनन्तो हर्षान्देश उरक्रमः ॥ ४३ ॥

फालचक्रं नयाम्येको ब्रह्मरूपं ममैव तत् ।

शमनं सर्वभूतानां सर्वभूतहृत्नोद्यमम् ॥ ४४ ॥

एवं प्रणिहितः सम्यङ्ममाऽऽत्मा मुनिसत्तम ।

सर्वभूतेषु चिप्रेन्द्र ॥ च मां घेति कथ्यते ॥ ४५ ॥

सुदुष्प्रापं विमूढानां मां कुयोगनिषेविणाम् ।
 यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति सत्तम ॥ ३५ ॥
 अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽन्मानं सृजाम्यहम् ।
 दैत्या हिंसानुरक्ताश्च अवध्याः सुगमत्तमैः ॥ ३६ ॥
 राक्षसाश्चापि लोकेऽस्मिन्यदोत्पन्न्यन्ति दारुणाः ।
 तदाऽहं संप्रसूयामि गृहेषु पुण्यकमणाम् ॥ ३७ ॥
 प्रविष्टो मानुषं देहं सर्वं प्रशमयाम्यहम् ।
 सृष्ट्वा देवमनुष्यांश्च गन्धर्वोऽङ्गराक्षसान् ॥ ३८ ॥
 स्यादराणि च भूतानि मंहिराम्यान्ममायया ।
 कर्मकाले पुनर्देहमनुचिन्त्य सृजाम्यहम् ॥ ३९ ॥
 आविश्य मानुषं देहं मर्यादाबन्धकारणतः ।
 ज्यैतः ह्यन्युगे धर्मं श्यामन्प्रेतायुगे मम ॥ ४० ॥
 रक्तो ह्यपरमामाद्य रुणः कलियुगे तथा ।
 त्रयो भागा ह्यधर्मस्य तस्मिन्काले भवन्ति च ॥ ४१ ॥
 अन्तकाले च मघ्राप्ते कालो भूत्वाऽनिदारुणः ।
 त्रैलोक्यं नाशयाम्येकं सर्वं स्यादरजद्रुमम् ॥ ४२ ॥
 महं त्रिधर्मा विश्वात्मा सर्वलोकसुखायदः ।
 अमित्रः सर्वगोऽनन्तो ह्यर्षाकेश उग्रमः ॥ ४३ ॥
 कालचक्रं नयाम्येको ब्रह्मरूपं ममैव तत् ।
 शमनं सर्वभूतानां सर्वभूतहृत्प्रियम् ॥ ४४ ॥
 एव प्रणिहितं सम्यङ्ममाऽऽत्मा मुनिसत्तम ।
 सर्वभूतेषु विप्रेन्द्र न च मां वेत्ति कश्चन ॥ ४५ ॥

मत्तः प्रादुर्भवन्त्येते मामेव प्रविशन्ति च ।

यतयः शान्तिपरमा यतात्मानो बुभुत्सवः ॥ २४ ॥

कामक्रोधद्वेषमुक्ता निःसङ्गा धीतकल्मषाः ।

सत्त्वस्था निरहंकारा नित्यमध्यात्मकोविदाः ॥ २५ ॥

मामेव सततं विप्राश्चिन्तयन्त उपासते ।

अहं संवर्तको ज्योतिरहं संवर्तकोऽनलः ॥ २६ ॥

अहं संवर्तकः सूर्यस्त्यहं संवर्तकोऽनिलः ।

तारारूपाणि दृश्यन्ते यान्येतानि नमस्तले ॥ २७ ॥

मम वै रोमरूपाणि विद्धि त्वं द्विजसत्तम ।

रत्नाकराः समुद्राश्च सूर्य एव चतुर्दिशः ॥ २८ ॥

यसनं शयनं चैव निलयं चैव विद्धि मे ।

कामः क्रोधश्च द्वेषश्च भयं मोहस्तथैव च ॥ २९ ॥

ममैव विद्धि रूपाणि सर्वाण्येतानि सत्तम ।

प्राप्नुवन्ति नरा विप्र यत्कृत्वा कर्म शोभनम् ॥ ३० ॥

सत्यं दानं तपश्चोग्रमहिंसां सूर्यजन्तुषु ।

मद्विधानेन विहिता मम देहविचारिणः ॥ ३१ ॥

मयाऽभिभूतचिदानाधोऽप्यन्ति न कामतः ।

सभ्यग्वेदमधीयाना यजन्तो विविधैर्मनैः ॥ ३२ ॥

शान्तात्मानो जितक्रोधाः प्राप्नुवन्ति द्विजातयः ।

प्राप्तुं शक्यो न वैपातं नरैर्दुष्टतफर्मभिः ॥ ३३ ॥

लोभामिभूतैः कृपणैरनार्यैर्यतात्मभिः ।

तन्मां महाफण्डं विद्धि नराणां भाषितात्मनाम् ॥ ३४ ॥

सुदुष्प्राप विमूढानां मा कुयोगनिपेविणाम् ।
 यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति सत्तम ॥ ३५ ॥
 अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽत्मानं सज्जाम्यहम् ।
 दैत्या हिंसानुरक्ताश्च अव-या सुरसत्तम ॥ ३६ ॥
 राक्षसाश्चापि लोकेऽस्मिन्यदोत्पत्स्यन्ति दारणा ।
 तदाऽहं सप्रसूयामि गृहेषु पुण्यकमणाम् ॥ ३७ ॥
 प्रविष्टो मानुषं देहं सर्वं प्रशमयाम्यहम् ।
 सृष्ट्वा देवमनुष्याश्च गन्धर्वोरगराक्षसान् ॥ ३८ ॥
 स्थाधराणि च भूतानि महाराम्यान्ममायया ।
 कर्मकाले पुनर्देहमनुचिन्त्य सृजाम्यहम् ॥ ३९ ॥
 आचिष्य मानुषं देहं मर्यादाबन्धकारणान् ।
 ज्येष्ठे कृतयुगे धर्मं श्यामस्त्रेतायुगे मम ॥ ४० ॥
 रक्तो द्वापरमासाद्य कृष्ण कलियुगे तथा ।
 त्रयो भागा ह्यधर्मस्य तस्मिन्काले भवन्ति च ॥ ४१ ॥
 अन्तकाले च संप्राप्ते कालौ भूत्वाऽतिदारुण ।
 त्रैलोक्यं नाशयाम्येकं सर्वं म्याधरजङ्गमम् ॥ ४२ ॥
 अहं त्रिधर्मा विश्वात्मा सर्वलोकसुखाद्यह ।
 अमित्रं सर्वगोऽनन्तो हृषीकेश उदरम ॥ ४३ ॥
 कालचक्रं नयाम्येको ग्रहरूप ममैव तत् ।
 शमनं सर्वभूतानां सर्वभूतहृत्नोदयमम् ॥ ४४ ॥
 एव प्रणिहितं सम्यङ्ममाऽऽत्मा मुनिसत्तम ।
 सर्वभूतेषु विप्रेन्द्र न च मा वेत्ति कश्चन ॥ ४५ ॥

सर्वलोके च मा भक्ता पूजयन्ति च सर्वश ।
 यच्च किञ्चित्त्वया प्राप्त मयि क्लेशात्मक द्विज ॥ ४६ ॥
 सुखोदयाय तत्सर्वं श्रेयसे च तवानघ ।
 यच्च किञ्चित्त्वया लोके दृष्ट स्थावरजङ्गमम् ॥ ४७ ॥
 विहित सर्व एवासौ मयाऽऽत्मा भूतभावन ।
 अहं नारायणो नाम शङ्खचक्रगदाधर ॥ ४८ ॥
 याचयुगानां विप्रर्षे सहस्र परिवर्तते ।
 तावत्स्वपिति विश्वात्मा सर्वविश्वानि मोहयन् ॥ ४९ ॥
 एव सर्वमहं कालमिहाऽऽसे मुनिसत्तम ।
 अशिशु शिशुरूपेण याचद्वन्महा न बुध्यते ॥ ५० ॥
 मया च दत्तो विप्रेन्द्र घरस्ते ब्रह्मरूपिणः ।
 असंस्तुपरितुष्टेन विप्रर्षिगणपूजित ॥ ५१ ॥
 सर्वमेकार्णवं कृत्वा नष्टे स्थावरजङ्गमे ।
 निर्गतोऽसि मयाऽऽज्ञातस्ततस्ते दर्शित जगत् ॥ ५२ ॥
 अभ्यन्तर शरीरस्य प्रविष्टोऽसि यदा मम ।
 दृष्ट्वा लोक समस्त हि विन्मितो नायबुध्यसे ॥ ५३ ॥
 ततोऽसि धक्त्राद्विप्रं द्रुत नि सारितो मया ।
 आख्यातस्ते मया चाऽऽत्मा दुर्ज्ञेयो हि सुरासुरैः ॥ ५४ ॥
 यावत्स भगवान्ब्रह्मा न यु येत महातपा ।
 तावद्यमिह विप्रर्षे विप्रर्षश्चर वै सुरम् ॥ ५५ ॥
 ततो विपुद्धे तस्मिन्सु सर्वलोकपितामहे ।
 एको भूतानि स्रष्टुमि शरीराणि द्विजोत्तम ॥ ५६ ॥

आकाशं पृथिवीं ज्योतिर्वायुः सलिलमेव च ।

लोके यच्च भवेत्किंचिदिह स्थावरजङ्गमम् ॥ ५७ ॥

ब्रह्मोवाच ।

एवमुक्त्वा तदा विप्राः पुनस्तं प्राह माधवः ।

पूर्णं युगसहस्रे तु मेघगम्भीरनिखनः ॥ ५८ ॥

श्रीभगवानुवाच ।

मुने ब्रूहि यदर्थं मां स्तुतवान्परमार्थतः ।

घरं वृणीष्व यच्छ्रेष्ठं ददामि नचिरादहम् ॥ ५९ ॥

आयुष्मानसि देवानां मद्भक्तोऽसि दृढव्रतः ।

तेन त्वमसि विप्रेन्द्र पुनर्दीर्घायुराप्नुहि ॥ ६० ॥

ब्रह्मोवाच ।

श्रुत्वा घाणीं शुभां तस्य विलोक्य स तदा पुनः ।

मूर्त्तां निपत्य सहसा प्रणम्य पुनरग्रधीत् ॥ ६१ ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

दृष्टं परं हि देवेश तव रूपं द्विजोत्तम ।

मोहोऽयं विगतः सत्यं त्वयि दृष्टे तु मे हरे ॥ ६२ ॥

एवमेवमहं नाथ इच्छेयं त्वत्प्रसादतः ।

लोकानां च हितार्थाय नानाभावप्रशान्तये ॥ ६३ ॥

शैवभागवतानां च धादार्यप्रतिषेधकम् ।

अस्मिन्क्षेत्रवरे पुण्ये निर्मले पुरपोत्तमे ॥ ६४ ॥

शिवस्याऽऽयतनं देव करोमि परमं महत् ।

प्रतिष्ठेयं तथा तत्र तव स्थाने च शंकरम् ॥ ६५ ॥

ततो ह्यास्यन्ति लोकेऽस्मिन्नेकमूर्तो हरीश्वरो ।

प्रत्युवाच जगन्नाथः स पुनस्तं महामुनिम् ॥ ६६ ॥

श्रीभगवानुवाच ।

यदेतत्परमं देवं कारणं भुवनेश्वरम् ।

लिङ्गमाराधनार्थाय नानामाचप्रशान्तये ॥ ६७ ॥

ममाऽऽदिष्टेन विप्रेन्द्र कुरु शीघ्रं शिवालयम् ।

तत्प्रभावाच्छिवलोके तिष्ठ त्वं च तथाऽक्षयम् ॥ ६८ ॥

शिवे संस्थापिते विप्र मम संस्थापनं भवेत् ।

नाऽऽवयोरन्तरं किञ्चिदेकभावो द्विधा कृतौ ॥ ६९ ॥

यो रुद्रः स स्वयं विष्णुर्यो विष्णुः स महेश्वरः ।

उभयोरन्तर नास्ति पचनाकाशयोरिद्य ॥ ७० ॥

मोहितो नाभिजानाति य एव गरुडध्वजः ।

वृषध्वजः स एवेति त्रिपुरघ्नं त्रिलोचनम् ॥ ७१ ॥

तव नामाद्धितं तस्मात्कुरु विप्र शिवालयम् ।

उत्तरे देवदेवस्य कुरु तीर्थं सुशोभनम् ॥ ७२ ॥

मार्कण्डेयहृदो नाम नरलोकेषु विश्रुतः ।

भविष्यति द्विजश्रेष्ठ सत्यपापप्रणाशनः ॥ ७३ ॥

ब्रह्मोवाच ।

इत्युक्त्वा स तदा देवस्तत्रैधान्तरधीयत ।

मार्कण्डेयं मुनिश्रेष्ठाः सर्वव्यापी जनार्दनः ॥ ७४ ॥

इति श्रीमहापुराणे आदिब्राह्मे स्वयंभुविसंवादे मार्कण्डेयस्य

श्रीभगवद्दर्शनं नाम पट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५६ ॥

आदितः श्लोकानां समष्ट्यङ्काः—३८१७

अथ सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

पञ्चतीर्थविधिवर्णनम्

ब्रह्मोवाच ।

अतः परं प्रचक्ष्यामि पञ्चतीर्थविधिं द्विजाः ।
यत्फलं स्नानदानेन देवताप्रेक्षणेन च ॥ १ ॥
मार्कण्डेयहृदं गत्वानरक्षोदद्मुख शुचिः ।
निमज्जेत्तत्र चारांस्त्रोनिमं मन्त्रमुदीरयेत् ॥ २ ॥
संसारसागरे मग्नं पापप्रस्तमचेतनम् ।
आहि मां भगनेऽस्मि त्रिपुरारे नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥
नमः शिवाय शान्ताय सर्वपापहराय च ।
स्नानं करोमि देवेश मम नश्यतु पातकम् ॥ ४ ॥
नामिमात्रे जले स्नात्वा विधिबद्देवता ऋषीन् ।
तिलोदकेन मतिमान्पितृंश्चान्यांश्च तर्पयेत् ॥ ५ ॥
स्नात्वा तथैव चाऽऽचम्य ततोगच्छेच्छिवालयम् ।
प्रविश्य देवतागारं कृत्वा तं त्रि प्रदक्षिणम् ॥ ६ ॥
मूलमन्त्रेण संपूज्य मार्कण्डेयस्य चेश्वरम् ।
अधोरेण च भो विप्राः प्रणिपत्य प्रसादयेत् ॥ ७ ॥
त्रिलोचन नमस्तेऽस्तु नमस्ते शशिभूषण ।
आहि मां त्वं विरूपाक्ष महादेव नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥
मार्कण्डेयहृदे त्वेवं स्नात्वा दृष्ट्वा च शंकरम् ।
दशानामश्वमेधानां फलं प्राप्नोति मानवः ॥ ९ ॥

पापैः सर्वैर्विनिर्मुक्तः शिवलोकं स गच्छति ।

तत्र भुक्त्वा धरान्भोगान्याचदामृतसंप्लवम् ॥ १० ॥

इहलोकं समासाद्य भवेद्विप्रो बहुश्रुतः ।

शांकर योगमासाद्य ततोमोक्षमवाप्नुयात् ॥ ११ ॥

कल्पवृक्षं ततो गत्वा कृत्वा तं त्रिः प्रदक्षिणम् ।

पूजयेत्परया भक्त्या मन्त्रेणानेन तं घटम् ॥ १२ ॥

धौ नमो व्यक्तरूपाय महाप्रलयकारिणे ।

महप्रसोपविष्टाय न्यग्रोधाय नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥

अमरस्त्वं सदा कल्पे हरेश्चाऽऽयतन घट ।

न्यग्रोध हर मे पापं कल्पवृक्ष नमोऽस्तु ते ॥ १४ ॥

भक्त्या प्रदक्षिणं कृत्वा नत्वा कल्पवटं नरः ।

सहसा मुच्यते पापाञ्जोर्णत्थं च इयोरगः ॥ १५ ॥

छायां तस्य समाकम्य कल्पवृक्षस्य भो द्विजाः ।

ब्रह्महत्यां नरो जह्यात्पापेष्वन्येषु का कथा ॥ १६ ॥

दृष्ट्वा कृष्णाङ्गसभूतं ब्रह्मनेत्रोमयं परम् ।

न्यग्रोधाकृतिकं विष्णुं प्रणिपत्य च भो द्विजाः ॥ १७ ॥

राजसूयाश्वमेधाभ्यां फल प्राप्नोति चाधिकम् ।

तथा स्ववशमुद्धृत्य विष्णुलोकं स गच्छति ॥ १८ ॥

चैनतेयं नमस्तुत्य कृष्णस्य पुरतः स्थितम् ।

सर्वपापविनिर्मुक्तस्ततो विष्णुपुरं व्रजेत् ॥ १९ ॥

दृष्ट्वा घटं चैनतेयं यः पश्येत्पुरुषोत्तमम् ।

संकर्षण सुभद्रां च स याति परमां गतिम् ॥ २० ॥

प्रचिण्याऽऽयतनं विष्णोः कृत्वा तं त्रिः प्रदक्षिणम् ।
 संकर्षणं स्वमन्त्रेण भक्त्याऽऽपूज्यप्रसादयेत् ॥ २१ ॥
 नमस्ते हलधृग्राम नमस्ते मुशलायुध ।
 नमस्ते रैचतीकान्त नमस्ते भक्तवत्सल ॥ २२ ॥
 नमस्ते बलिनां श्रेष्ठ नमस्ते धरणीधर ।
 प्रलम्बारे नमस्तेऽस्तु त्राहि मां कृष्णपूर्यज ॥ २३ ॥
 एयं प्रमाद्य चानन्तमजेयं त्रिदशार्चितम् ।
 कैलासशिखराकारं चन्द्रात्कान्तनराननम् ॥ २४ ॥
 नीलवस्त्रधरं देवं फणाचिरुटमस्तकम् ।
 महाबलं हलधरं कुण्टलैकविभूषितम् ॥ २५ ॥
 रौहिणेयं नरो भक्त्या लभेदभिमतं फलम् ।
 सर्वपापैर्विनिर्मुक्तो विष्णुलोकं स गच्छति ॥ २६ ॥
 धामूतसंग्रहं यापद्भुक्त्या तत्र सुखं नरः ।
 पुण्यक्षयादिहाऽऽगत्य प्रवरे योगिना कुले ॥ २७ ॥
 ब्राह्मणप्रवरो भूत्वा सर्वशास्त्रार्थपारगः ।
 प्राण तत्र समासाद्य मुक्तिं प्राप्नोति दुर्लभाम् ॥ २८ ॥
 एवमभ्यर्च्य हलिनं ततः कृष्णं विचक्षण ।
 द्वादशाक्षरमन्त्रेण पूजयेत्सुसमाहितः ॥ २९ ॥
 द्विपट्कवर्णमन्त्रेण भक्त्या ये पुरुषोत्तमम् ।
 पूजयन्ति सदा धीराम्ने मोक्षं प्राप्नुयन्ति वै ॥ ३० ॥
 न ता गतिं सुरा यान्ति योगिनो नैव सोपमाः ।
 या गतिं यान्ति मोक्षिणो द्वादशाक्षरतन्पराः ॥ ३१ ॥

तस्मात्तेनैव मन्त्रेण भक्त्या कृष्णं जगद्गुहम् ।
 संपूज्य गन्धपुष्पाद्यैः प्रणिपत्य प्रसादयेत् ॥ ३२ ॥
 जय कृष्ण जगन्नाथ जय सर्वाधनाशन ।
 जय चाणूरकेशिघ्न जय कंसनिपूदन ॥ ३३ ॥
 जय पद्मपलाशाक्ष जय चक्रगदाधर ।
 जय नीलाम्बुदश्याम जय सर्वसुखप्रद ॥ ३४ ॥
 जय देव जगत्पूज्य जय संसारनाशन ।
 जय लोकपते नाथ जय वाञ्छाफलप्रद ॥ ३५ ॥
 संसारसागरे घोरे निःसारे दुःखफेनिले ।
 क्रोधप्रादाकुले रौद्रे विषयोदकसंश्लेषे ॥ ३६ ॥
 नानारोगोर्मिकलिले मोहायतंसुदुस्तरे ।
 निमग्नोऽहं सुरश्रेष्ठ त्राहि मां पुरुषोत्तम ॥ ३७ ॥
 एवं प्रसाद्य देवेशं धरदं भक्तवत्सलम् ।
 सर्वपापहरं देवं सर्वकामफलप्रदम् ॥ ३८ ॥
 पीनासं द्विभुजं कृष्णं पद्मपत्रायतेक्षणम् ।
 महोरस्कं महाबाहु पीतवस्त्रं शुभाननम् ॥ ३९ ॥
 शङ्खचक्रगदापाणिं मुकुटाङ्गदभूषणम् ।
 सर्वलक्षणसंपुक्तं धनमालाविभूषितम् ॥ ४० ॥
 दृष्ट्वा नरोऽञ्जलिं कृत्वा दण्डवत्प्रणिपत्य ।
 अश्वमेधसहस्राणां फलं प्राप्नोति वै द्विजाः ॥ ४१ ॥
 यत्फलं सर्वतीर्थेषु स्नाने दाने प्रकीर्तितम् ।
 नरस्तत्फलमाप्नोति दृष्ट्वा कृष्णं प्रणम्य ॥ ४२ ॥

यत्फलं सर्वरत्नाद्यैरिष्टे बहुसुवर्णके ।

नरस्तत्फलमाप्नोति दृष्ट्वा कृष्णं प्रणम्य च ॥ ४३ ॥

यत्फलं सर्ववेदेषु सर्वयज्ञेषु यत्फलम् ।

तत्फलमाप्नोति नरः कृष्णं प्रणम्य च ॥ ४४ ॥

सर्वदानेन यमेन नियमेन च ।

तत्फलमाप्नोति दृष्ट्वा कृष्णं प्रणम्य च ॥ ४५ ॥

“विधिरुप्रैर्यत्फलं” समुदाहृतम् ।

नरस्तत्फलमाप्नोति दृष्ट्वा कृष्णं प्रणम्य च ॥ ४६ ॥

यत्फलं ब्रह्मचर्येण सम्यक्चर्येण तत्फलम् ।

नरस्तत्फलमाप्नोति दृष्ट्वा कृष्णं प्रणम्य च ॥ ४७ ॥

यत्फलं च गृहस्थस्य यथोक्ताचारवर्तिनः ।

तत्फलमाप्नोति दृष्ट्वा कृष्णं प्रणम्य च ॥ ४८ ॥

“वृषासेन घानप्रस्थस्य कीर्तितम् ।

तत्फलमाप्नोति दृष्ट्वा कृष्णं प्रणम्य च ॥ ४९ ॥

न यथोक्तेन यत्फलं समुदाहृतम् ।

तत्फलमाप्नोति दृष्ट्वा कृष्णं प्रणम्य च ॥ ५० ॥

ननुनोक्तेन माहात्म्ये तस्य भो द्विजाः ।

कृष्णं नरो भक्त्या मोक्षं प्राप्नोति दुर्लभम् ॥ ५१ ॥

१. कृष्णशुद्धात्मा कल्पकोटिसमुद्भवः ।

श्रियं परमया युक्तः सर्वैः समुदिनो गुणैः ॥ ५२ ॥

अथ तत्तुष्टेन विमानेन सुवर्चसा ।

त्रैसङ्गकुलमुद्धृत्य नरो विष्णुपुरं व्रजेत् ॥

तत्र कल्पशतं यावदुभुक्त्वा भोगान्मनोरमान् ।
 गन्धर्वाप्सरसैः सार्धं यथा विष्णुश्चतुर्भुजः ॥ ५४ ॥
 च्युतस्तस्मादिहाऽऽयातो विप्राणां प्रचरे कुले ।
 सर्वज्ञः सर्ववेदी च जायते गतमत्सरः ॥ ५५ ॥
 स्वधर्मनिरतः शान्तो दाता भूतहिते रतः ।
 ब्रह्माद्य वैष्णवं ज्ञानं ततो मुक्तिमवाप्नुयात् ॥ ५६ ॥
 ततः संपूज्य मन्त्रेण सुभद्रां भक्तवत्सलाम् ।
 प्रसादयेत्ततो विप्राः प्रणिपत्य कृताञ्जलिः ॥ ५७ ॥
 नमस्ते सर्वगे देवि नमस्ते शुभसौख्यदे ।
 ब्राहि मां पद्मपत्राक्षि कात्यायनि नमोऽस्तु ते ॥ ५८ ॥
 एवं प्रसाद्य तां देवी जगद्धार्त्री जगद्धिताम् ।
 बलदेवस्य भगिनीं सुभद्रां वरदा शिवाम् ॥ ५९ ॥
 कामगेन विमानेन नरो विष्णुपुरं व्रजेत् ।
 आभूतसंप्लव यावत्कोडित्वा तत्र देवयत् ॥ ६० ॥
 इह मानुषतां प्राप्तो ब्राह्मणो वेदविद्वेत् ।
 प्राप्य योगं हरेस्तत्र मोक्षं च लभते ध्रुवम् ॥ ६१ ॥
 इति श्रीमहापुराण भाद्रिब्राह्मे स्वयंभुवर्षिसंवादे कृष्णद-
 माहात्म्यं नाम सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥
 श्लोकानामादितः समष्ट्यङ्काः—३८७^{३८}